उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

MAJY-201

होराशास्त्र एवं फलादेश विवेचन

मानविकी विद्याशाखा

ज्योतिष विभाग

पाठ्यक्रम सम्पादन एवं संयोजन

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं समन्वयक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	खण्ड	इकाई संख्या
प्रोफेसर भारतभूषण मिश्र ज्योतिष विभाग राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, मुम्बई परिसर।	**1**	**1, 2, 3, 4, 5**
डॉ. नन्दन कुमार तिवारी असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**2**	**1,2,3,4**
डॉ. रत्न लाल शर्मा असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार	**3**	**1,2,3,4**
डॉ. शुभास्मिता मिश्र ज्योतिष विभाग, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान जयपुर परिसर, जयपुर – राजस्थान	**4**	**1,2,3,4,5,6**

प्रकाशन वर्ष - 2020 **प्रकाशक -** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।

मुद्रक: - सहारनपुर इलैक्ट्रिक प्रेस, बोमनजी रोड, सहारनपुर (उ0प्र0) ISBN NO. -

एम.ए. (ज्योतिष) **MAJY-201**

द्वितीय वर्ष – प्रथम पत्र

होराशास्त्र एवं फलादेश विवेचन

अनुक्रम

एम.ए. (ज्योतिष)

द्वितीय वर्ष – प्रथम पत्र

होराशास्त्र एवं फलादेश विवेचन

MAJY-201

खण्ड - 1
होरा स्कन्ध

इकाई - 1 नक्षत्र एवं ग्रह स्वरूप, उच्च-नीच, मूलत्रिकोणादि विवेचन

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

छात्रों आपका इस पाठ्यक्रम में स्वागत है। ज्योतिष शास्त्र को वेद का चक्षु कहा गया है। जिस प्रकार नेत्र के बिना हम कार्यकरने में असमर्थहोते हैं वैसे ही ज्योतिष के बिना अन्य शास्त्रों का उपयोग करने में कठिनाई होती है। आज हम इस पाठ के माध्यम से जानने जा रहे हैं कि नक्षत्र और ग्रह क्या हैं इनके द्वारा हमारे जीवन में क्या प्रभाव पडता है। वस्तुत: सम्पूर्ण ज्योतिषरूपी वृक्ष की जड नक्षत्र और ग्रह ही हैं। इनकेमाध्यमसे ही काल के शुभाशुभ परिणाम का ज्ञान होता है। आकाश में हमें चमकते हुए अनगिनत तारे दिखते हैं । इन्हीं तारों में कुछ पुंज हमारे लिए अत्यन्त प्रभावी हैं। जिनका प्रभाव हमारे जीवन मे बहुत ही निकटतम रूप से प्राप्त होता है। उनको हम नक्षत्र के नाम से जानते हैं। ग्रहों की स्थिति वा उनके स्थान का ज्ञान का मूलस्रोत नक्षत्र ही हैं। हमारे आचार्यों ने नक्षत्रों के गुण धर्म के अनुसार ग्रहों के फलों का अनुभव किया उसी का समग्र रूप आज हमें फलित शास्त्र के रूप में प्राप्त हो रहा है। ज्योतिष के वास्तिवक नामकरण का आधार यही नक्षत्र हैं।

1.2 उद्देश्य

मित्रों इन्हीं नक्षत्रों के गुण धर्म से जब ग्रह का सम्बन्ध होता है तो वह गुण धर्म सभी चराचर को प्रभावित करते हैं। हमें ग्रहों का गुण जानने के लिए नक्षत्रों का गुण भी जानना चाहिए। राशियों की प्रकृति भी जाननी चाहिए जिसके आधार पर हम ग्रहों का प्रभाव समझ पाएँगें।

1- इस पाठ को पढकर हम नक्षत्रों का गुण धर्म प्रकृति को जानेंगे।

2- इस पाठ के माध्यम से हम नक्षत्रों की विविध संज्ञाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

3- ग्रहों का स्वरूप और उनके गुण पदार्थों का जानेंगे।

4- ग्रहों का उच्चस्थान, नीच स्थान काल तत्त्व आदि का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

1.3 मुख्यभाग

नक्षति शोभां गच्छति इस व्युत्पत्ति के आधार पर आकाशमण्डल में सुशोभित होने वाले, चमकने वाले तारमण्डलों को नक्षत्र कहते हैं। हमारे ज्योतिष शास्त्र में नक्षत्र ही आधार भूत हैं। सम्पूर्ण भचक्र को 27 नक्षत्रों में बाँटा गया है। इन्हीं नक्षत्रों के समूह को राशि कहते हैं। आप तो जानते ही हैं कि राशियों की संख्या 12 है। हमारा भचक्र 360 अंशों का होता है। उसके अनुसार भचक्र को 12 भागोंमें विभाजित करने पर हमें 30 अंश प्रत्येक भाग को मिलते हैं। $12x30^0= 360^0$। इस क्रम में नक्षत्रों के विभाजन करने पर प्रत्येक नक्षत्र 13^0 20’ कला का अर्थात् 800 कला का होता है। प्रत्येक नक्षत्र में 4 चरण होते हैं। नक्षत्र का प्रत्येक चरण 3-20 कला का होता है। राशि चक्र

के 27 समभाग करने पर 27 नक्षत्रों का स्थान निश्चित हो जाता है। 1 राशि में सवा दो नक्षत्र अर्थात् 9 चरण होते हैं। शिशु का जिस चरण में जन्म होता है उसी आद्यक्षर से उसका नामकरण किया जाता है। जैसे किसी का रेवती के तृतीय चरण में जन्म हुआ तो उसका नाम चन्द्रपकाश या अन्य च से प्रारम्भ होने वाले नामकरण किए जा सकते हैं।

नक्षत्र के पर्याय – गण्ड, भ, र्क्ष, तारा, उडु, धिष्ण्य ऋक्ष आदि ये नक्षत्रों के पयार्य कहे गए हैं।

नक्षत्रों के नाम

अश्विनी भरणी चैव कृत्तिका रोहिणी मृग:।
आर्द्रापुनर्वसूपुष्यस्तथाऽश्लेषा मघा तत:।
पूर्वाफाल्गुनिका तस्मादुम्मराफाल्गुनी तत:।
हस्ताश्चित्रा तथा स्वाती विशाखा तदनन्तरम्।
अनुराधा ततो ज्येष्ठा मूलं चैव निगद्यते।
पूर्वाषाढोत्तराषाढा त्वभिजिच्छ्रवणस्तत:।
धनिष्ठा शततारख्यं पूर्वाभाद्रपदा तत:।
उत्तराभाद्रपदाश्चैव रेवत्येतानिभानि च।[1]

क्रम	नक्षत्र	चरण	राशि
1	अश्विनी	चू, चे, चो, ला	
2	भरणी	ली, लू, ले, लो	
3	कृत्तिका	अ, इ, उ, ए	मेष (कृ. के 1 चरण तक)
4	रोहिणी	ओ, वा,वी, वू	
5	मृगशिरा	वे, वो, का, की	वृष (मृग. के 2 चरण तक)
6	आर्द्रा	कु,घ, ड.,छ	
7	पुनर्वसु	के, को, हा, ही	मिथुन (पुन. के 3 चरण तक)
8	पुष्य	हू, हे, हो, डा	
9	श्लेषा	डी, डू, डे, डो	कर्क (श्लेषा के 4 चरण तक)
10	मघा	मा, मी, मू, मो	
11	पूर्वाफाल्गुनी	मो, टा, टी, टू	
12	उत्तराफाल्गुनी	टे,टो, पा, पी	सिंह (उ.फा. के 1 चरण तक)
13	हस्त	पू, ष, ण, ठ	
14	चित्रा	पे, पो, रा, री	कन्या (चि. के 2 चरण तक)

1 बृहदवकहडाचक्रम् नक्षत्र विवेक श्लोक 1,2,3, 4

15	स्वाती	रू, रे, रो, ता	
16	विशाखा	ती, तू, ते, तो	तुला (वि. के 1 चरण तक)
17	अनुराधा	ना, नी, नू, ने	
18	ज्येष्ठा	नो, या, यी, यू	वृश्चिक (ज्ये. के 4 चरण तक)
19	मूल	ये, यो, भा, भी	
20	पूर्वाषाढा	भू, ध, फ, ढ	
21	उत्तराषाढा	भे, भो, जा, जी	धनु (उ.षा. के 1 चरण तक)
22	श्रवण	जू, जे, जो, खा	
23	धनिष्ठा	गा, गी, गू, गो	मकर (धनि. के 2 चरण तक)
24	शतभिषा	गो, सा, सी, सू	
25	पूर्वाभाद्रपद	से, सो, दा, दी	कुम्भ (पू.फा. के 3 चरण तक)
26	उत्तराभाद्रपद	दू, थ, झ, ञ,	
27	रेवती	दे, दो, चा, ची	मीन

अभिजित नक्षत्र- अभिजित की भी गणना नक्षत्रों में की जाती है। वस्तुत:यह नक्षत्र अन्य नक्षत्रों की अपेक्षा बहुत दूर होने के कारण इसका उपयोग कम किया जाता है। उत्तराषाढा की अन्तिम चरण की 15 घटी एवं श्रवण के आरम्भ की 4 घटी = 19 घटी अभिजित का मान विद्वानों ने निश्चित किया है। मुख्यत:नक्षत्र27 ही हैं अभिजित सहित गणना करने पर 28 नक्षत्र हो जाते हैं।

उपखण्ड एक

प्रिय छात्रों आपने नक्षत्रों के नाम व उनसे राशि का निर्माण अच्छे से समझ लिया होगा। आगे नक्षत्रों का स्वरूप जानने के लिए नक्षत्रों के स्वामी और नक्षत्रों की संज्ञा का ज्ञान होना आवश्यक है। जिसके द्वारा हम उनकी प्रकृति और उपयोग समझ सकते हैं। इसलिए इस खण्ड में हम नक्षत्रो के स्वामी एवं नक्षत्रों के कार्य और गुण को दर्शाने वाली संज्ञाओं का अध्ययन करेंगे।

नक्षत्रों के स्वामी

नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृत् रुद्रादितिज्योरगा।
ऋक्षेशा पितरोभगोऽर्यमरवी त्वष्टासमीर: क्रमात्।
शक्राग्नीखलु मित्रइन्द्रनिऋति: क्षीराणिविश्वेविधि:।
गोविन्दो वसुतोयपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधा।।[2]

---

2. मुहूर्तचिन्तामणि नक्षत्राध्याय कश्लो 1

इनका क्रमश: विवरण अध: प्रदत्त तालिका में देखें। नक्षत्रोंके स्वामी के आधार पर मुहूर्तादि का निर्णय किया जाता है। साथ ही जब नक्षत्रदोष हेतु शान्ति की आवश्कता होती है तब नक्षत्र स्वामी के जप व दान का विधान शास्त्रों में बताया गया है।

क्रम	नक्षत्र	स्वामी
1	अश्विनी	नासत्य, दस्र,
2	भरणी	अन्तक , यम
3	कृत्तिका	अग्नि,
4	रोहिणी	धाता, ब्रह्मा
5	मृगशिरा	शशभृत्, शशी
6	आर्द्रा	रुद्र
7	पुनर्वसु	अदिति
8	पुष्य	ईज्य , गुरु
9	श्लेषा	सर्प
10	मघा	पितृ
11	पूर्वाफाल्गुनी	भग, योनि
12	उत्तराफाल्गुनी	अर्यमा
13	हस्त	रवि
14	चित्रा	त्वष्टा
15	स्वाती	वायु
16	विशाखा	शक्राग्नी
17	अनुराधा	मित्र
18	ज्येष्ठा	इन्द्र
19	मूल	निऋति
20	पूर्वाषाढा	जल
21	उत्तराषाढा	विश्वेदेव
22	श्रवण	गोविन्द
23	धनिष्ठा	वसु
24	शतभिषा	वरुण
25	पूर्वाभाद्रपद	अजपाद
26	उत्तराभाद्रपद	अहिर्बुध्न्य नामक सूर्य
27	रेवती	पूषा नामक सूर्य

इसके बाद हम नक्षत्रों की संज्ञा विशेष का ज्ञान करेंगे।

ध्रुव संज्ञक नक्षत्र

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम्।

तत्र स्थिरं बीजगेह-शान्त्यारामदिसिद्धये।।[3]

अर्थ- तीनों उत्तरा, रोहिणी और रविवार ये सभी ध्रुव संज्ञक हैं । इन नक्षत्रों में कृषि से सम्बन्धित कार्य, शान्तिकार्य, पौष्टिक कार्य, घर से सम्बन्धित कार्य और वाटिका लगाना आदि कार्य शुभ कहे गए हैं।

चर-चल संज्ञक नक्षत्र

स्वात्यादित्ये श्रुतेः त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम्।

तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम्।।[4]

अर्थ- स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और सोमवार ये चर और चल संज्ञक नक्षत्र कहलाते हैं। इन नक्षत्रों में वाहनादि कार्य और पेड-पौधे लगाना आदि कार्य शुभ होते हैं ।

उग्रगणनक्षत्र

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा।

तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति।[5]

अर्थ- तीनों पूर्वा, भरणी और मघा ये नक्षत्र उग्र/ क्रूर संज्ञक कहे गए हैं। इनके नाम के अनुसार सभी उग्रकार्य इन नक्षत्रों में सम्पादित करना चाहिए। साथ ही अग्नि से सम्बन्धित कार्य जैसे- ईंट आदि पकाने के लिए भट्टा लगाना, चूल्हा, गैस आदि का कार्य करना शुभ होता है। इसी क्रम में विष, रसायन, आदि का कार्य भी इन नक्षत्रों में लाभप्रद होता है।

मिश्रगणनक्षत्र

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।

तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ।। [6]

---

3. बृहदवकहडाचक्रम् नक्षत्र विवेक श्लोक 6
4. बृहदवकहडाचक्रम् नक्षत्र विवेक श्लोक7
5. मुहूर्तचिन्तामणि अध्याय 4 .श्लो 2
6. मुहूर्तचिन्तामणि अध्याय .श्लो 25

अर्थ- विशाखा, कृत्तिका और बुधवार मिश्र व साधारण संज्ञक हैं। इनमें अग्निकार्य, मशीन आदि का कार्य करना, मिश्र कार्य (जो अन्य नक्षत्रों में कहे गए हैं) वृषोत्सर्गादि कार्य भी किए जा सकते हैं।

लघुगणनक्षत्र

हस्ताश्वि -पुष्याभिजित: क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा।
तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषाशिल्पकलादिकम् ।।[7]

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित और गुरुवार ये लघु/ क्षिप्र संज्ञक नक्षत्र कहे गए हैं। इनमें व्यापार से सम्बन्धित सभी कार्य (दुकान खोलना, व्यापार आरम्भ करना, खरीदना, बेचना) , स्त्री प्रेम सम्बन्धित कार्य, शिक्षा से सम्बन्धित कार्य, कलात्मक कार्य, शिल्पकार्य आदि शुभ होते हैं।

मृदुगणनक्षत्र

मृगान्त्यचित्रा- मित्रर्क्षं मृदु-मैत्रं भृगुस्तथा।
तत्र गीताम्बरक्रीडा मित्रकार्यं विभूषणम् ।। [8]

अर्थ- मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा और शुक्रवार ये मृदु संज्ञक नक्षत्र हैं। इनमें संगीत से जुडे कार्य, वस्त्र से सम्बन्धित कार्य व व्यवसाय, खेल के कार्य, मित्रों के कार्य और आभूषणादि कार्य शुभ होते हैं।

तीक्ष्ण/ दारुणसंज्ञक नक्षत्र

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरितीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदा: पशुदमादिकम् ।।[9]

अर्थ- मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्लेषा और शनिवार ये सभी तीक्ष्ण और दारुण संज्ञक हैं। इनमें अभिचार कार्य, उग्र कार्य, पशुओं का नियन्त्रण आदि कार्य करना शुभ है।

अब इन्हीं सभी विषयों को सूची बद्ध प्रस्तुत किया जा रहा है।

क्रम	संज्ञा	नक्षत्र	दिन	कार्य
1	ध्रुव	तीनों उत्तरा, रोहिणी	रविवार	स्थिर, बीज, गृह, शान्ति,

7. मुहूर्तचिन्तामणि अध्याय .श्लो 26
8. मुहूर्तचिन्तामणि अध्याय .श्लो 27
9. मुहूर्तचिन्तामणि अध्याय .श्लो 28

				वाटिका
2	चर-चल	स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा	सोमवार	गजाश्वारोहण , वाटिका, भ्रमण
3	उग्र-क्रूर	तीनों पूर्वा, भरणी, मघा	मंगलवार	घात, अग्नि, शाठ्य, विष, शस्त्रादि
4	मिश्र-साधारण	विशाखा, कृत्तिका	बुधवार	अग्निकार्य, मिश्रकार्य, वृषोत्सर्गादिकार्य
5	क्षिप्र-लघु	हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित	गुरुवार	पण्य- रति- ज्ञान- आभूषाणादि
6	मृदु-मैत्र	मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा	शुक्रवार	गीत, वस्त्र, क्रीडा, मित्र कार्य, भूषणादि
7	तीक्ष्ण-दारुण	मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्लेषा	शनिवार	घात, उग्र, पशुदमन,

अभ्यास प्रश्न

1- र्क्ष किसे कहते हैं?

2- नक्षत्र का अर्थ क्या है?

3- अभिजितको मिलाकर कितने नक्षत्र होते हैं?

4- यम किस नक्षत्र के स्वामी हैं?

5- नक्षत्र का कलात्मक मान कितना होता है?

उपखण्ड दो

प्रिय छात्रों , मुहूर्त के अतिरिक्त नक्षत्रों का उपयोग जन्म, यात्रा, पूजन जपादि कार्यों नष्टवस्तु के ज्ञान में भी नक्षत्रों का उपयोग किया जाता है। जब किसी शिशु का जन्म होता है तब प्रश्न किया जाता है कि बालक मूलजन्मा तो नहीं है। ये मूल क्या कहीं मूल नक्षत्र की बात तो नहीं की जा रही है। आप भी यही सोच रहे होंगे। तो आईए इस विषय को समझते हैं। मित्रों यदि आप नक्षत्रों और राशियों को ध्यान से देखें कि कुछ नक्षत्रों के अन्तसे अथवा आरम्भ से राशि का आरम्भ होता है। चलिए उनको खोजते हैं।

तो आपने दे,खा कि रेवती में मीन का अन्त और अश्विनी में मेष काआरम्भ होता है। आगे चलिए श्लेषा में कर्क का अन्त और मघा में सिंह का आरम्भ होता है। इसके बाद ज्येष्ठा में वृश्चिक का अन्त और मूल में धनु का आरम्भ होता है।

गण्डान्त दोष-

रेवती, अश्विनी, श्लेषा, मघा, ज्येष्टा और मूल ये 06 नक्षत्र ही गण्डान्त/मूल कहलाते हैं। इनमें जन्म लेने वालो को मूलजन्मा कहते हैं। मूल में जन्म लेने वालों की मूल शान्ति शास्त्रों में बताई गई हैं।

नष्टवस्तु ज्ञानार्थ नक्षत्रों की संज्ञा

प्रिय छात्रों लोक व्यवहार में गत वस्तु के ज्ञान के लिए भी ज्योतिष का उपयोग किया जाता है। चोरी हुई, रखकर भूल गई आदि वस्तुओं के ज्ञान के लिए बताई जा रही नक्षत्र संज्ञा का प्रयोग किया जा सकता है। रोहिणी नक्षत्र से अन्धक, मन्द, मध्य और सुलोचन संज्ञक4 भागों में नक्षत्रों को बाँटा गया है।

जैसे-

अन्धकं मन्दनेत्रं च मध्यचक्षु: सुलोचनम्।
गणयेद्रोहिणीपूर्वं सप्तावृत्या पुन: पुन:।।[10]

क्रम/संज्ञा	नक्षत्र	नक्षत्र	नक्षत्र	नक्षत्र	नक्षत्र	नक्षत्र	नक्षत्र	गतवस्तु फल
अन्धाक्ष	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	वि.	पू.षा.	धनि.	रेवती	शीघ्र लाभ
मन्दाक्ष	मृग.	श्लेषा	हस्त	अनु.	उ.षा.	शत.	अश्वि.	प्रयत्न लाभ
मध्याक्ष	आर्द्रा	मघा	चि.	ज्ये.	अभि.	पू:भा.	भरणी	केवल जानकारी मिले
सुलोचन	पुन.	पू.फा.	स्वा.	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृत्तिका	अलाभ

अभ्यास प्रश्न

6- गण्डान्त नक्षत्रों की संख्या कितनी है?

7- मूलजन्मा किसे कहते हैं?

8- ज्येष्ठा में किस राशि का अन्त होता है?

9- अश्विनी से किस राशि का आरम्भ होता है?

10- अन्धक नक्षत्र में गई वस्तु का फल क्या है?

10. बृहदवकहडाचक्रम् नक्षत्र विवेक श्लोक 14

1.4 मुख्यभाग खण्ड दो

फलित ज्योतिष शास्त्र में मुख्यत: ग्रहों के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। पराशर के अनुसार पूर्वाभिमुख चलते हुए नक्षत्रों को भोग करने वालों को ग्रह कहते हैं। यथा- गच्छन्तो भानि गृह्णन्ति सततं ये तु ते ग्रहा:। ग्रहों की संख्या 9 है।

अथ खेटा रविश्चन्द्रो मंगलश्च बुधस्तथा।
गुरु: शुक्र: शनी राहु- केतुश्चैते यथक्रमम्।। [11]

सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु
विशेष- राहु और केतु को छाया ग्रह माना जाताहै। इनका कोई पिण्ड नहीं है।

ग्रहों के पर्याय-

क्रम	ग्रह	पर्याय
1	सूर्य	हेलि, तपन, दिनकर, दिवाकर, भानु, पूषा, अरुण , अर्क
2	चंद्र	शीतद्युति, सोम, ग्लौ, इन्दु
3	मंगल	आर, वक्र, क्षितिज, रुधिर
4	बुध	सौम्य, वित्, ज्ञ
5	गुरु	जीव, देवेज्य
6	शुक्र	काव्य, सित, दावनेज्य
7	शनि	सूर्यपुत्र, कोण, मन्द, आर्कि
8	राहु	सर्प, फणि,तम
9	केतु	ध्वज, शिखी

ग्रहों का स्थान

हम यहाँ ग्रहों की राशियाँ जानेंगे। सभी ग्रह अलग-अलग राशियों के स्वामी होते हैं। जैसे-
मेषवृश्चिकयोर्भौम: शुक्रो वृषतुलाभृतो:।
बुध: कन्यामिथुनयो: कर्कस्वामी तु चन्द्रमा:।
स्यान्मीनधन्विनोर्जीव: शनिमकरकुम्भयो:।
सिंहस्याधिपति: सूर्य:कथितो गणकोत्तमै:।[12]

11 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो 11 .
12 भुवनदीपक श्लो 12

अर्थात्- मेष-वृश्चिक के मंगल, वृष-तुला के शुक्र, मिथुन-कन्या के बुध, कर्क के चंद्रमा, धनु-मीन के गुरु, मकर-कुंभ के शनि और सिंह के सूर्य स्वामी हैं। जब कहीं राशीश या स्वगृही आदि लिखा मिले तब हमें ग्रह अपनी राशि में हैं यह समझना चाहिए।

ग्रहों का उच्च नीचादि ज्ञान

ग्रह अपनी राशि में होने से स्वगृही कहलाते हैं। जब यही ग्रह अपने उच्च राशि में होते हैं तब ये उच्चगृही कहलाते हैं।

अज-वृष-मृगाङ्गना-कुलीरा-झष-वणिजौ च दिवाकरादितुङ्गा:।
दश-शिखि-मनुयुक्-तिथि-इन्द्रियांशै:, त्रिनवकविंशतिश्च तेऽस्तनीचा:।[13]

अर्थात्- सूर्य मेष में, चंद्र वृष में, मंगल मकर में, बुध कन्या में, गुरु कर्क में, शुक्र मीन में और शनि तुला में उच्च का होता है। उक्त राशियों में क्रमश: 10, 03, 28, 15, 05,27,20 इन अंशो में ग्रह उच्च होते हैं। ग्रह के उच्च स्थान से सप्तम स्थान नीच स्थान कहे गए हैं। उच्च स्थान में ग्रह बलवान और नीच में निर्बल होता है।

मूलत्रिकोण स्थान

रवे: सिंहे नखांशाश्च त्रिकोणमपरे स्वभम्।
उच्चम्- इन्दोर्वृषे त्र्यंशा: त्रिकोणमपरेऽशका:।
मेषेऽर्कांशास्तु भौमस्य त्रिकोणमपरे स्वभम्।
उच्चं बुधस्य कन्यायामुक्तं पंचदशांशका:।
तत: पंचांशका: प्रोक्तं त्रिकोणमपरे स्वभम्।
चापे दशांशा जीवस्य त्रिकोणमपरे स्वभम्।
तुले शुक्रस्य तिथ्यंशास्त्रिकोणमरे स्वभम्।
शने: कुम्भे नखांशाश्च त्रिकोणमपरे स्वभम्।। [14]
इन सभी का विवरण तालिका में देखा जा सकता है।

ग्रहों का उच्च नीच मूलत्रिकोणादि बोधिका

	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु

13 बृहज्जातकम् अध्याय 01, श्लो 13
14 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो52.-54

स्वगृह	सिंह	कर्क	मेष , वृश्चिक	मिथुन कन्या	धनु, मीन	वृष, तुला	मकर, कुम्भ	कन्या	मीन
उच्च	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला	मिथुन	धनु
	10^0	03^0	28^0	15^0	05^0	27^0	20^0		
नीच	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष	धनु	मिथुन
	10^0	03^0	28^0	15^0	05^0	27^0	20^0		
मूलत्रिकोण	सिंह	वृष	मेष	कन्या	धनु	तुला	कुम्भ		
	20^0	3^0-30^0	0^0 -12^0	15^0-20^0	0-10^0	0-15^0	0-20^0		

राहुकेतु का गृहोच्चनीचस्थानादि

यद्बुधस्य ग्रहस्योच्चं राहोस्तद् गृहमुच्यते।
यद्बुधस्य गृहं राहो: तदुच्चं ब्रुवते बुधा:।
कन्याराहुगृहं प्रोक्तं राहूच्चं मिथुनं स्मृतम्।
राहुनीचं धनुर्वर्णादिकं शनिवदस्य च ।[15]

अर्थ- जो बुध का उच्च स्थान है वही राहु की राशि जाननी चाहिए। जो बुध का गृह है वही राहु का उच्च स्थान है। इसके अनुसार कन्या राहु का स्वगृह, मिथुन उच्च और धनु नीच स्थान है। राहु के वर्णादि का ज्ञान शनि के अनुसार करना चाहिए।

ग्रहस्वरूपादि ज्ञान

भार्गवेन्दु जलचरौ ज्ञजीवौ ग्रामचारिणौ।
राहुक्षितिजमन्दार्का ब्रुवतेऽरण्यचारिण:।[16]

अर्थ- शुक्र और चंद्रमा जलचर हैं, बुध और गुरु ग्रामचर, राहु मंगल, शनि एवं सूर्य वनचरग्रह कहे गए हैं।

प्रयोजन- ग्रह अपने स्थान में बलवान होते हैं। किसी स्थान विशेष या नष्ट वस्तु के स्थान आदि का ज्ञान करने के लिए भी इनका उपयोग किया जाता है।

15. भुवनदीपक 18-19
16. भुवनदीपक 23

ग्रहों का आत्मासंज्ञादि का ज्ञान

दिवाकरो हि विश्वात्मा मन: कुमुदबान्धव:।
सत्त्वं कुजो बुधो वाणीदायको विबुधै: स्मृत:।।
देवेज्यो ज्ञानसुखदो भृगुवीर्यप्रदायक:।
क्रूरदृग् विबुधैरुक्तच्छायासूनुश्च दु:खद:।।

भावार्थ- सूर्य विश्व की आत्मा अर्थात् पूरे ब्रह्माण्ड की आत्मा है। चंद्र मन,मंगल साहस,बुध वाणी, गुरु ज्ञान, शुक्र वीर्यदाता अर्थात काम और शनि दु:ख है।

ग्रहों की राजसंज्ञादि

राजानौ भानुहिमगू नेता ज्ञेयो धरात्मज:।
बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभागर्वौ।।
प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ।
एवं क्रमेण वै विप्र! सूर्यादींस्तु विचिन्तयेत्।।[17]

भावार्थ- सूर्य और चंद्रमा राजा, मंगल नेता, बुध राजकुमार, गुरु और शुक्र सचिव (मंत्री) और शनि दास (सेवक) है।

अभ्यास प्रश्न-

11- मेष का स्वामी कौन है ?
12- वृष में कौन सा ग्रह उच्च होता है ?
13- शनि की मूलत्रिकोण राशि बताएँ।
14- राहु का उच्च स्थान क्या है ?
15-गुरु कब नीच कहलाता है ?

ग्रहों के वर्ण

रक्तश्यामो दिवधीशो गौरगात्रो निशाकर:।
नातिदीर्घ: कुजो रक्तो दूर्वाश्यामो बुधस्तथा।।
गौरगात्रो गुरुर्ज्ञेय: शुक्र: श्यामस्तथैव च।

17 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .14-15

कृष्णदेहो रवे: पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम।।[18]

भावार्थ- सूर्य का लाल एवं श्याम से मिश्रित, चंद्र का गौरवर्ण, मंगल का रक्त वर्ण, बुध का दूर्वा के समान सांवला, गुरु का गौर वर्ण, शुक्र श्यामल और शनि का कृष्णवर्ण ऋषियों ने कहा है।

ग्रहों के देवता

वह्न्यम्बु शिखिजा विष्णु-विडौज: शचिका द्विज।

सूर्यादीनां खगानां तु देवा ज्ञेया: क्रमेण च।।[19]

भावार्थ- अग्नि, वरुण, कार्तिकेय, विष्णु, इन्द्र, शची (इन्द्र की पत्नी) और ब्रह्मा ये सूर्य से शनि पर्यन्त ग्रहों के देवता कहे गए हैं। छात्रों ग्रह दोष निवारण हेतु पीडित ग्रह के देवता का पूजनादि कार्य शान्तिकारक होता है।

ग्रहों का पुरुषत्वादि

क्लीबौ द्वौ सौम्यशौरी च युवतीन्दुभृगू द्विज।

नरा: शेषाश्च विज्ञेया भानुभौमो गुरुस्तथा।।[20]

भावार्थ- बुध और शनि –नपुंसक, चंद्र और शुक्र- स्त्री, अन्य सभी ग्रह पुरुष हैं।

ग्रहों के तत्त्व

अग्नि-भूमि-नभस्तोय-वायव: क्रमतो द्विज।

भौमादीनां ग्रहाणां तु तत्त्वान्येतानि वै क्रमात्।।[21]

भावार्थ- मंगल- अग्नि, बुध- भूमि, गुरु- आकाश, शुक्र- जल और शनि- वायु तत्त्वों के कारक कहे गए हैं। जो ग्रह बलवान होगा उस तत्त्व के गुण जातक में अधिक पाए जाते हैं।

ग्रहों के वर्ण और गुण

हम ग्रहों के वर्ण और गुणों को जानेंगे। ग्रहों के अन्दर जिस वर्ण का जिस गुण का प्रभाव रहता है उसी वर्ण का प्रभाव जातक में अधिक पाया जाता है।

ग्रहो की जाति संज्ञा व गुण

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज।

---

18 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .17-18

19 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .19

20 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .20

21 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .21

शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनि: शूद्रो द्विजोत्तम।।

सात्त्विका भानुचन्द्रेज्या राजसौ सौम्यभार्गवौ।

तामसौ कुजमन्दौ तु ज्ञेया विद्वद्वरै: सदा।।[22]

भावार्थ- ब्राह्मण- गुरु और शुक्र, क्षत्रिय- मंगल और सूर्य, वैश्य- चंद्रमा और बुध, शूद्र- शनि

सत्वगुण- सूर्य,चंद्र और गुरु। रजोगुण- बुध और शुक्र। तमोगुण- मंगल और शनि

राहुकेतु के लिए विशेष -

राहुश्चाण्डालजातिश्च केतुर्जात्यन्तरं तथा।

अर्थात्- राहु चाण्डाल जाति का एवं केतु अन्त्यज (नीच कर्म करने वाले) जाति का है।

ग्रहों का स्वरूप

प्रिय छात्रों ग्रहों का एक स्वरूप विशेष आचार्यों ने फलितशास्त्र मे वर्णित किया है उस स्वरूप के अनुसार ही बलवान ग्रह जातक को प्रभावित करता है। जैसे किसी के लग्न मे सूर्य का प्रभाव अधिकाधिक हो तो उस जातक का वर्ण सूर्यस्वरूप के समान होगा । अत: हमें ग्रहों का स्वरूप जानना अत्यावश्यक है।

सूर्य और चंद्र का स्वरूप

मधुपिंगलदृक् चतुरस्रतनु: पित्तप्रकृति: सविताल्पकच:।

तनुवृत्ततनुर्बहुवातकफ: प्राज्ञश्च शशी मृदुवाक् शुभदृक्।।[23]

अर्थ- वारामिहिर कहते हैं कि सूर्य का स्वरूप - शहद के समान पीली दृष्टि वाला, लम्बाई चौडाई में तुल्य अर्थात् न बहुत लम्बा न बहुत छोटा (मध्यम शरीर) पित्तप्रकृति और कम केशयुत होता है। चंद्र का स्वरूप - गोल आकृति का छोटा शरीर, बातकफाधिक, बुद्धिमान् , मधुरभाषी, और सुन्दर नेत्र वाला होता है।

मंगल और बुध का स्वरूप

क्रूरदृक् तरुणमूर्तिरुदार: पैत्तिक: सुचपल: कृशमध्य:।

श्लिष्टवाक्सततहास्यरुचिर्ज्ञ: पित्तमारुतकफप्रकृतिश्च।।

22 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .22-23

23 बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .24

अर्थ- मंगल का स्वरूप - तरूणावस्था वाला, क्रूर दृष्टि , दानी, पित्त प्रकृति, चंचलस्वभाव और शरीर के मध्यभाग में दुर्बल होता है।

बुध का स्वरूप- कठिन भाषा का ज्ञाता (शास्त्रीय भाषा का प्रयोग करने वाला) हास्य प्रिय, वात, कफ और पित्त प्रकृति से युक्त होता है।

गुरु और शुक्र का स्वरूप

बृहत्तनु: पिंगलमूर्धजेक्षणो बृहस्पति: श्रेष्ठमति: कफात्मज:।
भृगु: सुखीकान्तवपु: सुलोचन: कफानिलात्मासितवक्रमूर्धज:।।

अर्थ- गुरु का स्वरूप- मोटा शरीर, पिंगल केश, श्रेष्ठ बुद्धि वाला और कफात्मक प्रकृति वाला होता है।

शुक्र का स्वरूप- सुखमय शरीर का भोगी, सुन्दर नेत्र वाला, कफवायु प्रकृति और टेढे बालों वाला होता है।

शनि का स्वरूप

मन्दोऽलस: कपिलदृक्कृशदीर्घगात्र:।
स्थूलद्विज: परुषरोमकचोऽनिलात्मा।।[24]

अर्थ- शनि का स्वरूप- कर्म में आलस्य, कपिल वर्ण के आँखें , लम्बा शरीर, मोटे दॉतों वाला एवं वातप्रकृति वाला होता है।

ग्रहों के धातु

अस्थि रक्तस्तथा मज्जा त्वङ्मेदो वीर्यमेव च।
स्नायुरेते धातव: स्यु: सूर्यादीनां क्रमाद् द्विज।।[25]

अर्थ- अस्थि , रक्त, मज्जा, त्वचा, मेदा, वीर्य और स्नायु के क्रमश: सूर्यादि ग्रहों के धातु कहे गए हैं।

ग्रहों के देवालयादि स्थान

देवालय-पयोवह्निक्रीडादीनां तथैव च।
कोश-शय्याद्युत्कराणामीशा: सूर्यादय: क्रमात्।।[26]

---

[24] बृहज्जातकम् 8.9।2.10.11

[25] बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .32

अर्थ- सूर्यादि ग्रहों के क्रमश: मन्दिर, जलाशय, अग्निस्थान, क्रीडास्थान, कोशागार, शयनगृह और कूडा-कचडा आदि का स्थान कहा गया है।

ग्रहों का कालादि विवरण

अयनक्षणवारर्त्तु-मासपक्षसमा द्विज।
सूर्यादीनां क्रमाज्ज्ञेया निर्विशंङ्कं द्विजोत्तम।।[27]

अर्थ-अयन (6 मास), क्षण,वार (दिन), ऋतु,मास, पक्ष और वर्ष ये सूर्यादि ग्रहों के काल बताए गए हैं।

ग्रहों का रस

कटुश्च लवणस्तिक्तो मिश्रितो मधुरोऽम्लक:।
कषाय: क्रमशो ज्ञेया: सूर्यादीनामिमे रसा:।।[28]

अर्थ- कडवा,नमकीन,तीखा, मिश्रित, मीठा, खट्टा, कसैला, ये सूर्यादि शनि पर्यन्त ग्रहों के रस बताए गए हैं। छात्रों ग्रहों के रस से हम जातक के भोज्यपदार्थादि का ज्ञान कर सकते हैं।

ग्रहों के दिक्काल बल

बुधेज्यो बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे।
वारुणे सूर्यपुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे।
निशायां बलिनश्चन्द्र-बुध-सौरा भवन्ति हि।
सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिने शेषा द्विजोत्तम। ।
कृष्णे च बलिन: कू्रा: सौम्या वीर्ययुता सिते।
सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपर:।।
अब्दमासदिवा होराऽधीशास्तु बलवत्तर:।
श.भौ.बु.गु.शु. सौराद्या वृद्धितो बलवत्तरा:।।[29]

---

[26] बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .33
[27] बृहत्पाराशरहोराशास्त्र अध्याय 03, श्लो .34
[28] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्र -335
[29] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्र 36-3,37,38,39

भावार्थ- बुध-गुरु पूर्व में बली, सूर्य - मंगल दक्षिण में , शनि पश्चिम में और शुक्र -चंद्र उत्तर में बली होते हैं।

विशेष- लग्नस्थान को पूर्व, दशम को दक्षिण , सप्तम भाव को पश्चिम और चतुर्थ को उत्तर कहते हैं।

- पापग्रहकृष्ण पक्ष में एवं शुभग्रह शुक्ल पक्ष में बलवान होते हैं।
- पाप ग्रह दक्षिणायन में एवं शुभग्रह उत्तरायण में बली होते हैं।
- वर्ष का स्वामी से मास का स्वामी उससे दिन का स्वामी उससे होरा का स्वामी उत्तरोत्तरबलवान होते हैं।
- शनि, मंगल, बुध, गुरु,शुक्र, चंद्र औरसूर्य ये क्रमश: उत्तरोत्तर बली होते हैं।

अब हम ग्रहों के सम्पूर्ण स्वरूप का तालिका के माध्यम से अध्ययन करेंगे।

संज्ञा/ ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
शुभाशुभ	क्रूर	शुभ	अशुभ	शुभ परन्तु युति के अनुसार शुभाशुभ	शुभ	शुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ
आत्मादि	आत्मा	मन	सत्त्व	वाणी	ज्ञान	काम	दु:ख		
पुरुष/स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	नपुंसक	पुरुष	स्त्री	नपुंसक		
राजा आदि	राजा	रानी	नेता	राजकुमार	मंत्री	मंत्री	सेवक		
देवता	अग्नि	जल	कार्तिकेय	विष्णु	इन्द्र	इन्द्राणी	ब्रह्मा		
पंचतत्व			अग्नि	भूमि	आकाश	जल	वायु		
वर्ण (जाति)	क्षत्रिय	क्षत्रिय	वैश्य	वैश्य	ब्राह्मण	ब्राह्मण	शूद्र	चाण्डाल	अन्त्यज
रस	कटु	नमकीन	तीखा	मिश्रित	मीठा	खट्टा	कसैला		
धातु	अस्थि	रक्त	मज्जा	त्वचा	शरीर	वीर्य	स्नायु		
काल	अयन	क्षण	वार	ऋतु	मास	पक्ष	वर्ष		
सत्वादिगुण	सत	सत	तम	रज	सत	रज	तम		

जलचरादि	वनचर	जलचर	वनचर	ग्रामचर	ग्रामचर	जल चर	वनचर	वन चर	
स्थान	देवालय	जल स्थान	अग्नि स्थान	क्रीडास्थल	कोशागा र	शय नागा र	कूडा स्थान		
दिग्बल	दक्षिण	उत्तर	दक्षिण	पूर्व	पूर्व	उत्त र	पश्चिम		
कालबल	दिवा	रात्रि	दिवा	सर्वदा	दिवा	दिवा	रात्रि		

अभ्यास प्रश्न

16- ग्रहों में राजकुमार किसे कहते हैं?

17- कुण्डली में दशमस्थान की कौन सी दिशा होती है?

18- नपुंसक ग्रह कौन हैं?

19- मोटे दाँत वाला स्वरूप किस ग्रह का कहा गया है?

20-स्नायु सूचक ग्रह कौन है ?

1.5 सारांश

प्रिय छात्र आपने नक्षत्रों एवं ग्रहों का ठीक प्रकार से अध्ययन किया। आपने जाना कि नक्षत्रों की संख्या 27 अभिजित सहित 28 है। नक्षत्रों के आधार पर मूहूर्त एवं ग्रहों के फल का निर्णय होता है। नक्षत्रों की संज्ञा के अनुसार उनके कार्य भी निश्चित किए गए हैं। जिनके आधार पर आवश्यकता के अनुसार मुहूर्त निकाला जा सकता है। गण्डान्त नक्षत्रों में जन्म लेने वालों को मूल जन्मा कहते हैं। इनकी शान्ति भी उन्हीं नक्षत्रों पर की जाती है। नक्षत्रों का फल निर्णय में बहुत ही महत्त्व है। ग्रह जिस नक्षत्र में बैठे होते हैं उसके अनुसार अपना फल परिवर्तन करते हैं। नक्षत्रों के स्वामी के अनुसार नक्षत्रों की शान्ति की जाती है। इसके साथ ही आपने जाना कि 7 ग्रह और 2 छाया ग्रह हैं। जिसमें सूर्य को आत्मा कहा गया है। इनकी प्रकृति गुण धर्म स्वरूप आदि भी यथा क्रम का अध्ययन किया। इस पाठ का सम्यक् अध्ययन करने पर निश्चित ही आगामी पाठों के अध्ययन एवं ज्योतिष को जानने में सहायता प्राप्त होगी।

1.6 शब्दावली

अयन- दो होते हैं उत्तरायण और दक्षिणायन,

कर्क राशि से धनु राशि तक सूर्य का संचार दक्षिणायन कहलाता है। मकर से मिथुन तक सूर्य का संचार उत्तरायण कहलाता है।

ईज्य- गुरु का पर्याय

उच्चादि – ग्रहों के फल के आधार पर ऋषियों ने उनके उच्च स्थानादि कहे हैं। उच्च राशिमें बैठा हुआ ग्रह बलवान होकर अपने उच्चतम फलों को देता है। नीच में बैठा हुआ बलहीन होकर अपने निम्नतम फलों को देता है।

ऋतु- ऋतुएँ 6 होती हैं। वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर

गण्डान्त- गण्ड अर्थात् नक्षत्र उसका अन्त भाग,

पक्ष- शुक्ल पक्ष, कृष्ण पक्ष

वार- दिनों के नाम सूर्यादि7 वार होते हैं।

मास- 12 चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1- र्क्ष किसे कहते हैं? - नक्षत्र

2- नक्षत्र का अर्थ क्या है? - जो हमेशा स्थिर रहते हैं

3- अभिजितको मिलाकर कितने नक्षत्र होते हैं? - 28

4- यम किस नक्षत्र के स्वामी हैं? -भरणी

5- नक्षत्र का कलात्मक मान कितना होता है? - 800 कला का

6- गण्डान्त नक्षत्रों की संख्या कितनी है? -06

7- मूलजन्मा किसे कहते हैं? -जिनका जन्म मूल नक्षत्रों में होता हैं।

8- ज्येष्ठा में किस राशि का अन्त होता है? - वृश्चिक का

9- अश्विनी से किस राशि का आरम्भ होता है? -मेष का

10- अन्धक नक्षत्र में गई वस्तु का फल क्या है? - शीघ्र लाभ

11-मेष का स्वामी कौन है ? - मंगल

12- वृष में कौन सा ग्रह उच्च होता है ? - चंद्रमा

13-शनि की मूलत्रिकोण राशि बताएँ। - कुम्भ

14- राहु का उच्च स्थान क्या है ? - मिथुन

15-गुरु कब नीच कहलाता है ? - कर्क के 5^0 पर

16- ग्रहों में राजकुमार किसे कहते हैं? - मंगल को

17- कुण्डली में दशमस्थान की कौन सी दिशा होती है? - दक्षिण

18-नपुंसक ग्रह कौन हैं? -बुध व शनि

19- मोटे दाँत वाला स्वरूप किस ग्रह का कहा गया है? -शनि

20-स्नायु सूचक ग्रह कौन है ? - शनि

1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

बृहत्पाराशर होरा शास्त्र – पराशर रचित-व्याख्या-पं.देवचन्द्र झा, चौखम्भा वाराणसी प्रकाशन, वाराणसी

बृहज्जातकम्- वाराह मिहिर –व्याख्या डॉ.नर्वदेश्वर तिवारी, भारतीय विद्या प्रकाशन दिल्ली

भुवनदीपकम्- श्रीपद्मप्रभु सूरि रचित, व्याख्या- डॉ.शुकदेव चतुर्वेदी, रंजन पब्लिकेशन, नई दिल्ली

बृहदवकहडाचक्रम्- व्याख्या श्रीमकलकान्त शुक्ल, चौखम्भा वाराणसी प्रकाशन, वाराणसी

मुहूर्तचिन्तामणि- रामदैवज्ञ रचित, व्याख्या- केदारदत्त जोशी, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, बनारस

1.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री

बृहत्पाराशर होरा शास्त्र

बृहज्जातकम्

भुवनदीपकम्

बृहदवकहडाचक्रम्

मुहूर्तचिन्तामणि

जातकपारिजातम्

सारावली

फलदीपिका

लघुजातकम्

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1- ग्रहों के उच्चनीचादि स्थानों का विवेचना करें।

2- नक्षत्रों के स्वामी का क्रमश: उल्लेख करें।

3- उग्रसंज्ञक नक्षत्रों में करणीय कार्यो की सूची बनाऍं।

4- गण्डान्त संज्ञक नक्षत्रों कौन हैं ?

5- ग्रहों का मूलत्रिकोणादि स्थान की सूची बनाएँ।

6- ग्रहों के स्वरूप का विवेचन करें।

इकाई - 2 राशि प्रभेद एवं स्वरूप विवेचन

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

सिद्धान्त, संहिता और होरा ये ज्योतिष के तीन प्रमुख भाग हैं। जिसमें भी सर्वथा लोकोपकारक, साक्षात् मनुष्य के स्वभाव, प्रकृति, सुख दु:खादि का ज्ञान कराने वाला होरा शास्त्रपरमोपयोगी है। हम इसी होरा शास्त्र का क्रमश: ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। हमने पूर्व पाठों में नक्षत्रों और ग्रहों का परिचय प्राप्त किया है। पूर्व पाठ में हमने 27 नक्षत्रों से राशि निर्माण की प्रक्रिया को भी समझ लिया है। अब आपके मन में कई प्रश्नउठ रहे होंगे कि राशियों के द्वारा मनुष्य की प्रकृति, सुख-दु:ख, हानि लाभ जैसे विषयों का ज्ञान कैसे हो सकता है। इन सभी जिज्ञासाओं की शान्ति के लिए इस पाठ में हम राशियों के स्वरूप को समझेंगे। आप देखेंगे कि महर्षियों ने कितना सूक्ष्म चिन्तन मनुष्य की प्रकृति को समझने के लिए प्रकट कियाहै। ये राशियाँ ही मनुष्य के जन्म कालीन ग्रहों के प्रभाव को गुण बाँट देती हैं। मित्रों तो आइए हम अब इस पाठ के माध्यम से विषय का ज्ञान प्राप्त करते हैं।

2.2 उद्देश्य

ज्योतिष का सूक्ष्मतम ज्ञान प्राप्त करना आपका उद्देश्य है और आपके उद्देश्य को प्रामाणिक और सरल एवं सहजतया प्राप्त करवाना इस पाठ्यक्रम का एकमात्र लक्ष्य है। तो इस पाठ को पढने से हमे क्रमश: ये लाभ प्राप्त होंगे।

1- राशियाँ की विविध संज्ञाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
2- पाठ से हमें 12 राशियों की प्रकृति वैशिष्ट्य का ज्ञान प्राप्त होगा।
3- ऋषियों एवं अनुसन्धाताओं केद्वारा प्राप्त राशियों के भेदों का महत्त्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त होगा।
4- राशियों के विविध स्वरूपों का अधिगम प्राप्त होगा।
5- राशियों के शुभाशुभ स्वभाव और बलवत्ता आदि विशिष्ट गुण धर्मो का पाठ के द्वारा अनुशीलन होगा।।

2.3 मुख्यभाग

मित्रों! हमने पूर्व पाठ में राशि का सामान्य परिचय प्राप्त किया था उसका पुन: स्मरण करते हुए हम विषय को समझेंगे। हमारे भचक्र को अर्थात् पूरे आकाश मण्डल को 360 अंशों में बाँटा गया है। इनको हमने नक्षत्रों के आधार पर 27 वर्गीकरण किया तब एक नक्षत्र को 13 अंश 20 कला का भाग प्राप्त हुआ। उसी क्रम में 360 अंशों के इस भचक्र को 12 भागों में बाँटने से 30 अंशों का एक भाग प्राप्त होता है। ये 12 भाग ही 12 राशियों का विभाजन है। राशि- राशि का शाब्दिक अर्थ समूह है। किसका समूह, नक्षत्रों का समूह। राशि-क्षेत्र-गृह-र्क्ष-भानि-भवनम् चैकार्थसम्प्रत्यया:।[30]

30. बृहज्जातकम् 4-1

वाराहमिहिर कहते हैं कि क्षेत्र, गृह, र्क्ष, भाव, भवन, भ आदि सभी राशि शब्द के ही परिचायक हैं। सवा दो नक्षत्र (1 नक्षत्र में 4 चरण और 9 चरण) की 1 राशि का निर्माण होता है। अश्विनी आदि 27 नक्षत्रों के द्वारा 12 राशियों का विभाजन किया गया है। जैसे अश्विनी के चार चरण, भरणी के 4 चरण और कृत्तिका के प्रथम चरण तक को मेष राशि कहा जाता है। एक नक्षत्र का मान 13 अंश 20 कला होने से एक चरण का मान 3 अंश 20 कला होता है। $3^{\circ} 20' \times 9 = 30^{0}$ एक राशि का मान होता है। $30^{0} \times 12$ राशि $= 360^{0}$ पूरा राशि चक्र होता है। जिनका नाम इस प्रकार हैं।

मेषो वृषश्च मिथुनः कर्क-सिंह-कुमारिकाः।
तुलालि-चाप-मकराःकुम्भ–मीनौ यथाक्रमम्।।[31]

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या,तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन

राशियों के पर्याय

क्रम	राशि	अंग्रेजी नाम	पयार्य नाम[32]
1	मेष	ARIES	अज, विश्व, क्रिय, तुम्बुरु, आद्य
2	वृष	TAURUS	उक्ष, गौद्व ताबुरु, गोकुल
3	मिथुन	GEMINI	द्वन्द, नृयुग्म, जुतुम, यम, युग, तृतीय
4	कर्क	CANCER	कुलीर, कर्काटक
5	सिंह	LEO	कण्ठीरव, मृगेन्द्र, लेय
6	कन्या	VIRGO	पाथोन, रमणी, तरुणी
7	तुला	LIBRA	तौली, वणिक्, जूक, घट
8	वृश्चिक	SCORPIO	अलि, अष्टम, कौर्पि, कीट
9	धन	SAGITTARIUS	धन्वी, चाप, शरासन
10	मकर	CAPRICORN	मृग,मृगास्य, नक्र
11	कुम्भ	AQUARIUS	घट, तोयधर
12	मीन	PISCES	अन्त्य, मत्स्य, पृथुरोम, झष

उपखण्ड एक

प्रिय छात्रों हमने राशियों के नाम एवं उनके पर्याय को अच्छी तरह से समझ लिया। आप सोच रहे होंगे ये पर्याय व्यर्थ में याद रखने से क्या लाभ। आपको ये पर्याय जानना बहुत जरूरी है ग्रन्थों में महर्षियों ने अलग- अलग नामों से राशियों का प्रयोग किया है। इसलिए उस समय कठिनाई

31. बृहत्पाराशर 03-5
32. जातकपारिजात 4-1,5, 6

न हो तदर्थ राशियों पर्याय स्मरण कर लेना चाहिए।

चलिए अब हम आगे बढते हैं। ये 12 राशियाँ हमारे शरीर में अलग-अलग स्थानों मे रहती हैं। इसका सूक्ष्म विभाजन हमारे ऋषियों ने किया है। ये 12 राशियाँ उस परमपुरुष काल नियन्ता के शरीर में बाँटी गई इसलिए इनको काल पुरुष राशियाँ भी कहा जाता है। तो आईए अब हम इन राशियों का काल पुरुष में कहाँ –कहाँ स्थान है इसको विस्तार से समझते हैं।

कालपुरुष के अंग विभाग

शीर्षानने तथा बाहू हृत्क्रोडकटिवस्तय:।
गुह्योरुयुगले जानुयुग्मे वै जंघके तथा।
चरणौ द्वौ तथाऽजादेर्ज्ञेया: शीर्षादय:क्रमात्।।[33]

अर्थात्- पराशर कहते हैं कि उस कालपुरुष के सिर से पैर तक ये 12 राशियाँ स्थित हैं जिनके अनुसार हम अपने शरीर में या जातक के शरीर में इसका अनुसरण कर शुभाशुभ फल का ज्ञान करते हैं। कालपुरुष के शिर, मुख, दोनो हाथ, हृदय, उदर, कटि, वस्ति, प्रजननांग, ऊरु, जानु, जंघा और चरण में क्रमश: इन राशियों का स्थान अवस्थित है। जिसको हम अधो दत्त चित्र के अनुसार स्पष्ट समझ सकते हैं।

अगले दिए गए पृष्ठ पर अंकित छाया चित्र में कालपुरूष को आप भली –भॉति समझ सकते हैं -

33 बृहत्पाराशर 04-5
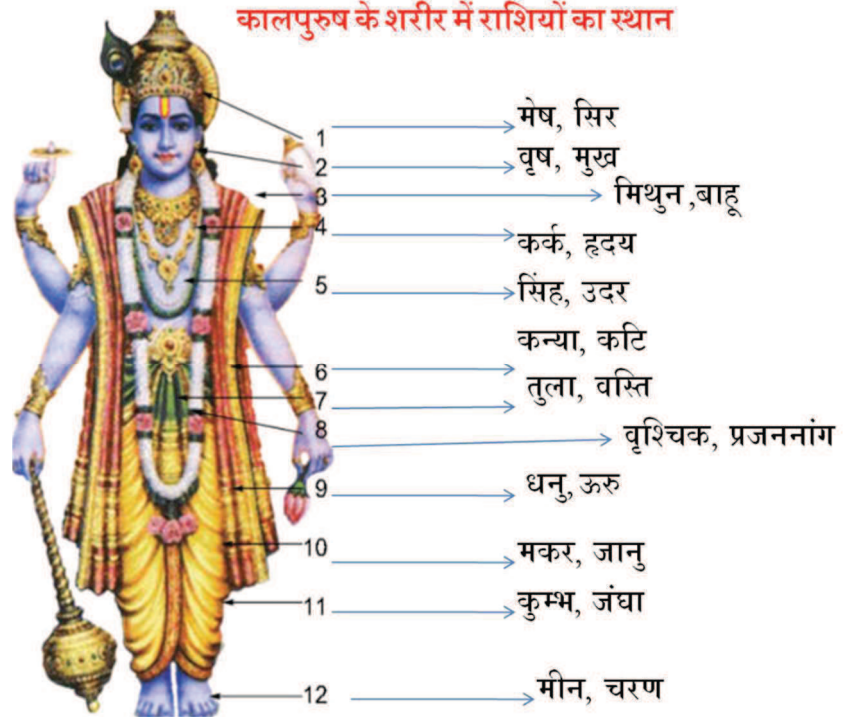
अभ्यास प्रश्न

1- कौर्पि किसे कहते हैं ?
2- घट किस राशि का पर्याय है ?
3- झष किस राशि की संज्ञा है ?
4- कृत्तिका के 3 चरण में कौन सी राशि होगी ?
5- आद्य किस राशि का नाम है ?

उपखण्ड दो

सुधी छात्रों हमने 12 राशियों के शरीर में स्थानों का ठीक प्रकार से अध्ययन कर लिया। अब हमें इसको प्रयोग के रूप में समझना होगा।

ये 12 राशियाँ कुण्डली में मूलत: 12 भाव के नाम से जानी जाती हैं। प्रायश: कुण्डली में जिस घर या भाव पर जो अंक लिखा होता है वह उस राशि की संख्या होती है। जैसे इस चक्र के अनुसार आप इसका अधिगम कर सकते हैं।

राशि व भाव स्पष्टीकरण चक्र
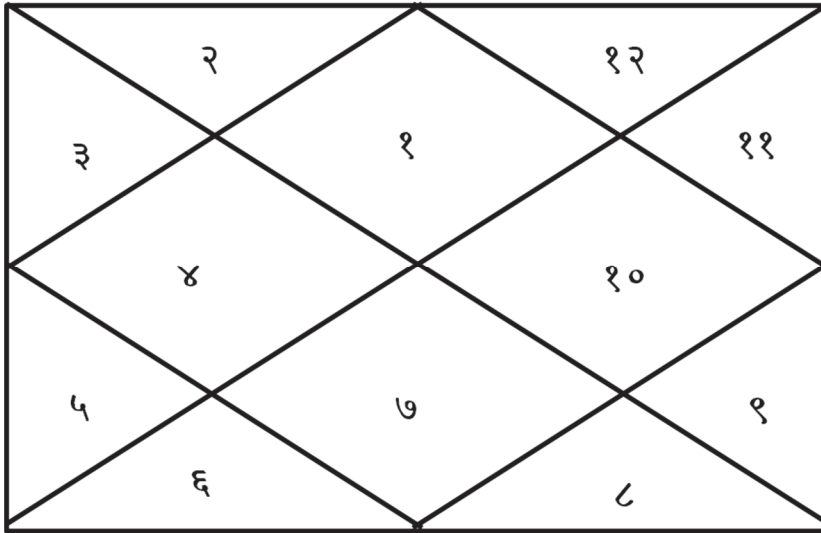
इस चक्र में दिखनेवाले अंक राशियों के द्योतक हैं। इसे लग्न में मेष राशि है ऐसा पढा जाएगा। द्वितीय में वृष, तृतीय में मिथुन, चतुर्थ में कर्क,पंचम में सिंह, षष्ठ भाव में कन्या, सप्तम में तुला, अष्टम में वृश्चिक, नवम में धनु, दशम में मकर, एकादश में कुम्भ और द्वादश में मीन राशि है। जिस भाव में जो राशि होती है उसका स्वामी ही उस भाव का **भावेश** अर्थात् भाव का स्वामी कहलाता है। उस भाव का स्वामी होने के कारण उसका उस भाव फल में पूरा नियन्त्रण रहता है।जैसे कुण्डली में लग्नेश कौन है यह जिज्ञासा हो तो आप देखेंगे कि लग्न में मेष राशि है इसलिए इसका स्वामी मंगल हुआ। अत:

इसका ज्ञान होना अत्यावश्यक है। अब इन्हीं राशियों में बैठे हुए ग्रह को हम कहेंगे कि अमुक ग्रह इस राशि में इस भाव पर बैठा है।

अभ्यास प्रश्न

6- एक राशि में कितने अंश होते हैं
7- एक राशि में नक्षत्र के कितने चरण होते हैं
8- एक चरण का अंशात्मक मान कितना है
9- कृत्तिका का 3 चरण किस राशि का स्थान है
10- भावेश किसेकहते हैं

2.3 मुख्यभाग खण्ड दो

हमने राशियों का प्रयोग कुण्डली में कैसे किया जाताहै, इसका अधिगम अच्छे से कर लिया है। अब इसके बाद हम राशियों के विविध भेदों का अध्ययन करेंगे। ये सभी भेद अपने संज्ञानुसार राशि के स्वरूप को परिभाषित करते हैं। जिनके द्वारा हम ग्रहों के फल को अनुभूत कर पाते हैं।

राशियों की चरादि संज्ञा

चरस्थिरद्विस्वभावा: क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ।
पित्तानिलत्रिधात्वैक्य-श्लैष्मिकाश्च क्रियादय:।।[34]

अर्थात्- मेष आदि राशियाँ क्रमश: चर, स्थिर, द्विस्वभाव संज्ञक होती हैं। इन्हीं की क्रमश: क्रूर-अक्रूर, मनुष्य-स्त्री संज्ञाएँ कही गई हैं। इन्हीं राशियों के त्रिकोणानुसार इनकी पित्त, वात, त्रिधातु और कफ संज्ञा कही गई हैं। अब सोचेंगे कि त्रिकोण क्या है तो आईए उसे समझते हैं।
मित्रों हमने ऊपर एक चक्र देखा जिसमें राशियों को समझाया गया है। उसी चक्र में पहला, पाँचवां और नवां घर में मेष, सिंह, और धनु राशि मिल रही हैं ये राशियाँ मेष लग्न के लिए त्रिकोण राशियाँ हैं।अर्थात् 1, 5, 9 क्रम से जो राशि मिलेंगी वह त्रिकोण राशि कहलाएँगी। इस प्रकार हम देखेंगे की 4 त्रिकोण राशियाँ प्राप्त हो रही हैं। जैसे-
त्रिकोण राशियाँ-
प्रथम त्रिकोण- मेष, सिंह, धनु
द्वितीय- वृष, कन्या, मकर
तृतीय- मिथुन, तुला, कुम्भ
चतुर्थ- कर्क, वृश्चिक और मीन

34. बृहत्पाराशर 05-5

धातुमूलादि संज्ञाएँ

मेषादाह चरं स्थिराख्यमुभयं द्वारं बहिगर्भभम्,
धातुर्मूलमितीह जीव उदितं क्रूरं च सौम्यं विदु:।
मेषाद्या: कथितास्त्रिकोणसहिता: प्रागादिनाथा: क्रमाद्,
ओजर्क्षं समभं पुमांश्च युवति: वामाङ्गमस्तादिकम्।।[35]

अथार्त्- मन्त्रेश्वर जी इस श्लोक में राशियों की संज्ञाओं का वर्णन कर रहें हैं। जिसमें प्रथम पंक्ति में चरादि संज्ञा जो हमने पढ लिया उसके बाद राशियों के क्रम से द्वार, बहि और गर्भ ये तीन संज्ञाएँ बताते हैं। दूसरी पंक्ति में धातु, मूल और जीव ये तीन संज्ञाएँ स्पष्ट करते हैं। उसी क्रम में त्रिकोण राशियाँ क्रमश: पूर्वादि दिशाओं की स्वामिनी होती हैं। यही 12 राशियाँ क्रमश: विषम समादि नाम वाली भी होती हैं।

राशियों के वर्ण

रक्तगौ-शुककान्तिपाटला: पाण्डुचित्ररुचिनीलकाञ्चना:।
पिंगल:शबलबभ्रु पाण्डुरास्तुम्बुरादिभवनेषु कल्पिता:।।[36]

अर्थात्- मेषादि राशियों का क्रमश: लाल, सफेद, तोता के जैसे हरा, पाटल, पाण्डु, चित्रवर्ण, नीला,सुनहरा, पिंगल, रंग बिरंगा, नेवले के समान और पीला मिला सफेद ये वर्ण कहे गए हैं।

राशि द्योतक वस्तुएँ-

वस्त्राद्यं शालिमुख्यं वनफलनिचय: कन्दली मुख्यधान्यम्।
त्वक्सारं मुद्गपूर्वं तिलवसनमुखं त्विक्षुलोहादिं च।
शस्त्राश्वं कांचनाद्यं जलजनिकुसुमं तोयजातं समस्तम्।
व्याम्याहु: क्रियादिष्वबलयुतेष्वल्पताधिक्यभाञ्जि।[37]

अर्थात्- मेष का वस्त्र, वृष शालि, मिथुन वनफल, कर्क केला, सिंह मुख्यधान्य, कन्या बाँस आदि, तुला मूंग,तिल आदि, वृश्चिक ईख लोहा आदि , धनु शस्त्र, अश्व आदि, मकर का सोना , कुंभ जल में उत्पन्न होने वाले, मीन का जलोत्पन्न पदार्थ आदि कहे गए हैं।

ऊपर दी गई सभी संज्ञाओं को हम तालिका के अनुसार समझने का प्रयास करते हैं।

संज्ञा	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
चरादि	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
पुरुषादि	पुरु	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री

35 फलदीपिका 09-1

36 जातकपारिजात 23-1

37 जातकपारिजात 24-1

	ष											
क्रूरादि	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर
द्वारादि	द्वार	बहि	गर्भ	द्वार	बहि	गर्भ	द्वार	बहि	गर्भ	द्वार	बहि	गर्भ
धत्वादि	धातु	मूल	जीव	धातु	मूल	जीव	धातु	मूल	जीव	धातु	मूल	जीव
पूर्वादि	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
समादि	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम
वर्ण	लाल	सफेद	हरा	पाटल	पीला	चित्रवर्ण	नीला	सुनहरा	पीला	रंगीला	नेवला के समान	पीला मिश्रित सफेद

उपखण्ड एक

सुधी जनों अब हम राशियों की विविध संज्ञाओं का ज्ञान प्राप्त कर रहें हैं। इन संज्ञाओं का क्रमशः ज्ञान प्राप्त करें उसके पहले आपके मन में उठने वाले कई प्रश्नों की चर्चा करना आवश्यक है। आप सोच रहे होंगे कि इन संज्ञाओं का अर्थ क्या है प्रयोजन क्या है तो आईए महत्त्वपूर्ण संज्ञाओं के भाव यहाँ क्रमशः प्रस्तुत किए जा रहे हैं। जैसे-

चरादि संज्ञा- राशियों की चर स्थिरऔर द्विस्वभाव संज्ञा बताई गई हैं। चर का अर्थ संचरण शील, चलने वाला। स्थिर अपने नाम के अनुसार है। द्विस्वभाव में संचरण एवं स्थिरता दोनों गुण हैं। द्विस्वभाव का पूर्वार्द्ध स्थिर और उत्तरार्द्ध चर संज्ञा केसमान है। इन संज्ञाओ का विविध प्रयोजन हैं जैसे-

मुहूर्त में-चर राशियों में किया गया कार्य शीघ्र होता है। स्थिर में स्थिरत्व रहेगा और द्विस्वभाव में कार्य कुछ होगा बाद में रुक जाएगा।

प्रश्न- प्रश्न काल में चर राशि में किया गया प्रश्न घटना कारक होता है। स्थिर में यथावत् और द्विस्वभाव में पूर्वार्द्ध में यथावत् उत्तरार्द्ध में चर के समान जनना चाहिए।

ग्रह फल- चर में बैठा हुआ ग्रह शीघ्र फल देकर परिवर्तन करेगा। स्थिर में फल में स्थिरता और द्विस्वभाव में पूर्ववत् समझना चाहिए।

पृष्ठोदयादि- शीर्षोदय राशि में बैठा हुआ ग्रह अपना फल शीघ्र प्रदान कर देता है। पृष्ठेदय वाला विलम्ब से फल प्रदान करता है।

जाति- राशियों की जाति के अनुसार जातक के अन्दर उस जाति का स्वभाव अधिक पाया जाएगा।
वर्ण- राशियों के वर्ण के अनुसार जातक का वस्तु का या विचारणीय विषय का वर्ण निश्चित होगा।
तत्त्व– जिस राशि में जो प्रधान तत्त्व है उसी तत्त्व की प्रधानता जातक के स्वभाव में अधिक मात्रामें रहेगी।
आकार- राशियों का जो आकार बताया जा रहा है उसी के अनुसार शरीर का कद, व अंग विशेष का आकार या वस्तु का आकार निश्चित करना चाहिए।
दिवा/रात्रिबल- दिन में बलवान राशियाँ अपने फल को दिन में प्रदान करेंगी रात्रिबली राशियाँ रात्रि में।
क्षेत्र विशेष- राशियों का क्षेत्र स्थान विशेष का द्योतक है।

गुण विशेष- सत्त्वादि गुण के अनुसार जातक के गुण का निणर्य होता है।

दिशा- दिशा के अनुसार जातक का कार्य क्षेत्र या घटना की दिशा आदि का ज्ञान प्राप्त होता है।

इन सभी संज्ञाओं के साथ साथ राशियों का ग्रहों के साथ सम्बन्ध भी जानना आवश्यक है। इन 12 राशियों के स्वामी भी कहे गए हैं। जो इन राशियों के अधिप हैं। साथ ही इन्हीं कुछ राशियों में कुछ ग्रह अपना उच्चतम फल प्रदान करते हैं तो कुछ निम्नतम। यद्यपि यह विषय प्रथम इकाई में हम पढ चुके हैं विस्तृत रूप में वहाँ से समझ लेना चाहिए यहाँ केवल विषय का सम्बन्ध स्पष्ट करने के लिए कुछ अंश स्मरण कराए जा रहे हैं। जैसे-

राशियों में ग्रहों उच्च-नीच,मूलत्रिकोण आदि का ज्ञान

	सूर्य	**चंद्र**	**मंगल**	**बुध**	**गुरु**	**शुक्र**	**शनि**	**राहु**	**केतु**
स्वगृह	सिंह	कर्क	मेष , वृश्चिक	मिथुन कन्या	धनु, मीन	वृष, तुला	मकर, कुम्भ	कन्या	मीन
उच्च	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला	मिथुन	धनु
	10^0	03^0	28^0	15^0	05^0	27^0	20^0		
नीच	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष	धनु	मिथुन
	10^0	03^0	28^0	15^0	05^0	27^0	20^0		
मूलत्रिकोण	सिंह	वृष	मेष	कन्या	धनु	तुला	कुम्भ		
	20^0	3^0-30^0	0^0-12^0	15^0-20^0	0-10^0	0-15^0	0-20^0		

नोट- हमने पूर्व में पढा है कि एक राशि में 30 अंश होते हैं या ये कहें 30 अंश ही एक राशि है। इस उपर्युक्त तालिका में दिए गए अंशों का विवरण उसी के अनुसार समझना चाहिए। उदाहरण-

इस कुण्डली में सूर्य कैसा है तो उच्च का है। चंद्रमा वृश्चिक में है इसलिए तालिका के अनुसार नीच का है। मंगल कर्क राशि में है तो नीच का है। बुध मीन राशि में है इसलिए नीच का है। गुरु धनु राशि में है अत: मूलत्रिकोण राशि का है। शुक्र मीन में है अत: उच्च का है। शनि कुम्भ में है अत: स्वगृही है और मूलत्रिकोण में है। राहु मिथुन में उच्च का है केतु धनु में है अत: वह भी उच्च का है। इसी अनुसार हम ग्रहों का उच्च नीच,मूलत्रिकोण आदि का ज्ञान कर सकते हैं।
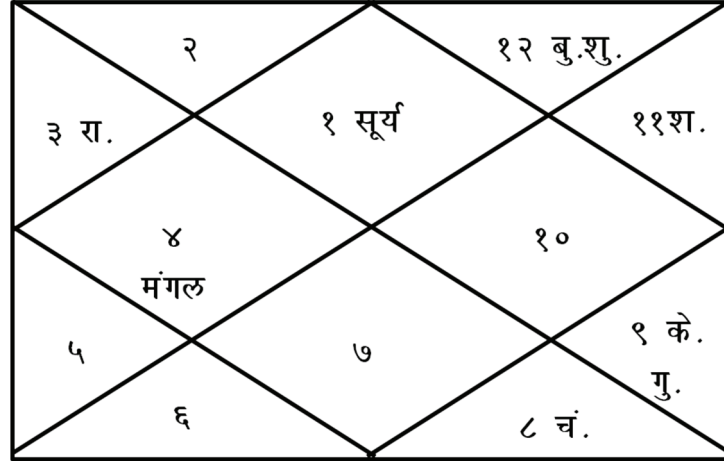
अभ्यास प्रश्न

11- पित्त सूचक कौन सी राशियाँ हैं ?

12- बुध की मूलत्रिकोण राशि कौन सी हैं ?

13- विषम राशि कौन-कौन सी हैं ?

14- अक्रूर राशियाँ कौन सी हैं ?

15- द्विस्वभाव संज्ञक राशियाँ कौन कौन सी हैं?

उपखण्ड दो

प्रिय छात्रों हमने पूर्व खण्ड में राशियों के नाम संज्ञा स्थान आदि का ज्ञान प्राप्त किया है। उसी क्रम में राशि के स्वरूप को समझने के लिए हमें राशियों की प्रकृति का सूक्ष्मतमज्ञान होना आवश्यक है। 12 राशियों का नाम के अनुसार ही मुख्यत: स्वरूप जानना चाहिए। उसमें भी राशि विशेष का कुछ अपना विशिष्ट आकार आचार्यो ने बताया है। इन राशियों के स्वरूप व आकार के अनुसार जातक के गुण धर्म होते हैं।

मेष का स्वरूप :-

रक्तवर्णो बृहद्गात्र: चतुष्पाद् रात्रिविक्रमी।
पूर्ववासी नृपज्ञाति: शैलाचारी रजोगुणी।

पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः।।[38]

अर्थात्- इस श्लोक में मेष का स्वरूप बताया गया है कि मेष राशि का लाल वर्ण, लम्बा शरीर, चार पैर, रात में बलवान, पूर्व दिशा में निवास, क्षत्रिय वर्ण, पर्वतों में भ्रमणशील,रजो गुण, पृष्ठ भाग से उदय होने वाली अग्नितत्त्व प्रधान, और स्वामी मंगल हैं।

विशेष- राशि के जो गुण धर्म बताए गए हैं ये सभी गुण धर्म जातक के अन्दर इसके बलाबल के अनुसार विद्यमान रहेंगे। हम क्रमशः आगे के पाठों में इसका विशद अध्ययन करेंगे।

वृषराशि स्वरूप :-

श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घः चतुष्पाच्छर्वरीवली।
याम्येट् ग्राम्यो वणिग् भूमी रजः पृष्ठोदयो वृषः।[39]

अर्थात्- वृष का शुक्र स्वामी, लम्बा शरीर, चार पैर, रात्रि में बलवान्, दक्षिण दिशा में निवास, गावों में भ्रमणशील, वैश्य जाति,भूमितत्त्व प्रधान, रजोगुण, पृष्ठ से उदय होने वाला स्वरूप है।

मिथुन का स्वरूप :-

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं सवीणकम्।
प्रत्यङ् मरुद् द्विपद्रात्रिबली ग्रामव्रजोऽनिली।
समगात्रों हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः।।[40]

अर्थात्- मिथुन राशि गदा और वीणा के साथ,पुरुष-स्त्री की जोडी, शिर से उदय होने वाली, पश्चिम दिशा में निवास, वायुतत्त्व प्रधान, दो पैर, रात्रि में बलवान्, ग्राम में विचरण करने वाली, वात प्रकृति, समान शरीर, हरित वर्ण और बुध इसके स्वामी हैं।

कर्क का स्वरूप :-

पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान्।
बहुपादीस्थूलतनुस्तथा सत्त्वगुणी जली।
पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगाङ्काधिपतिः स्मृतः।।[41]

अर्थात्- चंद्रमा की राशि कर्क, पाटल वर्ण, वनचर,ब्राह्मण गुण धर्म वाली, रात्रि में बलवान्, अनेक पैर, मोटा शरीर, सत्त्वगुण, जलतत्त्व प्रधान, पृष्ठ भाग से उदय होने वाली होती है।

---

38 बृहत्पाराशर -56-7
39 बृहत्पाराशर 08-5
40 बृहत्पाराशर 09-5
41 बृहत्पाराशर 11-5

सिंह का स्वरूप :-

सिंह: सूर्याधिप: सत्त्वी चतुष्पात् क्षत्रियो वनी।
शीर्षोदयी बृहद्गात्र: पाण्डु: पूर्वेड् द्युवीर्यवान्।

सिंह का सूर्य स्वामी है। यह राशि सत्त्व गुण, चार पैरोंवाली, क्षत्रिय वर्ण, वनचर, शीर्ष से उदय होने वाली, बडा शरीर, पाण्डुवर्ण, पूर्वदिशा में निवास और दिन में बलवान् होती है।

कन्या का स्वरूप :-

पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता।
शीर्षोदया च मध्यांगा द्विपाद्याम्यचरा च सा।
सा सस्य दहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभञ्जिनी।
कुमारी तमसा युक्ता बालभवा बुधाधिपा।।[42]

अर्थात् – बुध कन्या के स्वामी हैं। यह राशि पर्वतीय प्रदेशों में विचरण करने वाली, दिन में बलवान्, शिर से उदय होने वाली, मध्यम शरीर, दक्षिण दिशा में निवास, सस्य और अग्नि साथ में लिए हुए , वैश्य जाति, चित्रवर्ण, वायु तत्त्व प्रधान और कुमार अवस्था वाली होती है।

तुला का स्वरूप :-

शीर्षोदयी द्युवीर्याढ्यो धट: कृष्णो रजोगुणी।
पश्चिमो भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपाद्।

अर्थात् –शुक्र तुला का स्वामी है। यह राशि शीर्षोदय, दिन में बलवान्, कृष्णवर्ण, रजोगुण, पश्चिम दिशा, भूमि चर, हिंसक प्रवृत्ति, शूद्रजाति, मध्यमशरीर और दो पैर वाली होती है।

वृश्चिक का स्वरूप :-

स्वल्पाङ्गो बहुपाद् ब्राह्मणोबिली।
सौम्यस्थो दिनवीर्याढ्य: पिशंगो जलभूवह:।
रोमस्वाढ्यो ऽतितीक्ष्णाग्रो वृश्चिकश्च कुजाधिप:।।

अर्थात् – वृश्चिक का स्वामी मंगल है। यह राशि छोटे शरीर, बहुत पैर, ब्राह्मण जाति, बिल में स्थान, दिवाबली, उत्तर दिशा निवास, पिशंग वर्ण,जलतत्त्व, भूमिचर, अति रोम एवं अत्यधिक तेज से डंक (प्रहार) करने वाली होती है।

धनु का स्वरूप :-

पृष्ठोदयी त्वथ धनुर्गुरुस्वामी च सात्त्विक:।

---

[42] बृहत्पाराशर 14-5

पिंगलो निशि वीर्याढ्य: पावक: क्षत्रियो द्विपात्
आदावन्ते चतुष्पाद: समगात्रो धनुर्धन:
पूर्वस्थो वसुधाचारी बहुतेज: समन्वित:।।[43]

अर्थात्- धनु का स्वामी गुरु है। इस राशि में सत्त्वगुण, पिंगल वर्ण, रात्रि में बलवान्, अग्नितत्त्व, क्षत्रियवर्ण, पूर्वार्द्ध में दो पैर- उत्तरार्द्ध में 4 पैर, समानशरीर, धनुर्धारण, पूर्व दिशा में निवास, भूमिचर और अत्यधिक तेज आदि गुण पाए जाते हैं।

मकर का स्वरूप :-

मन्देशस्तामसो भूमियाम्येट् च निशि वीर्यवान्
पृष्ठोदयी बृहद्गात्र: कर्बुरो वनभूचरो।
आदौ चतुष्पादन्ते तु विपदो जलगो मत:।

अर्थात्-मकर राशि का स्वामी शनि है। इस राशि में तामस गुण, भूमि तत्त्व, दक्षिण में निवास, रात्रिबल, पृष्ठ से उदय, बडा शरीर, चित्रवर्ण, वन एवं भूमि में निवास, पूर्वार्द्ध में चतुष्पद एवं उत्तरार्द्ध में पद रहित और जल में संचरण करने वाले गुण पाए जाते हैं।

कुम्भ का स्वरूप :-

कुम्भ: कुम्भी नरो बभ्रुवर्णो मध्यतनुर्द्विपात्।
द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तम:।
शूद्र: पश्चिमदेशस्य स्वामीदैवाकरि: स्मृत:।।

अर्थात्- कुम्भ का स्वामी शनि है। इस राशि में घडा लिए हुए पुरुष की आकृति, भूरा वर्ण, मध्यम शरीर, दो पैर, दिवाबल, पानी का मध्य में संचार, वायुतत्त्व, शिर से उदय, तामस गुण, शूद्रजाति, पश्चिम में निवास आदि गुण पाए जाते हैं।

मीन का स्वरूप :-

मीनौ पुच्छास्यसंलग्नौ मीनराशिर्दिवाबली।
जली सत्तवगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विज:।
अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी।

अर्थात्- मीन का स्वामी गुरु है। इस राशि के स्वभाव में मुख-पुच्छ मिश्रित दो मछलियों की तरह, दिन में बलवान्, जलतत्त्व, सत्त्वगुण, स्वस्थ चेहरा, जलचर, ब्राह्मण जाति, पदहीनता, मध्यम शरीर, उत्तर दिशामें निवास, उभयोदय आदि गुण पाए जाते हैं।

---

43 बृहत्पाराशर 18-17-5

नोट- हमने अभी तक जो राशियों के स्वरूपाध्ययन में संज्ञाएँ समझी हैं इनका फल निर्णय में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन सभी विषयों का हृदयंगम होना बहुत जरुरी है जिससे हम आगे आने वाले विषयों को अच्छी तरह समझ सकते हैं। अभी इसी पाठ में पठित सभी संज्ञाओं को , राशियों का स्वरूप को और स्पष्ट करने के लिए तालिका दी जा रही है। जिसमें राशियों की अन्य संज्ञाओं का भी विवरण दिया गया है। जिसका क्रमश- हमें अभ्यास के द्वारा अधिगम सरल व सहज हो जाएगा।

राशि स्वरूप बोधक तालिका

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशि/ संज्ञा
सिर	मुख	बाहू	हृदय	उदर	कटि	वस्ति	प्रजनन	ऊरु	जानु	जंघा	चरण	शरीर में स्थान
चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चरादि
पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुषादि
क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूरादि
पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	दिशा
पृष्ठो	पृष्ठो	शीर्षो.	पृष्ठो	शीर्षो	शीर्षो	शीर्षो	शीर्षो	पृष्ठो	पृष्ठो	शीर्षो	उभयोदय	उदय
रात्रि	रात्रि	रात्रि	रात्रि	दिन	दिन	दिन	रात्रि	रात्रि	रात्रि	दिन	दिन	बल
अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	तत्व
पर्वत	ग्राम	ग्राम	वन	वन	पर्वत	भूमि	भूमि	भूमि	वन /भूमि	जल	जल	जलचरादि
लम्बा	लम्बा	समान	मोटा	बडा	मध्यम	मध्यम	छोटा	समान	बडा	मध्यम	मध्यम	शरीर
क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	जाति
विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	समादि

अभ्यास प्रश्न

16-पूर्व दिशा सूचक राशियाँ कौन सी हैं ?

17-मीन का स्वामी कौन है ?

18-धनुर्धारण किया हुआ किस राशि का स्वरूप है ?

19- तुला राशि की कौन सी दिशा है ?

20- कर्कराशि पृष्ठोदय या शीर्षोदय है ?

2.4 सारांश

प्रिय छात्रों हमने इस पाठ के माध्यम से होरा शास्त्र की महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की। इस पाठ में 12 राशियों के स्वामी का ज्ञान प्राप्त हुआ। 12 राशियों की चर स्थिर आदि संज्ञाओं का ज्ञान, ये राशियाँ क्रमश: शिर से लेकर पैर तक निवास करती है इसका भी पूर्ण ज्ञान हमने प्राप्त किया है। राशियों की दिशा के द्वारा हम उसका कैसे उपयोग कर सकते हैं दिशा का निर्णय जान सकते हैं।

राशियों के तत्त्वों के आधार पर व्यक्तिके स्वभाव गुण धर्म का निर्णय भी लिया जा सकता है। इनके निवास स्थान के अनुसार वस्तु के स्थान आदि का ज्ञान भी हम प्राप्त कर सकते हैं। इनके दिवा रात्रि बल के अनुसार व्यक्ति के अंदर रात या दिन में कार्य क्षमता का ज्ञान या घटना काल का अधिगम हमने इस पाठ के माध्यम से किया।

यह पाठ फलित ज्ञान के लिए अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। इसका बारम्बार अभ्यास व स्मरण करने पर ही हम फलित के सिद्धान्तों को समझ सकते हैं। आशा है यह पाठ आपके लिए लाभदायी व उपयोगी सिद्ध होगा यही इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य है।

2.5 शब्दावली

कुछ शब्दों का अर्थ उसी क्रम में स्पष्ट किया गया है। कुछ कठिन शब्दों का अर्थ वहाँ स्थानाभाव में नहीं दिया गया है उसका अवलोकन यहाँ करें।

शब्द	अर्थ
शीर्षोदय	शिर से उदय होने वाले
पृष्ठोदय	पीठ से उदय होने वाले
उभयोदय	दोनो तरफ से उदय होने वाले
नृयुग्म	स्त्री पुरुष का जोडा
पिशंग	लालिमा लिए हुए भूरे रंग का
पिंगल	पीतिमा मिला हुआ रंग का
पाण्डुवर्ण	पीला रंग से मिलता हुआ
चित्रवर्ण	कई रंगो से बना
चतुष्पात्	चार पैरों वाला
जलचर	जल में चलने वाला
भूमिचर	भूमि में चलने वाला
दिवाबल	दिन में कार्य क्षमता अधिक होना
ऊरु	घुटने के ऊपर (हिन्दी में इसे जंघा कहा जाता है)
जानु	घुटना

जंघा	घुटने से नीचे
वस्ति	कटि से लिंग तक के मध्य भाग का नाम
द्वार	दरवाजे पर
बहि	बाहर
गर्भ	अन्दर
चर	चलायमान
स्थिर	स्थगित
द्विस्वभाव	दोनो स्वभाव, चरत्व और स्थिरत्व

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न **उत्तर**

1- कौर्पि किसे कहते हैं ? - वृश्चिक
2- घट किस राशि का पर्याय है ? - कुम्भ
3- झष किस राशि की संज्ञा है ? - मीन
4- कृत्तिका के 3 चरण में कौन सी राशि होगी ? -वृष
5- आद्य किस राशि का नाम है ? - मेष
6- एक राशि में कितने अंश होते हैं ? - 30 अंश

7- एक राशि में नक्षत्र के कितने चरण होते हैं ? - 9 चरण
8- एक चरण का अंशात्मक मान कितना है? - 3 अंश 20 कला
9- कृत्तिका का 3 चरण किस राशि का स्थान है? - वृष

10- भावेश किसेकहते हैं ? -भाव का स्वामी
11- पित्त सूचक कौन सी राशियाँ हैं ? - मेष, सिंह, धनु
12- बुध की मूलत्रिकोण राशि कौन सी हैं ? - कन्या 15^0-20^0
13- विषम राशि कौन-कौन सी हैं ? - 1,3,5,7,9,11राशियाँ
14- अक्रूर राशियाँ कौन सी हैं ? - 2,4,6,8,10,12 राशियाँ
15- द्विस्वभाव संज्ञक राशियाँ कौन कौन सी हैं? - 3, 6,9,12 राशियाँ
16- पूर्व दिशा सूचक राशियाँ कौन सी हैं ? - मेष,सिंह, धनु
17- मीन का स्वामी कौन है ? - गुरु
18- धनुर्धारण किया हुआ किस राशि का स्वरूप है ? - धनु राशि

19- तुला राशि की कौन सी दिशा है ? - पश्चिम
20- कर्कराशि पृष्ठोदय या शीर्षोदय है ? - पृष्ठोदय

2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1- फलदीपिका- मंत्रेश्वर रचित, गोपेश कुमार ओझा व्याख्याकार, मोतीलालबनारसी दास बनारस
2- बृहत्पाराशर होरा शास्त्र – पराशर रचित-व्याख्या-पं.देवचन्द्र झा, चौखम्भा वाराणसी प्रकाशन, वाराणसी
3- बृहज्जातकम्- वाराह मिहिर –व्याख्या डॉ.नर्वदेश्वर तिवारी, भारतीय विद्या प्रकाशन दिल्ली
4- जातकपारिजातम् – वैद्यनाथ रचित, गोपेश ओझा व्याख्याकार, मोतीलालबनारसी दास बनारस

2.8 सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री

बृहत्पाराशर होरा शास्त्र
बृहज्जातकम्
भुवनदीपकम्
जातकपारिजातम्
सारावली
फलदीपिका
लघुजातकम्

2.9 निबंधात्मक प्रश्न

1- चर राशियों का स्वरूप स्पष्ट करें।
2- जलचर राशियों का स्वरूप रूपष्ट करें।
3- काल पुरुष के अंगों को स्पष्ट करें।
4. सभी राशियों का बल निर्णय कर उनपर अपने विचार स्पष्ट करें।
5. ग्रहों का उच्च नीच व मूलत्रिकोणादि स्थान स्पष्ट करें।

इकाई - 3 ग्रह, भाव एवं कारकत्व विचार

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

करोति इति कारक:। अर्थात् करने वाले को कारक कहते हैं। प्रिय छात्रो! हमने ग्रह, नक्षत्र आदि की प्रकृति का पूर्व पाठों में अच्छे से अध्ययन कर लिया है। उसके बाद ग्रहों का सूक्ष्म फल निर्णय के लिए या जीवन में होने वाले सभी घटनाचक्रों के ज्ञान के लिए ग्रहों एवं भावों के कारकों का ज्ञान होना अत्यावश्यक है। कोई भी अकेला ग्रह जीवन में होने वाले सभी पक्षों का कारक नहीं होता है। ग्रह अपनी प्रकृति के अनुसार किसी वस्तु विशेष या कार्य विशेष का कारक होता है।

हमारे ऋषियों ने सतत् अनुसन्धान व अनुभव के आधार पर पाया कि अमुक ग्रह या भाव इस वस्तु विशेष या घटनाओं पर अपना पूर्णाधिकार रखता है। ये बारह भाव और 9 ग्रह हमारे जीवन के सभी अंगों में अपने स्वभाव के अनुसार बँटे हुए हैं। हमें जातक के जीवन में विवाह का विचार करना है तो सप्तम भाव एवं शुक्र का विचार करना होगा। जातक की शिक्षा की जानकारी के लिए पंचम भाव व गुरु का विचार करना होगा। इसी प्रकार सभी विचारणीय विषयों की सूक्ष्म व स्पष्टजानकारीके लिए हमें ग्रहों एवं भावों के कारकों का विचार करना अत्यावश्यक है। तदर्थ इस पाठ में हम इन्हीं सभी विषयों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करेंगे तो आईए हम इस पाठ का ध्यान से अध्ययन व अभ्यास करते हैं।

3.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों हमारे लिए यह पाठ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। सम्पूर्ण फलादेश का आधार है। इसलिए इस पाठ के द्वारा हमें कई विषयों का स्पष्ट ज्ञान हो जाएगा।

1- हम इस पाठ के द्वारा भावों का सम्पूर्ण परिचय व उनकी संज्ञाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

2- इस पाठ के अध्ययन से ग्रहों के कारक विषयों का स्पष्ट ज्ञान होगा।

3- पाठ के द्वारा भावों के द्वारा विचारणीय विषयों का ज्ञान प्राप्त होगा।

4- कारक ज्ञान में भावों एवं ग्रहों का परस्पर सम्बन्ध का अधिगम प्राप्त होगा।

5- ग्रह किस स्थिति में कारक होते हैं किन कारणों से अकारक होते हैं इसका विशद अध्ययन इस पाठ के द्वारा हम प्राप्त करेंगे।

3.3 मुख्यभाग

आपने ग्रहों का स्वभाव, स्थान आदि अच्छी तरह से समझ लिया। अब हम इस पाठ के द्वारा ग्रहों के कारकों को समझेंगे। कारक से तात्पर्य यह कि ग्रह क्या कर सकता है। ग्रह के गुण धर्म के अनुसार उससे किन-किन विषयों का विचार करना चाहिए। जैसे किसी को जानना है कि मेरी संतान

होगी कि नहीं और कब होगी ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर कैसे निकलेगा आप जातक की कुण्डली याप्रश्न कुण्डली में किस ग्रह का किस भाव का अध्ययन करने पर इस प्रश्न का उत्तर पाएँगे। इसी जिज्ञासा का समधान हमें इस पाठ के द्वारा प्राप्त होगा। तो आइए हम क्रमश: मनोयोग से इसका पठन आरम्भ करते हैं।

सूर्य से विचारणीय विषय :-

व्यालोर्णकशैलसुवर्णशस्त्र विषदहनभेषजनृपाश्च।
म्लेच्छाब्धितारकान्तारकाष्टमन्त्रप्रभु: सूर्य:।। [44]

भावार्थ- सूर्य ग्रह- ऊन, पवर्त, सोना, शस्त्र, विष, अग्नि,औषधि, राजा, म्लेच्छ, समुद्र, वन, लकडी, और मन्त्र आदि का कारक है।

चंद्र से विचारणीय विषय :-

कविकुसुमभोज्यमणिरजतशंखलवणोदकेषु वस्त्राणाम्।
भूषणनारीघृततैलकनिद्राप्रभुश्चन्द्र:।। [45]

भावार्थ- कविता, पुष्पादि, भोज्य पदार्थ, मणि, चाँदी, शंख, नमक, जल, वस्त्र, आभूषण, स्त्री, घी, तेल और नींद आदि का कारक चंद्र है।

मंगल से विचारणीय विषय :-

रक्तोत्पलताम्रसुवर्णरुधिरपारदमन: शिलाद्यानाम्।
क्षितिनृपतिपतनमूर्च्छापैत्तिकचोरप्रभुर्भौम:।।[46]

भावार्थ- लाल कमल, ताम्र, सोना, रक्त, पारा, मैनसिल, भूमि, राजा , पतन, मूर्च्छा, पित्त, और चौर आदि का कारक मंगल है।

बुध से विचारणीय विषय :-

[44] सारावली 7 7-

[45] सारावली 7 8-

[46] सारावली 79-

श्रुतिलिखितशिल्पवैद्यकनैपुणमन्त्रित्वदूतहास्यानाम्।
खगयुग्मख्यातिवनस्पतिस्वर्णमयप्रभुः सौम्यः।।[47]

भावार्थ- वेद, लेख, कारीगरी, वैद्य, निपुणता, मन्त्री, दूत, मजाक, पक्षी, जुडवा, प्रसिद्धि, वनस्पति, और सोने का कारक बुध है।

गुरु से विचारणीय विषय :-

मांगल्यधर्मपौष्टिकमहत्त्वशिक्षानियोगपुरराष्ट्रम्।
यानासनशयनासुवर्णधान्यवेश्मपुत्रपो जीवः।।[48]

भावार्थ- मंगल/धार्मिक कार्य, पुष्टि, महत्ता, शिक्षा, गर्भाधान, नगर,राष्ट्र, सवारी, आसन/ सिंहासन, शयन, सोना, धान्य, घर और पुत्र का कारक गुरु है।

शुक्र से विचारणीय विषय :-

वज्रमणिरत्नभूषणविवाहगन्धेष्टमाल्ययुवतीनाम्।
गोमयनिदानविद्यानिधुवनरजतप्रभुःशुक्रः।।[49]

भावार्थ- हीरा, रत्नाभूषण, विवाह, सुगन्धित द्रव्य, माला, युवती, गोबर, कारण व समाधान, विद्या, और चाँदी का कारक शुक्र है।

शनि से विचारणीय विषय :-

त्रपुसीसकलोहककुधान्यमृतबन्धुमन्दभृतकानाम्।
नीचस्त्रीपण्यकदासदीनदीक्षाप्रभुः सौरिः।।[50]

भावार्थ- रांगा, सीसा, लोहा, ककु धान्य (कोदव, सांवा आदि), मृतबन्धु, मूर्खता, नौकर, नीच स्त्री, दीन और दीक्षा का कारक शनि है।

राहु से विचारणीय विषय-

राहु आकस्मिक घटनाओं का कारक, अधार्मिक मनुष्य, अचानक कार्य के लिए प्रेरित करने वाला, स्नायु, वायुदोष, वन, भ्रम, कुर्तक आदि का कारक कहा गया है।[51]

---

[47] सारावली 710-

[48] सारावली 711-

[49] सारावली 712-

[50] सारावली 713-

[51] उत्तरकालामृत 52-5

केतु से विचारणीय विषय-

केतु डॉक्टर, कुत्ता, मुर्गा, मोक्ष, क्षयरोग, पीडा, ज्वर, गंगास्नान, वायुविकार, पेट में तीव्र पीडा आदि का कारक कहा गया है।[52]

अभ्यास प्रश्न

1- संतान कारक ग्रह कौन है?
2- चौर कारक ग्रह कौन है?
3- हास परिहास आदि गुणों का विचार किस ग्रह से किया जाता है?
4- नौकर का सूचक ग्रह कौन है?

3.3.1 उपखण्ड एक

हमने ऊपर ग्रहों के कारक/ विचारणीय विषयों को अच्छी तरह से समझ लिया होगा। प्रिय छात्रों अब यहाँ पर ग्रहों के कुछ अन्य कारकत्व आदि का विवरण दिया जा रहा है जैसे-

सूर्य के कारकत्व –

सूर्यादात्मपितृप्रभावनिरुजाशक्तिश्रियश्चिन्तयेत्।[53]

अर्थात् –आत्मा, पिता, प्रभाव, आरोग्यता, शक्ति, लक्ष्मी आदि का कारक सूर्य है।

चंद्र के कारकत्व –

चेतोबुद्धिनृपप्रसादजननीसम्पत्करश्चन्द्रमा:।[54]

अर्थात्- चित्त, बुद्धि, राजा की कृपा,माता, और सम्पत्ति का कारक चंद्र होता है।

मंगल के कारकत्व –

सत्त्वं रोगगुणानुजावनिसुतज्ञातीर्धरासुनूना।।[55]

---

[52] उत्तरकालामृत 53-5
[53] जातकपारिजात 49-2
[54] जातकपारिजात 49-2
[55] जातकपारिजात 49-2

अर्थात् – शरीरिक बल व साहस, रोग, गुण, छोटे भाई/बहन, जमीन, जाति के लोगों का कारक मंगल है।

बुध के कारकत्व –

विद्याबन्धुविवेकमातुलसुहृद् त्वक्कर्मकृद्बोधन:।।[56]

अर्थात् – विद्या, परिवार,विवेक, मामा/मौसी, मित्र, त्वचा,कर्म (कार्य कुशलता) , आदि का कारक बुध कहा गया है।

गुरु के कारकत्व –

प्रज्ञावित्तशरीरपुष्टितनयज्ञानानि वागीश्वरात्।।[57]

अर्थात् – प्रज्ञा (बुद्धि), धन, शरीर की पुष्टि, संतान, और ज्ञान का विचार गुरु से करना चाहिए।

शुक्र के कारकत्व –

पत्नीवाहनभूषणानि मदनव्यापारसौख्यं भृगो:।।[58]

अर्थात् – पत्नी, वाहन,आभूषण, कामुकता, व्यापार और सुखादि का विचार शुक्र से करना चाहिए।

शनि के कारकत्व –

आयुर्जीवनमृत्युकारणविपत्सम्पत्प्रदाता शनि:।।[59]

अर्थात् – आयु, जीवन, मृत्यु का कारण, विपत्ति का कारण, सम्पत्ति आदि का कारक शनि है।

राहु और केतु के कारकत्व :-

सर्पेणैव पितामहं तु शिखना मातामहं चिन्तयेत् । [60]

---

[56] जातकपारिजात 49-2
[57] जातकपारिजात 50-2
[58] जातकपारिजात 50-2
[59] जातकपारिजात 50-2
[60] जातकपारिजात 50-2

अर्थात- राहु से पितामह और केतु से मातामह (नाना) का विचार करना चाहिए। शनिवत् राहु:और कुतवत् केतु: के अनुसार राहु व केतु का विचार करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

5- मृत्यु कारक ग्रह कौन है?
6- नाना का विचार किस ग्रह से करना चाहिए ?
7- पत्नी कार कग्रह का नाम लिखें
8- भूमि कारक ग्रह कौन है ?

3.3.2 उपखण्ड दो

आपने ग्रहों के कारक तत्वों का अच्छे से अध्ययन कर लिया। अब हम यहाँ पर ग्रहों के चर व स्थिर कारकों का विचार करेंगे। वस्तुत: स्थिर से तात्पर्य यह है कि कुण्डली में उस विचारणीय विषय विशेष का विचार करने के लिए स्थिर कारक का भी उतना विचार करना चाहिए जितना कि उस भाव के स्वामी आदि का। जैसे शुक्र स्त्री का कारक है तो कुण्डली में सप्तम भाव और उसके स्वामी के अध्ययन के साथ- साथ शुक्र का विचार करना परमावश्यक होता है। ठीक उसी प्रकार कुण्डली में ग्रहों के अंशकलादि के अनुसार चर कारक निश्चित हो जाते हैं। इन्हीं सभी विषयों का विशद अध्ययन इस खण्ड में किया जाएगा।

स्थिर कारक- हमने उपर्युक्त खण्ड में जिन विषयों को समझा है वे सभी कारक विषय ग्रहों के स्थिर कारक हैं। महर्षि जैमिन ने अपने जैमिनि सूत्र ग्रन्थ में कुछ कारक विशेष कहें हैं उनको भी यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा हैं।

जैमिनि मतानुसार ग्रहों के कारकत्व –

भगिन्यारत: श्याल: कनीयाञ्जननी चेति[61]

अर्थात्- मंगल से बहन, पत्नी के भाई, अपना भाई व माता का विचार किया जाता है।

विशेष- यहाँ अन्य विषय तो हमने पूर्व में पढें ही हैं माता का विचार मंगल से करने के लिए केवल जैमिनि का मत है पराशर ने चंद्रमा से माता का विचार कहा है।

[61] जैमिनि सूत्र 20-1

मातुलादयो बन्धवो मातृसजातीया इत्युत्तरत:।[62]

अर्थात्- बुध से मामा, मामी, अन्य पारिवारिक जनों का विचार करना चाहिए।

पितामह: पतिपुत्राविति गुरुमुखादेव जानीयात्।[63]

अर्थात्-गुरु से शनि तक तीनों ग्रहों से क्रमश: दादा, दादी, पति/पुत्र का विचार करना चाहिए। जैसे गुरु से पितामह, शुक्र से पितामही और शनि से पुत्रादि का ज्ञान करें।

पराशर जी के अनुसार स्थिर कारक

बलवानर्कसितयो: स वेद्य: पितृकारक:।
ग्रहो बलीन्दुकुजयो: कथ्यते मातृकारक:।
कुजात् स्वसाऽसि च श्यालोऽनुजो माताऽपि चिन्तयते।
बुधतो मातृजातीया विज्ञेया मातुलादय:।
जीवात् पितामह:, स्वामी सितत:, शनित: सुत:।
केतुत: स्त्री पिता माता श्वश्रू: श्वसुर एव च ।
मातामहप्रभृतयो विचार्या: स्थिरकारकै:।। [64]

अर्थात् - चक्र के द्वारा स्पष्ट किया गया है।

क्रम	ग्रह	कारक
1	सूर्य और शुक्र में बलवान् ग्रह	पितृकारक
2	चन्द्र और मंगल में बलवान् ग्रह	मातृकारक
3	मंगल	बहन, छोटा भाई, पत्नी का भाई और माता
4	बुध	मामा, मौसी आदि
5	गुरु	पितामह
6	शुक्र	स्वामी
7	शनि	पुत्र
8	केतु	स्त्री, पिता,

चर कारक- ये चर कारक ग्रहों के जन्मकालीन अंशकला आदि के अनुसार निश्चित किए जाते हैं।

[62] जैमिनि सूत्र 21-1

[63] जैमिनि सूत्र 22-1

[64] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्रम् 21-19 कश्लो 33

क्रम	स्थिति	चर कारक
1	सर्वाधिक अंशों वाला ग्रह	आत्म कारक
2	उससे कम	अमात्य
3	उससे कम	भ्रातृ
4	उससे कम	मातृ
5	उससे कम	पुत्र
6	उससे कम	ज्ञाति
7	उससे कम	स्त्री

विशेष- जब दो ग्रहों के अंश समान हों तब कलाधिक वाले ग्रह को ग्रहण करें जैसे सूर्य स्पष्ट 3-10-22.55 है और शुक्र भी 5 -10-23- 50 विकलादि पर है। यहाँ सूर्य और शुक्र के अंश समान है परन्तु शुक्र की कला अधिक है इसलिए कारक क्रम में पहले शुक्र की गणना होगी उसके बाद सूर्य की गणना की जाएगी।

अभ्यास प्रश्न-

9- पत्नी के भाई का कारक ग्रह कौन है?

10- चंद्र और मंगल में बलवान् ग्रह किसका कारक होते हैं?

11- जैमिनि ने पितामह कारक किसे कहा है?

12- आत्मकारक ग्रह कौन होता है?

3.4 मुख्यभाग खण्ड दो (भाव परिचय)

भावयति चिन्तयति पदार्थान् अर्थात् जिससे विषयों का, पदार्थों का चिन्तन किया जाता है। ज्योतिष में भाव से तात्पर्य 12 भावों से है जिनमें ग्रहों का फल विचार किया जाता है। हमने पूर्व अध्याय में राशियों को 12 भावों में काल पुरुष की कुण्डली के रूप में देखा था। वस्तुत: हर भाव के अन्दर वही कुण्डली निहित है। अब प्रश्न यह है कि इन 12 भावों का ज्ञान कैसे होता है आप यह भी सोच रहे होंगे कि क्या सभी के लिए ये 12 भाव एक जैसे होते हैं तो आइए समझते हैं इस विषय को।

सूर्य ही हमारी गणनाका अधार है। वह सूर्य प्रतिदिन हमें पूर्व में उदय होते हुए और पश्चिम में अस्त होते हुए दिखाई देता है। इसका कारण भी आप जानते हैं कि सूर्य हमेशा क्रान्ति वृत्त में भ्रमण करता हुआ हमारे क्षितिज के ऊपर आ जाता है तब हमें वह दिखाई देता है। क्षितिज के नीचे जाने के कारण हमे दिखाई नहीं पडता जिसके कारण वह हम उसे अस्त कहने लगते इसी प्रकार क्रान्ति वृत्त का जो भाग क्षितिज के पूर्व में लगता है उसे ही लग्न कहते है। जो भाग पश्चिम में लगता है उसे अस्त अर्थात् सप्तम भाव कहते हैं। जैसे-

क्रान्तिवृत्तस्य यो भागो लग्न: प्राक् क्षितिजे भवेत्।
तत्प्रथमं लग्नं ज्ञेयं,सप्तमञ्चापरे कुजे।
अधोयाम्योत्तरे लग्नो भागो यस्तच्चतुर्थकम्।
दशमञ्चात्र विज्ञेयमूर्ध्वभागे सदा बुधै:।।[65]

इसी प्रकार क्रान्तिवृत्त का जो भाग याम्योत्तरवृत्त में नीचे वाले भाग में लगता है उसे चतुर्थ भाव और ऊपर वाले भाग को दशम भाव कहते हैं। इसे हम चित्र के रूप में स्पष्ट करते हैं।
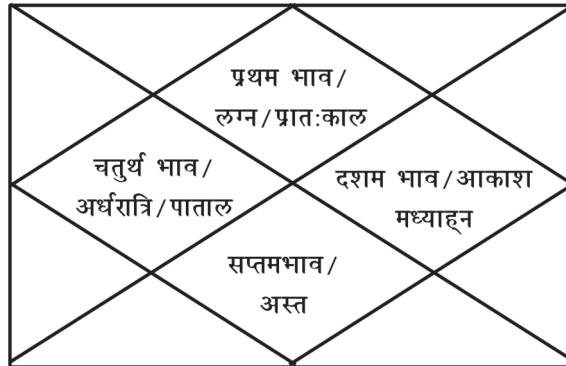
प्रिय छात्रों जातक का जब जन्म होता है।उस समय सूर्य उदय काल से जितना दूर होता है उसी का ज्ञान करना ही लग्न है। इसी तरह राशियों का उदय काल भी कहा जाता है। उस जन्म/इष्टकाल से 360 अंशों तक 12 भाव रहते हैं। इन्हीं 12 भावों से अलग-अलग विषयों का विचार किया जाता है। इन 12 भावों से जिन विषयों का विचार किया जाता है उसी के अनुसार इनका नाम भी निश्चित किया गया है। जैसे लग्न से शरीर/तन का विचार किया जाता है इसलिए इसका नाम तनु कर दिया ऐसे ही सभी भावों को समझना चाहिए।

[65] गोल परिभाषा, डॉहंसधर झा.,87-86

द्वादश भावों के नाम-

तन्वर्थ सहजबान्धवपुत्रारि-स्त्री विनाशपुण्यानि।
कर्मायव्ययभावा लग्नाद्या भावतश्चिन्त्या ।। [66]

अर्थात्- तनु, अर्थ, सहज, बन्धु, पुत्र, अरि, स्त्री, विनाश, पुण्य, कर्म, आय, व्यय ये 12 भावों के नाम है।

विशेष- इन भावों के नाम के अनुसार ही इन भावों से तद्वत् विषयों का विचार किया जाता है। जैसे लग्न का नाम शरीर है जो शरीर का विचार लग्न से, द्वितीय का नाम धन है तो धन सम्बन्धी विचार इसी भाव से किया जाएगा।

भावों के अन्य नाम-

शक्तिधनपौरुषगृहप्रतिभाव्रण कामदेहविवराणि।
गुरुमानभव्ययमिति कथितान्यपराणि नामानि। । [67]

अर्थात्- शक्ति, धन, पौरुष/ विक्रम, घर, प्रतिभा, व्रण/घाव, काम/इच्छा, छिद्र, गुरु, मान, भव, व्यय ये अन्य 12 नाम कहे गए हैं। इनको भी उपर्युक्तानुसार समझना चाहिए।

अन्य संज्ञाएँ-

लग्नात् चतुर्थनिधने चतुरस्रसंज्ञे।
द्यूनं च सप्तमगृहं दशमर्क्षमाज्ञा। । [68]

अर्थात्- लग्न से चतुर्थ और निधन (अष्टम) को चतुरस्र , सप्तम को द्यून और दशम भाव को आज्ञा कहते हैं।

केन्द्रादि संज्ञाएँ-

कण्टककेन्द्र चतुष्टयसंज्ञा: सप्तमलग्नचतुर्थखभानाम् ।
तेषु यथाभिहितेषु बलाढ्या: कीटनराम्बुचरा: पशवश्च।। [69]

---

[66] सारावली 26-3
[67] सारावली 27-3
[68] बृहज्जातकम् 16 -1

अर्थात्- 1,4,7,10 भावों को केन्द्र, कण्टक, चतुष्टय आदि नाम कहे गए हैं। इन केन्द्रों में क्रमश: (श्लोकानुसार) सप्तम में कीट, लग्न में नर, चतुर्थ में जलचर और दशम में पशु संज्ञक राशियाँ बलवान् होती हैं।

केन्द्रात्परं पणफरं परतश्च सर्वम्
आपोक्लिमं हिबुकमम्बुसुखं च वेश्म ।
जामित्रमस्तभवनं सुतभं त्रिकोणम् ।
मेषूरणं दशमत्र च कर्म विद्यात् । । [70]

अर्थात् - केन्द्र के बाद वाले भाव पणफर (2,5,8,11) और उसके बाद के भाव आपोक्लिम (3,6,9,12) कहलाते हैं।

।। भाव संज्ञा बोधक चक्र।।
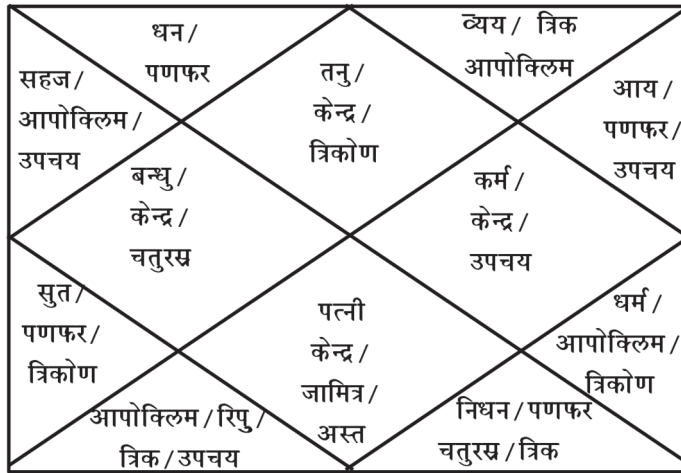
मारक भाव –

अष्टमं ह्यायुषस्थानं अष्टमादष्टमं च यत्।
तयोरपि व्ययस्थानं मारकस्थानमुच्यते। [71]

भावार्थ- अष्टम भाव को आयु का स्थान कहा गया है, और उसका आठवां (तीसरा भाव) उस आयु का नष्ट होना है। और इन दोनों का 12 वाँ (2 भाव, 7 भाव)मारक स्थान कहे गए हैं।

---

[69] बृहज्जातकम् 17 -1

[70] बृहज्जातकम् 18 -1

[71] लघुपराशरी 1-4

अभ्यास प्रश्न -

13- कण्टक किसे कहते हैं ?

14- आज्ञा किस भाव की संज्ञा है?

15- आपोक्लिम किन भावों की संज्ञा है ?

16- किन भावों को त्रिक कहते हैं ?

3.4.1 **उपखण्ड एक**

प्रिय सुधी जनों अब हमने भावों की संज्ञा का ज्ञान प्राप्त कर लिया है तब भी ग्रहों के फलों का हम अध्ययन करेंगे, तब-तब हमें इन भावसंज्ञाओं की आवश्यकता रहेगी। अब इस खण्ड में हम भावों से विचारणीय विषय या कारकों का अध्ययन करेंगे।

द्वादशभाव से विचारणीय विषय

प्रथम भाव

तुनं रूपं च ज्ञानं वर्णं चैव बलाऽबलम्।
प्रकृतिं सुख-दु:खं च तनुभावाद् विचिन्तयेत्।। [72]

भावार्थ- शरीर,स्वरूप, ज्ञान, सिर,रंग, बलवत्ता, निर्बलता, स्वभाव, सुख-दु:ख आदि विषयों की जानकारी प्रथम भाव से करना चाहिए।

द्वितीय भाव

कुटुम्बं च धनं-धान्यं मृत्युजालममित्रकम् ।
धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानात् निरीक्षयेत्।।

भावार्थ- परिवार,पैसा, अनाज, मृत्यु, शत्रु, धातु,रत्नाभूषण आदि का विचार द्वितीय भाव से करना चाहिए।

विशेष – नेत्र, मुख,गला, वाणी,ज्ञान, विद्या, भोजनादि भी इसी भाव के कारक हैं।

तृतीय भाव

विक्रमं भृत्य- भ्रात्रादि चोपदेश-प्रयाणकम्।

[72] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्रम् 2-12

पित्रोर्वै मरणं विद्वान् दुश्चिक्यात् च निरीक्षयेत्।।

भावार्थ- साहस, नौकर, भाई-बहन, उपदेश, यात्रा, माता पिता की मृत्यु ये तृतीय भाव के कारकत्व हैं।

विशेष – कान, कण्ठनली, श्रवणशक्ति, पराक्रम, हिम्मत, हाथ आदि का भी विचार तृतीय भाव से होता है।

चतुर्थ भाव

बान्धवानथ यानानि मातृसौख्यादिकान्यपि।
निधिक्षेत्र- गृहारामादिकं तुर्याद् विचारयेत्।। [73]

भावार्थ- परिवार, मित्र, वाहन, माता, सुख, सम्पत्ति,खेत/जमीन, घर, वाटिका आदि चतुर्थ भाव के कारक हैं।

विशेष – हृदय, जलाशय,जल स्थान, घर/बँगला, माता का सुख-दु:ख, वाहनादि का विचार यहीं से होता है।

पंचम भाव

यन्त्रं मन्त्रं तथा विद्यां बुद्धेश्चैव प्रबन्घकम्।
पुत्रराज्यापभ्रशादीन् पश्येत् पुत्रालयाद् बुध:।।

भावार्थ- यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि, प्रबन्धन/ व्यवस्थापन, संतान, राज्यपतन आदि पंचम भाव के कारक हैं।

विशेष – पेट, साधना, कला-कौशल, गर्भ की स्थिति, दूर देश की चिन्ता, वार्तालेखन का भी विचार इसी भाव से किया जाता है।

षष्ठ भाव

वैरी रुजेर्म्मधुरादिषडौपदंशा: चिन्ता व्यथा भयकटी पशुमातुलौ च।
नाभि: क्षतं व्यसनतस्कर विघ्नशंका साप्त्नमातृसमराक्षि रुजोऽरिभावात्।।

[73] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्रम् 5-12

भावार्थ- शत्रु, कर्ज, रोग, घाव, मधुरादि 6रस, चिन्ता, व्यथा, भय, कमर, पशु, मामा, नाभि, अंग-भंग, विपत्ति, चोर, विघ्न,शंका, सौतेली माता, युद्ध, और आँखों की बीमारी आदि का कारक षष्ठ भाव है।

सप्तम भाव

जायामध्वप्रयाणं च पदाप्तिं च वणिक् क्रियाम्।
मरणं च स्वदेहस्य जायाभावात् निरीक्षयेत्।।

भावार्थ- पत्नी, यात्रा, पद, व्यापार, मृत्यु, आदि का विचार सप्तम भाव से किया जाता है।

विशेष – कामशक्ति, विवाह, वाद-विवाद, दादा, पति/पत्नी आदि का भी विचार इसी भाव से किया जाता है।

अष्टम भाव

आयुर्मत्युपरं चापि गुदे चैवांकुरादिकम्।
पूर्वापरं जनुर्वृत्तं सर्वं रन्ध्रात् विचिन्तयेत्।।

भावार्थ- आयु,मृत्यु, गुदा, बवासीर, पूर्वजन्म आदि का अष्टम भाव कारक होता है।

विशेष – गुप्तवार्ता,गुप्तधन, गुप्तांग, दुर्घटना, कठिनाईयाँ, समुद्रयात्रा आदि का विचार इसी भाव से किया जाता है।

नवम भाव

धर्मं भाग्यमथे श्यालं भ्रातृ-पत्न्यादिकांस्तथा।
तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानात् निरीक्ष्येत्।।

भावार्थ- नवम भाव से धर्म, भाग्य, साला, भाई की पत्नी,तीर्थ, यात्रा, आदि का विचार किया जाता है।

विशेष – साधना, गुरु, दीक्षा, पिता, यज्ञ, भाग्य, भाग्योदय मन्दिर, ऊरु, परोपकार आदि का विचार इसी भाव से किया जाता है।

दशम भाव

राज्यं चाकाशवृत्तिं च गानं च पितरं तथा।
ऋणं चापि प्रवासं च व्योमस्थानात् निरीक्षयेत्।।

भावार्थ- राज्य, आकाश, कर्म,गानकौशल,पिता, कर्ज, प्रवास, बाहर की यात्रा, ऊँचे स्थान का विचार दशम स्थान से करते हैं।

विशेष – मान-सम्मान, अभिमान, कृषि, आजीविका, राजा का आसन, खानदान, शिल्पविद्या, व्यापार आदि का विचार इसी भाव से किया जाता है।

एकादश भाव

नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च ।
आयं सुसमृद्धिं च भवस्थानात् निरीक्षयेत्।।

भावार्थ- विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ, पुत्र की पत्नी, आय, समृद्धि आदि का कारक एकादश भाव है।

विशेष – कान, हाथ, आमदनी का जरिया, अपनी दोनो पिंडली, पैर, सन्तानहीनता, बडे वाहन, बाँया कान आदि का विचार इसी भाव से किया जाता है।

द्वादश भाव

व्ययं च वैरि वृत्तान्तं रिष्कमन्त्यादिकं तथा।
व्ययाच्चैव हि जानीयात् इति सर्वत्र बुद्धिमान्।। [74]

भावार्थ- व्यय, शत्रु का वृत्तान्त, हानि, मृत्यु , सम्पत्ति का नाश, शुभाशुभ, धन का विनियोग, कर्ज, पैदल यात्राएँ, विकलांगता,दण्ड, शरीर का विकार, ऊँचे स्थान से गिरना, स्त्री सुख,शय्या सुख आदि का विचार बारहवें भाव से करते हैं।

अभ्यास प्रश्न -

17-विवाह के लिए किस भाव का अध्ययन करना चाहिए?
18-रोगकारक भाव कौन सा है?
19-आय साधन का भाव कौन हैं ?
20- हृदयसूचक भाव है ?

[74] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्रम् 13-12

3.4.2 उपखण्ड दो

प्रिय छात्रों आपने ग्रहों और भावों के कारकों का अध्ययन कर लिया है। अब इस क्रम में हम कुछ विशेष कारकों का अध्ययन करेंगे।

द्वादश भावों के कारक ग्रह

सूर्यो गुरु: कुज: सोमो गुरुर्भौम: सित: शनि:।
गुरुश्चन्द्रसुतो जीवो मन्दश्च भावकारका:।। [75]

भावार्थ- परशर मतानुसार सूर्य, गुरु, मंगल, चंद्र, गुरु, मंगल, शुक्र, शनि, गुरु, बुध, गुरु और शनि ये 12 भावों के कारक कहे गए हैं।

वैद्यनाथ मत से –

द्युमणिरमरमन्त्री भूसुत: सोमसौम्यौ गुरुरिनतनयारौ भार्गवौ भानुपुत्र:।
दिनकरदिविजेज्यौ जीवभानुज्ञमन्दा: सुरगुरुरिनसूनु: कारका: स्युर्विलग्नात्।।[76]

भावार्थ-

क्रम	भाव	कारक
1.	प्रथम	सूर्य
2.	द्वितीय	गुरु
3.	तृतीय	मंगल
4.	चतुर्थ	चंद्र, बुध
5.	पंचम	गुरु
6.	षष्ठ	मंगल, शनि
7.	सप्तम	शुक्र
8.	अष्टम	शनि
9.	नवम	सूर्य, गुरु
10.	दशम	सूर्य, बुध, गुरु,शनि
11.	एकादश	गुरु
12.	द्वादश	शनि

[75] बृहत्पाराशरहोरा शास्त्रम् 34-33

[76] जातकपारिजात 51-2

विशेष कारक ग्रह

स्वर्क्षत्रिकोणतुंगस्था यदि केन्द्रेषु संस्थिता:।
अन्योन्यं कारकास्ते स्यु: केन्द्रेष्वेव हरेर्मतम् ।। [77]
रवितनयो जूकस्थ: कुलीरलग्ने बृहस्पतिहिमांशु।
मेषे कुजा रवियुत: परस्परं कारका एते।। [78]

अर्थात् - जन्मकाल में यदि ग्रह अपनी राशि व मूलत्रिकोण राशि में या अपनी उच्च राशि में स्थित होकर केन्द्र में हों तो वे परस्पर कारक होते हैं। कर्क लग्न में गुरु व चंद्रमा, शनि तुला में, मेष में भौम व सूर्य होने से ये परस्पर कारक होते हैं।

तुंगसुहृत्स्वगृहांशे स्थिता ग्रहा: कारका: समाख्याता:।
मेषूरणे च रविरिति विशेषतो वक्ति चाणक्य:।। [79]

अर्थात् - ग्रह किसी भाव में उच्चस्थ हो, मित्रराशि में हो, अपने नवांश हो तो वह कारक होता है। दशम भाव में सूर्य मेष राशि में होने पर विशेष कारक होता है।।

लग्नस्था: सुखसंस्था दशमस्थाश्चापि कारका: सर्वे।
एकादशेSपि केचिद्वांच्छन्ति न तन्मतं मुनीन्द्राणाम् ।। [80]

अर्थात् – उच्चादि के बिना भी लग्न में , चतुर्थ में, दशम में स्थित ग्रह भी कारक होते हैं। कुछ विद्वान् 11 वें भाव में स्थित ग्रह को भी कारक कहते हैं।

भावों के शुभाशुभ फल ज्ञान विधि-

यो यो भाव: स्वामिदृष्टो युतो वा सौम्यैर्वा स्यात् तस्य तस्यास्ति वृद्धि:।
पापैरेवं तस्य भावस्य हानि: निर्देष्टव्या पृच्छतां जन्मतो वा।।[81]

अर्थात् – जो भाव अपनेस्वामी से युत हो या दृष्ट हो, अथवा किसी शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो उस भाव की वृद्धि होती है। यदि ऐसे ही किसी पापग्रह का प्रभाव किसी भाव को प्रभावित करे तो उस भाव के फल की हानि होती है।

---

[77] सारावली 1-6
[78] सारावली 2-6
[79] सारावली 3-6
[80] सारावली 4-6
[81] षट्पंचाशिका 5

अभ्यास प्रश्न

21-शनि किस लग्न में कारक होता है?

22-अष्टम भाव का कारक ग्रह कौन है?

23-मेष लग्न के कारक ग्रह कौन हैं ?

24- उच्चराशिस्थ ग्रह कहाँ पर कारक होते है ?

3.5 सारांश

आपने इस पाठ के माध्यम से ग्रहों के कारकत्व एवं भावों के कारकत्व का समग्ररूप से अध्ययन किया है। ज्योतिष के फल निर्णय करने के लिए कारकों का ज्ञान होना अत्यावश्यक है। जब हम किसी भी विषय विशेष को जानने के लिए हमें ग्रहों के कारक के साथ भावों के कारकों का अध्ययन करना चाहिए। सूर्य पिता का कारक, चंद्र माता का,मंगल भाई व बहनका, बुध मामा,मौसी आदि का, गुरु संतान का, शुक्र स्त्री का और शनि नौकर आदि का कारक होते हैं। इसी क्रम में लग्न से शारीरिक वर्णाकृति का ज्ञान, द्वितीय भाव धन संचय का भाव है। तृतीय भाव भाई बहन के साथ पराक्रम आदि का सूचक, चतुर्थ भाव वाहन,घर, जल आदि का सूचक एवं पचंमभाव शिक्षा, बुद्धि व संतान का सूचक है। षष्ठभाव से हमें जीवन में होने वाले रोगों का ज्ञान होता है। सप्तम भाव विवाह का कारक पति व पत्नी का सूचक होता है। इसके साथ ही द्वितीय व सप्तम मारक भाव भी कहे गए हैं। अष्टम भाव से हमें मृत्यु की जानकारी के साथ गुप्त धन आदि का भी ज्ञान प्राप्त होता है। नमव भाव हमें यज्ञ, धर्म,पिता का सूचक है। दशम कर्म एवं राज्य का कारक, एकादश भाव आय एवं 12 वाँ भाव व्यय का कारक है। इसी क्रम में हमने केन्द्र त्रिकोण आदि का ज्ञान प्राप्त किया है। 12 भावों के कारक ग्रह भी ग्रहों का फल जानने में आवश्यक हैं। जैसे किसी के संतान का ज्ञान प्राप्त करना है तो कुण्डली में पंचम भाव, पंचमेश एवं गुरु का विचार करना चाहिए। इसकेसाथ ही जिस भाव को उसका स्वामी या शुभ ग्रह देखता हो या वहाँ पर बैठे हों उस भाव के फल में वृद्धि होतीहै। पापग्रहों के होनेपर हानि होती है। वस्तुत: यह पाठ ग्रहों का फल ज्ञान करने के लिए महत्त्वपूर्ण है अत: इस पाठ का बारम्बार अभ्यास करना चाहिए।

3.6 शब्दावली

क्रान्ति वृत्त- सूर्य के भ्रमण मार्ग को क्रान्ति वृत्त कहते हैं। कदम्ब वृत्त से 90 अंश से बना हुआ वृत्त।

क्षितिज वृत्त- खमध्य से 90 अंशों पर बना हुआ वृत्त।

केन्द्र– 1,4,7,10 भावों को केन्द्र कहते हैं।

त्रिकोण- 1,5,9 भावों का नाम त्रिकोण है।

त्रिक-6,8,12 भावों को त्रिक कहते हैं।

मारक भाव- 2,7 भाव

पणफर- 2,5,8,11 भाव

आपोक्लिम- 3,6,9,12 भाव

जूकस्थान-तुला

कुलीर- कर्क राशि

मेषूरण-दशम भाव

तुंग-उच्च

सुहृत् –मित्र

रुज् – रोग

प्रयाण-यात्रा

द्यून-सप्तम भाव

स्वर्क्ष- स्वगृही

द्युमणि:- सूर्य

3.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क्रम	प्रश्न	उत्तर
1.	संतान कारक ग्रह कौन है?	गुरु
2.	चौर कारक ग्रह कौन है?	मंगल
3.	हास परिहास आदि गुणों का विचार किस ग्रह से किया जाता है?	बुध
4.	नौकर का सूचक ग्रह कौन है?	शनि
5.	मृत्यु कारक ग्रह कौन है?	शनि
6.	नाना का विचार किस ग्रह से करना चाहिए ?	केतु
7.	पत्नी कारकग्रह का नाम लिखें	शुक्र

8.	भूमि कारक ग्रह कौन है	मंगल
9.	पत्नी के भाई का कारक ग्रह कौन है?	मंगल
10	चंद्र और मंगल में बलवान् ग्रह किसका कारक होते हैं?	मातृ कारक
11	जैमिनि ने पितामह कारक किसे कहा है?	गुरु को
12	आत्मकारक ग्रह कौन होता है?	सबसे अधिक अंशो वाला ग्रह
13	कण्टक किसे कहते हैं ?	केन्द्र को 1,4,7,10
14	आज्ञा किस भाव की संज्ञा है?	10 भाव
15	आपोक्लिम किन भावों की संज्ञा है ?	3,6,9,12
16	किन भावों को त्रिक कहते हैं ?	6,8,12
17	विवाह के लिए किस भाव का अध्ययन करना चाहिए?	सप्तम भाव
18	रोगकारक भाव कौन सा है?	षष्ठ भाव
19	आय साधन का भाव कौन हैं ?	एकादश
20	हृदयसूचक भाव है ?	चतुर्थ
21	शनि किस लग्न में कारक होता है?	तुला
22	अष्टम भाव का कारक ग्रह कौन है?	शनि
23	मेष लग्न के कारक ग्रह कौन हैं ?	मंगल व सूर्य
24	उच्चराशिस्थ ग्रह कहाँ पर कारक होते है ?	केन्द्र में

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सारावली –कल्याणवर्मा – व्याख्याकार-डॉ.मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
2. जातकपारिजात- वैद्यनाथ - व्याख्याकार-गोपेश ओझा, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
3. भावमंजरी- पं. मुकुन्द दैवज्ञ- व्याख्याकार-डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
4. जैमिनि सूत्र-जैमिन- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
5. बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी

6. लघुपाराशरी- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
7. बृहज्जातकम् –बाराहमिहिर- व्याख्याकार- केदार दत्त, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
8. उत्तरकालामृत- कालिदास- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
9. गोल परिभाषा, डॉ.हंसधर झा, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय

3.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. सारावली –कल्याणवर्मा – व्याख्याकार-डॉ.मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
2. जातकपारिजात- वैद्यनाथ - व्याख्याकार-गोपेश ओझा, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
3. भावमंजरी- पं. मुकुन्द दैवज्ञ- व्याख्याकार-डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
4. जैमिनि सूत्र-जैमिन- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
5. बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी
6. लघुपाराशरी- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
7. बृहज्जातकम् –बाराहमिहिर- व्याख्याकार- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
8. उत्तरकालामृत- कालिदास- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1- सप्तम भाव के कारकों की सूची बनाएँ।
2- गुरु के कारको विषयों का विवरण लिखें।
3- द्वादश भावों के कारकों के नाम लिखें।
4- आत्मादिकारकों का विवरण प्रस्तुत करें।
5- भावों की संज्ञा चक्र प्रस्तुत करें।

इकाई - 4 ग्रहदृष्टि एवं ग्रहमैत्री विचार

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

आपका इस पाठ में स्वागत है। आपने बडे मनोयोग से पूर्व पाठों का अभ्यास किया है। उसी क्रम में हम इस पाठ में ग्रहों की दृष्टि और ग्रहों के मित्र शत्रु आदि का अध्ययन करने जा रहे हैं। आप सोच रहे होंगे कि इनका क्या प्रयोजन है ? वस्तुत: ग्रहों के फल निर्णय के लिए कई चरणों को ध्यान में रखा जाता है। पूर्व इकाई में पठित ग्रहों व भावों के कारक ग्रहों की स्थिति के अनुसार फली भूत होते हैं। ग्रह का प्रभाव उसक स्थान के साथ-साथ उसकी दृष्टि वाले स्थान पर भी रहता है।
सभी ग्रहों की प्रकृति अलग है कारकत्व अलग है अत: उनका प्रभाव भी अलग होगा। उनके स्वभाव व गुण धर्म के अनुसार उनकी अन्य ग्रहों के साथ मित्रता व शत्रुता निश्चितहोती है। इसके लिए महर्षियों ने अपने दिव्यज्ञानानुभव के द्वारा ग्रहों की दृष्टि एवं मित्रता शत्रुता का जो स्वरूप प्रदान किया है उसी का सोदाहरण हम यहाँ अभ्यास करते हुए ज्ञान प्राप्त करेंगे।

4.2 उद्देश्य

ग्रहों की दृष्टि व उनकी मित्रता शत्रुता का ज्ञान फलादेश का एक स्तम्भ सदृश है अत: उसके ज्ञान के बिना फल सोचना भी असम्भव है अत: इस पाठ के द्वारा हम निम्न उद्देश्यों को पूर्ण करेंगे।

- इस पाठ के माध्यम से हमें ग्रहों की दृष्टि स्थान का ज्ञान होगा।
- ग्रहों की दृष्टि भेद का ज्ञान होगा।
- राशियों दृष्टि स्थान का अधिगम होगा।
- ग्रहों के नैसर्गिक मित्र व शत्रुओं का ज्ञान होगा।
- ग्रहों के तात्कालिक मित्र व शत्रुओं का ज्ञान होगा।
- पंचधा मैत्री के भेद का ज्ञान होगा।

4.3 मुख्यभाग

ग्रहों की अपनी अपनी स्वतंत्र दृष्टि है। ग्रह कुण्डली में जिस स्थिति पर होगा उस शुभाशुभ आदि प्रभाव को अपने द्वारा देखे जाने वाले स्थान को भी देगा, उस भाव या उस भाव में बैठे हुए ग्रह को भी प्रभावित करेगा। महर्षियों ने ग्रहों की दृष्टि को मुख्यत: 4 भागों में बाँटा है। जिसे हम एकपाद,द्विपाद, त्रिपादव पूर्ण दृष्टि के नाम से जानते हैं। तो आईए इस दृष्टि स्वरूप को हम समझते हैं।

पादेक्षणं भवति सोदरमानराशयो: अर्धं त्रिकोणयुगलेऽखिलखेचराणाम्।

पादोन दृष्टिनिचयश्चतुरस्रयुग्मे सम्पूर्णदृग्बलमनङ्गगृहे वदन्ति।।। [82]

अर्थात् – तीसरे और दसवें स्थान पर ग्रह की एकपाद दृष्टि होती है।

त्रिकोण (5,9) स्थान में ग्रह की आधी दृष्टि होती है।

चतुर्थ और अष्टम में ग्रह की त्रिपाद दृष्टि होती है।

ग्रह से सातवें स्थान में उसकी पूर्ण दृष्टि होती है।

विशेष-ग्रहों की दृष्टि के लिए प्रत्येक ग्रह के स्थान से निर्णय लिया जाताहै। जो ग्रह जिस स्थान पर बैठेगा उस स्थान से 3,10 को एकपाद, 5,9 को अर्ध दृष्टि से, 4,8 को त्रिपाद दृष्टि से और सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखेगा।

दृष्टिविशेष-

शनिरतिबलशाली पाददृग्वीर्ययोगे, सुरकुलपतिमन्त्री कोणदृष्टौ शुभ:स्यात्।

त्रितयचरणदृष्ट्या भूकुमार: समर्थ:, सकलगगनवासा: सप्तमे दृग्बलाढ्या:।।[83]

अर्थात् – शनि बहुत बलवान होने के कारण केवल एकपाद से ही अपना पूर्ण प्रभाव देता है। अत: उसकी सप्तम के अलावा 3,10 वीं दृष्टि भी पूर्ण दृष्टि होती है। गुरु त्रिकोण में बलवान होने के कारण उसकी सप्तम के अलावा पंचम और नवम में भी पूर्ण दृष्टि होती है। इसी प्रकार मंगल की सप्तम के अलावा 4,8वीं दृष्टि भी पूर्ण दृष्टि होती है। अब इसको हम चक्र के अनुसार समझते हैं।

दृष्टि बोधक चक्र

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
एकपाद	3,10	3,10	3,10	3,10	3,10	3,10	----
अर्ध	5,9	5,9	5,9	5,9	----	5,9	5,9
त्रिपाद	4,8	4,8	----	4,8	4,8	4,8	4,8
पूर्ण दृष्टि	सप्तम	सप्तम	4,7, 8	सप्तम	5,7, 9	सप्तम	3,7, 10,

उदाहरण- अब हम एक कुण्डली में उदाहरण के द्वारा ग्रह दृष्टि को समझते हैं।

82 जातकपारिजात 30-2

83 जातकपारिजात 31-2
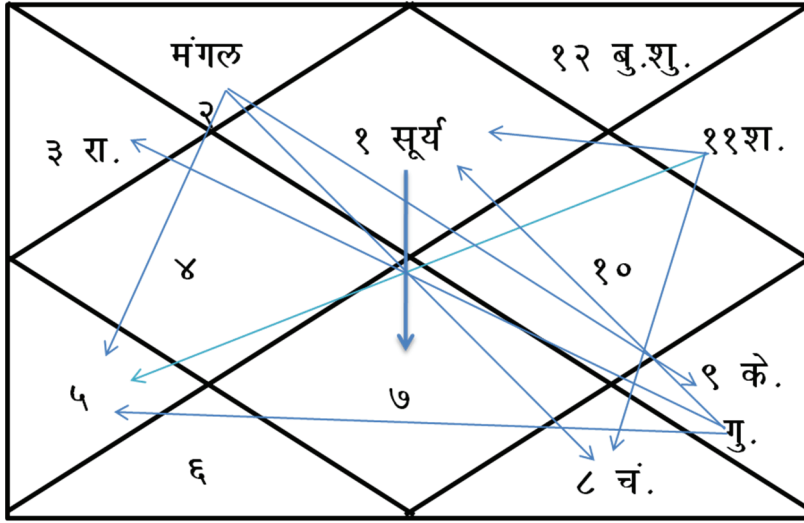
इस कुण्डली में आप देखें कि सूर्य की अपने से सातवें स्थान पर दृष्टि है। सूर्य उच्च होकर लग्नस्थ है अत: उच्चस्थ सूर्य सप्तम को देख रहा है ऐसा कहा जाएगा। गुरु नवम स्थान पर है उसकी अपने स्थान से 5 वीं लग्न पर, 7 वीं तृतीय भाव पर और 9वीं पंचम भावपर दृष्टि पड रही है। शनि एकादशभाव में है उसकी 3री लग्न पर, सातवीं पंचम भाव पर और दसवीं अष्टम भाव पर पड रही है। यहाँ शनि की दशम दृष्टि के स्थान पर चंद्रमा है अत: शनि चंद्र को पूर्ण दृष्टि से देख रहा है ऐसा कहा जाएगा।

विशेष- आप यहाँ ध्यान से देखें तो पाएँगे कि ग्रहों का प्रभाव न केवल उनके अपने बैठे हुए स्थान पर है अपितु कुण्डली में कई स्थानों पर है। जैसे सूर्यलग्न पर तो उसको फलादेश हेतु हम पढेंगे कि पंचमेश सूर्य लग्नस्थ होकर सप्तम को प्रभावित कर रहा है। अब आप यह देखें कि पंचमेश सूर्य उच्चस्थ होने पर अपने गुण धर्म को सप्तम अर्थात् पत्नी, व्यापार, यात्रा आदि स्थान में बाँटेगा। इसी प्रकार ध्यान से देखें कि पंचम स्थान पर शनि, गुरु और मंगल तीनों की पूर्ण दृष्टि है अब इनका प्रभाव भी इस भाव पर पडेगा। जो कि स्वाभाविक रूप से अलग-अलग होगा। अत: दृष्टि का विचार फल ज्ञान के लिए अत्यावश्यक है इसे आप स्मरण करके रखें।

अब आपके मन में एक प्रश्न उठ रहा होगा कि सभी ग्रहों की दृष्टि की बात की गई परन्तु राहु व केतु की दृष्टि की बात नहीं हुई। उसका कारण यह है कि ये दोनों ग्रह छाया ग्रह हैं इनकी दृष्टि नहीं हो सकती ऐसा कुछ विद्वानों का मत है। ये दोनो जिस स्थान पर बैठते हैं या जिस ग्रहके साथ होते हैं वैसा फल प्रदान करते हैं।

यस्मिन् भावे स्थितौ राहुकेतू तत्फलदायकौ।[84]

जैसे इस कुण्डली में राहुबुध के घर पर है और गुरु से दृष्ट है अत: उसके फल में बुध व गुरु दोनों का प्रभाव भी शामिल होगा।

इसके साथ ही एक श्लोक बहुधा पुस्तकों में राहु केतु की दृष्टि को स्पष्टकरता हुआ प्राप्त होता है यथा-

सुतमदननवात्ये पूर्ण दृष्टि: तमस्य,
युगलदशमगेहे चार्द्ध दृष्टिं वदन्ति।
सहजरिपुविपश्यन् पाददृष्टिं मुनीन्द्रा:
निजभवनमुपेतो लोचनान्ध: प्रविष्ट:।।

अर्थात् – 5,7,9,12 वे स्थान पर राहु की पूर्ण दृष्टि होती है। 2,10 में अर्द्ध दृष्टि होती है। 3,6 स्थान पर द्विपाद दृष्टि होती है। उपर्युक्त कुण्डली का उदाहरण देखें तो तृतीयस्थ राहु की सप्तम, नवम, एकादश और द्वितीय भाव पर पूर्ण दृष्टि है।

दृष्टा ग्रह- देखने वाले ग्रह को दृष्टा कहते हैं।
दृश्य- जिस ग्रह को देखा जा रहा है उसे दृश्य कहते हैं।
जैसे नवमस्थ गुरु तृतीयस्थ राहु को देख रहा है तो गुरु दृष्टा व राहु दृ्श्य होगा।

अभ्यास प्रश्न-

1- सूर्य की एकपाद दृष्टि कहाँ होती है?
2- शनि के दृष्टि स्थान लिखें।
3- मंगल की पूर्ण दृष्टि स्थान लिखें।
4- गुरु की पूर्ण दृष्टि किस स्थान पर होती है?
5- सभी ग्रह किस स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं?

4.3.1 उपखण्ड एक

प्रिय छात्रों! हमने ग्रहों के दृष्टि स्थान का ज्ञान प्राप्त कर लिया। अब हम इस खण्ड में दृष्टि

84 त्रिफला ज्योतिष सुश्लोक शतक 18

का कलात्मक मान समझेंगे। यहाँ पर ग्रहों की दृष्टि को कला विकला के माध्यम से समझाया गया है।

कलात्मक दृष्टि :-

ग्रहों की दृष्टि जानने के बाद हमें यह भी जानना चाहिए कि देखने वाला कितनी दृष्टि से देख रहा है। महर्षियों ने पूर्ण को 60’ कला, त्रिपाद को 0-45’’, द्विपाद को 0.30’’ और एकपाद को 0.15’’ दृष्टि समझनी चाहिए।

जैसे- उपर्युक्त कुण्डली में सूर्य का उदाहरण लेते हैं। सूर्य सप्तम भाव को पूर्ण दृष्टि से देख रहा है। अर्थात् 60’ कला से देख रहा है। 4,8 भाव को त्रिपाद दृष्टि से देख रहा है तो 0.45’’ कलात्मक दृष्टि से देख रहा है। इसी प्रकार सबको समझना चाहिए।

दृष्टि भेद

अर्थोर्ध्वदृष्टी दिननाथभौमौ दृष्टि: कटाक्षेण कवीन्दुसून्वो:।
शशांकगुर्वो: समभागदृष्टिरधोऽक्षिपातस्त्वहिनाथशन्यो:।।[85]

अर्थात्- सूर्य मंगल की ऊर्ध्व दृष्टि,बुध शुक्र की कटाक्ष दृष्टि, चंद्रमा और गुरु की सम दृष्टि एवं शनि की अधो दृष्टि होती है। जैसे ऊपर की कुण्डली का ही उदाहरण देखें तो स्पष्ट होगा कि इस कुण्डली में किस ग्रह की किस स्थान पर कैसी दृष्टि पड रही है।

4.3.2 उपखण्ड दो

हमने पूर्व खण्ड में ग्रहों की दृष्टि विविधता को समझा। दृष्टि ज्ञान क्रम में जैमिनि ने ग्रहों की दृष्टि के अलावा राशियों की दृष्टि भी बताई है। जिसका उपयोग भी फलादेश में विद्वान् लोग करते हैं। वस्तुत: पराशर और जैमिनि के मूल सिद्धान्त फलित में प्रचलित हैं दोनों विद्वानों ने एक दूसरे के मत का अनुसरण भी किया है। महर्षि पराशर ने अपने ग्रन्थ में जैमिनि मत की दृष्टि, कारकांश आदि बहुत सारे मतों को समादृत किया है। अत: दोनों मत एक साथ उपयुज्य हैं। प्राचीन काल से ही दोनों सिद्धान्तो का प्रयोग किया जा रहा है। तदर्थ आपके अध्ययन हेतु इस खण्ड में राशियों की दृष्टि दी जा रही है।

जैमिनि कहते हैं कि अभिपश्यन्ति ऋक्षाणि अर्थात् राशियाँ अपने सामने वाले राशियों को देखती हैं कैसे इसका सरल क्रम हम पराशरजी के द्वारा प्राप्त करते हैं।

85 जातकपारिजात 32-2

राशयोऽभिमुखं विप्र! प्रपश्यन्ति।
चर: स्थिरान् यथा पश्येत् स्थिरोऽपि तथा चरान्।
अनन्तिकगतानेवं ग्रहास्तत्र गता अपि।
द्विस्वभावो द्विभान् किन्तु नात्मानमवलोकते।।
निरीक्षन्ते चरस्थास्तु स्थिरस्थान् द्युचरांस्तथा।
एवं स्थिरगताश्चापि चरस्थान् नान्तिकस्थिताम्।।
द्विस्वभावगता: खेटा: प्रपश्यन्ति द्विभस्थितान्।
ग्रहान् समस्तानपि तु नात्मना सह संस्थितान्।।[86]

अर्थात्-

- चर राशि में बैठा हुआ ग्रह निकटस्थ स्थिरराशि में बैठे हुए ग्रह को छोडकर अन्य स्थिरराशिस्थ ग्रह को देखता है।
- स्थिरराशिस्थ ग्रह निकटस्थ चरराशि के ग्रह को छोडकर अन्य चर राशि ग्रहों को देखता है।
- द्विस्वभाव राशिस्थ ग्रह अपने निकटस्थ को छोडकर अन्य द्विस्वभावस्थ ग्रहों को देखता है।

छात्रों! अब यहाँ एक संदेह होता है कि निकटस्थ से क्या तात्पर्य है आगे वाली राशियाँ या पीछे वाली राशियाँ को निकटस्थ राशियाँ हैं। इसके लिए हम महर्षि जैमिनि का अनुसरण करें तो वृद्ध तो कारिका के वचन से स्पष्ट होता है कि-

चरं धनं विना स्थानं स्थिरमन्त्यं बिना चरम्।
युग्मं स्वेन बिना युग्मं पश्यन्तीत्ययमागम:।।[87]

- ✓ चर राशियाँ अपने से द्वितीय स्थान की स्थिर राशि को छोडकर अन्य स्थिर राशियों को देखती हैं।
- ✓ स्थिर राशियाँ अपने से द्वादश स्थान में विद्यमान चर राशि को छोडकरअन्य राशियों को देखती हैं।

चलिए यह तो निर्णय हो गया कि निकटस्थ से तात्पर्य क्या है। अब आप सोच रहे होंगे कि यह दृष्टि केवल राशियों की होती है या ग्रहों की होती है या दोनों की। इसके लिए पुन: हम जैमिनि जी का

86 बृहत्पाराशर होरा शास्त्रम् 5-2
87 जैमिनि सूत्र 2 यअध्या (वृद्ध कारिका), की सुरेशचंद्र की टीका 3

अनुसरण करते हैं।

जैमिनि राशियों की दृष्टि को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि –

तन्निष्ठाश्च तद्वत्।।[88]

अर्थात्- इन राशियों में बैठे हुए ग्रह भी पूर्वोक्त राशियों को देखेंगे जैसा कि उपर्युक्त पराशर जी के वचन से स्पष्ट है। जैसे मेष चर राशि है इसकी वृश्चिक में दृष्टि होगी, तो मेष में यदि कोई ग्रह बैठा है तो उसकी भी वृश्चिक में दृष्टि होगी।। निर्ष्कष यह हुआ कि मुख्यत: राशियों की ही दिशा होती है उसमें बैठा हुआ ग्रह राशियों का ही अनुसरण करता है। जैसे हम इस कुण्डली के उदाहरण से समझ सकते हैं।

।। राशि दृष्टि बोधक चक्र।।
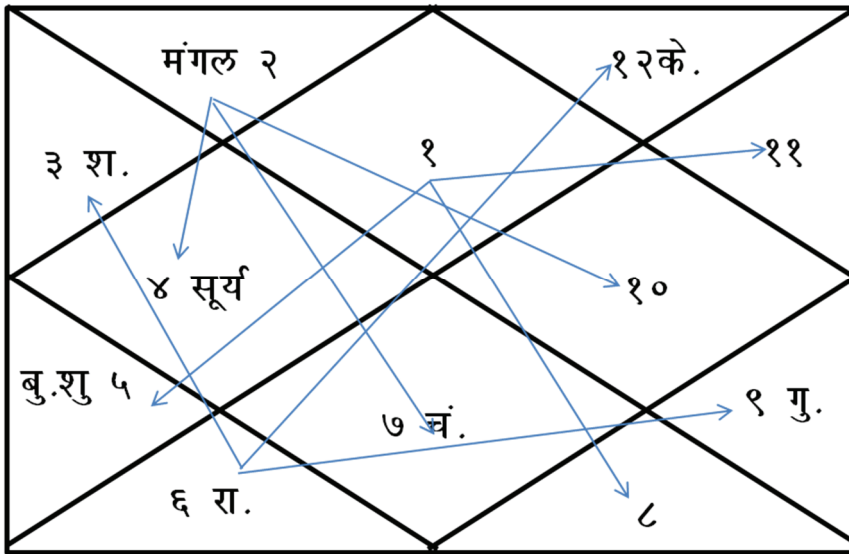
मित्रों हम सबसे पहले चर राशि की दृष्टि को समझते हैं। हमें यह ज्ञात ही है कि चर- 1,4,7,10, स्थिर- 2,5,,8,11 और द्विस्वभाव- 3,6,9,12 राशियाँ कहलाती हैं।

अब इस कुण्डली में प्रथम चर राशि लग्न पर मेष ही है नियमानुसार इसकी निकटस्थ वृष को छोडकर अन्य स्थिर राशि सिंह, वृश्चिक और कुम्भ राशि पर दृष्टि पडेगी। मेष में अन्य कोई भी ग्रह नहीं है अत: यह दृष्टि केवल मेष की मानी जाएगी। फलादेश हेतु इसे हम ऐसे भी समझ सकते हैं

88 जैमिनि सूत्र 4-1

कि लग्न अपने गुण धर्म से पंचम ,अष्टम व एकादश भाव को भी प्रभावित करेगा। अब आपको फल निर्णय में सहायता मिलेगी।

इसी प्रकार द्वितीय भाव में वृष स्थिर राशि है इसकी द्वादश भाव की चर राशि को छोडकर अन्य चर राशियों पर इसकी दृष्टि रहेगी। अत: इसकी क्रमश: कर्क, तुला और मकर पर दृष्टि रहेगी। अब यहाँ पर आप देखेंगे कि मंगल भी द्वितीय भाव में बैठा है अत: इसकी उन उन स्थानों पर दृष्टि रहेगी जिन पर वृष राशि की दृष्टि होगी। इसी क्रम में मिथुन द्विस्वभाव राशि खुद को छोडकर अन्य द्विस्वभाव राशियों को देखेगी अत: उसकी कन्या धनु एवं मीन पर दृष्टि रहेगी। यहाँ तृतीय स्थान पर शनि भी है इसलिए शनि की दृष्टि भी उन्हीं भावों में रहेगी। अर्थात् शनि अपने प्रभाव से 6,9, एवं 12 भाव को प्रभावित करेगा। इस प्रकार हम सभी ग्रहों की दृष्टि रहेगी। अभ्यासार्थ एक सूची दी जा रही है जिसमें आप राशियों की दृष्टि का अभ्यास कर सकते हैं।

	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
दृष्टि स्थान	5,8, 11	4,7, 10	6,9, 12	8,11, 2	7,10 1	9,12 3	11,2 5	10,1, 4	12,3 6	2,5, 8	1,4, 7	3,6, 9

आप उपर्युक्त चक्र में अपना दृष्टि का अभ्यास कर लें जिससे विषय को समझने में आसानी होगी। फलादेश करते समय हमें ग्रह दृष्टि एवं राशि दृष्टि दोनों को साथ में रखकर निर्णय लेना चाहिए। ग्रहों की या राशि की जिस स्थान पर दृष्टि होगी उस स्थान पर ग्रह राशि अपना फल जरूर देंगे। फल निर्णय के लिए कुछ सूत्र यहाँ दिए जा रहें हैं जिससे आप दृष्टियों का महत्त्व समझ सकते हैं।

- जिस राशि में पाप ग्रहों का प्रभाव होगा वह राशि पाप पीडित होगी अत: उसकी जिस दृष्टि जिस भाव/ राशि पर रहेगी वह स्थान भी पाप पीडित होगा।
- जिस राशि पर शुभ ग्रहों का प्रभाव हो उस राशि का दृष्ट भाव भी शुभ प्रभावित रहेगा।
- राशि स्वामी नीच हो कमजोर हो तो राशि की दृष्टि भी तदनुगुण प्रभावित करेगी।
- राशि स्वामी स्वगृही हो/ उच्च हो/ अपने मूलत्रिकोण में हो तो वह राशि से दृष्ट भाव/ राशि भी शुभ फल सूचक होगी।

अभ्यास प्रश्न

अधोदत्त कुण्डली को देखकर प्रश्नों का अभ्यास करें।
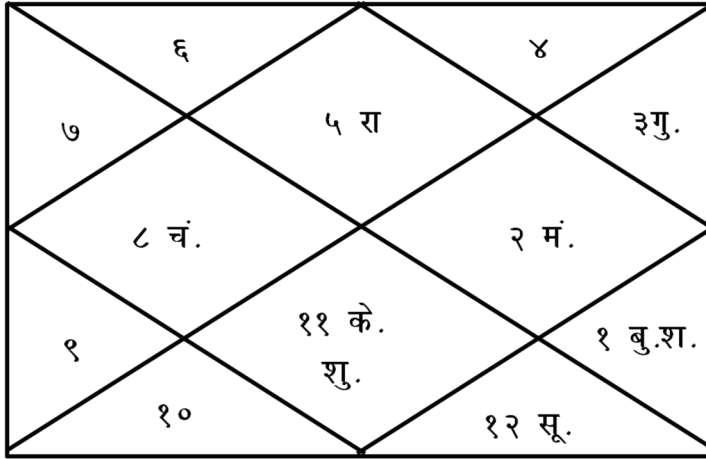
1- शनि की दृष्टि किस किस भाव पर है लिखें ?
2- लग्न की दृष्टि जैमिनि मत से लिखें ?
3- भाग्य भाव की दृष्टि जैमिनि मत से लिखें ?
4- अष्टम भाव पर किसकी दृष्टि है लिखें ?

4.4 मुख्यभाग खण्ड दो

मित्रों! हमने पूर्व भाग में ग्रहों की दृष्टि को अच्छे से समझ लिया है अब हम ग्रहों के मित्र, शत्रु आदि का ज्ञान प्राप्त करेंगे। जब हम ग्रहों के प्रभाव को बारीकी से समझें तो मालूम चलेगा कि चाहे दृष्टि के माध्यम से या अपने संचरण के माध्ययम से हो वस्तुत: ग्रह हमें तीन प्रकार से प्रभावित करते हैं।
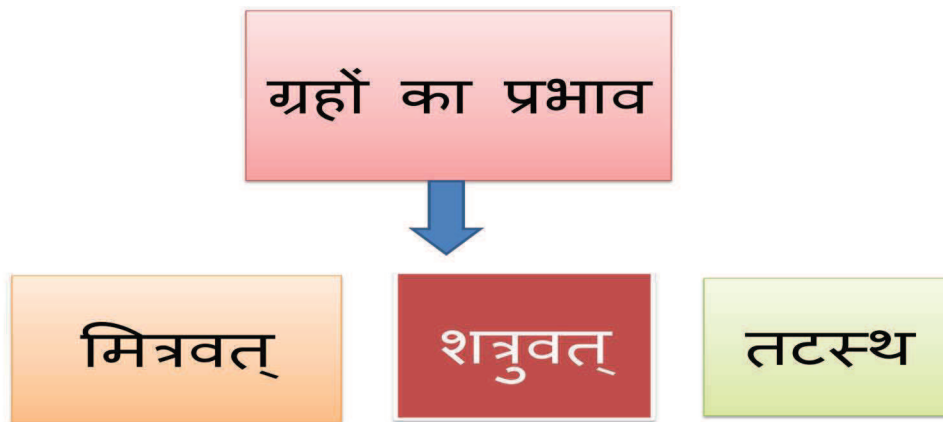
तात्पर्य यह है कि ग्रह या तो मित्रवत् हमारा सहयोग करेगा या शत्रुवत् पीडा देगा। तटस्थ ग्रह जिन ग्रहों के प्रभाव में होगा तदनुगुण अपना प्रभाव करेगा। अनूकूल ग्रह, प्रतिकूल ग्रह, शुभ फल देने वाला , अशुभ फल देने वाला आदि सभी बातें इन्हीं उपर्युक्त कारणों से निर्णीत होती हैं। अत: इस भाग में हम कुण्डली में मित्र आदि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करेंगे।

ग्रहों के शत्रु मित्रादि

ऋषियों ने ग्रहों के नैसर्गिक मित्र, शत्रु व सम ग्रहों का निर्णय किया है। नैसर्गिक का भाव यह है कि प्राकृतिक रूप से ग्रह किसका मित्र है किसका शत्रु है।

रवे: समो ज्ञ: सितसूर्यपुत्रावरी परे ते सुहृदो भवेयु:।
चन्द्रस्य नारी रविचन्द्र पुत्रौ मित्रे सम: शेषनभश्चरा: स्यु:।।
समौ सितार्की शशिजश्च शत्रुमिंत्राणि शेषा: पृथिवीसुतस्य।
शत्रु: शशी सूर्यसितौ च मित्रे समा: परे स्यु: शशिनन्दनस्य। ।
गुरोर्ज्ञशुक्रौ रिपुसंज्ञकौ तु शनि: समोऽन्ये सुहृदो भवन्ति ।।
शुक्रस्य मित्रे बुधसूर्यपुत्रौ समौ कुजार्यावितरावरी तौ।।
शने: समो वाक्पतिरन्दु सूनुशुक्रौ च मित्रे रिपव: परेऽपि ।
ध्रुवग्रहाणां चतुराननेन शत्रुत्वमित्रत्वसमत्वमुक्तमम् ।। [89]

अर्थात् -

- सूर्य का बुध सम, शुक्र और शनि शत्रु शेष ग्रह मित्र हैं।
- चंद्र के सूर्य व बुध मित्र, अन्य सभी सम हैं।
- मंगल के शुक्र और शनि सम, बुध शत्रु, अन्य सभी मित्र हैं।
- बुध के चंद्र शत्रु, सूर्य और शुक्र मित्र, अन्य सभी सम हैं।
- गुरु के बुध और शुक्र शत्रु, शनि सम, अन्य मित्र हैं।
- शुक्र के बुध शनि मित्र,मंगल गुरुसम, अन्य शत्रु हैं।
- शनि के गुरु सम, बुध शुक्र मित्र, अन्य सभी शत्रु हैं।

अर्थ बोध के लिए सारिणी दी जा रही है इससे आप अभ्यास कर सकते हैं-

89 बृहत्पाराशर होरा शास्त्रम् 56 से 59

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	
मित्र	चं. मं. गु.	सू. बु.	सू.चं. गु.	सू.शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.	
सम	बु.	मं. गु. शु. श.	शु. श.	मं. गु. श.	श.	मं. गु.	गु.	
शत्रु	शु. श.		बु.	चं.	बु.शु.	चं. सू.	सू. चं. मं.	

राहु केतु के लिए विशेष-

वस्तुत: राहु और केतु के मित्र व शत्रु का उल्लेख ग्रन्थों में नहीं मिलता है । सामान्यत: शनिवत् राहु:, कुजवत् केतु: का वचन प्रचलन में है। दक्षिण का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है फलदीपिका। फलादेश का बहुत ही महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसके लेखक मन्त्रेश्वर ने राहु व केतु के लिए उनके मित्र व शत्रु का वर्णन किया है जो आपके ज्ञानार्थ यहाँ उद्धृत किया जा रहा है-

मित्राणि विच्छनिसितास्तमसोर्द्वयोस्तु,
भौम: समो निगदितो रिपवश्च शेषा:।।[90]

अर्थात्- राहु केतु के मित्र बुध, शुक्र व शनि हैं। मंगल सम है। सूर्य, चंद्र व गुरु इनके शत्रु हैं।

अभ्यास प्रश्न

1- सूर्य के मित्रग्रहों के नाम बताएँ।
2- किस ग्रह का कोई भी शत्रु नहीं है।
3- मंगल का शत्रु कौन है?
4- शनि का समग्रह कौन है?

4.4.1 उपखण्ड एक

इस खण्ड में हम ग्रहों के तात्कालिक मित्र व शत्रु का ज्ञान प्राप्त करेंगे। तात्कालिक मित्र शत्रु का भाव यह है कि जातक की कुण्डली में ग्रहों की स्थित के अनुसार कौन उसका मित्र या शत्रु होता है। कोई ग्रह नैसर्गिक में भले मित्र या शत्रु है परन्तु तत्काल में उसकी मित्रता या शत्रुता उसके नैसर्गिक गुण धर्म में परिवर्तन लाएगी।

90 फलदीपिका 35 -2

तात्कालिक मित्र/शत्रु ज्ञान :-

व्ययाम्बुधनखायेषु तृतीये सुहृद: स्थिता:।
तत्कालरिपव: षष्ठसप्ताष्टैकत्रिकोणगा:।। [91]

अर्थात् - 10,11,12 वें भाव में एवं 2,3,4 भाव में बैठे हुए ग्रह तत्काल मित्र होते हैं। इसको स्पष्ट रूप में समझते हैं किसी ग्रह से 10,11,12 भाव एवं 2,3,4 में स्थितग्रह उस ग्रह के मित्र कहलाते हैं अन्य ग्रह उस ग्रह के तात्कालिक शत्रु होते हैं। उस ग्रह के साथ बैठे हुए ग्रह शत्रु कहलाते हैं। जैसे हम यहाँ एक कुण्डली के उदाहरण के द्वारा इसको समझते हैं।

उदाहरण कुण्डली

मंगल २
१२ बु.शु.
३ रा.
१ सूर्य
११श.
४
१०
५
७
९ के. गु.
६
८ चं.
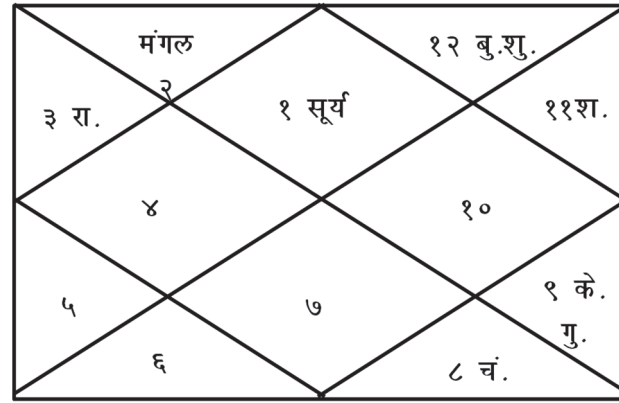
इस कुण्डली में ग्रहों की स्थिति के अनुसार हम उनका तात्कालिक मित्रादि का ज्ञान प्राप्त करेंगे। यहाँ सबसे पहले हम सूर्य के मित्र शत्रु ग्रहों का ज्ञान करेंगे। सूर्य से 10 वें कोई नहीं, 11वें शनि व 12 वें बुध व शुक्र हैं।अर्थात् शनि, बुध व शुक्र सूर्य के तात्का.मित्र हुए। इनकोहमसूर्य के मित्र वाले कॉलममेंरख देंगे। अब हमने देखा कि सूर्य से 2रे मंगल व तीसरे राहु और 4 थे कोइ भी नहीं अत: ये दोनों भी सूर्य के मित्र हुए। अन्य सभी ग्रह मित्र स्थान से दूर हैं अत: ये सभी सूर्य के शत्रु होंगे। इसी प्रकार हम चंद्रादि ग्रहों के भी मित्रादि का ज्ञान प्राप्त करेंगे। चंद्र स्थान से 2 रे गु.के., 3रा रिक्त और 4 थे शनि है। इसी प्रकार चंद्र से 10,11,12 स्थानपर कोई नहीं है अत: यही केवल 3 ग्रह मित्र होंगे अन्य शत्रु होंगे। मंगल के 2,3,4 केवल राहु है और10,11,12 में क्रमश: श.,बु.,शु. व सूर्य हैं अत: ये सभी मंगल के मित्र होंगे अन्य सभी शत्रु होंगे।

उदाहरण कुण्डली के तात्कालिक मित्र व शत्रु

91 सारावली 30-4

क्रम	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
मित्र	श.बु.शु. मं.रा.	गु.के. श.	श.,बु., शु.सू. रा.	सू.मं.रा. श.के.गु.	चं.श.बु. शु.श.	सू.मं.रा. श.के.गु.	के.गु. बु. शु. चं.सू.	मं.सू. बु.शु.	चं. शु. बु. शु.
शत्रु	चं.के.गु.	बु. शु.मं. रा.सू.	के.गु.चं.	चं. शु.	के.सू.मं.	चं. बु.	मं.रा.	श.के. गु.चं.	सू.मं .रा. गु.

अभ्यास प्रश्न-

1- ग्रह से द्वितीय भावस्थ ग्रह क्या होता है?

2- ग्रह से छठे स्थान में बैठने वाला ग्रह क्या होता है?

3- ग्रहों के तात्कालिक मित्र स्थान लिखें

4- ख किस भाव की संज्ञा है?

4.4.2 उपखण्ड दो

प्रिय मित्रों इस खण्ड में हम अब ग्रहों के नैसर्गिक व तात्कालिक मित्रता शत्रुता के निर्णयात्मक स्परूप को समझेंगे। जिसे पञ्चधामैत्री के नाम से जाना जाता है। पञ्चधा अर्थात् पाँच प्रकार की मित्रता का स्वरूप।

हितसमरिपुसंज्ञा ये निसर्गान्निरुक्ता
हिततमहितमध्यास्ते Sपि तत्कालमित्रैः।
रिपुसमसुहृदाख्याः सूतिकाले ग्रहेन्द्रा
अधिरिपुमध्या शत्रुभिश्चिन्तनीया।। [92]

अर्थ को अधोदत्त सारिणी में समझाया गया है-

तात्कालिक	+	नैसर्गिक	=	पंचधा
मित्र	+	मित्र	=	अधिमित्र
मित्र	+	सम	=	मित्र
मित्र	+	शत्रु	=	सम

92 सारावली 4- 31

शत्रु	+	शत्रु	=	अधिशत्रु
शत्रु	+	सम	=	शत्रु

तात्पर्य यह है कि यदि नैसर्गिक कुण्डली में मित्र है और तात्कालिक भी मित्र है तो कुण्डली में अधिमित्र कहलाएगा। जब कुण्डली में कोई ग्रह अधिमित्र होगा तो वह अनुकूल होकर अपने फल से प्रभावित करेगा। अपनी दशा काल में वह ग्रह जातक का भाग्यवृद्धि कारक, शुभफलकारक होगा। इस पंचधा मैत्री का उदाहरण के द्वारा अभ्यास करते हैं।
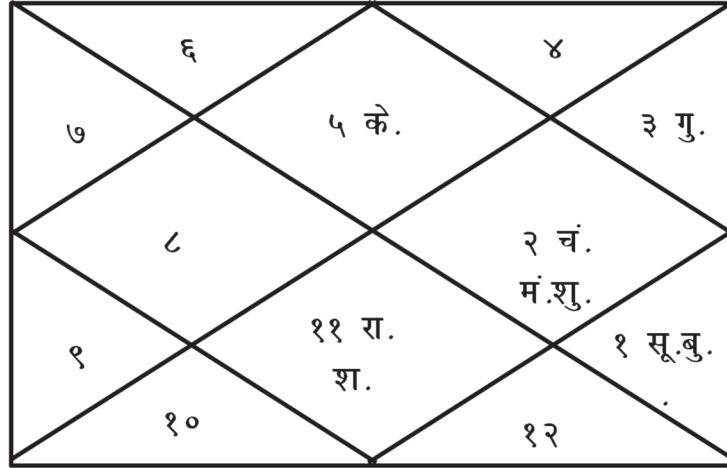
यहाँ सूर्य की मित्रता का ज्ञान करते हैं। इसमें कुण्डली में सूर्य नवम भाव में है उसका मंगल स्वामी मंगल सूर्य का नैसर्गिक मित्र है और कुण्डली में सूर्य सेदूसरे होने के कारण मित्र जगह मित्र होने के कारण मंगल सूर्य का अधिमित्र हुआ। हम कुण्डली में ऐसे समझेंगे कि लग्नेश सूर्य अपने उच्च स्थान में अपने अधिमित्र की राशि में बैठा हुआ है। अत: सूर्य की दशान्तर्दशा का फल कुण्डली में बहुत अच्छा होगा। इसी प्रकार चंद्रमा को देखते हैं। द्वादशेश चंद्रमा उच्च होकर शुक्र के घर परहै और शुक्र चंद्रमा का नैसर्गिक सम है और तत्काल में शत्रु है इसलिए सम और शत्रु मिलकर शत्रु सिद्ध हुआ। इसलिए चंद्रमा का फल उत्तम नहीं होगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों को भी समझना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न -

1- पंचधा मैत्री कितने प्रकार की होती है?

2- मित्र और सम क्या होगा?

3- शत्रु और मित्र क्या होगा?

4- उदाहरण की कुण्डली में चंद्र मंगल का सम्बन्ध कैसा है?

4.5 सारांश

ग्रहों की दृष्टि फल निर्णय के लिए महत्त्वपूर्ण है। सभी ग्रहों की सप्तम भाव पर पूर्ण दृष्टि होती है। जिसका प्रभाव 60' कला का होता है। 3,10 स्थान मे एकपाद दृष्टि होती है। 5,9 स्थान पर अर्द्ध दृष्टि होती है। जिसमें उसका प्रभाव 0.30'' कला का होता है। इसी क्रम में 4,8 स्थान पर ग्रह की त्रिपाद दृष्टि होती है । ग्रह जिस भाव का स्वामी होता है और जिस स्थान पर बैठा होता है उन भावों का प्रभाव अपनी दृष्टि के माध्यम से देता है। इसके बाद हमने सूर्यादि ग्रहों की दृष्टि के भेद को समझा। इसी क्रम में हमने राशियों की दृष्टि प्रकारों का भी सोदाहरण अभ्यास में समझा कि चर अपने निकटस्थ स्थिर को छोडकर अन्य स्थिर राशि को, स्थिर अपने पूर्व चर को छोडकर अन्य चर राशियों को और द्विस्वभाव खुद को छोडकर अन्य द्विस्वभाव राशियों को देखती हैं। इन राशियों पर बैठे हुए ग्रह भी राशियों का अनुसरण करती हैं। जिन स्थानों पर शुभ ग्रहों का प्रभाव होता है उनकी दृष्टि भी अपने शुभ फलों से दृष्ट भावों को प्रभावित करती हैं। इसी प्रकार अशुभ ग्रहों को भी समझना चाहिए।

4.6 शब्दावली

ज्ञ-	बुध
सित-	शुक्र
दृष्टा–	देखने वाला
दृश्य–	जो देखा जा रहा है
अर्की-	शनि
शशिनन्दन-	बुध
पृथिवीसुत-	मंगल
अम्बु –	चतुर्थ भाव
ख-	दशम भाव
आय-	11 वाँ भाव
कवि-	शुक्र
इन्द्रुसूनु-	बुध
ऋक्षाणि-	राशियाँ
चर-	1,4,7,10 राशियाँ
स्थिर-	2,5,8,11 राशियाँ

द्विस्वभाव – 3,6,9,12 राशियाँ

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क्रम	प्रश्न	उत्तर
1.	सूर्य की एकपाद दृष्टि कहाँ होती है?	सप्तम
2.	शनि के दृष्टि स्थान लिखें।	3,7,10
3.	मंगल की पूर्ण दृष्टि स्थान लिखें।	4,7,8
4.	गुरु की पूर्ण दृष्टि किस स्थान पर होती है?	5,7,9
5.	सभी ग्रह किस स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं?	सप्तम
6.	शनि की दृष्टि किस किस भाव पर है लिखें ?	एकादश, तृतीय व षष्ठ भाव पर
7.	लग्न की दृष्टि जैमिनि मत से लिखें ?	तृतीय षष्ठ व नवम
8.	भाग्य भाव की दृष्टि जैमिनि मत से लिखें ?	लग्न चतुर्थ व सप्तम
9.	अष्टम भाव पर किसकी दृष्टि है लिखें ?	द्वितीय भाव की
10	सूर्य के मित्रग्रहों के नाम बताएँ।	चं. मं. गु.
11	किस ग्रह का कोई भी शत्रु नहीं है।	चंद्रमा
12	मंगल का शत्रु कौन है?	बुध
13	शनि का समग्रह कौन है?	गुरु
14	ग्रह से द्वितीय भावस्थ ग्रह क्या होता है?	मित्र
15	ग्रह से छठे स्थान में बैठने वाला ग्रह क्या होता है	शत्रु
16	ग्रहों के तात्कालिक मित्र स्थान लिखें	2,3,4/ 10,11,12
17	ख किस भाव की संज्ञा है?	दशम
18	पंचधा मैत्री कितने प्रकार की होती है?	पाँच
19	मित्र और सम क्या होगा?	मित्र
20	शत्रु और मित्र क्या होगा?	सम

21	उदाहरण की कुण्डली में चंद्र मंगल का सम्बन्ध कैसा है	चंद्रमा मंगल का सम है

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 सारावली –कल्याणवर्मा – व्याख्याकार-डॉ.मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

2 जातकपारिजात- वैद्यनाथ - व्याख्याकार-गोपेश ओझा, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

3 भावमंजरी- पं. मुकुन्द दैवज्ञ- व्याख्याकार-डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

4 जैमिनि सूत्र-जैमिन- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

5 बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी

6 लघुपाराशरी- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

7 बृहज्जातकम् –बाराहमिहिर- व्याख्याकार- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

8 उत्तरकालामृत- कालिदास- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

4.9सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री

1- सारावली –कल्याणवर्मा – व्याख्याकार-डॉ.मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

2- जातकपारिजात- वैद्यनाथ - व्याख्याकार-गोपेश ओझा, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

3- भावमंजरी- पं. मुकुन्द दैवज्ञ- व्याख्याकार-डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

4- जैमिनि सूत्र-जैमिन- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

5- बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी

6- लघुपाराशरी- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

7- बृहज्जातकम् –बाराहमिहिर- व्याख्याकार- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

8- उत्तरकालामृत- कालिदास- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

I. ग्रह दृष्टि को कुण्डली के उदाहरण के साथ प्रस्तुत करें।
II. राशियों की दृष्टि का सोदाहरण चार्ट प्रस्तुत करें।
III. ग्रहों के नैसर्गिक मित्र व शत्रु ग्रहों का विवरण लिखें।
IV. तात्कालिक मित्र व शत्रु ज्ञान विधि लिखें
V. पंचधा मैत्री पर 100 शब्दों पर निबन्ध लिखें।

इकाई - 5 ग्रह, भावबल परिचय एवं साधन

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

फलित ज्योतिष के मूलाधार ग्रह और भाव हीं हैं। ग्रहों एवं भावों के अनुसार ही हम जातक के जीवन में होने वाले शुभाशुभ फलों को समझते हैं। सभी ग्रह व भाव अपने बल के अनुसार ही हमें प्रभावित करते हैं। किसी के लिए उसी राशि व भाव में बैठा ग्रह धनवान बना देता है किसी को निर्बल बना देता है। एक ही लग्न में जन्म लेने वाले जातकों में विविधता नजर आती है। किसी भाव विशेष में बैठा हुआ ग्रह किसी के लिए कारक तो किसी के लिए बाधक बन जाता है। इन सभी का मूलत: कारण ग्रहों एवं भावों का बल है। ग्रह अपने बल के अनुसार हमें फल प्रदान करते हैं। इसलिए जातक के जीवन में अमुक घटना कब होगी कितनी मात्रा में होगी यह जानने के लिए ग्रह बल ज्ञान अत्यावश्यक है। वस्तुत: ग्रहों का बल ज्ञान कर लेने से उनके शुभाशुभ का ज्ञान बहुत ही सरल व स्पष्ट हो जाता है। बिना बल ज्ञान के ज्योतिषी के द्वारा किया गया फलादेश केवल व्यर्थ भाषण ही होगा। षड्बल में बली ग्रह की दशा हमें अपने फल की सूचना स्पष्टरूप से प्रदान करती है। अत: ग्रह व भावों का बल ज्ञान नितान्त आवश्यक है। तो आईए हम इस पाठ में ग्रहों के बल और भावों के बल भेदों को जानते हुए उसका सोदाहरण अभ्यास करते हैं।

5.2 उद्देश्य

मित्रों ज्योतिष से ग्रहों के फल निर्णय के लिए यह पाठ बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इस पाठ के माध्यम से अधोलिखित अंशों का हमें ज्ञान प्राप्त होगा।

1- हमें ग्रहों के बल भेद का ज्ञान प्राप्त होगा।

2- हम इस पाठ से बल साधन विधि का ज्ञान प्राप्त करेंगे

3- बल साधन हेतु सूक्ष्म विधियों का सटीक अनुभव प्राप्त करेंगें

4- बल साधन का प्रयोग करने का अभ्यास करेंगे।

5- भावों के बल भेद का ज्ञान होगा।

6- भावों के बल साधन विधि के द्वारा अभ्यास करेंगे।

5.3 मुख्यभाग

जैसा कि आपने अच्छी तरह से समझ ही लिया है कि ग्रहों का बल ज्ञान क्यों आवश्यक है ग्रह कुण्डली के विविध भावों में रहते हुए अनेक प्रकार से हमें प्रभावितकरते हैं। उनके प्रभाव की मात्रा क्या होगी इसका ज्ञान केवल ग्रह बल से ही सम्भव है। ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों के 6 प्रकार के

बल कहे गए हैं यथा-

वीर्यं षड्-विधमाह कालजबलं चेष्टाबलं स्वोच्चजम्।
दिग्वीर्यं त्वयनोद्भवं दिविषदां स्थानोद्भवं च क्रमात्।[93]

- स्थान बल
- दिक्बल
- कालबल
- नैसर्गिक बल
- दृक्बल
- चेष्टाबल

स्थान बल- ग्रहों के विविध स्थानों में रहने के कारण जो उनका बल निश्चित होता है उसे ही स्थान बल कहते हैं। इसके अन्दर 5 प्रकार के बलों निर्णय लिया जाता है- उच्चादिबल, सप्तवर्गजबल, ओजादिबल, केन्द्रादिबल और द्रेष्काणबल। आईए इनका क्रमश: अध्ययन करते हैं।

उच्चादि बल-

नीचोनो भगणाच्च्युत: षडधिकश्चेत् षड् हृदौच्चं बलम्
स्वर्क्षेऽर्द्धं समभेऽष्टमस्त्रिचरणा मूलत्रिकोणे बलम्।
मित्रर्क्षेंघ्रिरधीष्टभे त्रय इभांशा वैरिभेष्ट्यंशको
दन्तांशोऽध्यरिभे गृहादिपवशात् खेटस्य सप्तैक्यजम्।।[94]

अर्थात्- जब कोई ग्रह अपनी परमोच्च अवस्था में रहता है तो उसे 1 रूप बल मिलता है। इसी प्रकार परम नीच में रहने पर 0 रूप बल प्राप्त होता है। उच्च से नीच के मध्य कहीं और रहने पर हमें त्रैराशिक अनुपात करना चाहिए। उसी प्रकार मूलत्रिकोण आदि स्थानों पर ग्रह के बल क्रमश:कम होते चले जाएँगे। भाव यह है कि उच्च ग्रह का आधा बल स्वगृही को, उसका आधा मित्रस्थ को, उसका आधा बल- समराशिस्थ को, उसका आधा शत्रुराशिस्थ को एवं इसका आधा अधिशत्रु राशिस्थ को मिलता है। इनको सरलता से समझने के लिए हम सारिणी का भी प्रयोग कर सकते हैं-

93 फलदीपिका 01-4
94 केशवीयजातक श्लोक 5

क्रम	ग्रहों के विविध स्थान	बल	अन्य विशेष
1	उच्च होने पर	1रूप बल	नीच होने पर 0 बल प्राप्त होता है।
2	मूल त्रिकोण में रहने पर	45 षष्ठ्यंश	
3	स्वगृही होने पर	30 षष्ठ्यंश	उच्च का आधा
4	अधिमित्र की राशि में	22’.30’’ षष्ठ्यंश	मूल त्रिकोण का आधा
5	मित्र राशि में होने पर	15 षष्ठ्यंश	स्वगृही का अर्ध भाग
6	सम राशि में	7’.30’’ षष्ठ्यंश	मित्र का अर्ध भाग
7	शत्रु राशि में	3’.45’’ षष्ठ्यंश	सम का अर्ध भाग
8	अधिशत्रु राशि में	1’ .52’’ षष्ठ्यंश	शत्रु का अर्ध भाग

स्थान बलान्र्गत सप्तवर्गज बल –

ग्रहों अपने विविध वर्गो में होते हुए अपने बल को निश्चित करते हैं। होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांश ये सप्त वर्ग कहलाते हैं।

गृह होरा स्वद्रेष्काण सप्ताङ्कार्कांशसम्भवम्।
बलं तदैक्य त्रिंशांशबलयुक् सप्तवर्गजम्।।

इसके बल को हम सारिणी के द्वारा समझते हैं-

क्रम	ग्रह भेद	बल	विशेष
1	स्ववर्ग में	30’ षष्ठ्यंश	ग्रह होरादि वर्ग में अपनी ही राशि में हो, जैसे सूर्य सिंह में
2	अधिमित्र में	22’.30’’ षष्ठ्यंश	कुण्डली में जो अधिमित्र निश्चित हुआ है उसी के वर्ग में हो।
3	मित्र वर्ग में	15’ षष्ठयंश	मित्र की राशि में बैठा हुआ ग्रह।
4	सम वर्ग में	7’.30’’ षष्ठ्यंश	सम ग्रह की राशि में स्थित ग्रह।
5	शत्रु वर्ग में	3’.45’’ षष्ठ्यंश	शत्रु ग्रह की राशि में स्थित ग्रह।
6	अधिशत्रु वर्ग में	1’.52’’ षष्ठ्यंश	अधिशत्रु ग्रह की राशि में स्थित ग्रह।

स्थान बलान्र्गात ओजादि बल/युग्मायुग्म बल-

शुक्रेन्दूसमभांशके हि विषमोऽन्ये दद्युरंघ्रि बलम्।
केन्द्राद्येषु च रूपकार्द्धचरणान्यच्छन्ति खेटा: क्रमात्।[95]

सम और विषमराशि में ग्रह के रहने को ओजादि बल या युग्मायुग्म बल कहते हैं। पुरुष ग्रह पुरुष राशियों में और स्त्री ग्रह स्त्री राशियों में बलवान होते हैं-

- ❖ यदि सूर्य, मंगल, बुध, गुरु और शनि ये विषम राशि में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
- ❖ सूर्य, मंगल, बुध, गुरु और शनि ये विषम राशिके नवांश में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
- ❖ विषराशि और विषम नवांश दोनों में हों तो - 30 षष्ठ्यंश
- ❖ चंद्र और शुक्र सम राशि में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
- ❖ चंद्र और शुक्र नवांश में सम राशि में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
- ❖ ये दोनो ग्रह दोनों स्थानों में सम हों तो - 30 षष्ठ्यंश

स्थान बलान्र्गात केन्द्रादि बल- केन्द्र आदि स्थानों में ग्रहों को जो बल मिलता है उसे केन्द्रादि बल कहते हैं।

- ✓ केन्द्र स्थ ग्रह - 1रूप बल
- ✓ पणफर राशिस्थ ग्रह - 30 षष्ठ्यंश
- ✓ आपोक्लिमराशिस्थ ग्रह - 15 षष्ठ्यंश

स्थान बलान्र्गात द्रेष्काण बल- सप्तवर्ग के अलावा द्रेष्काण का एक विशेष बल होता है। इसमें पुरुष, नपुंसक एवं स्त्री ग्रहों के अनुसार बल निश्चित होता है।

स्त्रीखेटौ चरमे नरा: प्रथमके क्लीबौ चमध्ये तथा।
द्रेष्काणे वितरन्ति पादमुदितं स्थानाख्यवीर्यं त्विदम्।।

पुरुष ग्रह (सू.मं.गुरु) ये प्रथम द्रेष्काण में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
नपुंसक ग्रह (बु.श.) ये द्वितीय द्रेष्काण में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
स्त्री ग्रह (चं.शु.) ये तृतीय द्रेष्काण में हों तो - 15 षष्ठ्यंश
नोट- इन स्थानों में न होने पर 0 षष्ठ्यंश बल होगा।

---

95 केशवीयजातक 6

अभ्यास प्रश्न-

1- ग्रहों का बल कितने प्रकार का होता है?
2- मूलत्रिकोणस्थ ग्रह का प्रमाण कितना है?
3- पुरुष ग्रहपुरुष राशि में हों तो ओजादि बल प्रमाण लिखें।
4- आपोक्लिम भावस्थ ग्रह का बलप्रमाण कितना है?
5- मित्रवर्गस्थ ग्रह का बलप्रमाण लिखें

5.3.1 उपखण्ड एक

आपने इस खण्ड में स्थानबल के भेदों को तो समझ लिया अब इसका कैसे अभ्यास करें आप यही सोच रहे होंगे तो चलिए, इस उपखण्ड में हम स्थान बल का उदाहरण के साथ अभ्यास करते हैं। इसकेलिए हमें इष्टकाल, ग्रहस्पष्ट, लग्नादि द्वादश भाव स्पष्ट तक की गणित का साधन कर लेनाचाहिए।

उच्चादि बल साधन विधि-

हम ग्रहों का बल साधन करने के लिए ग्रहों के राश्यादि की आवश्यकता रहेगी। अब यहाँ पर उदाहरणार्थ हम कल्पित ग्रह स्पष्ट व द्वादश भाव स्पष्ट ले लेते हैं।

क्रम	लग्न एवं ग्रह	राश्यादि स्पष्टमान
1	लग्न	01-10-15-18
1	सूर्य	03-27-23-06
2	चंद्र	08-20-55-35
3	मंगल	01-16-27-58
4	बुध	03-12-00-35
5	गुरु	08-18-44-56
6	शुक्र	02-17-14-59
7	शनि	01-20-30-10

द्वादश भाव स्पष्ट

भाव	प्र.	प्र.सं.	द्वि.	द्वि.सं.	तृ.	तृ.सं.	चतु.	च.सं.	पं.	पं.सं.	षष्ठ	ष. सं.
राशि	11	11	00	00	01	01	02	02	03	03	04	04
अंश	00	15	01	16	02	17	02	17	02	16	01	15
कला	28	53	18	44	09	34	59	34	09	44	18	53

विकला	11	58	46	03	21	38	56	28	21	03	46	28
भाव	सं.	स.सं.	अष्ट.	अ.सं.	नवम	न.सं.	दशम	द.सं.	एका.	एका.सं.	द्वाद.	द्वा. सं.
राशि	05	05	06	06	07	07	08	08	09	09	10	10
अंश	00	15	01	16	02	17	02	17	02	16	01	15
कला	28	53	18	44	09	34	59	34	09	44	18	53
विकला	11	58	46	03	21	38	56	28	21	03	46	28

ग्रहों का उच्च नीचादि बल बोधिका सारिणी

	सूर्य	**चंद्र**	**मंगल**	**बुध**	**गुरु**	**शुक्र**	**शनि**
उच्च राश्यादि	$0\text{-}10^0$	$01\text{-}03^0$	$09\text{-}28^0$	$05\text{-}15^0$	$03\text{-}05^0$	$11\text{-}27^0$	$06\text{-}20^0$
उच्च बल	1रूप	1रूप	1रूप	1रूप	1रूप	1रूप	1रूप
नीच राश्यादि	$06\text{-}10^0$	$07\text{-}03^0$	$03\text{-}28^0$	$11\text{-}15^0$	$09\text{-}05^0$	$05\text{-}27^0$	$0\text{-}20^0$
नीच बल	0 रूप	0 रूप	0 रूप	0 रूप	0 रूप	0 रूप	0 रूप

गणित में कई प्रकार से हम ग्रहों का उच्चादिबल साधन कर सकते हैं यहाँ पर सरल विधि के द्वारा हम बल साधन करेंगे।

सूत्र- $\frac{(\text{ग्रह}-\text{नीच})X1}{6} = \text{इष्ट उच्च बल}$

इसको और सरलता से समझते हैं। ग्रहष्पष्ट को उसके नीच से घटाएँ। शेष 6 से अधिक हो तो षड्भाल्प (12 राशि में घटा देना) करें। प्राप्त राश्यादि को कलात्मक बनाकर 10800 से भाग दें। प्राप्त कलादि ग्रह का उच्चादिबल होगा।

विशेष- ग्रह स्पष्ट को हम नीच से घटाएँ या नीच राश्यादि से ग्रह स्पष्ट को घटाएँ ये अपनी सुविधा है जैसे- हमारा सूर्य स्पष्ट है

6.10.00.00 − 3.27.23.06 = 2.12.36.54 इसे अब कलात्मक बना लेते हैं।

1 राशि = 30 अंश

1 अंश = 60 कला

```
2x 30= 60 +12=72,72 x 60= 4356
कला.मान
10800)4356(0 अंश
      x60
10800 )261360(24 कला
       21600
       45360
       43200
       2160x60 = 12960
10800) 12960 ( 12 विकला
       10800
       21600
       21600
       00
```

अर्थात्- सूर्य का उच्च बल हुआ 0⁰-24′-12′′

इसी प्रकार हम सभी ग्रहों का उच्च बल साधन कर सकते हैं।

विशेष- ग्रहों के बल विचार में राहु और केतु का प्रयोग नहीं किया जाता है।

स्थान बलान्र्गत सप्तवर्ग बल का उदाहरण-

हमारे पास पूर्व से ही लग्न एवं ग्रहों का स्पष्ट राश्यादि मान दिया हुआ है उसके अनुसार हम सबसे पहले सप्तवर्ग की कुण्डलियाँ बना लें। उसमें ग्रहों को स्थापित करें। सप्त वर्ग में लग्न कुण्डली, होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश द्वादशांश और त्रिंशांश की गणना की जाती है।

॥ लग्न कुण्डली ॥
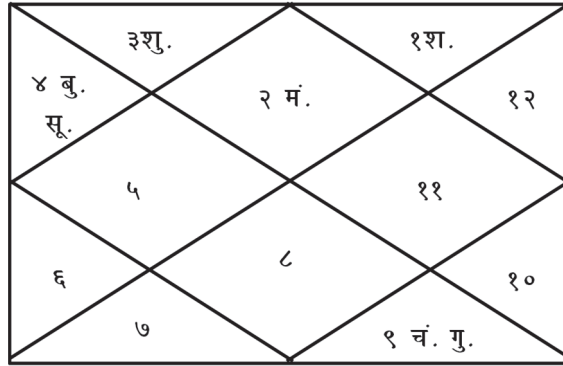
जैसे सूर्य का ही सप्त वर्ग निकालना हो तो सूर्य राश्यादि है- 3-27-23-06 यह कुण्डली में चंद्र की राशि में है चंद्र सूर्य का मित्र है परन्तु तत्काल में शत्रु है मित्र+शत्रु = सम होता है। अत: सूर्य को लग्न कुण्डली में 7'.30'' कलात्मक बल मिलेगा।

होरा चक्र में सूर्य का बल- सूर्य सम राशि की दूसरी होरा यानी खुद की होरा में है अत: अत:30' षष्ठ्यंश का बल मिलेगा।

द्रेष्काण- सूर्य कर्क के तीसरे द्रेष्काण में है यानी कर्क से नवम मीन राशि में। मीनाधिपति गुरु सूर्य का मित्र है परन्तु लग्न में शत्रु है अत: मित्र+शत्रु = सम होता है। यहाँ सूर्य को पुन: 7'.30'' कलात्मक बल मिलेगा।

सप्तमांश- कर्क के अन्तिम सप्तमांश पर है। सम राशि में होने के कारण कर्क से सप्तम जाएँ पुन:वहाँ से सात राशि तक गिने। अर्थात् कर्क में ही सूर्य है। मित्र+शत्रु = सम होने से पुन: 7'.30'' कलात्मक बल मिलेगा।

नवमांश- कर्क के नवम नवांश में है पुन:मीन में तो मित्र+शत्रु = सम होने से पुन: 7'.30'' कलात्मक बल मिलेगा।

द्वादशांश- कर्क के 11 वें द्वादशांश में है। कर्क से 11 वीं राशि तक गिनें। वृष राशि में सूर्य होगा। मित्र+शत्रु = सम होने से पुन: 7'.30'' कलात्मक बल मिलेगा।

त्रिंशांश- सम राशि के अन्तिम त्रिंशांश में है। अर्थात् मंगल के त्रिंशांश में अत: वृश्चिक राशि में सूर्यरहेगा। मित्र+मित्र = अधिमित्र के वर्ग में होने के कारण सूर्य को 22'.30'' षष्ठयंश का बल प्राप्त होगा। अब हम पूरे वर्ग में सूर्य के बल का योग कर लेते हैं।

क्रम	सूर्य का सप्तवर्ग बल
लग्न	7'.30'' षष्ठ्यंश

होरा	30’’ षष्ठ्यंश
द्रेष्काण	7’.30’’ षष्ठ्यंश
सप्तमांश	7’.30’’ षष्ठ्यंश
नवमांश	7’.30’’ षष्ठ्यंश
द्वादशांश	7’.30’’ षष्ठ्यंश
त्रिंशांश	22’.30’’ षष्ठयंश
योग	1-15’-00’’ सूर्य का पूर्ण बल

इसी क्रम में हम सभी ग्रहों का सप्तवर्ग बल साधन कर उनका प्रयोग कर सकते हैं।

स्थान बलान्र्गत युग्मायुग्म बल का उदाहरण- पूर्व पठित नियम के अनुसार सूर्य को विषम राशि पर 15’ कला और विषमांश में होने पर 15’ का बल प्राप्त होगा। गृहीत उदाहरण में सूर्य कर्क राशि (सम) में है अत: 0 बल मिलेगा। नवमांश में भी मीन (सम) में होने के कारण 0 बल मिलेगा। इसी प्रकार सभी ग्रहों का युग्मायुग्म बल साधन करना चाहिए।

स्थान बलान्र्गत केन्द्रादि बल का उदाहरण- सूर्य तृतीय अर्थात् आपोक्लिम में होने के कारण 15’’ षष्ठ्यंश का बल मिला है।

स्थान बलान्र्गत द्रेष्काण बल का उदाहरण- सूर्य पुरुष ग्रह है और तृतीय द्रेष्काण में है अत: 0 बल मिलेगा।

मित्रों आपने सूर्य के उदाहरण के माध्यम से स्थान बल का साधन समझ लिया होगा। सभी ग्रहों का इसी विधि से साधन करते हुए अभ्यास करना चाहिए। जिससे फल निर्णय का उत्तम अभ्यास हो जाएगा।

अभ्यास प्रश्न-

6- 6 राशियों का कलात्मक मान क्या है?
7- 1 राशि में कितने अंश होते हैं?
8- 10800 से भाग क्यों दिया गया है?
9- चंद्रमा सिंहराशि में हो तो युग्मबल प्रमाण क्या होगा?
10- प्रदत्त कुण्डली में गुरु का केन्द्रादि बल क्या होगा?

5.4 मुख्य भाग खण्ड दो

आपने अभी तक पूर्व खण्ड में स्थान बल का सोदाहरण अभ्यासकर लिया। अब हम आगे बढते हैं। इस खण्ड में हम अन्य बल विभागों का अभ्यास करेंगे। ग्रहों के षड्बल क्रम में दूसरा बल है दिक्बल। ग्रहों की कुण्डली में दिक् स्थिति के अनुसार ग्रह बल साधन किया जाता है। इसका केवल एक ही भेद है। तो आईए इसका अभ्यास करते हैं-

दिक्बल – ग्रह दिशाविशेष में बली होते हैं। कुण्डली में प्रथम भाव को पूर्व, चतुर्थ को उत्तर, सप्तम को पश्चिम और दशम को दक्षिण दिशा कहते हैं। तदनुगुण सभी ग्रह स्वस्व दिशा में बलवान होते हैं। उसके विपरीत भाव में होने पर 0 बल मिलते हैं। मध्य में कहीं होने पर ग्रह का बल गणित से साधन करना चाहिए। स्पष्टी करण के लिए चक्र को देखते हैं।

क्रम	ग्रह	दिशा	भाव और बल	भाव और बल
1	सूर्य/ मंगल	दक्षिण	दशम – 1 रूप	चतुर्थ – 0 बल
2	चंद्र/ शुक्र	उत्तर	चतुर्थ- 1 रूप	दशम- 0 बल
3	बुध/गुरु	पूर्व	प्रथम-1 रूप	सप्तम- 0 बल
4	शनि	पश्चिम	सप्तम- 1रूप	लग्न- 0 बल

उदाहरण- हम पूर्व की भांति सूर्य का उदाहरण लेते हैं। आप कुण्डली में देखें सूर्य 3 भाव में है। नियमानुसार सूर्य को दशम में होने पर 1 रूप बल और चतुर्थ में 0 बल मिलता है। यहाँ उदाहृत सूर्य तृतीय में है चतुर्थ की ओर अग्रसर है अत: उसका बल भी अत्यन्त कम होगा। उसके लिए हम साधन विधि का अभ्यास करते हैं। सूर्य और मंगल को चतुर्थ भाव से, चंद्र और शुक्र को दशमभाव से, बुध और गुरु को सप्तम भाव से, शनि को लग्न से घटा दें। जैसा कि केशव ने कहा है कि-

मन्दात् लग्न मिनात् कुजात् च हिबुकं शोध्यं विधोर्भार्गवात्।
माध्यं ज्ञात् गुरुतोऽस्तमत्र रसभात् पुष्टं त्यजेत् चक्रत:।
दिग्वीर्यं रसहृत्वथो समयजं रूपं सदा स्याद् विद:
त्रिंशद् भक्तनतोन्नते शशिकुजीर्काणां परेषां बले।।[96]

96 केशवीय जातक पद्धति 7

नियम- दिक् बल साधन के लिए सूर्य का उदाहरण स्वरूप अभ्यास करते हैं- सूर्य को चतुर्थ भाव से घटा दें। उच्चबल साधन की तरह षड्भाल्प कर लें। इसके बाद उसको अंशात्मक बनाकर 3 का भाग दें।[97] प्राप्त कलादि बल सूर्य का दिग्बल होगा।

$3.27.26.06 - 02.02.59.56 = 01.24.26.10,$ इसको अंशात्मक बना लें तो राशि बनेगी $\frac{54.26.10}{3}$ करने पर $18'08''43$ ये सूर्य का दिग्बल हुआ। इसी प्रकार हम अन्य ग्रहों का दिग्बल साधन किया जा सकता है।

ग्रहों के बल साधन क्रम में अब हम तीसरे बल की तरफ चलते हैं। जिसे काल बल के नाम से जाना जाता है। समयानुसार ग्रहों का बल काल बल कहलाता है। इसके 4 भेद हैं।

कालबल- समयाधारित बल को काल बल कहते हैं। सभी ग्रह अपने अपने समय में बली होते हैं। इसके 4 भेदों में नतोन्नतबल, पक्षबल, दिवारात्रि त्र्यंशबल, वर्षेशादिबल ये कहे गए हैं। इन चारों का योग ही काल बल कहलाता है।

तो सबसे पहले नतोन्नत बल को समझते हैं। नत+उन्नत = नतोन्नत। हम दशम लग्न साधन के संदर्भ में नत साधन सीख चुके हैं। यहाँ बल साधन में निम्न नियमों का ध्यान रखना चाहिए।

पराशरी मत से नतोन्नत बल साधन –

भौमचन्द्रशनीनां तु नता घट्यो द्विसंगुणा:।
शुद्धास्ता: षष्टितोऽन्येषां कलाद्यं तद्बलं भवेत्।
बौधं नतोन्नतबलं रूपं ज्ञेयं सदा बुधै:।।[98]

- नत घटी को दूना कर देने से चंद्र, मंगल और शनि का नतोन्नत बल आ जाता है।
- उन्नत घटिकाओं को दुगना कर देने से सूर्य, गुरु एवं शुक्र का नतोन्नत बल होता है।
- बुध का सर्वदा 1 अंश बल होता है।

अन्य नियम-

क्रम	ग्रह	काल	बल	विपरीतकाल बल	बल का नियम
1	सूर्य, बृहस्पति, शुक्र	मध्याह्न बली	1 रूप	मध्यरात्रि- 0 बल	उन्नत/30

97 भाग देने की कई विधियाँ हैं परन्तु यह विधि बहुत ही सरल है। जहाँ कहीं भी षड्भाल्प करके भाग देना हो वहाँ का भाग दिया जा सकता है। 3
98 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 8-28, 09

2	च.मं.श.	मध्यरात्रि बली	1 रूप	मध्याह्न- 0 बल	नत/30
3	बुध	दिन/रात बली	1 रूप	हमेशा 1 रूप	हमेशा 1 रूप

नत बल साधन उदाहरण- हमारा इष्टकाल 36/34 पलादि है। दिनमान 32/10 पलादि है। दिनमान/2 = दिनार्ध होता है। अत: 16/05 दिनार्द्ध होगा। यहाँ इष्ट दिनार्द्ध से अधिक है। इष्ट में दिनमान घटाने पर रात्रिगत घटी मिलेगी। दिनार्द्ध – रात्रिगतघटी = पश्चिम नत। 30 – पश्चिमनत = उन्नत होगा। उन्नत/30 सूर्य का बल होगा।

कालबलान्तर्गत पक्षबल- पक्ष के अनुसार आया हुआ बल पक्ष बल कहलाता है। पराशर ने इसका नियम बताया है कि-

चन्द्रात् शुद्धो रवि: षड्भादून: चक्रत:।
शेषांशा वह्निविहता: शुभानामुदितं द्विज।
पक्षजं बलमिन्दुज्ञशुक्रार्याणां तु षष्टित:।
शोध्यं तदेव विज्ञेयमिनारार्किसमुद्भवम्।।[99]

अर्थात्- सूर्य में चंद्रमा के राश्यादि का अन्तर करें। राश्यादि 6 राशि से अधिक होने पर 12 राशि में घटाएँ। शेष अंशादि में 3 का भाग देने से शुभ ग्रहों का अर्थात् चंद्र, बुध,गुरु और शुक्र का पक्षबल आ जाता है। प्राप्त पक्षबल को 60 कला में घटा देने से पापग्रहों सूर्य, मंगल और शनि का बल आ जता है।

उदाहरण-

सूर्य $3.27.26.06 - 08.20.55.35(\text{चं.}) = 07.07.31.31,$

इसको 12 राशि में घटाएँ $12.00.00.00 - 07.07.31.31$

$= 04.22.28.29$ इसको अंशात्मक $120 + 22$

$$= \frac{142.28.29}{3}\ 47.29.29$$ यह चंद्रादि शुभग्रहों का बल होगा। इसी को 60 में घटा देने से सूर्य, मंगल और शनि का बल होगा।

कालबलान्तर्गत दिवारात्रि त्र्यंश बल- दिन और रात के विभाजन से निकला हुआ बल दिवारात्रि बल कहलाता है।

ज्ञार्कमन्देन्दुशुक्रारा दिनरात्र्योस्त्रिभागपा:।

99 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 10-28, 11

तत्रैतेषां बलं पूर्णं देवेज्यस्य तु सर्वदा।।[100]

अर्थात्- दिन का जन्म हो तो दिनमान का विभाजन करना चाहिए रात में जन्म हो तो रात्रिमान का प्रयोग करना चाहिए। बल विभाजन के लिए नीचे सारिणी दी जा रही है।

क्रम	नियम	बल
1	दिन के प्रथम भाग का जन्म होने पर	बुध का 1 अंशबल
2	दिन के द्वितीय भाग में जन्म होने पर	सूर्य का 1 अंशबल
3	दिन के तृतीय भाग में जन्म होने पर	शनि का 1 अंशबल
4	रात के प्रथम भाग का जन्म होने पर	चंद्र का 1 अंशबल
5	रात के द्वितीय भाग में जन्म होने पर	शुक्र का 1 अंशबल
6	रात के तृतीय भाग में जन्म होने पर	मंगल का 1 अंशबल
7	गुरु को हमेशा	1 अंशबल प्राप्त होता है।

उदाहरण-32.10/3 = 10.43 ये दिनमान का प्रथम भाग है। हमारा जन्म रात्रि का है। अत: रात्रिमान/3 करते हैं। रात्रिमान 27.50 है। 27.50/3 = 09.16 ये रात्रिमान का प्रथम भाग है। इष्टकाल 36/34 पलादि है। अत: हमारा जन्म रात्रि के प्रथम भाग में हुआ सिद्ध हुआ। नियमानुसार चंद्र को 1 अंश का बल प्राप्त होता है।

कालबलान्तर्गत वर्षेशादि/समाधि बल-

ये चार प्रकार का होता है। जिसमें वर्षेश, मासेश, दिनेश और होरेश मिलाकर पूर्ण बल प्राप्त होता है।

वर्षमासादिनेशानां तिथित्रिंशच्छरार्णवा:।
होराधिपबलं पूर्णमितिं ज्ञेयं विचक्षणै:।।[101]

- ✓ वर्षपति का बल - 15’ कला
- ✓ मासपति का बल- 30’ कला
- ✓ दिनपतिका बल- 45’ कला
- ✓ कालहोराधिपति का बल- 1^0अंश का बल

100 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 12-28
101 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 13-28

वर्षेश/मासेश साधन नियम- इसके लिए सबसे पहले अहर्गण साधन करें। अहर्गण -373/2520 करें। शेष को दो स्थानों में रखें। प्रथम स्थान में 360 का भाग दें। दूसरे में 30 का भाग दें। दोनों की लब्धियों को क्रमशः 3 और 2 से गुणा करें। गुणनफल में 1 जोड दें। प्राप्त योगफल में 7 का भाग देने पर प्रथम स्थान का शेष वर्षपति और द्वितीय स्थान का शेष मासपति होता है।

अहर्गणसाधन –

> द्वयब्धीन्द्रो नितशक ईशहृत्फलं स्यात् चक्राख्यं रवि हतशेषकं तु युक्तम्।
> चैत्राद्यैः पृथगमुतः सदृग्घ्नचक्राद् दिग्युक्तादमरफलाधिमासयुक्तम्।।
> खत्रिघ्नं गततिथियुङ्निरग्रचक्रांगाशाढ्यं पृथगमुतोऽब्धिषट्कलब्धैः।
> ऊनाहैर्वियुतमहर्गणो भवेद् वै वारः स्याच्छरहतचक्रयुग्गणोऽब्जात्।।[102]

अहर्गण साधन विधि- इसके लिए हमें निम्न अंशों की आवश्यकता होगी। चक्र साधन, मध्यम मासगण, अधिक मासगण, मासगण, मध्यम अहर्गण, क्षयदिवस आदि

- क्रमशः हमें- चक्र = इष्ट शक $-\frac{1442}{11} =$ लब्धि चक्र होगी, शेष रख लें
- मध्यम मासगण = (शेष X 12) + गत मास (इष्टमास को छोडकर बीते हुए माह)
- अधिकमास $= (\text{चक्र}X2) + 10 + \frac{\text{मध्यममासगण}}{33}$
- मासगण $=$ मध्यम मास $+$ अधिमासगण
- मध्यम अहर्गण $= (\text{मासगण}X30) +$ गत तिथि $+ \frac{\text{चक्र}}{6}$ (लब्धि)
- क्षयदिवस $=$ मध्यम अहर्गण $\div 64$
- अहर्गण $=$ मध्यम अहर्गण $-$ क्षयदिवस
- शेषवार $= \frac{(\text{चक्र}X5) \div \text{अहर्गण}}{7}$

चलिए अब इसका अभ्यास करते हैं-

जैसे शक1835, श्रावण शुक्ल 12, बुधवार का अहर्गण निकालना है।

102 ग्रहलाघवम् 4-1, 5

अहर्गण साधन नियमानुसार-

$$1835 - 1442 = \frac{393}{11} \text{ लब्धि} - 35 \text{ चक्र}, \quad \text{शेष } 08$$

शेष $8X\,12 = 96 + 4 = 100$ मध्यममासगण

चैत्र से गत मास आषाण तक गिनने पर 4 गत मास आए

$$\frac{(35X\,2) + 10 + 100}{33} = \frac{180}{33} = 5 \text{ लब्धि} = \text{अधिमासगण},$$

और शेष 15 अनावश्यक, $100 + 5 = 105$ मासगण

$105x30 = 3150 +$ गततिथि $11 + 5 = 3166$ मध्यम अहर्गण

$$\frac{3166}{64} = 49 \text{ लब्धिक्षय दिवस}, 3166 - 49 = 3117 \text{ स्पष्ट अहर्गण}$$

अब अहर्गण के माध्यम से ही वर्षपति साधन किया जा सकता है जैसे-

$$\frac{\text{अहर्गण} - 373}{2520} = \text{लब्धि को दो स्थान में रखें।}$$

- प्रथम स्थान पर - लब्धि/ 360 = लब्धि X 3 + 1 = प्रथम फल
- प्रथम फल/ 7 = वर्षपति होगा।
- द्वितीय स्थान पर - लब्धि/ 30 = लब्धि X 2 +1 = द्वितीय फल
- द्वितीयफल/ 7 = मासपति होगा।

कालबलान्तर्गत दिनेश साधन- जिस दिन का बल साधन करना हो वही दिन का अधिपति होगा।

कालबलान्तर्गत होराधिपति साधन-

वारादेर्घटिकाद्घ्निा: स्वाक्षहृच्छेषवर्जिता:।
सैकास्तष्टा नगै: कालहोरेशा दिनपात्क्रमात्।।[103]

अर्थात्- (इष्टघटी X 2) ÷ 5 लब्धि होरा क्रम होगा। लब्धि 7 से अधिक हो तो 7 का भाग दें। शेष कालहोरेश होगा। वार क्रम ग्रहों की कक्षा क्रम के अनुसार होगा।

ग्रह कक्षा क्रम – शनि, गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चंद्रमा

विशेष- काल बल साधनार्थ उपर्युक्त 4 बलों का योग करें। सम्पूर्ण योग ही ग्रह का काल बल होगा।

103 मुहूर्तचिन्तामणि 55-1

नैसर्गिकबल- मूलस्वभावत: ग्रहों के बल कौ नैसर्गिक बल कहते हैं। जो की सदैव एक सा रहता है।

षष्टि:सप्तहृतैकादिसप्तभिर्गुणिता तदा।
मन्दारज्ञेज्यशुक्रेन्दु सूर्याणां स्यात् स्फुटं बलम्।।[104]

अर्थात् - सारिणी द्वारा ग्रह बल स्पष्ट है।

क्रम	ग्रह	नैसर्गिक बल
1.	सूर्य	1 अंश
2.	चंद्र	51'.26''
3.	मंगल	17'09''
4.	बुध	25'43''
5.	गुरु	34'17''
6.	शुक्र	42'51''
7.	शनि	8'34'7

दृक् बल- ग्रहों की दृष्टि के द्वारा दिए गए बल को दृक् बल कहते हैं। ग्रहों का दृग् बल साधन के पूर्व हमें उनकी दृष्टि स्थान को जानना चाहिए।

पादेक्षणं भवति सोदरमानराशयो: अर्धं त्रिकोणयुगलेऽखिलखेचराणाम्।
पादोन दृष्टिनिचयश्चतुरस्रयुग्मे सम्पूर्णदृग्बलमनङ्गगृहे वदन्ति।। । [105]

अर्थात् – तीसरे और दसवें स्थान पर ग्रह की एकपाद दृष्टि होती है।
त्रिकोण (5,9) स्थान में ग्रह की आधी दृष्टि होती है।
चतुर्थ और अष्टम में ग्रह की त्रिपाद दृष्टि होती है।
ग्रह से सातवें स्थान में उसकी पूर्ण दृष्टि होती है।

विशेष-ग्रहों की दृष्टि के लिए प्रत्येक ग्रह के स्थान से निर्णय लिया जाताहै। जो ग्रह जिस स्थान पर बैठेगा उस स्थान से 3,10 को एकपाद, 5,9 को अर्ध दृष्टि से, 4,8 को त्रिपाद दृष्टि से और सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखेगा।

104 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 14-28
105 जातकपारिजात 30-2

दृष्टिविशेष-

शनिरतिबलशाली पाददृग्वीर्ययोगे, सुरकुलपतिमन्त्री कोणदृष्टौ शुभ:स्यात्।
त्रितयचरणदृष्ट्या भूकुमार: समर्थ:, सकलगगनवासा: सप्तमे दृग्बलाढ्या:।।[106]

दृष्टि बोधक चक्र

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
एकपाद	3,10	3,10	3,10	3,10	3,10	3,10	----
अर्ध	5,9	5,9	5,9	5,9	----	5,9	5,9
त्रिपाद	4,8	4,8	----	4,8	4,8	4,8	4,8
पूर्ण दृष्टि	सप्तम	सप्तम	4,7, 8	सप्तम	5,7, 9	सप्तम	3,7, 10,

दृग् बल साधन विधि-

दृश्य − दृष्टा = शेष राश्यादि

राशि का ध्रुवांक एवं अगला ध्रुवांक लें।(यदि अगला ध्रुवांक न्यून हो तो ऋण, अधिकहो तो धन होता है)

$$\frac{\text{शेष राश्यादि } X \text{ ध्रुवांक}}{30} = \text{लब्धि,}$$

ध्रुवांक $\pm$ लब्धि $\div 4 =$ ग्रह दृष्टि बल

दृष्टि ध्रुवांक सारिणी-

शेष राशि	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	0
ध्रुवांक	0	1	2	3	0	4	3	2	1	0	0	0

सूर्य का उदाहरण स्वरूप दृष्टि साधन करते हैं- यहाँ सूर्य दृष्टा और सभी ग्रह दृश्य होंगे।

$$8.20.55.35 \; - 3.27.23.06 = 4.03.32.29$$

106 जातकपारिजात 31-2

यहाँ 4 राशि शेष है इसका ध्रुवांक लिया -2

अगला ध्रुवाकं छोटा है अत: ऋण होगा। -0

इन दोनों का अंतर करें। प्राप्त फल 02।

$$\frac{4.03.32.29X2}{30} = \frac{7.04.58}{30} = 14.09.56$$

$$02.00.00.00 - 14.09.56 = \frac{1.45.50.04}{4}$$

$= 0.26.27.31$ यह सूर्य की चंद्र पर दृष्टि निकली।

इसी प्रकार अन्य ग्रहों पर सूर्य की दृष्टि का साधन करें। तदुपरान्तसभी ग्रहों की इसी क्रम में दृग बल निकालें।

धनात्मक/ऋणात्मक दृग् बल साधन- इसका तात्पर्य यह है कि ग्रह पर पाप या शुभ दृष्टि की मात्रा कितनी है।

शुभाशुभदृशां पादैर्युगयुक् तु बलैक्यम्।
ज्ञेज्यदृष्टियुतं तर्हि स्फुटं ग्रहबलं स्मृतम्।।[107]

अर्थात्- ग्रहों पर दो प्रकार की दृष्टि होती है। पाप दृष्टि और शुभ दृष्टि।

यदि शुभ दृष्टि अधिक हो तो शुभदृष्टि $\div 4 =$ शुभ दृष्टि चतुर्थांश

शुभ दृष्टि चतुर्थांश $-$ पापदृष्टि चतुर्थांश $=$ शेष $+$ दृग् बल होगा

यदि पाप दृष्टि अधिक हो तो पाप दृष्टि $\div 4 =$ पाप दृष्टि चतुर्थांश

पाप दृष्टि चतुर्थांश $-$ शुभदृष्टि चतुर्थांश $=$ शेष $+$ दृग् बल होगा

अभ्यास प्रश्न-

11-वर्षपति का बल प्रमाण लिखें 15’ कला

12-दिवारात्रि बल में गुरु को कितना बल मिलता है – 1 रूप बल

13-नतोन्नत बल क्रम में बुध का बल कितना होताहै - सर्वदा 1 अंश बल होता

14-नैसर्गिक बल में सूर्य का बल कितना होता है -1 अंश

---

107 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 19-28

15- मंगल की पूर्ण दृष्टि किस स्थान पर होती है - 4,7,8

5.4 मुख्य भाग तीन

अयनबल- चेष्टाबल साधन के लिए पहले अयन बल, चेष्टाकेन्द्रादि निकालना पडता है। अयन बल साधन के पूर्व ग्रहों की क्रान्ति का साधन करें। ग्रहों की उत्तर और दक्षिण 2 क्रान्ति होती है। उसके बाद उसका अयन बल साधन करें।

उत्तर क्रान्ति - सायनराशि मेष से कन्यान्त तक

दक्षिणक्रान्ति- सायनराशि कन्या से मीनान्त

शराब्धयो ऽमरा: सूर्या:खण्डका: सायनग्रहा:।
तद्दोराशिसमा ,खण्डयुतिर्भोग्यसमाहतात्।
अंशादिकात् खरामाप्तयुता अंशादयो मता:।
सायने तुलमेषादौ धनर्णं शनिचन्द्रयो:।
राशित्रये तथा ज्ञे तु धनं व्यस्तं तु शेषके।
तदंशा विहता रामै रायनं बलमीरितम्।।[108]

अर्थात्- 45, 33,12 ये तीन खण्ड होते हैं। आयनबल ज्ञान के लिए सायनग्रह के भुज बनाएँ। इसमें राशितुल्य खण्डों का योग करें। अंशादि शेष को भोग्य खण्ड से गुणा कर 30 से भाग दें। लब्धि को राशितुल्य खण्डों के योग में जोडकर अंशादि बना लेना चाहिए। फिर सारिणी के माध्यम से 3 राशि का संस्कार कर 3 का भाग देने पर अयन बल प्राप्त होताहै।

क्रम	ग्रह	नियम
1	सूर्य, मंगल, गुरु, शुक्र के लिए	तुलादि = (3 राशि – अंश) = सब के अंश बनाकर ÷ 3 मेषादि = (3 राशि + अंश) = सब के अंश बनाकर ÷ 3
2	शनि,चंद्र	तुलादि = (3 राशि + अंश) = सब के अंश बनाकर ÷ 3 मेषादि = (3 राशि – अंश) = सब के अंश बनाकर ÷ 3
3	बुध हमेशा	(3 राशि + अंश) = सब के अंश बनाकर ÷ 3

अयन बल साधनार्थ सबसे पहले ग्रह का भुजांश साधन करें।

108 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 15-28,16, 17

❖ ग्रह 3 राशि के अंदर हो तो वही भुजांश होगा।

❖ 3से 6 राशि के अंदर होने पर 6 राशि से घटाने पर प्राप्त अंशादि ही भुजांश होगा।

❖ 6से 9 के अंदर होने पर 9 से घटानेपर भुजांश होगा।

❖ 9से 12 के बीच में 12 से घटाने पर भुजांश होगा।

उदाहरण- हमारा सायनसूर्य है, 4.21.59.46 ये तीन से अधिक है अत: 6 राशि से घटाएँगे।

सूर्य $3.27.26.06 + 24.33.40 = 4.21.59.46$। $06.00.00.00 - 4.21.59.46 =$ भुजांश $01.08.00.14$

- अब भुजांश 08.00.14 X 33 = 264.07.42 प्राप्त हुए।
- अब $\frac{264.07.42}{30} = 08.48.15$
- अब इसमें पूर्व खण्ड का अंश जोडें $-\ 08.48.15 + 45.00.00 = 53.48.15$ अर्थात् $- 01.23.48.15$
- सायन सूर्य मेषादि कन्यान्त में है इसलिए 3 राशि जोडेंगे। $03.0.0.0 + 1.23.48.15 = 4.23.48.15$
- इसको अंशादि बनाने पर - $4.23.48.15 = 4x30 + 23.48.15 = 143.48.15 \div 03 =$
- सूर्य का अयन बल $47.56.15$ प्राप्त हुआ।

ग्रन्थान्तरों में सभी के बलादि साधन के लिए सारिणी दी गई तदर्थ हम उन ग्रन्थों का भी अनुशीलन कर सकते हैं।

मध्यम ग्रह - अहर्गण के माध्यम से मध्यम ग्रह साधन कर लेना चाहिए। ग्रह लाघवादि ग्रन्थों का सम्यक् अनुशीलन करन पर हमें मध्यम ग्रह साधन आ जाएगा। यहॉं कल्पित मध्यम ग्रह दिया जा रहा है-

मध्यम ग्रह

ग्रह	सूर्य	बुध	शुक्र	चंद्र	चंद्रोच्च	मंगल	बुध केन्द्र	शुक्र केन्द्र	गुरु	शनि
राशि	3	3	3	08	10	11	07	08	09	01
अंश	28	28	28	15	28	27	24	11	00	20
कला	43	43	43	52	26	11	16	13	49	06

विकला	10	10	10	49	35	44	53	09	31	01

विशेष- जो ग्रह वक्री होते हैं उन्हीं का चेष्टा केन्द्र निकाला जाता है।

- सूर्य और चंद्रमा का चेष्टा केन्द्र नहीं होता है।
- कहीं कहीं शीघ्रोच्च का उपयोग करते हुए चेष्टाकेन्द्रादि का साधन किया गया है।[109] अत: उसको समझने के लिए निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखें।
- मं,गु, और शनि का शीघ्रोच्च = मध्यम सूर्य होता है।
- बुध का शीघ्रोच्च = मध्यम सूर्य +बुध शीघ्रकेन्द्र होता है।
- शुक्र का शीघ्रोच्च = मध्यम सूर्य + शुक्र शीघ्रकेन्द्र होता है।
- सूर्य का अयन बल ही चेष्टाबल होता है।
- चंद्रमा का पक्ष बल ही चेष्टाबल होता है।
- बल साधन में केवल भौमादि पंच ताराग्रहों का प्रयोग किया जाता है।

चेष्टाकेन्द्र साधन- मध्यमस्पष्टराश्यादिग्रहयोग दलोनितम्।
स्वस्वशीघ्रोच्चकं षड्भाधिकं चक्राद् विशोधितम्।
चेष्टाकेन्द्रं कुजादीनां ,भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत्।।
चेष्टाबलं भवति यत् बलमेवं तु षड्विधम्।
स्थानजं दिग्भवं कालदृष्टिचेष्टानिसर्गजम्।।[110]

अर्थात्- चेष्टा बल साधन के पूर्व चेष्टा केन्द्र साधन करना अनिवार्य होता है।

मंगल, गुरु और शनि का चेष्टा केन्द्र = मध्यम सूर्य $- \frac{\text{मध्यमग्रह} + \text{स्पष्टग्रह}}{2}$

बुध का चेष्टा केन्द्र= मध्यम सूर्य + बुधकेन्द्र$- \frac{\text{मध्यमसूर्य} + \text{स्पष्टबुध}}{2}$

शुक्र का चेष्टा केन्द्र = मध्यम सूर्य + शुक्र केन्द्र $\frac{\text{मध्यमसूर्य} + \text{स्पष्टशुक्र}}{2}$

---

109 केशवीय जातक पद्धति

110 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 24-28,25

जैसे- यहाँ मंगलका चेष्टा केन्द्र साधन करतेहैं।

$11.27.11.44 + 01.16.27.58 = 13.13.39.42 \div 2 =$
$06.21.49.51$ योगार्ध

मध्यम सूर्य $03.28.43.10 - 06.21.49.51$ योगार्ध $= 09.6.53.19 =$
मंगल चेष्टाकेन्द्र

चेष्टाबल साधन विधि-

यदि चेष्टाकेन्द्र , 6 राशि से अधिक हो तो 12 राशि – चेष्टाकेन्द्र/ 3 = चेष्टाबल

यदि चेष्टाकेन्द्र , 6 राशि से कम हो तो चेष्टाकेन्द्र/ 3 = चेष्टाबल

सूर्य का अयन बल ही चेष्टाबल है।

चंद्रमा का पक्ष बल ही चेष्टाबल है।

उदाहरण-

मंगल चेष्टाबल $= 12.00.00.00 - 09.6.53.19 = 02.23.06.41 =$
अंशादि बनाने पर $83.06.41 \div 3 = 27.42.13$ मंगल चेष्टाबल

स्फुट चेष्टाबल नियम- चेष्टाबल + अयन बल

युद्ध बल- दो ग्रह जब परस्पर एक ही अंशादि पर होते हैं तो उनका युद्ध बल होता है। उसके लिए पाराशर कहतेहैं कि-

मिथ: संयुतघ्यतोस्ताराग्रहयोर्यद् बलान्तरम्।
धनं बले विजेतुस्तन्निर्जितस्य बलेन्यथा। ।[111]

दोनो लडनेवाले ग्रहों का बल निकालने पर जिसका बल कम हो वह हारा हुआ ग्रह होता है। बाद में दोनों का अंतर कर लें उसे हारे हुए ग्रह के पूर्ण बल से घटा दें। प्राप्त फल को जीते हुए ग्रह से जोड दें। वही युद्ध बल होगा।

- सूर्य के साथ रहने पर ग्रह अस्तहो जाता है अत: युद्ध बल नहीं निकलेगा।

111 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 20-28

- चंद्रमा के साथ रहनेपर ग्रह समागम हो जाता है अत: युद्ध बल नहीं निकलेगा।

गति बल साधन चक्र- वस्तुत :चेष्टा से तात्पर्य ग्रहों की गति से है। ग्रहों की गति मुख्यत: 8 प्रकार की कही गई है-

वक्रातिवक्रा विकला मन्दा मन्दतरा समा।
तथा शीघ्रतरा शीघ्रा ग्रहाणामष्टधागति:।।[112]

अर्थात- वक्र, अतिवक्र, विकला,मन्द, मन्दतर, सम, शीघ्रतर और शीघ्र ये 8 प्रकार की गतियाँ कही गई हैं। प्रचलन में हमें मुख्यत: 2 प्रकार की गतियों का ही ज्ञान हो पाता है। वक्री और मार्गी।

षष्टिर्वक्रगतेर्वीर्यमनुवक्रगतेर्दलम्।
पादो विकलभुक्ते: स्यात् समायास्तु दलं स्मृतम्।
पादो मनदगतेस्तस्य दलं मनदतरस्य च।
शीघ्रभुक्तेस्तु पादोनं दलं शीघ्रतरस्य तु।।[113]

अर्थात्-

क्रम	ग्रह	बल प्रमाण
1	वक्र ग्रह	1 रूप
2	अति वक्र	30’ कला
3	विकल ग्रह	15’ कला
4	मध्यगतिक ग्रह	30’ कला
5	मन्दगतिक ग्रह	15’ कला
6	मन्दतर ग्रह	7’ 30’’
7	शीघ्रगतिक ग्रह	45’
8	अतिशीघ्र ग्रह	30’

मित्रों इस प्रकार हमने ग्रहों का षड्बल के नियम व साधन का अभ्यास किया। प्रथमत: देखने में थोडी कठिनाई होती है परन्तु अभ्यास से यह सरल लगने लगता है। अत: पूर्ण मनोयोगसेइसका अभ्यास करें। इस क्रम में आगे बढते हुए हम अब भावों के बल का अभ्यास करेंगे।

112 सूर्यसिद्धान्त 12-2
113 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 22-28,23

अभ्यास प्रश्न-

16- भुजांश कितने अंश का होता है?

17-ग्रहों की गति कितने प्रकार की होती है ?

18-किस किस ग्रह के साथ रहने पर युद्ध बल नहीं निकलता है ?

19-उत्तर क्रान्ति कब होती है ?

20- चंद्रमा का चेष्टाबल क्या है ?

5.5 मुख्यभाग खण्ड चार

प्रिय सुधी जनों हमने पूर्व खण्डों में ग्रहों के षड्बल का सोदाहरण ज्ञान प्राप्त किया। ग्रहों के बल को जानने के बाद हमें भावों का बल भी जानना चाहिए। इन दोनों बलों के सामञ्जस्य से ही हम फल निर्णय ले सकते हैं। तो चलिए बल स्पष्ट ज्ञान की इस यात्रा में हम भावों के बल भेद व साधन नियमों को समझते हैं-

भाव बल मुख्यत: 3 प्रकार का होता है- भावस्वामी बल, भाव दिक् बल और भाव दृग्बल

1- भाव के स्वामी का जो षड्बल होता है वह भाव स्वामी बल कहलाताहै।

2- भाव के दिशा से निकाला गया बल भाव दिक् बल होता है।

3- भाव पर पडने वाली शुभ या पाप ग्रहों की दृष्टि के अनुसार निकाला गया बल भाव दृग्बल कहलाता है।

पराशर के अनुसार भावबलसाधन

ग्रहाणां बलमित्युक्तं श्रृणु भावबलं पुन:।
द्वन्द्वकन्यातुलाधन्विपूर्वार्धघटतोऽस्तभम्।
सुखं गोऽजमृगाद्यार्धसिंहचापोत्तरार्धत:।
कर्कालितस्तनुं, खं तु मीनान्नक्रान्तिमार्धत:।
विशोध्यांगाधिकं तच्चेच्छोध्यमर्काल्लवीकृतम्।
त्रिभक्तं सदसद् दृष्टिपादयुक्तोनितं क्रमात्।
बुधेज्यदृग्युतं तत्तु स्वस्वेशबलसंयुतम्।।
स्फुटं भावबलं चैतदन्यत्तु प्रागुदीरितम्।।[114]

114 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 29 से 26-28

अर्थात्- ग्रहों के बल साधन के बाद अब पाराशर भावों के बल का विधान कर रहे हैं-

क्रम	राशि विशेष	क्रिया
1	मिथुन, कन्या, तुला,धनु का पूर्वार्द्ध और कुम्भ का बल साधनार्थ	इनमें से सप्तम को घटाएँ
2	मेष, वृष, मकर का पूर्वार्द्ध और सिंह, धनु का उत्तरार्द्ध के लिए	इनमें से चतुर्थ भाव को घटाएँ
3	कर्क और वृश्चिक के लिए	इनमें से लग्न घटाएँ
4	मकरोत्तरार्द्ध और मीन के लिए	इनमें से दशम भाव घटाएँ

शेष 6 से अधिक हो तो 12 से घटाकर अंशादि बना लें।

$$\text{अंशादि भाव} \div 3 + \frac{\text{शुभग्रह दृष्टि}/\text{पापग्रहदृष्टि}}{4} = \text{प्राप्त फल}$$

प्राप्त फल + भावस्वामी बल = भाव स्फुट बल होगा।

विशेष- यदि बुध, गुरु और शुक्र की दृष्टि हो तो उसको भी यहाँ जोड दें।

भावबल साधन में विशेष-

विदिज्योपेतभावस्य बलमेकेन संयुतम्।
मन्दाररवियुक्तस्य बलमेकेन वर्जितम्।
दिवाशीर्षोदयाश्चैव सन्ध्यायामुभयोदया:।।
नक्तं पृष्ठोदयाश्चैव दद्युरंघ्रिमितं बलम्।।[115]

अर्थात्- प्राप्त भाव फल पर अन्य योग किए जानेवालेअंशो को पाराशर स्पष्ट कर रहे हैं।

क्रम	स्थिति	योजनीय बल
1	यदि भाव बु.गु. से युक्त हो तो	बल में 1 अंश जोड दें।
2	यदि भाव पाप युत हो तो	बल में 1 अंश घटा दें।
3	दिन का जन्म हो तो	शीर्षोदय वाले राशि भाव पर1 और जोड दें।
4	रात का जन्म हो तो	पृष्ठोदय वाले राशि भाव पर1 और जोड दें।

115 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 30-28, 31

5	सन्ध्या को जन्म हो तो	उभयोदय वाले राशि भाव पर1 और जोड दें।

ग्रहो का सुबलत्वादि निर्णय- अब सर्वविध बल साधन के बाद ग्रहों का श्रेष्ठ बलादि का निर्णय करने का नियम बताया जा रहा है।

अंगाग्नयोऽङ्गरामाश्च खरसा: करसिन्धव:।
नवाग्नय: क्षुरा:शून्याग्नयो दिग्गुणिता: क्रमात्।।
चेद्बलैक्यमिनादीनां ज्ञेया: सुबलिनस्तदा।
ततोऽपि च बलाधिक्ये पूर्णतो बलिनो मता:।[116]

भावार्थ – ग्रहों का षड्बल में प्राप्त बल को कलादि बना लें।

क्रम	ग्रह	कलात्मक बल
1	सूर्य	390
2	चंद्र	360
3	मंगल	300
4	बुध	420
5	गुरु	390
6	शुक्र	330
7	शनि	300

यदि सारिणी प्रदत्त बल ग्रह को मिला है तो सुबल। इससे अधिक मिला है तो पूर्ण बल समझना चाहिए। कम होने पर क्रमश:मध्यबली और अल्पबली समझें।

भाव बल के फल विशेष का चिन्तन-

एवं कृते बलैक्ये तु फलं वाच्यं सदा बुधै:।
भावस्थानग्रहै: प्रौक्तयोगे ये योगहेतव:।
बली तेषु च य: कर्त्ता स एवास्य फलप्रद:।
योगेष्वाप्तेषु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्तित:।।[117]

116 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 32-28,33
117 बृहत्पाराशर होराशास्त्रम् 37-28, 38

पराशर कहते हैं कि इस तरह सर्व विध बल का ज्ञान करने के बाद सबसे बली शुभ ग्रहा को योग कारक मानना चाहिए। वही योग कारक ग्रह अपने दशा गोचरादि में जातक को सम्पूर्ण शुभफल प्रदान करेगा।

अभ्यास प्रश्न

21- भाव बल क्या है?

22- भाव कितनेहोते हैं?

23- सभी ग्रहों की पूर्ण दृष्टि किस भाव पर होती है?

24- यदि भाव बु.गु. से युक्त हो तो भावबल में क्या करना चाहिए?

25- सूर्य कितने कला के बल में सुबली होता है?

5.6 सारांश

हमने इस पाठ के द्वारा ग्रहों के 6 प्रकार के बलों को जाना। ये क्रमश:- स्थान, दिक्, काल, नैसर्गिक, दृग् और चेष्टा बल के नाम से जाने जाते हैं। जिसमें स्थान बल के उच्चादि, सप्तवर्ग, ओजादि, केन्द्रादि और द्रेष्काण 5 भेद हैं। जिनका हमने सोदाहरण अभ्यास किया। इसी तरह दिक् बल एक प्रकार का और काल बल नतोन्नत, पक्ष,दिवारात्रि और वर्षेशादि बल से 4 प्रकार का है। नैसर्गिक बल और दृक् बल भी एक-एक प्रकार के हैं। अन्तिम चेष्टाबल भी एकप्रकार का है परन्तु उसके अन्दर हमें अयन, क्रान्ति, अहर्गण और मध्यम ग्रह साधन की आवश्यकता होती है। सूर्य का अयन बल और चंद्रमा का पक्षबल ही चेष्टाबल होता है। अन्य सभी ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र साधन करके उसको 3 से भाग देने पर मध्यम चेष्टाबल प्राप्त होता है। अयन बल + मध्यम चेष्टाबल = स्पष्ट चेष्टाबल होता है। दो परस्पर एक ही राश्यादि में रहने वाले ग्रहों का युद्ध का ज्ञानभी हमने प्राप्त किया। सूर्यके साथ रहनेवाला अस्त और चंद्रमा के साथ समागम होता है। अत: इन दोनों का युद्ध बल नहीं निकाला जाता है। ग्रहों की 8 प्रकार की गति का ज्ञानकरते हुए सभी का बल ज्ञान भी हमने किया।

ग्रहों के बल को जानने के बाद हमने भावों के बल का भी पाठ के माध्यम से ज्ञान प्राप्त किया। जिसमें सबसे बली शुभ ग्रहा को योग कारक मानना चाहिए। वही योग कारक ग्रह अपने दशा गोचरादि में जातक को सम्पूर्ण शुभफल प्रदान करेगा। यह पाठ फलादेश व ग्रहों के बल की दृष्टि से अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। अत: पुन:पुन: अभ्यास के द्वारा इसका प्रयोग आपके हितार्थ होगा।

5.7शब्दावली

भुज-सबसे समीप सम्पात बिन्दु से सूर्य के अंतर को भुज कहते हैं। यह 3 राशि अर्थात् 90 अंश से कभी अधिक नहीं होता है।

क्रान्ति-	उत्तर और दक्षिणक्रान्ति	
सायन सूर्य-	सूर्य स्पष्ट + अयनांश	
अहर्गण-	दिनों का समूह	
होरा-	राश्यर्द्धं होरा। राशि का आधा भाग होरा होता है। 30/2	
द्रेष्काण-	राशि का तीसरा भाग	30/03
सप्तमांश-	राशि का सातवां भाग	30/07
नवमांश-	राशि का नवां भाग	30/9
द्वादशांश-	राशि का बारहवां भाग	30/12
त्रिंशांश-	5 भाग विषम/ सम दोनों में	
रूप बल -	1 अंश का	
दृष्टा–	देखने वाला	
दृश्य-	जिसको देखा जा रहा है।	
चेष्टा–	गति वैविध्यता	
दिक्-	दिशा	
दृग -	दृष्टि	

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1- ग्रहों का बल कितने प्रकार का होता है? – 6 प्रकार का

2- मूलत्रिकोणस्थ ग्रह का प्रमाण कितना है? - 45 षष्ठ्यंश

3- पुरुष ग्रहपुरुष राशि में हों तो ओजादि बल प्रमाण लिखें। - 15 षष्ठ्यंश

4- आपोक्लिम भावस्थ ग्रह का बलप्रमाण कितना है? - 15 षष्ठ्यंश

5- मित्रवर्गस्थ ग्रह का बलप्रमाण लिखें – 15 षष्ठ्यंश

6- 6 राशियों का कलात्मक मान क्या है? - 10800

7- 1 राशि में कितने अंश होते हैं? - 30

8- 10800 से भाग क्यों दिया गया है? – 6 राशि का अनुपात जानने के लिए

9- चंद्रमा सिंहराशि में हो तो युग्मबल प्रमाण क्या होगा? - 0 बल

10-प्रदत्त कुण्डली में गुरु का केन्द्रादि बल क्या होगा? - 30 षष्ठ्यंश

11-वर्षपति का बल प्रमाण लिखें 15' कला

12-दिवारात्रि बल में गुरु को कितना बल मिलता है – 1 रूप बल

13-नतोन्नत बल क्रम में बुध का बल कितना होताहै - सर्वदा 1 अंश बल होता

14-नैसर्गिक बल में सूर्य का बल कितना होता है -1 अंश

15-मंगल की पूर्ण दृष्टि किस स्थान पर होती है - 4,7,8

16-भुजांश कितने अंश का होता है? - 90 अंशों का

17-ग्रहों की गति कितने प्रकार की होती है ? - 8 प्रकार की

18-किस किस ग्रह के साथ रहने पर युद्ध बल नहीं निकलता है ?- सूर्य और चंद्रमा के साथ रहने पर

19-उत्तर क्रान्ति कब होती है ? - सायन सूर्य के मेष से कन्यान्त तक

20- चंद्रमा का चेष्टाबल क्या है ? - पक्षबल ही चेष्टा बल है।

21-भाव बल क्या है? - भाव, भाव स्वामी आदि का बल

22-भाव कितनेहोते हैं? -12

23-सभी ग्रहों की पूर्ण दृष्टि किस भाव पर होती है? - 7 स्थान पर

24-यदि भाव बु.गु. से युक्त हो तो भावबल में क्या करना चाहिए?- 1 अंश और जोड दें।

25- सूर्य कितने कला के बल में सुबली होता है? -390 कला में

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी
- ग्रहलाघवम् – गणेश दैवज्ञ- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
- सूर्य सिद्धान्त –व्याख्याकार- कपिलेश्वर- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

❖ केशवीयजातक पद्धति- केशव- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

❖ भारतीय ज्योतिष- नेमिचन्द्र शास्त्री – भारतीय ज्ञान पीठ दिल्ली ।

❖ मुहूर्त चिन्तामणि- रामदैवज्ञ- व्याख्याकार- केदारदत्तजोशी - मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

❖ फलदीपिका- मन्त्रेश्वर- गोपेश ओझा- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

5.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री

9- बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी

10-ग्रहलाघवम् – गणेश दैवज्ञ- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

11-सूर्य सिद्धान्त –व्याख्याकार- कपिलेश्वर- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

12-केशवीयजातक पद्धति- केशव- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

13-भारतीय ज्योतिष- नेमिचन्द्र शास्त्री – भारतीय ज्ञान पीठ दिल्ली ।

14-मुहूर्त चिन्तामणि- रामदैवज्ञ- व्याख्याकार- केदारदत्तजोशी - मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

15-फलदीपिका- मन्त्रेश्वर- गोपेश ओझा- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

16-सारावली –कल्याणवर्मा – व्याख्याकार-डॉ.मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

17-जातकपारिजात- वैद्यनाथ - व्याख्याकार-गोपेश ओझा, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

18-भावमंजरी- पं. मुकुन्द दैवज्ञ- व्याख्याकार-डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

19-जैमिनि सूत्र-जैमिन- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

20-बृहत्पाराशर- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.देवेन्द्र नाथ झा, चौखम्बा वाराणसी

21-लघुपाराशरी- पराशर- व्याख्याकार- डॉ.सुरेश चंद्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

22-बृहज्जातकम् –बाराहमिहिर- व्याख्याकार- मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।

23-उत्तरकालामृत- कालिदास- व्याख्याकार- जगन्नाथ भसीन, रंजन पब्लिकेशन नई दिल्ली।

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

1- ग्रहों का स्थान बल साधन करें।
2- ग्रहों का चेष्टा बल साधन करें।
3- शक 1938 माघ कृष्ण चतुर्दशी गुरुवार का अहर्गण साधन करें।
4- काल बल की सोदाहरण विवेचना करें।
5- ग्रह एवं भाव बल के साधन की आवश्यकता एवं विधि पर एक निबंध लिखें।

खण्ड - 2

वर्ग एवं अवस्था

इकाई - 1 षडवर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग विवेचन

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

द्वितीय खण्ड – 'वर्ग एवं अवस्था' की प्रथम इकाई में आप सभी ज्योतिषशास्त्र के शिक्षार्थियों का स्वागत है। इस इकाई का शीर्षक है – षडवर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग विवेचन। इससे पूर्व की इकाईयों में आप लोगों ने होरा शास्त्र के आरम्भिक विषयों का अध्ययन कर लिया है। अब आप षडवर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं।

कुण्डली निर्माण प्रक्रिया तथा फलादेशादि में इन वर्गों की जानकारी परमावश्यक है। वस्तुत: षड्वर्ग में गृह या लग्न से लेकर त्रिशांश पर्यन्त 6 वर्ग, सप्तवर्ग में सप्तमांश के साथ 7 एवं दशवर्ग के अन्तर्गत दस वर्ग होते हैं। वर्ग को 'कोष्ठक' आदि के नाम से भी जाना जाता है।

आचार्यों ने फलादेशादि कथन में सूक्ष्मता के दृष्टिकोण से इन वर्गों का अपने-अपने ग्रन्थों में उल्लेख किया है। आइए हम सब भी उक्त वर्गों का विस्तृत अध्ययन इस इकाई के अन्तर्गत करने का प्रयास करते है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान लेगें कि –

- षड्वर्ग किसे कहते है।
- षड्वर्ग का क्या महत्व है तथा इसका साधन कैसे करते है।
- सप्तवर्ग से क्या तात्पर्य है।
- सप्तवर्ग एवं दशवर्ग का बोध कैसे करते है।
- कुण्डली निर्माण प्रक्रिया एवं फलादेश कथन में षड्वर्ग-सप्तवर्ग एवं दशवर्ग का क्या योगदान है।

1.3 षड्वर्ग एवं सप्तवर्ग परिचय

षड्वर्ग –

आप सभी को यह ज्ञात होना चाहिए कि षड्वर्ग का सम्बन्ध होरा या फलित ज्योतिष से ही नहीं, अपितु ज्योतिषशास्त्र के प्रत्येक स्कन्धों से है। प्रत्येक स्कन्धों में इसका विवेचन मिलता है। इसके ज्ञान के बिना हम कुण्डली का सम्यक् विश्लेषण नहीं कर सकते हैं। राशियों के परिज्ञान के साथ-साथ ग्रहों के बलाबल आदि जानकारी हेतु आचार्यों द्वारा इनका प्रतिपादन किया गया है। अत: आइए हम सब उसका विस्तार से अध्ययन करते है।

सर्वप्रथम षड्वर्ग क्या है? इसका विचार करते है तो 'षड्' का शाब्दिक अर्थ होता है – 6 एवं वर्ग को

कोष्ठक के नाम से भी जानते है। इस प्रकार जहाँ 6 कोष्ठक या 6 प्रकार के वर्गों (गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश एवं त्रिशांश) का उल्लेख हमें मिलता है सामान्यतया उसे हम 'षड्वर्ग' कहते है। ग्रहों की षडवर्ग संज्ञा होती है। राशियों में वर्ग परिज्ञान हेतु इनका निर्माण आचार्यों द्वारा किया गया है। फलादेश कर्तव्य में षडवर्ग के ज्ञान से हमें सूक्ष्म दृष्टि प्राप्त होती है। इन्हीं षड्वर्ग में राशि के सातवें भाग अर्थात् सप्तमांश को जोड़ देने से सप्तवर्ग का निर्माण हो जाता है।

षड्वर्ग विचार: -

गृहं होरा च द्रेष्काणो नवांशो द्वादशांशक:।
त्रिंशांशश्चेति षड्वर्गास्ते सौम्यग्रहजा: शुभा:।।

गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश तथा त्रिशांश का षड्वर्ग में समावेश होता है। सप्तक वर्ग के लिए सप्तमांश विशेष रहता है।

1.3.1 विभिन्न होरा या फलित ग्रन्थानुसार षड्वर्ग विचार –

षड्वर्ग के अन्तर्गत ग्रहों के 6 वर्ग या कोष्ठक है- गृह या लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश एवं त्रिशांश। वस्तुत: ये सभी अत्यन्त महत्वपूर्ण है और ये सभी शुभ कर्मों में प्रशस्त कहे गये हैं। ग्रहों की षडवर्ग संज्ञा का उल्लेख करते हुए आचार्य वराहमिहिर ने अपने ग्रन्थ लघुजातक में कहा है कि –

गृहहोराद्रेष्काणा नवभागो द्वादशांशकस्त्रिश:।
वर्ग: प्रत्येतव्यो ग्रहस्य यो यस्य निर्दिष्ट:।।

अर्थात् जिस ग्रह के जो गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिशांश कहे गये हैं, वे उस ग्रह के वर्ग समझे जाते हैं। यह गृहादि षड्वर्ग है। षडवर्ग के अन्तर्गत विशेष रूप में हमें यह जानना चाहिए कि सूर्य एवं चन्द्रमा का त्रिशांश नहीं होता है तथा भौमादि पाँच ग्रहों (तारा ग्रहों) की होरा नहीं होती है। आगे हम इसका और विस्तार से अध्ययन करेंगे।

वृहज्जातकम् ग्रन्थ के अनुसार षड्वर्ग –

द्रेष्काणहोरानवभागसंज्ञास्त्रिंशांशक द्वादशसंज्ञिताश्च।
क्षेत्रं च यद्यस्य स तस्य वर्गो होरेति लग्नं भवनस्य चार्द्धम्।।

श्लोकार्थ है कि ग्रहों के 6 वर्ग होते हैं, द्रेष्काण, होरा, नवमांश, त्रिशांश, द्वादशांश और लग्न या गृह। ग्रहों के जो द्रेष्काणादि कहे गये हैं वे उनके वर्ग होते है। यही द्रेष्काणादि षडवर्ग कहे जाते है। इन षडवर्गों में सूर्य-चन्द्र का त्रिशांश नहीं होता तथा भौमादि पंचतारा ग्रहों की होरा नहीं होती। इस तरह ग्रहों की पाँच ही वर्ग होते है। होरा राशि के आधे भाग को कहते है। अर्थात् लग्न के आधे भाग को

कहते है। यदि लघुजातक एवं वृहज्जातकम् दोनों में तुलना करके देखा जाय तो दोनों में एकसमानता है। दोनों ग्रन्थों के ग्रन्थकार एक ही आचार्य वराहमिहिर है। इसीलिए कोई विशेष अन्तर दोनों में दिखलाई नहीं पड़ता।

वृहत्पराशरहोराशास्त्र में कथित षड्वर्ग –

लग्नहोरादृकाणांकभागसूर्यांशका इति।
त्रिशांशकश्च षडवर्गा अत्र विंशोपका: क्रमात्।।
रसनेत्राब्धिपंचाश्विभूमय: सप्तवर्गके।।

आचार्य पराशर ने भी षडवर्ग के अन्तर्गत लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश एवं त्रिशांश को ही षड्वर्ग बतलाया है। विशेषत: इनमें क्रम से 6,2,4,5,2,1 इतने विंशोपक बल होते हैं, ऐसा उनका कथन है। **जातकपारिजात ग्रन्थ के अनुसार षडवर्ग –**

विलग्नहोराद्रेष्काणनवांशद्वादशांशका:।
त्रिशांशकश्च षडवर्ग: शुभकर्मसु शस्यते।।
सप्तांशयुक्त: षडवर्ग: सप्तवर्गोऽभिधीयते।
जातकेषु च सर्वेषु ग्रहाणां बलकारकम्।।

यहाँ ग्रन्थकार आचार्य वैद्यनाथ का कथन है कि लग्न (वह राशि जिसमें ग्रह स्थित हो), होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिशांश इन छ: वर्गों को षड्वर्ग कहते है। समस्त शुभ कर्मों में इन्हें प्रशस्त कहा गया ह। सप्तमांश सहित षड्वर्ग को सप्तवर्ग कहते है। जातक के ग्रहों के बलाबल ज्ञानार्थ इस सप्तवर्ग को आचार्यों द्वारा बतलाया गया है। आइए अब हम षड्वर्ग के अन्तर्गत सर्वप्रथम गृह या लग्न को समझने का प्रयास करते हैं -

1. गृह या लग्न – जन्मांग चक्र में अथवा गृह या लग्न कोष्ठक में वह राशि जिसमें ग्रह स्थित हो उसे गृह या लग्न के नाम से जाना जाता है। इसका स्थान नियत होता है। उदाहरणार्थ –
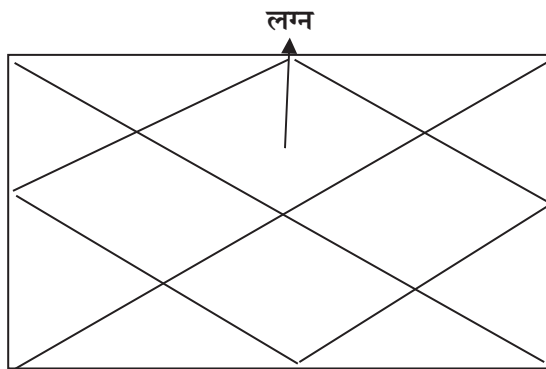
आप उपर के कोष्ठक में देख रह होंगे एक कोष्ठक को संकेत द्वारा लग्न लिखा गया है। वस्तुत: यह स्थान लग्न के निर्धारित की गयी है, जो नीयत है अपरिवर्तनीय है। इस स्थान पर राशियों की संख्या तो परिवर्तन होगा किन्तु यह स्थान लग्न के अतिरिक्त और किसी का नहीं हो सकता है। यह स्थान कुण्डली में सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। सम्पूर्ण होरा या फलित स्कन्ध इसी लग्न पर आधारित होता है। आचार्य भास्कर ने भी कहा है कि – नूनं लग्नबलाश्रितं पुनरयं तत्स्पष्टखेटाश्रयम्।। यहाँ लग्नबल पर जोर देते हुए वह कहते है कि जातक या होरा शास्त्र लग्नबलाश्रित है एवं लग्न जो है वह खेट अर्थात् ग्रह के आश्रित है। अत: गृह या लग्न को ज्योतिष जगत् में अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है। प्रत्येक लग्न के लिए आचार्यों द्वारा 2 घण्टे का काल निर्धारित किया गया है। एक दिन में 12 लग्न होते हैं और प्रत्येक 2-2 घण्टे के अन्तराल पर वह परिवर्तन होते रहता हैं। गृह या लग्न के पश्चात् दूसरा क्रम होरा का आता है। आइए अब होरा को समझते है।

2. होरा - राशि या लग्न के आधे भाग को 'होरा' कहते हैं। विषमराशि में प्रथम सूर्य की 1-15 अंश तक तथा दूसरी चन्द्रमा की 16 से 30 अंश तक होरा होती है। इसी प्रकार सम राशि में प्रथम चन्द्रमा की 1-15 अंश तक और दूसरी सूर्य की 16-30 अंश तक होरा होती है। ऐसा आपको जानना चाहिए। इसमें प्रथम 0-15 अंश तक के स्वामी देवता तथा 16-30 अंश तक के स्वामी पितर को माना गया है।

त्रिंशद्भागात्मकं लग्नं होरा तस्यार्धमुच्यते।
मार्तण्डेन्द्वोरयुजि समभे चन्द्रभान्वोश्च होरे।।

एक राशि में दो होरा पन्द्रह-पन्द्रह अंश की होती है। विषम राशि में प्रथम सूर्य तथा द्वितीय चन्द्रमा की होरा होती है। समराशि में प्रथम चन्द्रमा तथा द्वितीय सूर्य की होरा रहती है।

स्पष्टार्थ चक्र –

राशियाँ	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
1-15 अंश	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र
16-30 अंश	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य	चन्द्र	सूर्य

होराधिपतियों का एक मतान्तर भी प्राप्त होता है। कुछ आचार्यों के मतानुसार प्रथमहोरापति उसी राशि का स्वामी और द्वितीय होरापति उससे ग्यारहवीं राशि का स्वामी होता है। जैसे मेषराशि मे पहला होराधिपति भौम और द्वितीय होराधिपति मेष से ग्यारहवॉ कुम्भ का स्वामी शनि हुआ। इसी प्रकार आगे समझना चाहिए।

मतान्तर स्पष्टार्थ चक्र –

राशियाँ	**मेष**	**वृष**	**मिथुन**	**कर्क**	**सिंह**	**कन्या**	**तुला**	**वृश्चिक**	**धनु**	**मकर**	**कुंभ**	**मीन**
1-15 अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
16-30 अंश	कुम्भ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	कुम्भ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क

विशेष – यह पूर्व में भी बताया जा चुका है कि भौमादि पंचताराग्रहों की होरा नहीं होती है। केवल सूर्य एवं चन्द्र की ही होरा होती है, जैसा कि उपर के चक्र से स्पष्ट है।

उदाहरण के लिए यदि लग्न का मान – ५/२०/२६/२८ राश्यादि है तो यह कन्या राशि है, अत: यह बुध के गृह में हुआ। कन्या सम राशि है अत: सम राशि में यहाँ २० अंश है अत: नियमानुसार सम राशि में 0-15 अंश तक प्रथम चन्द्रमा की होरा होती है और 16-30 अंश तक द्वितीय सूर्य की। अत: यहाँ 20 अंश मान होने के कारण सूर्य की होरा हुई।

3. द्रेष्काण – एक राशि 30 अंश का होता है। द्रेष्काण के अन्तर्गत एक राशि में 10-10 अंशों के तीन भाग होते हैं जिनमें 1 से 10 अंश तक प्रथम, 11 से 20 अंश तक द्वितीय, और 21 से 30 अंश तक तृतीय द्रेष्काण होता है। प्रथम द्रेष्काण में उसी राशि का स्वामी, द्वितीय में उससे पाँचवीं राशि का तथा तृतीय में उससे नौवीं राशि का स्वामी होता है। जैसे मेष में प्रथम मेष का स्वामी, द्वितीय में सिंह का स्वामी और तृतीय द्रेष्काण में नौवीं राशि धनु का स्वामी होता है। अर्थात् 1 से 10 अंश तक स्वराशि का प्रथम द्रेष्काण, 11 से 20 अंश तक उससे पंचम राशि का द्वितीय द्रेष्काण तथा 21 से 30 अंश तक उससे नवम राशि का तृतीय द्रेष्काण होता है।

आचार्य पराशर कृत **वृहत्पराशरहोराशास्त्र** ग्रन्थोक्त द्रेष्काण साधन का मूल श्लोक –

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्ते च षट्त्रिंशदीरिता:।
परिवृत्तित्रयं तेषां मेषादेः क्रमशो भवेत्।।
स्वपंचनवमानां च राशीनां क्रमशश्च ते।
नारदाऽगस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेशाश्चरादिषु।।

स्पष्टार्थ द्रेष्काण चक्र

द्रेष्काण	राशियाँ	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
प्रथम	10 अंश	1	2	3	4	5	6
द्वितीय	20 अंश	5	6	7	8	9	10
तृतीय	30 अंश	9	10	11	12	1	2
द्रेष्काण	राशियाँ	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन

प्रथम	10 अंश	7	8	9	10	11	12
द्वितीय	20 अंश	11	12	1	2	3	4
तृतीय	30 अंश	3	4	5	6	7	8

अब आगे यहाँ द्रेष्काण के सम्बन्ध में अन्य मत को भी जानते हैं।

मतान्तर द्रेष्काण चक्रम

द्रेष्काण	**राशियाँ**	**मेष**	**वृष**	**मिथुन**	**कर्क**	**सिंह**	**कन्या**
प्रथम	10 अंश	1	2	3	4	5	6
द्वितीय	20 अंश	12	1	2	3	4	5
तृतीय	30 अंश	11	12	1	2	3	4
द्रेष्काण	**राशियाँ**	**तुला**	**वृश्चिक**	**धनु**	**मकर**	**कुम्भ**	**मीन**
प्रथम	10 अंश	7	8	9	10	11	12
द्वितीय	20 अंश	6	7	8	9	10	11
तृतीय	30 अंश	5	6	7	8	9	10

उदाहरण के लिए – लग्न का मान यदि ६/८/२५/३० है तो, इसमें प्रथम द्रेष्काण है, क्योंकि इसका अंश 1 से 10 के बीच का ८ है। और हम जानते है कि प्रथम द्रेष्काण स्वराशि का होता है। अत: यहॉं लग्नानुसार तुला का मान होने से तुला का द्रेष्काण हुआ जिसका अधिपति शुक्र होता है।

विशेष – प्रथम 1-10 अंश तक के द्रेष्काण का स्वामी नारद, द्वितीय 11-20 अंश तक के द्रेष्काण के स्वामी अगस्त तथा तृतीय 21-30 अंश तक के द्रेष्काण के स्वामी दुर्वासा ऋषि को माना गया है। अथवा आप इस प्रकार भी समझ सकते है कि चर, स्थिर और द्विस्वभाव राशियों के द्रेष्काणों के स्वामी क्रमश: नारद, अगस्त एवं दुर्वासा कहे गये हैं।

बोध प्रश्न – 1

1. षड् का शाब्दिक अर्थ है -

   क. 5 ख. 6 ग. 7 घ. 8

2. गृह का दूसरा नाम है –

   क. लग्न ख. होरा ग. द्रेष्काण घ. नवमांश

3. चर संज्ञक होता है -

   क. 1,4,7,10 ख. 2,5,8,11 ग. 3,6,9,12 घ. 3,7,8,11

4. विषम राशि में 0 से 15 अंश तक किसकी होरा होती है।

क. सूर्य की ख. चन्द्रमा की ग. मंगल की घ. कोई नहीं

5. सम राशि में 15-30 अंश तक किसकी होरा होती है।

क. सूर्य की ख. चन्द्र की ग. बुध की घ. गुरु की

6. 1-10 अंश तक प्रथम द्रेष्काण किसकी होती है।

क. पंचम राशि की ख. स्वराशि की ग. नवम राशि की घ. कोई नहीं

4. नवमांश – राशि के नवें भाग को नवमांश कहते हैं। हम जानते हैं कि एक राशि में 30 अंश होते हैं इस प्रकार एक नवमांश में 30/9 = 3/20 अर्थात् 3 अंश 20 कला का एक नवमांश होता है। आचार्य वैद्यनाथ जी ने अपने ग्रन्थ जातकपारिजात में नवमांश और उनके स्वामी के बारे में बतलाते हुए कहा है कि –

मूल श्लोक - **चापाजसिंहराशीनां नवांशास्तुम्बुरादयः।**
वृषकन्यामृगाणां च मृगाद्या नव कीर्तिताः।।
नृयुक् तुलाघटानां च तुलाद्याश्चांशका नव
कर्किवृश्चिकमीनानां कर्कटाद्या नवांशकाः।।

अर्थात् धनु, मेष और सिंह राशियों के नव नवमांश मेषादि 9 राशियॉं, वृष, कन्या और मकर राशियों के नव नवमांश मकरादि 9 राशियाँ, मिथुन, तुला एवं कुम्भ राशि के नव नवमांश तुलादि 9 राशियाँ तथा कर्क, वृश्चिक और मीन राशियों के नव नवमांश कर्कादि नव राशियाँ होती है। सारावली ग्रन्थ में नवमांश राशियों के सम्बन्ध में ग्रन्थकर्ता कल्याणवर्मा के अनुसार ''नवभागानामजमृगतुलकर्कटाद्याश्च...0'' कहा है अर्थात् मेषादि राशियों में क्रम से मेष, मकर, तुला और कर्क- ये प्रथम नवांश राशियाँ है। इनसे प्रारम्भ होकर क्रमश: 9 राशियों का नवमांश होता है। नवमांश का ज्ञान सूक्ष्म फलादेश के लिए तथा कलत्र सुख के विचारार्थ परमावश्यक बतलाया गया है।

नवमांश बोधक स्पष्टार्थ चक्रम्

नवमांश (अंशादि मान)	**मेष, सिंह, धनु**	**वृष, कन्या, मकर**	**मिथुन, तुला, कुम्भ**	**कर्क, वृश्चिक, मीन**	**स्वामी**
0° – 3°।20	मेष	मकर	तुला	कर्क	देवता
3°।20 – 6° ।40	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह	मनुष्य
6° ।40 –10° ।00	मिथुन	मीन	धनु	कन्या	राक्षस
10°।00–13°।20	कर्क	मेष	मकर	तुला	देवता

13°।20–16°।40	सिंह	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	मनुष्य
16°।40–20°।00	कन्या	मिथुन	मीन	धनु	राक्षस
20°।00–23°।20	तुला	कर्क	मेष	मकर	देवता
23°।20–26°।40	वृश्चिक	सिंह	वृष	कुम्भ	मनुष्य
26°।40–30°।00	धनु	कन्या	मिथुन	मीन	राक्षस

उदाहरण के लिए यदि लग्न का मान ८।२५।३०।२० है तो यहाँ ९ वीं राशि धनु का यह मान है। अब धनु में यहाँ २५ अंश का मान है। तो चक्र में आप धनु में २५ अंश जहाँ है वह वृश्चिक का नवमांश है। अत: यह वृश्चिक के नवमांश में हुआ। आशा है आप नवमांश को समझ गये होंगे।

5. द्वादशांश – षडवर्ग के अन्तर्गत पाँचवाँ क्रम द्वादशांश का है। स्वराशि से आरम्भ कर क्रमश: द्वादश राशियों के द्वादशांश होते है। १ राशि में ३० अंश होता है अत: ३०°/१२ = २°।३० अर्थात् २ अंश ३० कला का एक द्वादशांश होता है। एक राशि में इतने ही मान के १२ भाग या द्वादशांश होते हैं। राशि के प्रथम द्वादशांश पर उसी राशि का अधिकार होता है। द्वितीय द्वादशांश पर उस राशि से दूसरी राशि का, तृतीय द्वादशांश पर उस राशि से तृतीय राशि का, दसवें द्वादशांश पर उस राशि से दसवीं राशि का अधिकार होता है तथा उन द्वादशांश राशियों के स्वामी तत्तद् द्वादशांशों के स्वामी होते हैं। जैसे मेष राशि में प्रथम द्वादशांश मेष राशि और उसका स्वामी मंगल प्रथम द्वादशांशेश, दूसरा द्वादशांशेश वृष राशि और उसका स्वामी शुक्र द्वितीय द्वादशांश का स्वामी होगा।

द्वादशांश स्पष्टबोधक चक्र

अंशादि मान	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
0°-२°।३०	१ मं.	२ शु	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु	८ मं.	९ गु.	१०श	११श	१२गु.
२।३०-५।००	२ शु.	३ बु	४ चं.	५सू	६ बु.	७ शु	८ मं.	९ गु.	१०श	११श	१२गु	१ मं.
५।००-७।३०	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१० श.	११श	१२गु	१ मं.	२ शु
७।३०-१०।००	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु	८ मं.	९ गु.	१०श	११श	१२गु	१मं	२शु	३बु
१०।००-१२।३०	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१०श	११श	१२गु	१मं.	२शु.	३बु.	४चं.
१२।३०-१५।००	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१० श	११श	१२गु	१मं	२शु	३बु	४चं.	५सू.
१५।००-१७।३०	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१०श	११ श	१२गु.	१मं.	२शु	३बु	४चं.	५सू.	६बु.
१७।३०-२०।००	८ मं.	९ गु.	१०श	११श	१२ गु	१ मं	२शु.	३बु.	४चं.	५सू.	६बु.	७शु.
२०।००-२२।३०	९ गु.	१०श	११श	१२गु	१ मं.	२ शु	३बु.	४चं.	५सू.	६बु.	७शु	८मं
२२।३०-२५-००	१०श	११श	१२गु	१ मं.	२ शु.	३ बु	४चं.	५सू.	६बु.	७शु.	८मं.	९गु.
२५।००-२७।३०	११श	१२गु	१ मं	२ शु.	३ बु	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु	८ मं.	९ गु.	१०श
२७।३०-३०°।००	१२गु	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१०श	११श

द्वादशांशेशों के सम्बन्ध में पराशर का कथन इससे भिन्न है। उनके अनुसार बारह द्वादशांशेशों के स्वामी क्रमश: गणेश, अश्विनीकुमार, यम और अहि अर्थात् सर्प होते हैं। पंचम दशमांश से पुन: गणेशादि क्रम से द्वादशांशेश होते है।

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्राद्विनिर्दिशेत्।
तेषामधीशा: क्रमशो गणेशाश्वियमाह्वय:।।

जातकपारिजात ग्रन्थकर्ता के अनुसार पराशर जी के उपरोक्त इस मत को अन्य विद्वानों की स्वीकृति प्राप्त नहीं हो सकी।

6. त्रिशांश – षडवर्ग के अन्तर्गत छठा और अन्तिम त्रिशांश होता है। एक त्रिशांश ३०°/३०° = १ अंश के बराबर होता है।

मूल श्लोक –

आरार्किजीवशशिनन्दनशुक्रभागा
स्त्वोजे समीरपवनाष्टकशैलबाणा:।
युग्मे समीरगिरिपन्नगपंचबाणा:।
त्रिंशांशकास्सितविदार्यशनिक्षमाजा:।।

अर्थात् विषम राशि में प्रथम समीर ५ अंश के स्वामी आर= भौम, अगले पवन- 5 अंश के स्वामी अर्कि = शनि, अगले अष्टक -8 अंश के जीव =वृहस्पति, अगले शैल-7 अंश के स्वामी बुध तथा अन्तिम बाण-5 अंश के स्वामी शुक्र होते हैं। सम राशि में प्रथम समीर 5 अंश के स्वामी सित = शुक्र, अगले गिरि-7 अंश के स्वामी विद् = बुध, अगले पन्नग- 8 अंश के स्वामी आर्य = वृहस्पति, अगले पंच-5 अंश के स्वामी शनि और अन्तिम बाण-5 अंश के स्वामी क्षमाजा = भौम होते हैं।
विषम राशि में त्रिशांश के 30 अंश से 5, 5, 8,7,5 के पाँच खण्ड बनाये गये और इन पाँच खण्डों का स्वामित्व क्रमश: भौम, शनि, बृहस्पति, बुध और शुक्र को दिया गया। सम राशि में यह क्रम विपरीत हो जाता है। अर्थात् सम राशि में 5 अंश के स्वामी शुक्र, 5-12 अंश तक के बुध, 12 से 20 अंश तक के स्वामी वृहस्पति, 20-25 अंश के स्वामी शनि, और 25 से 30 अंश तक के स्वामी भौम होते है।
वराहमिहिर कृत लघुजातक में भी त्रिशांशो के स्वामी इस प्रकार कहा गया है –

कुजयमजीवज्ञसिता: पंचेन्द्रियवसुमुनीन्द्रियांशानाम्।
विषमेषु समर्क्षेषूत्क्रमेण त्रिंशांशपा: कल्प्या:।।

विषम 1,3,5,7,9,11 राशियों में 5,5,8,7,5 अंशों के क्रमश: भौम, शनि, गुरु, बुध एवं शुक्र त्रिशांशाधिपति होते हैं। तथा सम 2,4,6,8,10,12 राशियों में 5,7,8,5,5 अंशों के क्रमश: शुक्र,बुध,गुरु, शनि एवं भौम त्रिशांशाधिपति होते हैं।

विषम त्रिशांशाधिपति चक्र

अंश	मे.१	मि३	सिं५	तु७	ध.९	कु.११
५	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.
५	श.	श.	श.	श.	श.	श.
८	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.
७	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.
५	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.

सम त्रिशांशाधिपति चक्र

अंश	वृ.२	क.४	क.६	वृ८	म१०	मी१२
५	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.
७	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.
८	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.
५	श.	श.	श.	श.	श.	श.
५	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.

विशेष – पराशर जी के अनुसार विषम राशि के पाँच खण्डों के अधपिति वह्नि, वायु, इन्द्र, धनद एवं जलद है तथा सम राशि के पाँच खण्डों के अधिपति जलद, धनद, इन्द्र, वायु और वह्नि है।

सूर्य और चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य ग्रह दो-दो राशियों के स्वामी है जिनमें एक सम और दूसरी विषम राशि होती है। तब इन दो राशियों के स्वामी जिस अंशखण्ड के स्वामी होंगे उसकी त्रिंशांश राशि कौन होगी? सम या विषम? जैसे यदि लग्नमान राश्यादि ६।१५।२२।३७ तो इसका त्रिंशांशेश वृहस्पति हुआ जिसकी धनु और मीन राशियाँ है। इस स्थिति में लग्न की त्रिंशांश राशि धनु होगी न की मीन जो सम राशि है। विषम राशि में विषम राशि और समराशि में समराशि को त्रिंशांश राशि के रूप में ग्रहण करना चाहिए। सूर्य के राश्यादि भोग यदि ६।२४।८।२० हो तो बुध त्रिंशांशेश हुआ। बुध की राशि मिथुन विषम और कन्या सम राशि है। यत: सूर्य विषमराशिगत है इसीलिए मिथुन ही सूर्य की त्रिशांश राशि होगी। षडवर्ग ज्ञान के पश्चात् आइए अब सप्तवर्ग एवं दशवर्ग का ज्ञान करते हैं।

सप्तवर्ग – सप्तवर्ग के अन्तर्गत जैसा कि नाम से स्पष्ट है इसमें सात वर्ग होते है। पूर्व के षडवर्ग में एक सप्तमांश जोड़ देने से सप्तवर्ग पूरा हो जाता है। अत: हमने षडवर्ग का अध्ययन पहले कर लिया है अब यहाँ सप्तमांश का अध्ययन करेंगे।

सप्तमांश – राशि के सातवें भाग अर्थात् ३०/७ = ४°।१७।८.५७ के बराबर एक सप्तमांश का मान होता है।

ओजे नगांशा: निजराशित: स्यु: युग्मे ततो द्यूनगृहाद्भवन्ति।

३० अंश में ७ का भाग देने से अंशादि ४।१७।८ फल प्राप्त होता है। अत: ४।१७ का एक-एक भाग मानकर सात खण्ड किये उनमें विषम राशि में प्रथमादि खण्ड अपनी राशि से प्रारंभ होता है। और समराशि में प्रथमादि खण्ड अपनी राशि से सप्तम राशि से प्रारम्भ होता है।

कल्पना किया कि यदि लग्न ६।५।३७।५९ है। तुला के दूसरे सप्तमांश में आता है। अत: लग्न का सप्तमांश वृश्चिक हुआ। सूर्य का मान यदि ३।७।१९।३५ है। यह कर्क के दूसरे सप्तमांश में है। अत: सूर्य का सप्तमांश (कर्क से सप्तम मकर राशि और इससे दूसरा सप्तमांश) ११ राशि हुआ। चन्द्र १।२९।२५।४१ है। अत: चन्द्र का सप्तमांश (वृष से सप्तम वृश्चिक राशि और उससे सातवाँ सप्तमांश) वृषभ का अन्तिम वृष ही हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी जान लेना चाहिए।

सप्तमांश और उनके स्वामी –

लग्नादिसप्तमांशेशास्त्वोजे राशौ यथाक्रमम्।
युग्मे लग्ने स्वरांशानामधिपा: सप्तमादय:।।

अर्थात् विषम राशि में सप्तमांश उसी राशि से और समराशि में उस राशि से सातवीं राशि से प्रारम्भ होकर राशिक्रम से सप्तमांश राशियाँ होती हैं। इनके स्वामी सप्तमांशपति होते हैं।

सप्तमांश अर्थात् राशि का सातवाँ भाग ३०/७ = ४।१७।८। यह राशि के एक सप्तमांश का मान है। एक राशि में इतने ही मान के सात खण्ड होंगे। विषम राशि का प्रथम खण्ड उसी राशि का दूसरा खण्ड उससे अगली राशि का, तीसरा खण्ड उस राशि से तीसरी राशि का आदि क्रम से प्रत्येक खण्ड या सप्तमांश पर राशियों का अधिकार होता है तथा उन राशियों के स्वामी उन-उन खण्डों या सप्तमांशों के स्वामी होंगे। जैसे मेष विषम राशि है, अत: इसका प्रथम सप्तमांश ० अंश से ४।१७।८ तक मेष राशि का होगा और उसका स्वामी मंगल होगा। दूसरा सप्तमांश ४।१७।८ से ८।३४।१७ तक वृष राशि का होगा और उसके स्वामी शुक्र होंगे। इसी क्रम से आगे जानना चाहिए।

विषम राशि में पहला सप्तमांश उस राशि से सातवीं राशि का होता है। दूसरा सप्तमांश उससे आठवीं राशि का होगा और उस आठवीं राशि के स्वामी ही इस द्वितीय सप्तमांश के स्वामी होंगे। तीसरा सप्तमांश उस राशि से नवीं राशि का होगा तथा इस नवीं राशि के स्वामी ही तृतीय सप्तमांश के स्वामी होंगे। जैसे वृष राशि समराशि है। इसका प्रथम सप्तमांश वृष से सातवीं राशि वृश्चिक का होगा और उसके स्वामी मंगल ही प्रथम सप्तमांशेश होंगे। द्वितीय सप्तमांश राशि से आठवीं राशि धनु राशि का होगा और धनु राशि के स्वामी वृहस्पति ही इस तृतीय सप्तमांश के स्वामी होंगे।

जातक की प्रकृति, स्वभाव और चरित्र आदि के विचार में ये सप्तमांश अत्यन्त उपयोगी होते हैं। क्रूर राशि के सप्तमांश में उत्पन्न जातक उग्र स्वभाव का होगा और सौम्य राशि के सप्तमांश में उत्पन्न

होने वाला जातक सौम्य प्रकृति का होगा।

सप्तमांश चक्र

राशि		मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृ.	ध.	म.	कु.	मीन
४°।१७।८।५७	राशि स्वामी	१ मं	८ मं.	३ बु	१०श	५ सू	१२गु	७शु	२शु	९गु	४चं	११श	६बु
८।३४।१७।१४	..	२ शु.	९ गु.	४ चं	११श	६ बु	१मं	८ मं	३बु	१०श	५सू	१२गु	७शु
१२।५१।२५।७	..	३ बु.	१० श.	५ सू	१२गु	७ शु	२शु	९ गु	४चं	११श	६बु	१मं	८मं
१७।८।३४।२९	..	४ चं.	११श.	६ बु	१ मं	८ मं	३बु	१०श	५सू	१२गु	७शु	२शु	९गु
२१।२५।४२।८	..	५ सू.	१२ गु.	७ शु	२ शु	९ गु	४चं	११श	६बु	१मं	८मं	३बु	१०श
२५।४२।५१।४	..	६ बु.	१ मं.	८ मं	३ बु	१०श	५सू	१२गु	७शु	२शु	९गु	४चं	११श
३०°।०।०	..	७ शु.	२ शु.	९ गु	४ चं	११श	६बु	१ मं	८मं	३बु	१०श	५सू	१२गु

विषम राशियों के सप्तमांशाधिपति क्रमशः – 1. क्षार, 2. क्षीर, 3. दधि, 4. आज्य, 5. इक्षुरस, 6. मद्य, और 7. शुद्धजल होते हैं। सम राशियों के सप्तमांशाधिपति क्रमशः 1. शुद्ध जल, 2. मद्य, 3. इक्षुरस, 4. आज्य, 5. दधि, 6. क्षीर, और 7. क्षार होते हैं।

1.4 दशवर्ग विवेचन –

सप्तक वर्ग में दशांश, षोडशांश तथा षष्टयंश जोड़ने से दशवर्ग बनते हैं।

दशमांश -

लग्नादिदशमांशेशास्त्वोजे युग्मे शुभादिका:।

द्वादशांशाधिपतयस्तत्तद्राशिवशानुगा:।।

अर्थात् विषम राशियों में उसी राशि से तथा सम राशियों में उससे नवीं राशि से दशमांश होते है तथा उसी राशि से प्रारंभ होकर राशिक्रम से द्वादशांश होते हैं।

राशि का दशम भाग ३०/१० =३ अंश का एक दशमांश होता है। स्पष्ट है कि एक राशि में ३ अंशों के दस दशमांश होंगे। विषम राशि में प्रथम दशमांश वही राशि, दूसरा दशमांश उस राशि से दूसरी राशि, तीसरा दशमांश उससे तीसरी राशि, इसी क्रम से अन्तिम दशम दशमांश उस राशि से दसवीं राशि होगी। इस प्रकार मेष राशि में प्रथम दशमांश मेष स्वयं और उसका स्वामी मंगल प्रथम दशमांशेश हुआ। दूसरा दशमांशेश वृष राशि और उसका स्वामी शुक्र द्वितीय दशमांशेश होगा। इसी प्रकार दशम दशमांश मकर राशि और उसका स्वामी शनि दशम दशमांशेश होगा।

इसी प्रकार सम राशियों में प्रथम दशमांश उस राशि से दशम राशि होती है और उसका स्वामी प्रथम दशमांशेश होता है। दूसरा दशमांश उससे दूसरी राशि और उसका स्वामी द्वितीय दशमांशपति होता है। इसी क्रम से आगे समझना चाहिए।

उदाहरण के लिए यदि सूर्य 3|7|19|35 है तो यह कर्क के तीसरे वृष के दशांश में होगा।

षोडशांश –

चर राशि में मेष से, स्थिर राशि में सिंह से तथा द्विस्वभाव राशि में धनु से षोडशांश का प्रारम्भ होता है। एक षोडशांश 1 अंश 52 कला 16 विकला का रहता है। यदि सूर्य 3|7|19|35 है तो यह कर्क के षोडशांश में है।

षष्ट्यंश – 30 कला का एक षष्ट्यंश रहता है। अत: ग्रह की राशि को छोड़कर अंश को द्विगुणित करके कला में 30 का भाग देकर लब्धि को उसमें मिला दें। यह लब्धि संख्या गत षष्टयंश होगी। उसमें एक मिलाने से वर्तमान षष्ट्यंश होता है। षष्टयंश के 60 देवता पठित है। विषम राशि के देवता के क्रम को उलट देने से सम राशि के षष्ट्यंश के देवता होते हैं।

अभीष्ट षष्टयंश की राशि जानने के लिए 12 से भाग देकर शेष राशि अभीष्ट षष्टयंश की होगी। राशि गणना का प्रारंभ स्वराशि से होता है।

दशमांश चक्र –

राशियाँ / दशमांश	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मीन
०-३	१	१०	३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८
४-६	२	११	४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९
७-९	३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०
९-१२	४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११
१३-१५	५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२
१६-१८	६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१
१९-२१	७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२
२२-२४	८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३
२५-२७	९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	७	४
२८-३०	१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	८	५

अब यहाँ दशवर्ग से सम्बन्धित जानकारी भी पूर्ण हुई। इस प्रकार आप सभी ने इस इकाई में षड्वर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग से सम्बन्धित विषयों को जान लिया है।

बोध प्रश्न – 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें –

1. एक नवमांश का मान .... होता है।
2. षड्वर्ग में सप्तमांश जोड़ देने से .... होता है।
3. षष्टि का शाब्दिक अर्थ .... है।
4. 30 कला का एक .... होता है।
5. 2 अंश 30 कला मान .... का होता है।
6. एक त्रिशांश का मान .... है।

1.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि षड्वर्ग का सम्बन्ध होरा या फलित ज्योतिष से ही नहीं, अपितु ज्योतिषशास्त्र के प्रत्येक स्कन्धों से है। प्रत्येक स्कन्धों में इसका विवेचन मिलता है। इसके ज्ञान के बिना हम कुण्डली का सम्यक् विश्लेषण नहीं कर सकते हैं। राशियों के परिज्ञान के साथ-साथ ग्रहों के बलाबल आदि जानकारी हेतु आचार्यों द्वारा इनका प्रतिपादन किया गया है। अत: आइए हम सब उसका विस्तार से अध्ययन करते है। सर्वप्रथम षड्वर्ग क्या है? इसका विचार करते है तो 'षड्' का शाब्दिक अर्थ होता है – 6 एवं वर्ग को कोष्ठक के नाम से भी जानते है। इस प्रकार जहाँ 6 कोष्ठक या 6 प्रकार के वर्गों (गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश एवं त्रिशांश) का उल्लेख हमें मिलता है सामान्यतया उसे हम 'षड्वर्ग' कहते है। ग्रहों की षडवर्ग संज्ञा होती है। राशियों में वर्ग परिज्ञान हेतु इनका निर्माण आचार्यों द्वारा किया गया है। फलादेश कर्तव्य में षडवर्ग के ज्ञान से हमें सूक्ष्म दृष्टि प्राप्त होती है। षड्वर्ग में सप्तमांश जोड़ देने से सप्तवर्ग एवं उनमें दशमांश, षष्टयंश तथा षोडशांश जोड़ने से हमें दशवर्ग का ज्ञान हो जाता है।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

षडवर्ग – षड्वर्ग के अन्तर्गत छ: वर्ग या कोष्ठक होते है। गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिशांश।

गृह – लग्न का दूसरा नाम है।

होरा – एक होरा 15 अंश की होती है। विषम राशियों में क्रमश: 0-15 अंश तक सूर्य की और 15-30 अंश तक चन्द्रमा की होरा होती है। सम राशि में इसके विपरीत होता है।

द्रेष्काण – 10 अंश का एक द्रेष्काण होता है।

नवमांश – 3 अंश 20 कला का एक नवमांश होता है। राशि के नवें भाग को नवमांश कहते हैं।

द्वादशांश – राशि का 12 वॉं अंश द्वादशांश होता है। 2 अंश 30 कला इसका मान होता है।

त्रिशांश – एक त्रिशांश 1 अंश के बराबर होता है।

1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्नों के उत्तर – 1

1. ख 2. क 3. क 4. क 5. क 6. ख

बोध प्रश्नों के उत्तर – 2

1. 3 अंश 20 कला 2. सप्तवर्ग 3. 60 4. षष्टयंश 5. द्वादशांश 6. 1 अंश

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जातकपारिजात- मूल लेखक – आचार्य वैद्यनाथ, टिका – हरिशंकर पाठक।

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – मूल लेखक – महर्षि पराशर, टिका- पं. पद्मनाभ शर्मा।

लघुजातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. कमलाकान्त पाण्डेय।

वृहज्जातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. सत्येन्द्र मिश्र।

सारावली – मूल लेखक – कल्याणवर्मा, टिका – डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. षड्वर्ग का विस्तृत विवेचन कीजिये।
2. सप्तवर्ग से क्या तात्पर्य है? वर्णन कीजिये।
3. दशवर्ग का उल्लेख कीजिये।
4. षड्वर्ग के गणितीय पक्ष का उल्लेख कीजिये।
5. फलादेश में षडवर्ग, सप्तवर्ग तथा दशवर्ग की क्या उपयोगिता है।

इकाई -2 षोडश वर्ग विवेचन

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप सभी का स्वागत है। इस इकाई का शीर्षक है- षोडश वर्ग विवेचन। इसके पूर्व की इकाई में आपने षड्वर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग का अध्ययन कर लिया है। अब आप इस इकाई में षोडश वर्ग का अध्ययन करने जा रहे हैं।

षोडश का शाब्दिक अर्थ है – 16। यह संख्यावाची शब्द है। पूर्व के दशवर्ग के अतिरिक्त 6 वर्ग और इस षोडश वर्ग में निहित है।

आइए हम सभी षोडश वर्ग से सम्बन्धित सभी विषयो का इस इकाई में विस्तृत अध्ययन करते हैं। फलादेश कर्तव्य में तथा जन्मकुण्डली के सूक्ष्म विश्लेषण में इन वर्गों का विशेष योगदान है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- षोडश वर्ग को समझ जायेंगे।
- षोडश वर्ग के अन्तर्गत आने वाले सभी वर्गों का ज्ञान करा सकेंगे।
- षोडश वर्ग का साधन कैस करते हैं बता सकेंगे।
- षोडश वर्ग से भली- भॉति परिचित हो जायेंगे।

2.3 षोडशवर्ग परिचय

'षोडश वर्ग' के बारे में जानने से पूर्व आप सभी को षोडश वर्ग का शाब्दिक अर्थ समझ लेना चाहिए। तो सर्वप्रथम 'षोडश' संस्कृत का शब्द है जिसका हिन्दी में अर्थ होता है – 16। यह संख्यावाची शब्द है और वर्ग शब्द से आप सभी परिचित हो ही चुके है। इस प्रकार 16 वर्ग या खाने अथवा कोष्ठक से सम्बन्धित को 'षोडश वर्ग' के नाम से जाना जाता है।

षोडश वर्ग के अन्तर्गत षड्वर्ग (गृह या लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश) सप्तमांश, दशमांश, षोडशांश, क्षेत्रांश, विशांश, चतुर्विशांश, भांश, खवेदांश, अक्षवेदांश और षष्टयंश आदि होते हैं।

षोडशवर्ग से विचारणीय विषय – आचार्य पराशर प्रणीत वृहत्पराशरहोराशास्त्र में –

मूल श्लोक-

अथ षोडशवर्गेषु विवेकं च वदाम्यहम्।
लग्ने देहस्य विज्ञानं होरायां सम्पदादिकम्।।
द्रेष्काणे भ्रातृजं सौख्यं तुर्यांशे भाग्यचिन्तनम्।

पुत्रपौत्रादिकानां वै चिन्तनं सप्तमांशके।।
नवमांशे कलत्राणां दशमांशे महत्फलम्।
द्वादशांशे तथा पित्रोश्चिन्तनं षोडशांशके।।
सुखाऽसुखस्य विज्ञानं वाहनानां तथैव च।
उपासनाया विज्ञानं साध्यं विंशतिभागके।।
विद्याया वेदबाह्वंशे भांशे चैव बलाऽबलम्।
त्रिंशांशके रिष्टफलं खवेदांशे शुभाऽशुभम्।।
अक्षवेदांशके चैव षष्टयंशेऽखिलमीक्षयेत्।
यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः क्रूरषष्टयंशकाधिपः।।
तत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च गर्गादीनां वचो यथा।
इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिताः।

इस प्रकार से आचार्य ने इस श्लोक में षोडश वर्ग से विचारणीय विषयों को बतलाते हुए कहा है कि गृह या लग्न की राशि से शरीर सम्बन्धि विचार, नवमांश से स्त्री, दशमांश से आकस्मिक लाभ, राज्य धनादि उत्कृष्ट लाभ, द्वादशांश से माता-पिता सम्बन्धी विचार, षोडशांश से वाहन सम्बन्धी सुख-दु:ख, विंशांश से उपासना, ज्ञान सम्बन्धी विचार, चतुर्विंशांश से विद्या, भांश (सप्तविंशांश) से बलाबल, त्रिशांश से अरिष्ट फल सम्बन्धी विचार, खवेदांश से शुभाशुभ का विचार, अक्षवेदांश और षष्टयंश से सभी क्षेत्रों में, सभी वस्तुओं का शुभाशुभ फल बताना चाहिए। षष्टयंशपति क्रुर ग्रह होकर जिस भाव में बैठा हो, उस भाव का नाश हो जाता है और षोडशांशाधिप शुभ ग्रह होकर जिस भाव में स्थित हो, उस भाव की वृद्धि होती है।

षोडश वर्ग से विचारणीय विषय का स्पष्टार्थ चक्र

षोडश वर्ग नाम	गृह या लग्न	होरा	द्रेष्काण	नवमांश	द्वादशांश	सप्तमांश	दशमांश	षोडशांश	विंशांश	चतुर्विंशांश	भांश	त्रिशांश	खवेदांश	अक्षवेदांश	षष्टयंश	क्षेत्रांश
विचारणीय विषय	शरीर	सम्पत्ति	भ्रातृ सुख	स्त्री	माता-पिता	सन्तान	धन लाभ	वाहन	उपासना/ ज्ञान	विद्या	बलाबल	अरिष्ट फल	शुभाशुभ	समस्त क्षेत्र	समस्त क्षेत्र	सुख

आपने चूँकि पूर्व के अध्याय में षडवर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग का अध्ययन कर लिया है। अत: इनके अतिरिक्त जो वर्ग शेष रह गये है उनका इस अध्याय में यहाँ विवेचन करता हूँ।

सर्वप्रथम यहाँ **चतुर्थांश साधन** कहते हैं –

स्वर्क्षादिकेन्द्रपतयस्तुर्यांशेशा: क्रियादिषु।
सनकश्च सनन्दश्च कुमारश्च सनातन:।।

मेषादि राशियों के चतुर्थांश केन्द्र १,४,७,१० के अधिपति होते हैं। प्रथम चतुर्थांश उसी राशि का, द्वितीय चतुर्थांश उससे चौथी राशि का, तृतीय चतुर्थांश उससे सप्तम राशि का और चतुर्थ चतुर्थांश उससे दशम राशि का होता है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चतुर्थांशों के स्वामी क्रमश: सनक, सनन्दन, कुमार और सनातन कहे गये हैं।

चतुर्थांश चक्र –

स्वामी	**मे.**	**वृ.**	**मि.**	**क.**	**सिं.**	**क.**	**तु.**	**वृ.**	**ध.**	**म.**	**कु.**	**मी**	**अंश**
सनक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	७°।३०
सनन्दन	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१५।०
कुमार	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२२।३०
सनातन	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	३०।०

उदाहरण के लिए माना कि यदि लग्न का मान – ६।२०।१८।२५ है। यहाँ तुला का सप्तम राशि का चतुर्थांश हुआ। अत: तुला से सप्तम राशि मेष का चतुर्थांश हुआ और उसका अधिपति मंगल हुआ।

विंशांश साधन –

अथ विंशतिभागनामधिपा ब्रह्मणोदिता:।
क्रियाच्चरे स्थिरे चापान् मृगेन्द्राद् द्विस्वभावके।।
काली गौरी जया लक्ष्मीर्विजया विमला समी।
तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी।।
प्रत्यंगिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया।
त्रिपुरा सुमुखी चेति विषमे परिचिन्तयेत्।।
समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी।

धूमावमी च मातंगी बाला भद्राऽरुणानला।।
पिंगला छुच्छुका घोरा वाराही वैष्णवी सिता।
भुवनेशी भैरवी च मंगला ह्यपराजिता।।

श्लोकार्थ है कि चर राशियों में मेष से स्थिर राशियों में धनु से और द्विस्वभाव राशियों में सिंह से आरंभ करके क्रम से विंशांश होते हैं। उनके स्वामी विषम राशियों में क्रम से काली ,गोरी ,जया ,लक्ष्मी ,विजया, विमला, सती, तारा ,ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी, प्रत्यंगिरा, शचि, रौद्री, भवानी वरदा, जया, त्रिफरा और सुमुखी होती हैं। सम राशियों में दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाचिनी, धूमावती, मातंगी, बाला, भद्रा, अरुणा, अनला, पिंगला, छुच्छुका, धोरा, वाराही, वैष्णवी सीता महेश्वरी भैरवी मंगला और अपराजिता होती हैं। उदाहरण जैसे लग्न 3।25।9।45 कर्क चर राशि में है, अतः मेष से प्रारंभ कर 18 वे खंड में रहने से कन्या का विंशाश हुआ और सम राशि कर्क है, अतः भैरवी स्वामिनी हुई, कन्या का स्वामी बुध है।

स्पष्टार्थ विंशांश चक्र -

सं.	वि.स्वा	अशादि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु	मी.	सम. स्वा.
1.	काली	1/30	1	9	5	1	9	5	1	9	5	1	9	5	दया
2.	गौरी	3/0	2	10	6	2	10	6	2	10	6	2	10	6	मेधा
3.	जया	4/30	3	11	7	3	11	7	3	11	7	3	11	7	दि.शी
4.	लक्ष्मी	6/0	4	12	8	4	12	8	4	12	8	4	12	8	पिशा
5.	विजय	7/30	5	1	9	5	1	9	5	1	9	5	1	9	घूमा
6.	विमला	9/30	6	2	10	6	2	10	6	2	10	6	2	10	मतंगी
7.	स्ती	10/30	7	3	11	7	3	11	7	3	11	7	3	11	बाला
8.	तरा	12/00	8	4	12	8	4	12	8	4	12	8	4	12	भद्रा
9.	ज्वा.मु	13/30	9	5	1	9	5	1	9	5	1	9	5	1	अरूणा
10.	श्वेता	15/00	10	6	2	10	6	2	10	6	2	10	6	2	अनला
11.	ललिता	16/30	11	7	3	11	7	3	11	7	3	11	7	3	पिंगला
12.	बगलामुखी	18/00	12	8	4	12	8	4	12	8	4	12	8	4	छुच्छुका
13.	प. गिरा	19/30	1	9	5	1	9	5	1	9	5	1	9	5	धोरा
14.	शची	21/0	2	10	6	2	10	6	2	10	6	2	10	6	वाराही
15.	रैद्री	22/30	3	11	7	3	11	7	3	11	7	3	11	7	वैष्णवी
16.	भवानी	24/00	4	12	8	4	12	8	4	12	8	4	12	8	सिता
17.	व्रदा	25/30	5	1	9	5	1	9	5	1	9	5	1	9	भुवनेश्वरी

18.	जया	27 / 00	6	2	10	6	2	10	6	2	10	6	2	10	भैखी
19.	त्रिपुरा	28 / 30	7	3	11	7	3	11	7	3	11	7	3	11	मंगला
20.	सुमुखी	30 / 00	8	4	12	8	4	12	8	4	12	8	4	12	अपराजिता

भांश (सप्तविंशांश) साधन -

भांशाधिपाः क्रमादस्त्रधमवह्निपितामहाः,
चन्द्रेशादिति नीवाहिपितरो भगसंहिताः।
अर्यमार्कत्वष्टमरुच्छक्राग्निमित्रावासवाः,
निर्सृत्युदकविश्वेऽजगोविन्दो वसवोऽम्बुपः।
ततोऽजपाअहिर्बुधन्यः पूजा चैव प्रकीर्तिताः,
नक्षत्रोशास्तु भांशेशा मेषादि चरभक्रमात्।।

मेषादि राशियों में चरसंज्ञक राशियों से सप्तविंशांश गिना जाता है, अर्थात् मेष को मेष से ही, वृष को कर्क से, मिथुन को तुला से, कर्क को मकर से, सिंह को मेष से, कन्या को कर्क से, तुला को तुला से, वृश्चिक को मकर से, धनु को मेष से, मकर को कर्क से, कुम्भ को तुला से और मीन को मकर से क्रम से गिनने पर विंशांश होते हैं। उनके अधिदेवता क्रमशः अश्विनी कुमार, यम्, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्र, ईश, अदिति, जीव, अहि, पितर, भग, अर्यमा, सूर्य, त्वष्टा, महत, शक्राग्नि, मित्रा, वासव, राक्षस, वरुण, विश्वदेव, गोविन्द, वसु, वरुण, अजपात, अहिर्बुधन्य और पूषा होते हैं।

उदाहरण - जैसे लग्न 4।20।8।45 सिंह राशि है, अतः मेष से 18 वें खण्ड में है, इसीलिए कन्या के सप्तविंशांश में है। इसका स्वामी बुध है और अधिदेवता वासव हैं।

सं	अंशादि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	स्वामी
1.	1 |640	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	अश्विनी
2.	2 |31 |20	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	यम
3.	3 |20 |0	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	अग्नि
4.	4 |26 |40	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	1	ब्रह्मा
5.	5 |33 |20	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	2	चन्द्र
6.	6 |40 |0	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	3	ईश
7.	7 |46 |40	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	अदिति
8.	8 |53 |20	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	जीव
9.	10 |0 |0	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	सर्प
10.	11 |6 |40	10	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	पितर
11.	12 |13 |20	11	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	भग

12.	13 |20 |0	12	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	अर्यमा
13.	14 |26 |40	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	सूर्य
14.	15 |33 |20	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	त्वष्टा
15.	16 |40 |0	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	मरुत्
16.	17 |46 |40	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	1	शक्राग्नि
17.	18 |53 |20	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	2	मित्रा
18.	20 |0 |0	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	3	वासव
19.	21 |6 |40	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	राक्षस
20.	22 |13 |20	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	वरुण
21.	23 |20 |0	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	विश्वेदेवता
22.	24 |26 |40	10	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	गोविन्द
23.	25 |33 |20	11	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	वसु
24.	26 |40 |0	12	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	वरुण
25.	27 |46 |40	1	4	7	10	1	4	7	10	1	4	7	10	अजपात्
26.	28 |53 |20	2	5	8	11	2	5	8	11	2	5	8	11	अहिर्बुधन्य
27.	30 |0 |0	3	6	9	12	3	6	9	12	3	6	9	12	पूषा

बोध प्रश्न – 1

1. 'षोडश' का शाब्दिक अर्थ है -

   क. १५ ख.१६ ग.१७ घ.१८

2. 'खवेद' का तात्पर्य है –

   क. ४२ ख.५० ग. १० घ.४०

3. 'द्रेष्काण' से विचारणीय विषय है -

   क. मातृ सुख ख. सर्वसुख ग. भ्रातृ सुख घ. गृह सुख

4. स्थिर संज्ञक राशियाँ है –

   क. २,५,८,११ ख. ३,६,९,१२ ग. १,४,७,१० घ. कोई नहीं

5. सप्तविंशांश का अर्थ है –

   क. २५ वाँ भाग ख. २७ वाँ भाग ग. २८ वॉं भाग घ. ३० वाँ भाग

6. द्वितीय चतुर्थांश होता है –

   क. उसी राशि का ख. उससे चौथी राशि का ग. तीसरी घ. कोई नहीं

खवेदांश (४०) साधन

> **चत्वारिंशद्विभागानामधिपा विषमे क्रियात्।**
> **समभे तुलतो ज्ञेयाः स्वस्वाधिपसमन्विताः।।**
> **विष्णुश्चन्द्रो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रविः।**
> **यमो यक्षश्च गन्धर्वः कालो वरुण एव च।।**

श्लोक का अर्थ है कि विषम राशियों में मेष से और समराशियों में तुला से गिनने पर चत्वारिंशांशाधिपति होते हैं। इनके अधिदेव क्रम से विष्णु, चन्द्र, मरीचि आदि होते हैं, जो निम्न चक्र से स्पष्ट होगा।

उदाहरण - लग्न 4।15।20।25 विषम राशि के 21 वें खण्ड में है, अतः धनु के खवेदांश में हुआ इसके स्वामी गुरु हैं और अधिदेव यक्षेश हैं।

स्पष्ट खवेदांश चक्र

सं	स्वामी	अंशादि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु	मी.
1	विष्णु	0 ।45 ।0	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7
2	चन्द्र	1 ।30 ।0	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8
3	मरीचि	2 ।15 ।0	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9
4	त्वष्टा	3 ।00 ।0	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10
5	धाता	3 ।45 ।0	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11
6	शिव	4 ।30 ।0	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12
7	रवि	5 ।15 ।0	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1
8	यम	6 ।00 ।0	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2
9	यक्षेश	6 ।45 ।0	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3
10	गन्धर्व	7 ।30 ।0	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4
11	काल	8 ।15 ।0	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5
12	वरूण	9 ।00 ।0	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6
13	विष्णु	9 ।45 ।0	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7
14	चन्द्र	10 ।30 ।0	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8
15	मरीचि	11 ।15 ।0	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9
16	त्वष्टा	12 ।00 ।0	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10
17	धाता	12 ।45 ।0	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11
18	शिव	13 ।30 ।0	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12
19	रवि	14 ।15 ।0	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1
20	यम	15 ।00 ।0	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2
21	यक्षेश	15 ।45 ।0	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3
22	गन्धर्व	16 ।30 ।0	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4
23	काल	17 ।15 ।0	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5
24	वरूण	18 ।00 ।0	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6
25	विष्णु	18 ।45 ।0	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7
26	चन्द्र	19 ।30 ।0	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8
27	मरीचि	20 ।15 ।0	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9
28	त्वष्टा	21 ।00 ।0	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10

29	धाता	21 ।45 ।0	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11
30	शिव	22 ।30 ।0	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12
31	रवि	23 ।15 ।0	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1
32	यम	24 ।00 ।0	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2
33	यक्षेश	24 ।45 ।0	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3
34	गन्धर्व	25 ।30 ।0	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4
35	काल	2615 ।0	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5	11	5
36	वरूण	27 ।00 ।0	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6	12	6
37	विष्णु	27 ।45 ।0	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7	1	7
38	चन्द्र	28 ।30 ।0	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8	2	8
39	मरीचि	29 ।15 ।0	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9	3	9
40	त्वष्टा	30 ।00 ।0	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10	4	10

अक्षवेदांश साधन

तथाक्षवेदभागानामधिपाश्चरभे क्रियात्।

स्थिरे सिंहाद् द्विभे चापात् विधीशविष्णवश्चरे।।

ईशाच्युतसुरज्येष्ठा विष्णुकेशाः स्थिरे द्विभे।

देवाः पंचदशावृत्त्या विज्ञेया द्विजसत्तमः।।

उक्त श्लोक का अर्थ है कि चर राशियों में मेष से, स्थिर में सिंह से और द्विस्वभाव राशियों में धन से गणना करने पर पंचचत्वारिंशाश होते हैं। चरराशियों में ब्रह्मा, शिव, विष्णु स्थिर में शिवख् विष्णु, ब्रह्मा एवं द्विस्वभाव में विष्णु, ब्रह्मा, शिव, 15-25 आवृत्ति करके इनके अधिदेव होते हैं।

उदाहरण - जैसे लग्न 3।25।9।45 कर्क चर राशि के अन्तर्गत हैं और 38 वें खण्ड में हैं, अतः वृष के पंचचत्वारिंशाश में है, वृष का अधिपति शुक्र है और अधिदेव शिव हैं।

स्पष्ट अक्षवेदांश चक्र

क्र सं	अंशादि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
1.	0 ।40	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9
2.	1 ।20	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10
3.	2 ।0	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11
4.	2 ।4	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12
5.	3 ।20	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1
6.	4 ।0	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2
7.	4 ।40	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3
8.	5 ।20	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4
9.	6 ।0	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5
10.	6 ।40	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6

11.	7 ।20	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7
12.	8 ।0	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8
13.	8 ।40	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9
14.	9 ।20	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10
15.	10 ।0	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11
16.	10 ।40	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12
17.	11 ।20	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1
18.	12 ।0	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2
19.	12 ।40	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3
20.	13 ।20	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4
21.	14 ।0	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5
22.	14 ।40	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6
23.	15 ।20	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7
24.	16 ।0	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8
25.	16 ।40	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9
26.	17 ।20	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10
27.	18 ।0	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11
28.	18 ।40	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12
29.	19 ।20	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1
30.	20 ।0	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2
31.	20 ।40	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3
32.	21 ।20	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4
33.	22 ।0	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5
34.	22 ।40	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6
35.	23 ।20	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7
36.	24 ।0	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8
37.	24 ।40	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9
38.	25 ।20	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10
39.	26 ।0	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11
40.	26 ।40	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12
41.	27 ।20	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1
42.	28 ।0	6	10	2	6	10	2	6	10	2	6	10	2
43.	28 ।40	7	11	3	7	11	3	7	11	3	7	11	3
44.	29 ।20	8	12	4	8	12	4	8	12	4	8	12	4
45.	30 ।0	9	1	5	9	1	5	9	1	5	9	1	5

षष्ट्यंश साधन

राशीन् विहाय खेटस्य द्विघ्नमंशाद्यमर्कहृत्।
शेषं सैकं च तद्राशेर्भपाः षष्ट्यंशपाः स्मृताः।।
घोरश्च राक्षसो देवः कुबेरो यक्षकिन्नरौ।
भ्रष्टः कुलघ्नो गरलो वरर्माया पुरीषकः।।

अपाम्पतिर्मत्वांश्च कालः सर्पामृतेन्दुकाः।
मृदुः कोमल-हेरम्ब-ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वराः।।
देवादौ कलिनाशश्च क्षितिशकमलाकरौ।
गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्घोरसंज्ञकः।।
यमश्च कण्टकसुधाऽमृतौ पूर्णनिशाकरः।
विषदग्धकुलान्तश्च मुख्यो वंशक्षयस्तथा।।
उत्पातकालसौम्याख्याः कोमलः शीतलाभिधः।
करालदंष्ट्चन्द्रास्यौ प्रवीणः कालपावकः।।
दण्डभिनिर्मलः सौम्यः क्रूरोऽतिशीतलोऽमृतः।
पयोधिभ्रमणाख्यौ च चन्द्ररेखा त्वयुग्मपाः।।
समे भे व्यत्ययाज्ज्ञेयाः षष्ट्यंशेशाः प्रकीर्तिताः।
षष्ट्यंशस्वामिनस्त्वोजे तदीशाद् व्यत्ययः समे।।
शुभष्ट्यंशसंयुक्ता ग्रहाः शुभपफलप्रदाः।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ता नाशयन्ति खचारिणः।।

राशियों को छोड़कर अंशादि, ग्रह, भाव और स्पष्ट लग्न; जिसका षष्ट्यंश विचार करना है उसी काद्ध को दो से गुणा कर 12 का भाग दे। शेष में एक जोड़ने से गिनने पर जो संख्या होती है, वह ग्रहाश्रित राशि से गिनने पर जिस राशि की होती है उसी का षष्ट्यंश होता है। द्विगुणित अंशादि में एक युक्त करने पर जो संख्या हो, उतनी संख्यक विषम में घोर, राक्षसादि क्रम से और सम में चन्द्ररेखा, भ्रमणादि व्युक्रम से अधिदेव होते हैं।

उदाहरण - जैसे लग्न 3।25।9।45 इसमें राशि छोडकर अंशादि 25।9।45 को दो से गुणा कर 50।29।30 इसके अंश; 50, में 12 का भाग दिया, शेष 2 में से 1 जोड़ा तो 3 हुआ, अतः कर्क से तीसरी कन्या राशि का षष्ट्यंश हुआ, उसका स्वामी बुध है तथा सैक द्विघ्नांस 51 तुल्य, अग्नि आधिदेव हुए। इस प्रकार प्रतिभाव और प्रति ग्रह में षोड़श वर्ग बनाकर विचार करें कि शुभ वर्ग अधिक होने से उन-उन ग्रह और भावों का फल शुभपफलदायक तथा अशुभ ग्रह के वर्ग अधिक होने से अशुभफलदायक समझना चाहिए।

वर्गभेद कथन –

वर्ग चार प्रकार के होते हैं –

१. षडवर्ग
२. समवर्ग
३. दशवर्ग
४. षोडश वर्ग

षडवर्ग में २,३ आदि के स्ववर्ग में रहने से किंशुकादि संज्ञा होती है। जैसे दूसरे वर्ग स्व वर्ग में रहने से किंशुक संज्ञा होती है। इसी प्रकार ३ से व्यंजन, ४ से चामर, ५ से छत्र, ६ से कुण्डल नामक संज्ञा होती है। सप्तवर्ग में षडवर्ग तक उक्त संज्ञा और ७ से मुकुट नामक संज्ञा होती है। दशवर्ग में २-३ आदि वर्ग की स्ववर्ग में रहने से पारिजात आदि संज्ञायें होती हैं। जैसे २ वर्ग की स्ववर्ग में रहने से पारिजातनामक संज्ञा होती है। इसी प्रकार ३ से उत्तम, ४ से गोपुर, ५ से सिंहासन, ६ से पारावत, ७ से देवलोक, ८ से ब्रह्मलोक, ९ से शक्रवाहन और १० वर्ग स्ववर्ग में रहने से श्रीधाम संज्ञा होती है। एवं षोडश वर्ग में २ आदि वर्ग के स्ववर्ग में रहने से भेदक संज्ञायें होती हैं। यथा २ स्ववर्ग से भेदक, ३ से कुसुम, ४ से नागपुष्प, ५ से कन्दुक, ६ से केरल,७ से कल्पवृक्ष, ८ से चन्दन, ९ से पूर्ण चन्द्र, १० से उच्चै:श्रवा, ११ से धन्वन्तरि, १२ से सूर्यकाल, १३ से विद्रूम, १४ से शक्रसिंहासन, १५ से गोलोक एवं १६ से श्रीवल्लभ नामक संज्ञा होती है। इस प्रकार वर्गभेद कहा गया है।

इनमें अपने उच्च, अपना मूल त्रिकोण और स्वभवन, लग्न, केन्द्राधिपतियों के वर्ग शुभ होते हैं। अस्तंगत, पराजित, नीचगत, बलहीन, शयनादि अवस्था में स्थित ग्रहों के वर्ग अशुभ फलदायक और शुभ फलों के नाशकारक होते हैं, ऐसा आप सभी को समझना चाहिए।

बोध प्रश्न -2

1. वर्ग .... प्रकार के होते हैं।
2. अक्षवेदांश का शाब्दिक अर्थ .... है।
3. षोडश वर्ग में .... वर्ग होते हैं।
4. षडवर्ग में २,३ आदि के स्ववर्ग में रहने से .... संज्ञा होती है।
5. षोडश वर्ग में १६ संख्या रहने पर ...... नामक संज्ञा होती है।

2.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि षोडश वर्ग' के बारे में जानने से पूर्व आप सभी को षोडश वर्ग का शाब्दिक अर्थ समझ लेना चाहिए। तो सर्वप्रथम 'षोडश' संस्कृत का शब्द है जिसका हिन्दी में अर्थ होता है – 16। यह संख्यावाची शब्द है और वर्ग शब्द से आप सभी परिचित हो ही चुके है। इस प्रकार 16 वर्ग या खाने अथवा कोष्ठक से सम्बन्धित को 'षोडश वर्ग' के नाम से जाना जाता है।

षोडश वर्ग के अन्तर्गत षड्वर्ग (गृह या लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश) सप्तमांश, दशमांश, षोडशांश, क्षेत्रांश, विशांश, चतुर्विशांश, भांश, खवेदांश, अक्षवेदांश और षष्टयंश आदि

होते हैं।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

षोडशवर्ग – षोडशवर्ग में कुल 16 वर्ग होते है।

किंशुकादि – षडवर्ग में २,३ आदि के स्ववर्ग में रहने से किंशुकादि संज्ञा होती है।

नवमांश – 3 अंश 20 कला का एक नवमांश होता है। राशि के नवें भाग को नवमांश कहते हैं।

द्वादशांश – राशि का 12 वॉं अंश द्वादशांश होता है। 2 अंश 30 कला इसका मान होता है।

त्रिशांश – एक त्रिशांश 1 अंश के बराबर होता है।

भांश – राशि का २७ वाँ भाग एक भांश के बराबर होता है।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्नों के उत्तर – 1

1. ख 2. घ 3. ग 4. क 5. ख 6. ख

बोध प्रश्नों के उत्तर – 2

1. 4 2. 45 3. 16 4. किंशुकादि 5. श्रीवल्लभ 6. 1 अंश

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जातकपारिजात- मूल लेखक – आचार्य वैद्यनाथ, टिका – हरिशंकर पाठक।

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – मूल लेखक – महर्षि पराशर, टिका- पं. पद्मनाभ शर्मा।

लघुजातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. कमलाकान्त पाण्डेय।

वृहज्जातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. सत्येन्द्र मिश्र।

सारावली – मूल लेखक – कल्याणवर्मा, टिका – डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. षोडश वर्ग से क्या तात्पर्य है।
2. अक्षवेदांश क्या है? वर्णन कीजिये।
3. चतुर्थांश का उल्लेख कीजिये।
4. षोडशवर्ग के गणितीय पक्ष का वर्णन कीजिये।
5. सोदाहरण भांश साधन विधि लिखिये।

इकाई -3 ग्रहों की अवस्था का विचार

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई MAJY-201 के द्वितीय खण्ड की तीसरी इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है – ग्रहों की अवस्था का विचार। इससे पूर्व की इकाई में आपने षडवर्ग, सप्तवर्ग एवं दशवर्ग एवं षोडश वर्ग का अध्ययन कर लिया है। आइए अब इस इकाई में ग्रहों की अवस्था से सम्बन्धित तथ्यों का अध्ययन करते हैं।

ग्रहों की दीप्तादि आठ प्रकार की अवस्था बतलायी गयी है। इसके अतिरिक्त बालादि पंच अवस्थाओं का भी उल्लेख हमें प्राप्त होता है। गणितीय एवं फलादेश सम्बन्धित तथ्यों को जानने के लिए हमें ग्रहों की अवस्था का ज्ञान होना परमावश्यक है।

जन्मकुण्डली में ग्रह किस अवस्था में है? इसका ज्ञान किए बिना हम उसका सम्यक्तया फलादेश कथन कैसे कर सकते हैं। अत: आइए हम ज्योतिष शास्त्र में कथित विभिन्न प्रकार के ग्रहों की अवस्थाओं का ज्ञान हम इस इकाई में करते हैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- बता सकेंगे कि ग्रह- अवस्था क्या है?
- समझा लेंगे कि ग्रहों के कितने प्रकार की अवस्थायें होती है।
- विभिन्न जातक ग्रन्थों के आधार पर ग्रहों की अवस्थाओं से परिचित हो जायेंगे।
- ग्रहों की अवस्थाओं का महत्व समझ लेंगे।
- सिद्धान्त एवं फलित ज्योतिष में ग्रहों की अवस्थाओं की क्या भूमिका है? इसे बता सकेंगे।

3.3 ग्रहों की अवस्था का परिचय

जातक शास्त्र के प्राय: समस्त ग्रन्थों में ऋषियों द्वारा ग्रहों की अवस्था का उल्लेख किया गया है। जब आप प्रमुख कुछ ग्रन्थों का अवलोकन करेंगे तो पायेंगे कि उन अवस्थाओं के प्रकार भी अलग-अलग दिखलायी पड़ते है। जैसे – अंशों पर आधारित ग्रहों की बालादि अवस्था, ग्रहों की दीप्तादि अवस्था और ग्रहों की मानसिक अवस्था आदि। सारावली नामक ग्रन्थ में आपको दीप्तादि अवस्थाओं के 9 प्रकार और जातकपारिजात ग्रन्थ में ग्रहों की 10 प्रकार की मानसिक स्थितियों का

वर्णन प्राप्त होगा। आइए अब हम सभी विस्तारपूर्वक ग्रहों की अवस्थाओं का इस इकाई में अध्ययन करते हैं।

सर्वप्रथम क्या है ग्रहों की अवस्था? इसका विचार करते है तो –

ग्रहाणां अवस्था वा स्थिति: ग्रहावस्था: भवति। अर्थात् ग्रहों की अवस्था अथवा स्थिति का नाम ग्रहावस्था है। ग्रहों के विभिन्न अवस्थाओं को हम विविध ग्रन्थों के आधार पर समझ सकते हैं।

3.3.1 विभिन्न ग्रन्थानुसार ग्रहों की अवस्था विवेचन

सर्वप्रथम **जातकपारिजात** ग्रन्थ के ग्रहनामरूपगुणभेदाध्याय में ग्रहों की अवस्था का वर्णन हमें इस प्रकार मिलता है।

मूल श्लोक:-

बालो धराज: शशिज: कुमारकस्त्रिंशद्गुरु: षोडशवत्सर: सित:।
पंचाशदर्को विधुरब्दसप्तति: शताब्दसंख्या: शनिराहुकेतव:।। (श्लोक संख्या १४)

अर्थात् मंगल बालक है, बुध कुमार, वृहस्पति की ३० वर्ष, शुक्र की १६ वर्ष, सूर्य की ५० वर्ष, चन्द्रमा की ७० वर्ष तथा शनि, राहु और केतु की वय (अवस्था) १०० वर्ष है।

उपर्युक्त श्लोक का समर्थन **शुकजातक** नामक ग्रन्थ भी करता है। यथा –

बालवयस्कौ भौम: कुमारवेशो बुधो गुरुस्त्रिंशत्।
शुक्र: षोडशवर्षो रविश्च पंचाशदब्दश्च।।
चन्द्र: सप्ततिवर्ष: शतवर्षं शनिराहुकेतो: स्यात्।
येषां प्रसूतिसमये सदसत्फलदायक: खेट:।।
बलसहित: स्वावस्थाकालस्वरूपं विशेषत: कुर्यात्।

जातक पारिजात ग्रन्थ में ही ग्रहों की मानसिक स्थितियाँ का विवेचन इस प्रकार है –

दीप्त: प्रमुदित: स्वस्थ: शान्त: शक्त: प्रपीडित:।
दीन: खलस्तु विकलो भीतोऽवस्था दश क्रमात्।।

श्लोक का अर्थ है कि दीप्त, प्रमुदित, स्वस्थ, शान्त, शक्त, प्रपीडित, दीन, खल, विकल और भीत – ये ग्रहों की १० प्रकार की मानसिक स्थितियाँ होती है। इन दस स्थितियों में कब कौन अवस्था में ग्रह होता है? यह आचार्य वैद्यनाथ जी ने इस प्रकार बतलाया है –

स्वोच्चत्रिकोणोपगत: प्रदीप्त: स्वस्थ: स्वगेहे मुदित: सुहृद्भे।
शान्तस्तु सौम्यग्रहवर्गयात: शक्तोऽतिशुद्ध: स्फुटरश्मिजालै:।।

महाभिभूतस्त्वतिपीडित: स्यादरातिराश्यंशगतोऽतिदीन:।
खलस्तु पापग्रहवर्गयोगान्नीचेऽतिभीतो विकलोऽस्तयात:।।

अर्थात् अपनी उच्च राशि में मूलत्रिकोण में स्थित ग्रह प्रदीप्त, स्वगृह अर्थात् अपनी राशि में स्थित ग्रह स्वस्थ, मित्रराशि में प्रमुदित, शुभग्रहों के वर्ग में शान्त, स्फुटरश्मिजाल से युक्त ग्रह शक्त, युद्ध में पराजित ग्रह अतिपीडित, शत्रुराशि में और शत्रुनवमांश में अतिदीन, पापग्रह के वर्ग में खल, अपनी नीचराशि में अतिभीत तथा अस्तग्रह विकल होता है।

भौमादि ग्रह के परस्पर संयोग को ग्रहयुद्ध कहते हैं –

दिवसकरेणास्तमय: समाराम: शीतरश्मिसहितानाम्।
कुसुतादीनां युद्धं निगद्यतेऽन्योन्ययुक्तानाम्।।

तथा पराजित ग्रह के लक्षण इस प्रकार कहे गये हैं –

दक्षिणदिक्स्थ: पुरुषो वेपथुरप्राप्य सन्निवृत्तोऽणु:।
अधिरूढो विकृतो निष्प्रभो विवर्णश्च य: स जित:।।

ग्रहों के राशि, अंश, कला पर्यन्त समानता होने पर ग्रह युद्धरत होते हैं। उत्तरशर से युक्त ग्रह विजयी होता है।

ग्रहों की बालादि अवस्था (अंशों पर आधारित) –

अंशों पर आधारित ग्रहों की एक अन्य प्रकार की बालादि छ: प्रकार की अवस्था होती है। विषमराशि के प्रारम्भ से ६° राशि पर्यन्त बाल्यावस्था, ६° – १२° अंश तक कुमारावस्था, १२° – १८° अंश तक युवावस्था, १८°-२४° अंश तक वृद्धावस्था तथा २४° अंश से राशि के अन्त ३०° तक मृतावस्था होती है। समराशि में ये अवस्थायें विपरीत क्रम से होती है। यथा वृहत्पराशरहोराशास्त्र नामक ग्रन्थ में पराशर जी कहते हैं -

क्रमाद् बाल: कुमारोऽथ युवा वृद्धस्तथा मृत:।
षडंशैरसमे खेट: समे ज्ञेयो विपर्ययात्।।

स्पष्ट चक्र - विषम राशि में –

ग्रहों का अंश	०°-६°	६° -१२°	१२° -१८°	१८° -२४°	२४°-३०°
ग्रहों की अवस्था	बाल	कुमार	युवा	वृद्ध	मृत

सम राशि में

ग्रहों का अंश	०°-६°	६° -१२°	१२° -१८°	१८° -२४°	२४°-३०°
ग्रहों की अवस्था	मृत	वृद्ध	युवा	कुमार	बाल

आचार्य कल्याणवर्मा कृत् **सारावली नामक ग्रन्थानुसार** ग्रहों की दीप्तादि ९ अवस्था –

दीप्तः स्वस्थो मुदितः शान्तः शक्तो निपीडितो भीतः।
विकलः खलश्च कथितो नवप्रकारो ग्रहो हरिणा।।

१ दीप्त, २ स्वस्थ, ३ मुदित, ४ शान्त, ५ शक्त, ६ निपीडित, ७ भीत, ८ विकल, ९ खल ये ९ प्रकार की ग्रहों की अवस्था हरि ने कही हैं।

दीप्तादि का ज्ञान –

स्वोच्चे भवति च दीप्तः स्वस्थः स्वगृहे सुहृद्गृहे मुदितः।
शान्तः शुभवर्गस्थः शक्तः स्फुटकिरणजालश्च।।
विकलो रविलुप्तकरो ग्रहाभिभूतो निपीडितश्चैवम्।
पापगणस्थश्च खलो नीचे भीतः समाख्यातः।।

ग्रह अपनी उच्च राशि में दीप्त, अपनी राशि में स्वस्थ, मित्र की राशि में मुदित, शुभग्रह के वर्ग में शान्त, अनस्तंगत शक्त, सूर्य की किरणों से अस्त ग्रह विकल, युद्ध में पराजित निपीडित, पापग्रह के वर्ग में खल और अपनी नीच राशि में ग्रह भीत अवस्था प्राप्त करता है।

स्पष्टार्थ चक्र –

ग्रह स्थान	उच्च राशि में	अपनी राशि में	मित्र की राशि में	शुभग्रह के वर्ग में	अनस्तंगत	सूर्य किरणों से अस्त	युद्ध में पराजित	पापग्रह के वर्ग में	नीच राशि में
ग्रहों की अवस्था	दीप्त	स्वस्थ	मुदित	शान्त	शक्त	विकल	निपीडित	खल	भीत

विशेष – वृहत्पराशरहोराशास्त्र नामक ग्रन्थ में अधिमित्र के गृह में मुदित, मित्र के गृह में शान्त इत्यादि विरोध प्रतीत होता है।

फलदीपिका ग्रन्थ के अनुसार –

स्वोच्चे प्रदीप्तः सुखितस्त्रिकोणे स्वस्थः स्वगेहे मुदितः सुहृद्धे।
शान्तस्तु सौम्यग्रहवर्गयुक्तः शक्तो मतोऽसौ स्फुटरश्मिजालः।।
ग्रहाभिभूतः स निपीडितः स्यात् खलस्तु पापग्रहवर्गयातः।
सुदुःखितः शत्रुगृहे ग्रहेन्द्रो नीचेऽतिभीतो विकलोऽस्तयातः।।
पूर्णं प्रदीप्ता विकलास्तु शून्यं मध्येऽनुपाताच्च शुभं क्रमेण।
अनुक्रमेणाशुभमेव कुर्युर्नामानुरूपाणि फलानि तेषाम्।।

अर्थात् उच्च राशि में ग्रह **प्रदीप्त** कहलाता है। अपनी मूल त्रिकोण राशि में इसे सुखित कहते हैं। अपनी स्वराशि में ग्रह **स्वस्थ** कहलाता है। मित्र के गृह में मुदित, सौम्य ग्रह के वर्ग में हो और सौम्य ग्रह से युक्त हो तो ग्रह को शान्त कहते हैं। जब किसी ग्रह का प्रकाश मण्डल पृथ्वी से दिखाई दे तो ऐसा ग्रह **शक्त** कहलाता है अर्थात् शुभ प्रभाव दिखाने की ताकत उसमें होती है। अस्त ग्रह बहुत निकृष्ट फल दिखाता है। इतना कमजोर रहता है कि वह कुछ भलाई करने के काबिल ही नहीं रहता। अस्त ग्रह को विकल भी कहते हैं अर्थात् यदि अस्त न हो तो शक्त, यदि अस्त हो तो विकल। जो ग्रह युद्ध में दूसरे ग्रह से पराजित हुआ हो उसे **निपीडित** कहते हैं। जो पापग्रह या ग्रहों के वर्ग में हो उसे खल कहते हैं। जो शत्रु गृह में हो उसे पूर्ण दुःखी और जो अपनी नीच राशि में हो उसे अतिभीत कहते हैं। प्रायः जैसा कि प्रदीप्त सुखित, स्वस्थ, मुदित, शान्त, शक्त, निपीड़ित, खल, सुदुःखित, नीच और विकल यह जो ११ अवस्थायें बतायी गयी हैं – इनमें नाम के अनुसार ही फल समझना चाहिये। प्रथम ६ अवस्थाओं में ग्रह शुभ फल देता है। उच्च में १६ आना शुभ, सुखित में १४ आना, स्वराशि में १२ आना, मित्र राशि में १० आना, शान्त अवस्था में ८ आना और शक्त अवस्था में ६ आना शुभ। निपीडित अवस्था में ६ आना अशुभ, खल अवस्था में ८ आना अशुभ फल, सुदुःखित अवस्था में १० आना अशुभ फल, नीच राशि में १२ आना अशुभ फल, और विकल अवस्था में १६ आना अर्थात् पूर्ण अशुभ फल समझना चाहिये। अच्छी अवस्था वाले ग्रह की दशा अन्तर्दशा में शुभ परिणाम होंगे। निकृष्ट अवस्था वाले ग्रह की दशा-अन्तर्दशा में अशुभ फल होगा।

3.4 ग्रहों की अवस्था फल विचार

ग्रहों की अवस्था के पश्चात् अब उनके शुभाशुभ फलों का चिन्तन करते हैं।

दीप्त ग्रह का फल –

दीप्ते विचरति पुरुषः प्रतापविषमाग्निदग्धरिपुवर्गः।

लक्ष्म्यालिंगतदेहो गजमदसंसिक्तभूपृष्ठ:।।

अर्थात् यदि जन्मांग स्थित ग्रह दीप्त अवस्था में हो तो वह मनुष्य अपनी प्रताप रूप असह्य अग्नि से शत्रु वर्ग को भस्म कर विचरण करता है, तथा लक्ष्मी से देह आलिंगित होता है अर्थात् समस्त सम्पत्ति सुख प्राप्त होता है एवं उसके हाथियों के मद से पृथ्वी का उपरी भाग भीग जाता है।

स्वस्थ अवस्थागत का फल –

स्वस्थ: करोति जन्मनि रत्नानि सुखानि कनकपरिवारान्।
नृपतेर्दण्डपतित्वं गृहधान्यकुटुम्बपरिवृद्धिम्।।

अर्थात् जन्मकाल में स्वस्थ अवस्था में स्थित ग्रह अनेक सुवर्ण के आभूषण, रत्नादि विविध प्रकार के सुख करता है, और राज्य में न्यायाधीशादि अधिकार व गृह में धान्य एवं कुटुम्ब वृद्धि करता है।

मुदित अवस्थागत ग्रह का फल –

मुदिते विलसति मुदितो विलासिनीकनकरत्नपरिपूर्ण:।
विजितसकलारिपक्ष: समस्तसुखभांग नरो भवति।।

श्लोक का अर्थ है कि यदि मुदित अवस्था में ग्रह हो तो जातक प्रसन्न चित्त होकर विलास करता है। तथा स्त्री सुवर्ण रत्न से पूर्ण, समस्त शत्रु पक्ष को जीतने वाला, समस्त सुखों का भोगकर्त्ता मनुष्य होता है।

शान्त अवस्थागत ग्रह का फल-

शान्ते प्रशान्तचित्त: सुखधनभागी महीपते: सचिव:।
विद्वान्परोपकारी धर्मपरो जायते पुरुष:।।

यदि शान्त अवस्था में ग्रह हो तो चित्त में अधिक शान्ति, सुख व धन का प्राप्त कर्त्ता, राजा का मन्त्री, मनीषी, दूसरे का उपकार करने वाला, धर्मपरायण एवं भाग्यवान होता है।

शक्त अवस्थागत ग्रह का फल –

स्त्रीवस्त्रमाल्यगन्धैर्विलसति पुरुष: सदा विततकीर्ति:।
दयित: सर्वजनस्य च शक्ताख्ये भवति विख्यात:।।

यदि शक्त अवस्था में ग्रह हो तो जातक स्त्री, वस्त्र, माला, सुगन्धित द्रव्यों से आनन्दित होता है, उसकी कीर्ति सदा विस्तृत होती है और समस्त जनों का प्रिय व संसार में ख्याति प्राप्त होती है।

पीडि़त अवस्थागत ग्रह का फल –

दु:खैर्व्याधिभिररिभि: प्रपीडयते पीडिताख्ये तु।
देशाद्देशं विचरति बन्धुवियोगाभिसंतप्त:।।

यदि पीड़ित अवस्था में ग्रह हो तो जातक नाना प्रकार के दु:खों से, रोगों से शत्रुओं से पीड़ित होता है। और बन्धुओं के वियोग से दु:खी होकर देश- देशान्तर में विचरण करता है।

भीत अवस्थागत ग्रह का फल –

बहुसाधनोऽपि राजा प्रध्वस्तबल: प्रपीडितो रिपुणा।
नाशमुपयाति विजितो भीते दैन्यं परं प्राप्त:।।

यदि भीत अवस्था में ग्रह हो तो बहुत साधनों से युक्त राजा भी शत्रुओं से पीड़ा प्राप्त कर निर्बल और पराजित होकर नाश को प्राप्त होता है या परम दीनता को प्राप्त करता है।

विकल अवस्थागत ग्रह का फल –

स्वस्थानपरिभ्रष्ट: क्लिष्टो मलिन: प्रयाति परदेशम्।
विध्वस्तबलो विकले रिपुबलसंचकितचित्तश्च।।

यदि विकल अवस्था में ग्रह हो तो शत्रु बल से चकित चित्त होकर अपने स्थान से पृथक् होता है और क्लेश होने से मलीन चित्त करके दूसरे देश में जाता है, तथा उसका बल, अथवा धन नष्ट हो जाता है।

बोध प्रश्न -1

1. ग्रहों की दिप्तादि कुल कितनी अवस्थायें होती है।
   क. ५ ख.७ ग.८ घ.१०
2. सूर्य की अवस्था कितने वर्ष की है।
   क. ५० ख.६० ग. ७० घ.८०
3. मंगल की निम्न में कौन सी अवस्था है।
   क. बालक ख. कुमार ग. १० वर्ष घ. ५० वर्ष
4. उच्च राशि में ग्रह क्या कहलाता है।
   क. सुप्त ख. प्रदीप्त ग. खल घ. शक्त
5. फलदीपिका के अनुसार स्वराशि का ग्रह होता है।
   क. स्वस्थ ख. प्रदीप्त ग. शक्त घ.सूक्त
6. यदि मुदित अवस्था में ग्रह हो तो जातक –
   क. प्रसन्न रहता है। ख. रोता है। ग. गाता है। घ. कोई नहीं

खल अवस्थागत ग्रह का फल –

स्त्रीभरणदुखतप्त: समस्तधननाशकलुषितमनस्क:।

न जहाति शोकभारं कथमपि खलसंज्ञिते पुरुष:।।

यदि खल अवस्था में ग्रह हो तो जातक – स्त्री पुत्रादि पालन में समर्थ न होकर उनके दु:ख से दु:खी, सम्पूर्ण धन नाश से कलुषित मनवाला कभी भी अन्त:करण में शोक रूपी भार का त्याग नहीं करता है।

उच्च राशि में ग्रह का फल –

उच्चराशौ विलोमे च फलं नान्यैरिहेष्यते।

कालस्यातिबहुत्वाच्च तस्मात्स्वोच्चेऽतिवक्रते।।

यदि उच्च राशि में वक्री ग्रह हो तो अन्य आचार्यों के मत में फल नहीं होता, तथा उच्चराशि में अतिवक्र होने पर भी काल की अधिकता से फल नहीं होता।

जातकपारिजात ग्रन्थानुसार ग्रहों की अवस्थाफल विचार –

फलं पादमितं बाले फलार्धं च कुमारके।

यूनि पूर्णं फलं ज्ञेयं वृद्धे किंचित् मृते च खम्।।

अर्थात् ग्रह यदि बाल्यावस्था में हो तो १ चरण फल, कुमारावस्था में २ चरण फल, युवावस्था में पूर्ण फल, वृद्धावस्था में ग्रह हो तो अत्यन्त अल्प फल एवं मृतावस्था में ग्रह हो तो फलाभाव होता है।

जाग्रदादि ग्रहों की अवस्था फल –

स्वभोच्चयो: समसहृदभयो: शत्रुभनीचयो:।

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्याख्या अवस्था नामदृक्फला:।।

ग्रह अपनी राशि या अपने उच्चस्थ हो तो जाग्रदवस्था, अपने मित्रगृह में या समगृह में ग्रह बैठा हो तो स्वप्नावस्था एवं अपने शत्रुगृह में या अपनी नीच राशि में ग्रह स्थित हो तो सुषुप्ति नामक अवस्था होती है। इन अवस्थाओं के फल नामसदृश ही जानना चाहिए।

जागरे च फलं पूर्णं स्वप्ने मध्यफलं तथा।

सुषुप्तौ तु फलं शून्यं विज्ञेयं द्विजसत्तम्।।

जाग्रत अवस्था में पूर्ण फल, स्वप्नावस्था में मध्य फल और सुषुप्ति अवस्था में शून्य फल प्राप्त होता है।

जातक पारिजात ग्रन्थ में ग्रहों की दीप्तादि अवस्था के साथ-साथ लज्जितादि (लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृषित, मुदित और क्षोभित ये छ: अवस्था) अवस्था, शयनादि (शयन, उपवेशन, नेत्रपाणि,

प्रकाशन, गमन, आगमन, सभावास, आगम, भोजन, नृत्यलिप्सा, कौतुक, निद्रा आदि) अवस्था का विस्तृत वर्णन किया गया है।

सूर्य की अवस्थाओं का फल -

सूर्य यदि **शयनावस्था** में स्थित हो तो जातक को मन्दाग्नि रोग, पैर में स्थूलता, पित्त का प्रकोप, गुदा में व्रण एवं हृदय में शूलरोग का प्रकोप होता है। **उपवेशनावस्था** में सूर्य हो तो जातक दरिद्र, भारवाही, बहसकारक, विद्या में रत, कठोर हृदय और धन का विनाश करने वाला होता है। **नेत्रपाणि अवस्था** में हो तो मनुष्य सदैव आनन्दित, विवेकी, परोपकारी, बल तथा वित्तयुक्त, महासुखी और राजा का कृपापात्र होता है। यदि **प्रकाशन अवस्था** में सूर्य हो तो जातक उदार हृदय वाला, धनी, वाचाल, अधिक पुण्यकर्ता, महाबली और सुन्दर रूप वाला होता है। गमन अवस्था में सूर्य रहने पर जातक विदेशवासी, दुःखी, सदा आलसी, बुद्धि तथा धन से हीन, भययुत और क्रोधी होता है। सूर्य के आगमन अवस्था में रहने पर जातक परस्त्री में रत, स्वजन से रहित, सदैव भ्रमणकारी, धूर्तता में कुशल, मलिन, कुबुद्धि और कृपण होता है। सभावास अवस्था में सूर्य के रहने पर जातक परहितकारक, परोपकार में तत्पर, सदैव धन-रत्न से परिपूर्ण, गुणी, पृथ्वी पर नवीन वस्त्र-गृह से युत, महाबली, विचित्र, मित्रप्रेमी, दयालु और कलाकार होता है। आगम अवस्था में सदैव शत्रुओं से दुःखी, चंचल, दुष्ट, दुर्बल, धर्म-कर्म से हीन और मद से उन्मत्त होता है। यदि सूर्य भोजन अवस्था में हो जातक की शरीरसन्धि में सदैव पीड़ा, परस्त्री संपर्क से धननाश, बल में कमी, झूठ बोलने वाला, शिर में पीड़ा, कुअन्न भोजन और कुमार्ग में चलने वाला होता है। नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो सूर्य जातक सदैव विद्वज्जनों से सम्मानित, पण्डित, काव्य विद्याओं का मर्मज्ञ और पृथ्वीमण्डल में राजपूज्य होता है। कौतुक अवस्था में सूर्य के रहने पर जातक सदैव आनन्द हर्षयुक्त, ज्ञानी, यज्ञकर्ता, राजभवन में रहने वाला, शत्रु से भयभीत, सुरूप और काव्य विद्या में रत रहने वाला होता है। निद्रावस्था में सूर्य के रहने पर उस जातक की आँख सदैव निद्रा से युक्त रहती है, वह विदेश में रहने वाला होता है एवं उसकी पत्नी की हानि तथा अनेक प्रकार से उसके धन का नाश होता है।

चन्द्रमा की अवस्था फल -

जन्म समय में चन्द्रमा **शयनावस्था** में हो जातक मानी, शीतल स्वभाव वाला, कामी और धननाशकारक होता है। **उपवेशन** अवस्था में हो तो जातक रोगयुत, मन्दबुद्धि, विशेष धन से रहित, कठोर, कुकर्मकारक एवं दूसरे के धन का हरण करने वाला होता है। **नेत्रपाणि** अवस्था में चन्द्रमा के रहने पर जातक महारोगी, बकवादी, धूर्त एवं कुकर्म में रत रहने वाला होता है। यदि चन्द्रमा **प्रकाश**

अवस्था में हो तो जातक संसार में विकाशकारक, स्वच्छ गुणों से युत, राजा से धन प्राप्त करने वाला, हाथी, घोड़े आदि वाहनों से परिपूर्ण, धन, आभूषण, वस्त्रादि से युत, प्रतिदिन स्त्री से सुखी एवं तीर्थ में भ्रमण करने वाला होता है। **गमन** अवस्था में चन्द्रमा हो और विशेष करके कृष्ण पक्ष का जन्म हो तो जातक पापी, क्रोधी, सदैव नेत्ररोग से पीड़ित और शुक्ल पक्ष में हो तो डरपोक होता है। यदि चन्द्रमा **आगमन** अवस्था में हो तो जातक मानी, पैर में रोगयुत, गुप्त पाप करने वाला, दीन बुद्धि और सन्तोषरहित होता है। **सभा** अवस्था में चन्द्रमा के रहने पर जातक सभी जनों में श्रेष्ठ, राजमान्य, अधिक सुन्दर, स्त्रियों को आनन्द देने वाला, सबसे प्रेमभाव रखने वाला और गुणज्ञ होता है। यदि चन्द्रमा **आगम** अवस्था में हो तो जातक वाचाल शक्तियुक्त और धार्मिक एवं यदि कृष्ण पक्ष में हो तो दो भार्या वाला, रोगी, दुष्ट और हठी होता है। **भोजन** अवस्था में पूर्ण चन्द्रमा हो तो जातक मानी, वाहनयुत, जनों को आनन्दित करने वाला एवं कलत्र पुत्रों से सुखी होता है। यह सभी फल शुक्ल पक्ष में कहे गये हैं, परन्तु कृष्ण पक्ष में शुभ फल नहीं होता। बलवान चन्द्रमा यदि **नृत्यलिप्सा** अवस्था में हो तो जातक बली और गीतज्ञ तथा रसज्ञ होता है। कृष्णपक्ष में पापकारक होता है। **कौतुक** अवस्था में चन्द्रमा रहने पर जातक राजा या राजसदृश धनवान, कामकलाओं में चतुर एवं वेश्याओं में रमण करने पर पटु होता है। यदि चन्द्रमा **निद्रा** अवस्था में हो और गुरु से युत हो तो मानवों में श्रेष्ठ होता है। यदि गुरु युत न हो और क्षीण हो तो जातक की भार्या और एकत्रित धन का नाश होता है तथा उसके घर में श्रृगाली विचित्र शब्दों से रोती है।

भौम अवस्था फल –

यदि भौम या मंगल **शयन** अवस्था में हो तो जातक व्रण से युत एवं बहुत खुजली तथा दाद से पीड़ित रहता है। **उपवेशन** अवस्था में भौम हो तो जातक बली, सदा पापकर्म में रत, झूठ बोलने वाला, ढीठ, धनी और स्वधर्म से रहित होता है। **नेत्रपाणि** अवस्था में होकर भौम लग्न में बैठा हो तो जातक दरिद्र एवं अन्य भाव में हो तो नगरप्रमुख होता है। **प्रकाश** अवस्था में हो तो जातक गुण का पात्र तथा राजा से सम्मान, मान और आदर प्राप्त करता है। पंचमस्थ मंगल हो तो पुत्र कलत्र से वियोग और राहु से योग हो तो उसका महापतन होता है। **गमन** अवस्था में मंगल हो तो जातक प्रतिदिन भ्रमण करने वाला, व्रण का भय, पत्नी से विवाद, दाद, खुजली और धन की हानि होती है। मंगल के **आगमन** अवस्था में रहने पर जातक गुणयुत, मणिरत्नयुत, तीक्ष्ण शस्त्र रखने वाला, गजसदृश बली, शत्रु-नाशकर्ता एवं अपने आश्रित जनों के सन्ताप का हरण करने वाला होता है। यदि भौम **सभा** अवस्था में रहकर अपने उच्च राशिस्थ हो तो जातक युद्धकलाओं में निपुण, धर्म में अग्रगण्य और धनी होता है। यदि त्रिकोण में मंगल हो तो जातक विद्या से हीन, व्यय में स्त्री-पुत्र-

मित्ररहित, अन्य स्थानों में राजसभाश्रेष्ठ, धनी, मानी और दानी होता है। **आगम** अवस्था में मंगल हो तो जातक नास्तिक, धर्म-कर्म रहित, कर्णशूल आदि रोग से युत, कातर बुद्धि वाला और कुसंग करने वाला होता है। **भोजनावस्था** में यदि मंगल हो तो जातक मिष्ठान्नभोजी होता है। यदि बलरहित मंगल हो तो जातक नीच कर्मकारक और मानरहित होता है। **नृत्यलिप्सावस्था** में राजा से अतुल धन प्राप्त करने वाला होता है एवं उसके गृह में सभी प्रकार के रत्न, सोना, प्रवाल आदि सम्पत्ति होती है। यदि मंगल **कौतुक** अवस्था में हो तो जातक कौतुक करने वाला एवं मित्र-पुत्रादि से परिपूर्ण होता है। यदि भौम उच्चस्थ हो तो जातक राजा तथा गुणज्ञ व्यक्तियों से मान्य होता है। **निद्रावस्था** में मंगल हो तो जातक क्रोधी, बुद्धि और धन से हीन, धूर्त, धर्म से च्युत और रोगों से पीड़ित रहता है।

बुध अवस्था फल –

यदि बुध **शयन** अवस्था में रहकर लग्न में हो तो जातक भूख से पीड़ित, भ्रमण में असमर्थ एवं गुंजासदृश आँख वाला होता है तथा अन्य भाव में हो तो परस्त्रीगामी और धूर्त होता है। **उपवेशन** अवस्था में हो और लग्न में हो तो अपने गुणसमूह से पूर्ण होता है। **नेत्रपाणि** अवस्था में यदि बुध हो तो विद्या और विवेक से हीन, मित्रता से रहित एवं मानी होता है। यदि पुत्रस्थान में बुध हो तो पुत्र कलत्र सुख से हीन, अधिक कन्या सन्तान वाला एवं राजगृह से धन-लाभ करने वाला होता है। **प्रकाश** अवस्था में बुध के रहने पर जातक दान करने वाला, दयालु, पुण्यकर्ता, अनेक प्रकार की विद्या का ज्ञाता विवेकी और दुष्टों को दबाने वाला होता है। **गमन** अवस्था में बुध हो तो जातक राजभवन में आने-जाने वाला होता है और उसका गृहलक्ष्मी से पूर्ण और विचित्र होता **है। आगम अवस्था** में बुध हो तो जातक नीच की सेवा से धनोपार्जन करने वाला, दो पुत्र वाला तथा उसे प्रतिष्ठा देने वाली एक कन्या भी होती है। **भोजन अवस्था** में हो तो सदैव वाद-विवाद से धन की हानि, राजभय, दुर्बल, चंचल होता है तथा उसे स्त्री और ऐश्वर्य का सुख नहीं होता है। **नृत्यलिप्सा** अवस्था में बुध हो तो जातक मान, वाहन, रत्न, मित्र, पुत्र प्रताप से युत और सभाप्रमुख होता है। कौतुक अवस्था में हो तो जातक गायन विद्या में निपुण होता है। **निद्रावस्था** में बुध हो तो जातक को निद्रा से सुख, व्याधि, समाधि योग से युत, सहोदररहित, अत्यधिक ताप एवं स्वजनों से वाद-विवाद के कारण धन-मान का नाश होता है।

गुरु अवस्था फल –

यदि गुरु जन्मकाल में **शयन** अवस्था में हो तो जातक बलयुत होने पर भी कम बोलने वाला, गौर वर्ण, लम्बी डाढ़ी वाला और निरन्तर शत्रुभय से युत रहता है। **उपवेशन** अवस्था में हो तो जातक

वक्ता, गर्व करने वाला, राजा और रिपु से परितप्त, पैर, जँघा, मुख और हाथ में व्रण से युक्त होता है। **नेत्रपाणि** अवस्था में गुरु के रहने पर जातक रोगयुक्त, श्रेष्ठ सम्पत्ति से विमुख, गान और नृत्य का प्रिय, कामवासनायुत, गौर वर्ण और अन्य वर्गों से सम्बन्ध रखने वाला होता है। **प्रकाश** अवस्था में गुरु हो तो गुणों से आनन्दित, सुन्दर सुख से युत एवं तेजस्वी होता है। **गमनावस्था** में हो तो जातक साहसी, मित्र और सुख से परिपूर्ण, प्रसन्न, पण्डित, विविध धन-सम्पत्ति से युत और वेद का ज्ञाता होता है। **आगमन** अवस्था में हो तो उसके गृह में अनेक मान्य जन का आगमन, सुन्दर स्त्री और लक्ष्मी सदैव अपना निवास स्थान बनाती है। **सभावस्था** में गुरु के रहने पर जातक गुरु के सदृश वाचाल, श्वेत मुक्ता-माणिक्य आदि रत्नों से परिपूर्ण, हाथी आदि वाहनों से युक्त तथा अनेक विद्याओं का ज्ञाता होता है। **आगम** अवस्था में गुरु हो तो उत्तम वाहन सुख, उत्तम विद्याओं का ज्ञाता, सुख-सुविधाओं से परिपूर्ण तथा सर्वत्र मान प्राप्त करने वाला होता है। **भोजन** अवस्था में गुरु के रहने पर जातक सुन्दर भोजन करने वाला होता है। **नृत्यलिप्सावस्था** में हो तो जातक राजमान्य, धनी, धर्माज्ञाता, तन्त्रविद् तथा शब्द विद्या में निपुण होता है। **कौतुकावस्था** में रहने पर जातक कुतूहली, महाधनी, अपने कुल में सूर्य के समान, कृपालु, कला ज्ञाता, सुखी एवं राजभवन में रहने वाला होता है। **निद्रावस्था** का गुरु जातक को सभी कार्यों में मूर्ख, दरिद्रता से पीड़ित और पुण्यकर्म से रहित बनाता है।

शुक्र अवस्था फल –

यदि शुक्र **शयन** अवस्था में हो तो जातक बलवान होता हुआ भी दन्तरोगी, क्रोधीकार, धनहीन एवं वेश्यागमन करने वाला होता है। यदि शुक्र **उपवेशन** अवस्था में हो तो नवीन मणि,वज्र, सोना, आभूषण से सुख, निरन्तर शत्रु का क्षय एवं राजा से मान-आदर की वृद्धि होती है। **नेत्रपाणि** अवस्था में शुक्र यदि लग्न, सप्तम, दशम भाव में हो तो शीघ्र ही धनागम होता है। **प्रकाश** अवस्था में होकर शुक्र अपने गृह में, उच्च में, अथवा मित्रगृह में हो तो जातक मदोन्मत्त हाथी के सदृश बलशाली, राजा के समान धनी, विद्या तथा संगीत में पारंगत होता है। **गमन** अवस्था में शुक्र हो तो उसके माता की मृत्यु होती है। **आगमन** अवस्था में शुक्र हो तो जातक धनी, सत्तीर्थ में भ्रमण करने वाला तथा सदा उत्साही होता है। **सभावस्था** में शुक्र हो तो जातक अपने प्रताप से राजदरबार में चतुर, गुणी, शत्रुहन्ता करने वाला तथा धनाधिप होता है। **भोजनवस्था** में शुक्र हो तो भूख से पीड़ित, रोग का प्रकोप एवं शत्रुओं से अनेक प्रकार की परेशानी होती है। **कौतुक** अवस्था में शुक्र हो तो इन्द्रसदृश पराक्रमी, सभा में वाचाल शक्ति से युत, श्रेष्ठ विद्या का ज्ञाता और उसके गृह में सदैव लक्ष्मी का निवास होता है। **निद्रावस्था** में शुक्र रहे तो जातक अन्य की सेवा करने वाला, दूसरे की निन्दा करने

वाला, वीर, वातूनी तथा पृथ्वी पर भ्रमण करने वाला होता है।

शनि अवस्था फल -

यदि शनि **शयन** अवस्था में हो तो जातक प्रथम अवस्था में भूख प्यास से दु:खी और श्रान्त तथा रोगी रहता है एवं वृद्धावस्था में भाग्यवान होता है। शनि के **उपवेशन** अवस्था में रहने पर जातक प्रबल शत्रु से संतप्त, व्यर्थ व्यय करने वाला, दाद-खुजली से युक्त, अभिमानी तथा राजदण्ड भोगने वाला होता है। **नेत्रपाणि** अवस्था में शनि के रहने पर जातक सुन्दर पत्नी और लक्ष्मी से युक्त, राजा तथा अपने हितचिन्तकों से उपकृत तथा बहुत कलाओं में निपुण होता है। **प्रकाश** अवस्था में शनि के स्थित होने से अनेक प्रकार के गुण, धन और बुद्धि से युक्त, कृपालु एवं शिव का भक्त होता है। **गमन** अवस्था में शनि के रहने पर जातक महाधनी, पुत्रों से आनन्दित, व्ययकारक, शत्रु की भूमि का हरण करने वाला एवं राजभवन का पण्डित होता है। **आगमन** अवस्था में शनि के रहने पर जातक गदहे पर पद प्राप्त करने वाला, पुत्र-स्त्री सुख से हीन, दीन एवं आश्रयहीन होकर पृथ्वी पर भ्रमण करता है। **सभा** अवस्था में शनि के रहने पर रत्न, सोना, मोती आदि रत्नों से आनन्दित, नीतिज्ञ एवं महाधनी होता है। **आगम** अवस्था में शनि के रहने पर रोग की वृद्धि, मन्दमति एवं राजदरबार से आर्थिक वृद्धि करने से मति से हीन होता है। यदि शनि **भोजन** अवस्था में हो उसे सरस भोजन, नेत्रज्योति में कमी एवं मोह से बुद्धि में चंचलता प्राप्त होती है। **नृत्यलिप्सा** अवस्था में धार्मिक, धन से परिपूर्ण, राजपूज्य, धीर-वीर एवं समर में महावीर होता है। **कौतुक** अवस्था में शनि के रहने पर जातक पृथ्वी और धन से युक्त, अत्यन्त सुखी, सुशील स्त्री के सुख से पूर्ण, कवि और कला का ज्ञाता होता है। यदि शनि **निद्रावस्था** में हो तो जातक धनी, सुन्दर गुण से युक्त, पराक्रमी, प्रचण्ड शत्रु को परास्त करने वाला और वेश्यागामी होता है।

राहु अवस्था फल –

यदि राहु **शयनावस्था** में हो तो जातक अधिक क्लेश से परेशान होता है। यदि राहु वृष, मिथुन, कन्या, अथवा मेषस्थ होकर शयनावस्था में हो तो जातक धन-धान्य से सुसम्पन्न होता है। यदि राहु **उपवेशन** अवस्था में हो तो जातक दाद रोग से पीड़ित होता है एवं राजभवन में मान्य होने पर भी उसकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती है। **नेत्रपाणि** अवस्था में राहु के रहने पर जातक नेत्ररोग से पीड़ित होता है, साथ ही उसे दुष्ट, शत्रु, चोर का भय और धन का नाश होता है। **प्रकाश** अवस्था में राहु के रहने पर जातक सुन्दर आसन, सुयश, धन तथा गुण की उन्नति, राजा से

अधिकार प्राप्त, प्रतिष्ठा, नूतन मेघसदृश आकृति वाला एवं विदेश से उन्नति करने वाला होता है। **गमनावस्था** में राहु के रहने पर जातक अधिक सन्तति वाल, पण्डित, धनी, दाता एवं राजपूज्य होता है। राहु के **आगमन** अवस्था में रहने पर जातक क्रोधी, सदैव बुद्धि एवं धन से वर्जित, कुटिल, कंजूस, अनेक गुणों से परिपूर्ण और धन सौख्य से युत रहता है। **आगम** में राहु हो तो जातक व्याकुलता, शत्रुओं का भय, बन्धु-बान्धव से वाद-विवाद स्वजन की हानि, धननाश, शठ और दुर्बल होता है। **भोजनावस्था** में राहु रहने पर जातक भोजन से विकल, मन्द बुद्धि, कार्य सम्पादन में दीर्घसूत्री एवं स्त्री पुत्रजन्य सुख से हीन होता है। **नृत्यालिप्सावस्था** में राहु के रहने पर जातक को महारोग वृद्धि का भय, नेत्ररोग, शत्रुभय तथा धन एवं धर्म की हानि होती है। **कौतुक** अवस्था में राहु हो तो जातक स्थानहीन, दूसरे की स्त्री में रत एवं सदैव दूसरे के धन का अपहरण करने वाला होता है। **निद्रावस्था** में राहु हो तो जातक गुणी, पुत्र-कलत्रादि सुख से युक्त, धीर, गर्वयुक्त और धन से परिपूर्ण होता है।

केतु अवस्था फल –

यदि केतु मेष, वृष, मिथुन, कन्या राशिस्थ होकर **शयनावस्था** में हो तो जातक धनवान होता है एवं अन्य राशियों में हो तो रोगकारक होता है। **उपवेशन** अवस्था में केतु हो तो जातक को

दाद-खुजली का रोग होता है, साथ ही शत्रु, वात, राजा, सर्प आदि का भय रहता है। **नेत्रपाणि** अवस्था में केतु हो तो नेत्ररोग, दुष्ट, सर्प, शत्रु और राजकुल से भय होता है। केतु प्रकाश अवस्था में हो तो जातक धनवान, धार्मिक, विदेश में रहने वाला, उत्साही, सात्विक और राजा का सेवक होता है। यदि केतु **गमनावस्था** में हो तो अधिक पुत्र वाला, महाधनी, पण्डित, गुणवान, दाता और उत्तम मनुष्य होता है। **आगमन** अवस्था में केतु के रहने पर विभिन्न रोग, धननाश, दन्तरोग, महारोग, चुगलखोर और दूसरे की निन्दा करने वाला जातक होता है। **सभावस्था** में केतु के रहने पर जातक वाचाल, अभिमानी, कंजूस, लम्पट और ठगविद्या का ज्ञाता होता है। **आगम** अवस्था में केतु के रहने पर जातक पापियों का प्रमुख, बन्धु-बान्धव से विवाद करने वाला, दुष्ट एवं शत्रु और रोग से पीड़ित होता है। **भोजनावस्था** में केतु के रहने पर जातक भूख से सदैव पीड़ित, दरिद्र, रोगयुक्त एवं पृथ्वी पर भ्रमण करने वाला होता है। **नृत्यलिप्सावस्था** में केतु हो तो जातक रोग से व्याकुल, आँख में बुद्-बुद्रोग, किसी के कथन को न धारण करने वाला, धूर्त और अनर्थकारी होता है।

कौतुकावस्था में केतु हो तो जातक कौतुकी, वेश्या में रत रहने वाला, स्थान से च्युत, दुराचारी और दरिद्र होकर पृथ्वी पर घूमने वाला होता है। **निद्रा**वस्था में केतु हो तो जातक धन-धान्यजन्य महती सुख वाला एवं विभिन्न प्रकार के गुणों को मनन करते हुए समय व्यतीत करने वाला होता है।

ग्रहावस्थानुरूप भावों का शुभाशुभत्व कथन –

जन्म समय में शयनावस्था में स्थित शुभ ग्रह जिस भाव में हों उस भाव का शुभ फल शंकारहित होकर फलकथन करने वालों को जानना चाहिए। भोजनावस्था में स्थित पाप ग्रह जिस भाव में बैठे हों उस भाव का फल हानि जानना चाहिए। यदि पापग्रह निद्रावस्था में रहकर सप्तम भाव में हों तो शुभ फल प्राप्त होता है, परन्तु पापग्रह से दृष्ट हो तो शुभ फल नहीं होता है। पंचम भाव में स्थित निद्रा या शयन अवस्था में पापग्रह हों तो शुभ फल होता है। निद्रा, शयन अवस्था में रहकर अष्टम भाव में पापग्रह बैठे हों तो उस जातक की राजा से या शत्रु से अपमृत्यु होती है। यदि शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो जातक का गंगादि पवित्र तीर्थस्थानों में मरण होता है। शयन, भोजनावस्था में स्थित पापग्रह दशम भाव में हो तो जातक को पूर्वजन्मोपार्जित कर्मों के कारण विभिन्न दु:ख भोगना पड़ता है। चन्द्र, कौतुक या प्रकाशावस्था में रहकर दशम भाव में बैठे हों तो जातक को निश्चय ही राजयोग होता है। इस प्रकार बलाबल, शुभ-अशुभ का विचार कर सभी भावों का फल जानना चाहिए।

बोध प्रश्न -2

1. ग्रह यदि अपनी मित्र की राशि में हो तो .... अवस्था में होता है।

2. सम राशि में 6 से 12 अंश तक का ग्रह .... अवस्था में होता है।

3. नीच राशि का ग्रह .... होता है।

4. विषम राशि में 12 से 18 अंश तक का ग्रह .... होता है।

5. उपवेशन अवस्था में ग्रह हो तो जातक .... होता है।

6. जन्म समय में शयनावस्था में स्थित शुभ ग्रह जिस भाव में हों उस भाव का ...... फल होता है।

3.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि जातक शास्त्र के प्राय: समस्त ग्रन्थों में ऋषियों द्वारा ग्रहों की अवस्था का उल्लेख किया गया है। जब आप प्रमुख कुछ ग्रन्थों का अवलोकन करेंगे तो पायेंगे कि उन अवस्थाओं के प्रकार भी अलग-अलग दिखलायी पड़ते है। जैसे – अंशों पर आधारित ग्रहों की बालादि अवस्था, ग्रहों की दीप्तादि अवस्था और ग्रहों की मानसिक अवस्था आदि। सारावली नामक ग्रन्थ में आपको दीप्तादि अवस्थाओं के 9 प्रकार और जातकपारिजात ग्रन्थ में ग्रहों की 10 प्रकार की मानसिक स्थितियों का वर्णन प्राप्त होगा। ग्रहाणां अवस्था वा स्थिति: ग्रहावस्था: भवति। अर्थात् ग्रहों की अवस्था अथवा स्थिति का नाम ग्रहावस्था है। ग्रहों के विभिन्न अवस्थाओं को हम विविध ग्रन्थों के आधार पर समझ सकते हैं। मंगल बालक है, बुध कुमार, वृहस्पति की ३० वर्ष, शुक्र की १६ वर्ष, सूर्य की ५० वर्ष, चन्द्रमा की ७० वर्ष तथा शनि, राहु और केतु की वय (अवस्था) १०० वर्ष है।

3.7 पारिभाषिक शब्दावली

दिप्तादि अवस्था – ग्रहों की दिप्तादि 9 अथवा 10 अवस्थायें होती है।

खल ग्रह – नीच ग्रह

षड् – 6

ग्रहावस्था – ग्रहों की अवस्था

वय – अवस्था

सुप्तावस्था – सोया हुआ।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्नों के उत्तर – 1

1. घ 2. क 3. क 4. ख 5. क 6. क

बोध प्रश्नों के उत्तर – 2

1. मुदित 2. भीत 3. वृद्ध 4. युवा 5. रोगयुक्त एवं मन्दबुद्धि 6. शुभ

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जातकपारिजात- मूल लेखक – आचार्य वैद्यनाथ, टिका – हरिशंकर पाठक।

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – मूल लेखक – महर्षि पराशर, टिका- पं. पद्मनाभ शर्मा।

लघुजातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. कमलाकान्त पाण्डेय।

वृहज्जातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. सत्येन्द्र मिश्र।

सारावली – मूल लेखक – कल्याणवर्मा, टिका – डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. ग्रहों की अवस्था से क्या तात्पर्य है।
2. ग्रहों की कितने प्रकार की अवस्थायें होती है। विस्तारपूर्वक लिखिये।
3. सूर्य की विभिन्न अवस्थाओं का फल लिखिये।
4. ग्रहावस्था का गणितीय पक्ष का उल्लेख कीजिये।
5. गुरु, शुक्र एवं शनि की अवस्थाओं का फल लिखिये।

इकाई – 4 विंशोपक बल साधन

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई MAJY-201 के द्वितीय खण्ड की चौथी इकाई से सम्बन्धित है, जिसका शीर्षक है – विंशोपक बल साधन। इससे पूर्व की इकाई में आपने ग्रहों की अवस्थाओं का अध्ययन कर लिया है। आइए अब इस इकाई में विंशोपक बल से सम्बन्धित ज्ञान का अध्ययन करते हैं।

विंशोपक बल का सम्बन्ध ग्रहों से है। फलादेश ज्ञान कथन में सूक्ष्मता हेतु विंशोपक बल का ज्ञान आवश्यक है। ग्रहों के बलाबल ज्ञान विंशोपक बल पर ही आधारित होता है।

विंशोपक बल के ज्ञान से आप सभी ग्रहों की अवस्थाओं के साथ-साथ उसके बलाबल का भी सम्यक्तया विश्लेषण कर लेंगे। फलस्वरूप कुण्डली फलादेश में आप और प्रवीण हो जायेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- बता सकेंगे कि विंशोपक बल क्या है?
- विंशोपक बल का विश्लेषण कर सकेंगे।
- विंशोपक बल के प्रकार को बता पायेंगे।
- विंशोपक बल का महत्व समझ लेंगे।
- सिद्धान्त एवं फलित ज्योतिष में विंशोपक बल की क्या भूमिका है? इसे समझा सकेंगे।

4.3 विंशोपक बल का परिचय

विंशोपक बल होरा या फलित शास्त्र का एक अभिन्न हिस्सा है। यह सदैव ग्रह तथा संधि के मध्य स्थित होता है। इसलिए इसके ज्ञानार्थ ग्रह तथा संधि के मध्य का गणितीय आनयन करते हैं, फलस्वरूप विंशोपक बल का हमें बोध हो जाता है। इसके ज्ञानाभाव में ग्रहों का सम्यक्तया फलादेश नहीं किया जा सकता है।

ग्रह तथा संधि के अन्तर को 20 से गुणा कर भाव तथा संधि के अन्तर से भाग देने विंशोपक बल मिलता है। भाव के समान ग्रह रहने से पूर्ण फल होगा और संधि के समान रहने से ग्रह निष्फल रहेगा। भाव तथा संधि के बीच में रहने से अनुपात द्वारा उसका विंशोपक बल लाया जाता है। आचार्य पराशर ने वृहत्पराशरहोराशास्त्र में विंशोपक बल को उद्धृत करते हुए लिखा है कि -

मूल श्लोक: -

उदयादिषु भावेषु खेटस्य भवनेषु वा।
वर्गविंशोंपकं वीक्ष्य ज्ञेयं तेषां शुभाऽशुभम्।।
अथात: सम्प्रवक्ष्यामि वर्गविंशोपकं बलम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण विपाकं दृष्टगोचरम्।।
गृहविंशोपकं वीक्ष्य सूर्यादीनां खचारिणाम्।
स्वगृहोच्चे बलं पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते।।
ग्रहस्थितिवशाज्ज्ञेयं द्विराश्यधिपतिस्तथा।
मध्येऽनुपाततो ज्ञेयं ओजयुग्मर्क्षभेदत:।।

अर्थात् लग्न से द्वादश भावों का और स्पष्टग्रहों का विंशोपक बल देखकर जातक का शुभाशुभ फल बताना चाहिए। अत: यहाँ आचार्य पराशर जी द्वारा विंशोपक बल का विचार किया जा रहा है। स्वगृह और उच्च में पूर्ण बल प्राप्त होता है एवं उससे सप्तम तथा नीच में बलाभाव हो जाता है। मध्य में अनुपात से बल का ज्ञान करना चाहिए।

सूर्यहोराफलं दद्युर्जीवार्कवसुधात्मजा:।
चन्द्रास्फूजिदर्कपुत्राश्चन्द्रहोराफलप्रदा:।।
फलद्वयं बुधो दद्यात् समे चन्द्रं तदन्यके।
रवे: फलं स्वहोरादौ फलहीनं विरामके।।
मध्येऽनुपातात् सर्वत्र द्रेष्काणेऽपि विचिन्तयेत्।
गृहवत् तुर्यभागेऽपि नवांशादावपि स्वयम्।।
सूर्य: कुजफलं धत्ते भार्गवस्य निशापति:।
त्रिंशाशके विचिन्त्यैवमत्रापि गृहवत् स्मृतम्।।

वृहस्पति, सूर्य और भौम- ये ग्रह सूर्यहोरा का फल देते है। चन्द्र शुक्र और शनि – ये ग्रह चन्द्रहोरा का फल प्रदान करते हैं तथा बुध, चन्द्र और सूर्य दोनों होरा का फल देता है। सम राशियों में चन्द्रहोरा का और विषम राशियों में सूर्यहोरा का फल प्रबल रूप से प्राप्त होता है। होरादि वर्ग के मध्य भाग में पूर्ण फलदायक होते हैं एवं अवसान में फलाभाव होता है, अतएव बीच में सर्वत्र अनुपात से फल अवगत करना चाहिए। इसी प्रकार द्रेष्काण आदि वर्गों का भी फल कहना चाहिए। चतुर्थांश में गृहसदृश फल जानना चाहिए, साथ ही त्रिशांश में सूर्य भौम तुल्य और चन्द्रमा शुक्र के तुल्य फलदायक होता है। इसमें प्राय: गृहसमान ही फल होता है।

लग्नहोरादृकाणांकभागसूर्यांशका इति।

त्रिंशांशकश्च षडवर्गा अत्र विंशोपका: क्रमात्।।

रसेनत्राब्धिपंचाश्विभूमय: सप्तवर्गके।

अर्थात् लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश द्वादशांश और त्रिंशांश ये ६ षड्वर्ग कहलाते हैं। इनमें क्रम से ६,२,४,५,२,१ इतने विंशोपक बल होते है।

ससप्तमांशके तत्र विश्वका: पंच लोचनम्।

त्रय: सार्द्धं द्वयं सार्द्धवेदा द्वौ रात्रिनायक:।।

स्थूलं फलं च संस्थाप्य तत्सूक्ष्मं च ततस्तत:।

सप्तमांशसहित पूर्वोक्त लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांश सप्तवर्ग है। उनमें क्रम से ५,२,३,५/२ (ढ़ाई), ९/२ (साढ़े चार), २,१ – ये विंशोपक बल हैं। ये स्थूल विंशोपक बल है, अनुपात से सूक्ष्म विंशोपक बल का साधन करना चाहिए।

दशवर्गा दिगंशाढया: कालांशा षष्टिभागका:।

त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेया: पंचषष्टयंशकस्य च।।

सार्द्धैकभागा: शेषाणां विश्वका: परिकीर्तिता:।

पूर्वोक्त सप्तवर्ग में दशांश, षोडशांश और षष्टयंश युक्त करने पर दशवर्ग होते है। उनमें क्षेत्र में ३, षष्टंयश में ५ एवं शेष में ३/२ (डेढ़) -३/२ (डेढ़) विंशोपक बल होते हैं।

अथ वक्ष्ये विशेषेण बलं विंशोपकाह्वयम्।

क्रमात् षोडशवर्गाणां क्षेत्रादीनां पृथक्-पृथक्।।

होरात्रिंशांशदृक्काणे कुचन्द्रशशिन: क्रमात्।

कलांशस्य द्वयं ज्ञेयं त्रयं नन्दांशकस्य च।।

क्षेत्रे सार्द्धं च त्रितयं वेदा: षष्टयंशकस्य हि।

अर्धमर्धं तु शेषाणां ह्येतत् स्वीयमुदाहृतम्।।

पूर्णं विंशोपकं विंशो धृति: स्यादधिमित्रके।

मित्रे पंचदश प्रोक्तं समे दश प्रकीर्तितम्।।

शत्रौ सप्ताधिशत्रौ च पंचविंशोपकं भवेत्।

अब यहाँ इस श्लोक में गृहादि १६ वर्गों का पृथक्-पृथक् विंशोपक बल कहा गया है। होरा में १, त्रिशांश में १, द्रेष्काण में १, षोडशांश में २, नवमांश में ३, क्षेत्र में साढ़े तीन ७/२, षष्टयंश में ४ और शेष में १/२-१/२ आधा-आधा इस प्रकार कुल २० विंशोपक बल होते हैं। ये सभी विंशोपक बल

स्ववर्ग में हो तो पूर्ण २० बल, अपने अधिमित्रराशि में हो तो १८, अपने मित्र राशि में हों तो १५, समराशि में हों तो १०, शत्रुवर्ग में रहने पर ७ और अधिशत्रु राशि में हों तो ५ विंशोपक बल होता है।

स्पष्ट विंशोपकबलसाधनम् –

वर्गविश्वा: स्वविश्वघ्ना: पुनर्विंशतिभाजिता:।
विश्वा फलोपयोग्यं तत्पंचोनं फलदं न हि।।
तदूर्ध्वं स्वल्फलदं दशोर्ध्वं मध्यमं स्मृतम्।
तिथ्यूर्ध्वं पूर्णफलदं बोध्यं सर्वं खचारिणाम्।।

सभी वर्ग विंशोपक को अधिमित्रादि पूर्वोक्त विंशोपक से गुणा कर २० से भाग देने पर तत्तवर्ग में स्पष्ट विंशोपक बल फलादेशोपयोगी होता है। यह विंशोपक बल ५ से अल्प रहने पर फलदायक नहीं होता, बल्कि ५ से उपर १० तक स्वल्प फलप्रद और १० से १५ तक मध्यम तथा १५ से २० तक पूर्ण फलदायक होता है।

अथाऽन्यदपि वक्ष्येऽहं मैत्रेय: त्वं विधारय।
खेटा: पूर्णफलं दद्यु: सूर्यात् सप्तमके स्थिता:।।
फलाभावं विजानीयात् समे सूर्यनभश्चरे।
मध्येऽनुपातात् सर्वत्र ह्युदयास्तविंशोपका:।।

सूर्य से सप्तम स्थान में जितने ग्रह रहते हैं, वे सभी पूर्ण फल प्रदान करते हैं। सूर्य के तुल्य जो ग्रह रहते हैं, वे समस्त फल प्रदान करने में असमर्थ होते हैं। मध्य में त्रैराशिक अनुपात से फल का ज्ञान करना चाहिए।

वर्गविंशोपकं ज्ञेयं फलमस्य द्विजर्षभ।
यच्च यत्र फलं बुद्ध्वा तत्फलं परिकीर्तितम्।।
वर्गविंशोपकं चादावयुदयास्तमत: परम्।
पूर्णं पूर्णेति पूर्णं स्यात् सर्वदैवं विचिन्तयेत्।।
हीनं हीनेति हीनं स्यात् स्वल्पेऽल्पात्यल्पकं स्मृतम्।
मध्यं मध्येति मध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थिति:।।

ग्रहों के फलाफल का आधार वर्गविंशोपक बल ही है, अत: वर्ग-विंशोपक बल को सम्यक् प्रकार से जानकर ग्रहों के उदय, अस्त को भी अच्छी तरह जान लेना परमावश्यक है। पूर्ण विशोंपक में भी दो प्रकार है। जैसे सामान्य पूर्ण १५ से साढ़े सत्रह १७.१/२ तथा अति विशिष्ट पूर्ण साढ़े सत्रह से २० है। इसी प्रकार मध्य में में दो भेद हैं। सामान्य मध्य १० से साढ़े बारह तक है और साढ़े बारह से १५ तक

उत्कृष्ट मध्य है। एवमेव हीन में भी ढ़ाई से ५ तक सामान्य हीन और ० से ढ़ाई तक अत्यन्त हीन होता है। इसी प्रकार स्वल्प में भी दो भेद हैं, जैसे ५ से साढ़े सात तक अत्यन्त स्वल्प और साढ़े सात से १० तक सामान्य स्वल्प है। इस प्रकार वर्गविंशोपक बलानुसार ग्रहों के सम्पूर्ण दशाफल को अवगत कराना चाहिए।

लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम, की केन्द्र संज्ञा होती है। २,५,८,११ की पणफर संज्ञा है और ३,६,९,१२ की आपोक्लिम संज्ञा है। लग्न से ५,९ की कोण संज्ञा है, ६,८,१२ की दुष्ट स्थान और त्रिक संज्ञा है। ४,८ को चतुरस्र कहते हैं। एवं ३,६,१०,११ की उपचय वृद्धि संज्ञा होती हैं।

तनु, धन, सहोदर, बन्धु, पुत्र, शत्रु, स्त्री, रन्ध्र, धर्म, कर्म, लाभ एवं व्यय- यह लग्न से द्वादश भावों के नाम हैं।

लग्न से नवम भाव से पिता का विचार अथवा सूर्य से नवम भाव से पिता के शुभ-अशुभ फल का विचार करना चाहिए। लग्न से दशम, एकादश भाव से जो विचार करने को कहा गया है, उस वस्तु का सूर्य से दशम, एकादश स्थान से विचार करना चाहिए। इसी प्रकार लग्न से ४,२,११ और ९ स्थान से जो विचार करने को कहा गया है, उसका विचार चन्द्र से ४,२,११ और ९ स्थान से भी विचार करना चाहिए। लग्न से तृतीय भाव से जो विचार करने को कहा गया है, उसका भौम से तृतीय भाव से भी विचार करना चाहिए और लग्न से षष्ठ भाव में जो विषयवस्तु विचार करने को कहा गया है उसका बुध से षष्ठ भाव से भी विचार करना चाहिए। लग्न से पंचम भाव से पुत्र सन्तति का विचार करने का विधान है, उसका गुरु से पंचम भाव से भी विचार करना चाहिए। इसी प्रकार शुक्र से सप्तम में स्त्री का और शनि से अष्टम भाव से मृत्यु का विचार करना चाहिए। इसी प्रकार जिस भाव से जिसका विचार करने को कहा गया है, उस का उस भाव के अधिपति से भी उसका विचार करना चाहिए।

विंशोपक बल साधन-

सूर्य ३/७/१९/३५ दशम भाव ३/६/३१/२५ संधि ३/२१/२२/३०॥

(३।२१।२२।३०)– (३।७।१९।३५) = ०।१४।२।५५॥ (१४।२।५५)×२०= २८०।५८।२० एकजातीय १०११५००।

(३।२१।२२।३०) – (३।६।३१।२५) = ०।१४।५१।५ एक जातीय किया तब ५३४६५

इतना हुआ। पूर्वसाधित एक जातीय राशि में इसका भाग देने से लब्ध १८।५४ सूर्य का विंशोपक

हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी साधन करना चाहिये।

बोध प्रश्न –

1. भाव तथा संधि के बीच में रहने से अनुपात द्वारा उसका .... लाया जाता है।
2. १,४,७,१० की .... संज्ञा होती है।
3. लग्न से द्वादश भावों का .... देखकर फलादेश करना चाहिए।
4. ५ एवं ९ वें स्थान की .... संज्ञा है।
5. लग्न से ९ वें भाव से .... का विचार करना चाहिए।
6. सभी विंशोपक बल स्ववर्ग में हो तो पूर्ण .... बल होता है।
7. ग्रहों के फलाफल का आधार .... बल ही है।

4.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि विंशोपक बल होरा या फलित शास्त्र का एक अभिन्न हिस्सा है। यह सदैव ग्रह तथा संधि के मध्य स्थित होता है। इसलिए इसके ज्ञानार्थ ग्रह तथा संधि के मध्य का गणितीय आनयन करते हैं, फलस्वरूप विंशोपक बल का हमें बोध हो जाता है। इसके ज्ञानाभाव में ग्रहों का सम्यक्तया फलादेश नहीं किया जा सकता है।

ग्रह तथा संधि के अन्तर को 20 से गुणा कर भाव तथा संधि के अन्तर से भाग देने विंशोपक बल मिलता है। भाव के समान ग्रह रहने से पूर्ण फल होगा और संधि के समान रहने से ग्रह निष्फल रहेगा। भाव तथा संधि के बीच में रहने से अनुपात द्वारा उसका विंशोपक बल लाया जाता है। लग्न से द्वादश भावों का और स्पष्टग्रहों का विंशोपक बल देखकर जातक का शुभाशुभ फल बताना चाहिए। अत: यहाँ आचार्य पराशर जी द्वारा विंशोपक बल का विचार किया जा रहा है। स्वगृह और उच्च में पूर्ण बल प्राप्त होता है एवं उससे सप्तम तथा नीच में बलाभाव हो जाता है। मध्य में अनुपात से बल का ज्ञान करना चाहिए।

4.7 पारिभाषिक शब्दावली

विंशोपक बल – ग्रहों के सप्तवर्गादि में क्रम से ५,२,३, ढ़ाई, साढ़े चार, दो और एक ये विंशोपक बल कहे गये हैं।

सप्तवर्ग – षडवर्ग में सप्तमांश को जोड़ने से सप्तवर्ग हो जाता है।

नवमांश – 3 अंश 20 कला का एक नवमांश होता है। राशि के नवें भाग को नवमांश कहते हैं।

द्वादशांश – राशि का 12 वॉं अंश द्वादशांश होता है। 2 अंश 30 कला इसका मान होता है।

त्रिशांश – एक त्रिशांश 1 अंश के बराबर होता है।

भांश – राशि का २७ वाँ भाग एक भांश के बराबर होता है।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न के उत्तर -

1. विंशोपक
2. केन्द्र
3. विंशोपक बल
4. त्रिकोण
5. पिता
6. २०
7. वर्गविंशोपक

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जातकपारिजात- मूल लेखक – आचार्य वैद्यनाथ, टिका – हरिशंकर पाठक।

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – मूल लेखक – महर्षि पराशर, टिका- पं. पद्मनाभ शर्मा।

लघुजातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. कमलाकान्त पाण्डेय।

वृहज्जातक – मूल लेखक – वराहमिहिर, टिका – डॉ. सत्येन्द्र मिश्र।

सारावली – मूल लेखक – कल्याणवर्मा, टिका – डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी।

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. विंशोपक बल से आप क्या समझते से है।
2. षोडश वर्गों के विंशोपक बल लिखिये।
3. विंशोपक बल का साधन कीजिये।
4. विंशोपक बल का महत्व प्रतिपादित कीजिये।
5. सोदाहरण विंशोपक बल को स्पष्ट कीजिये।

खण्ड - 3

अरिष्ट एवं अरिष्टभंग निर्णय

इकाई - 1 अरिष्टयोग विचार

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई के माध्यम से हम अरिष्ट के विषय में विस्तृत जानकारी ग्रहण करेंगे। वस्तुतः जीवन एक संघर्ष है और संघर्ष करते हुए मनुष्य के जीवन में कई उतार–चढ़ाव आते हैं। जीवन को प्रायः पांच भागों में विभक्त किया गया है। बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था और मृत् अवस्था। इसी प्रकार से प्रकृति में पैदा होने वाले प्रत्येक जड़ या चेतन जीव का जीवन चक्र भी चलता है। जिसमें हमारे ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तक अष्टादश आचार्यों ने ग्रहों की स्थिति को भी बाल, कुमार, युवा, वृद्ध तथा मृत् अवस्थाओं में विभक्त किया है। ज्योतिष शास्त्र ग्रहों की गति–स्थिति एवं अवस्था के अनुसार जातक की आयु का निर्धारण करता है। वास्तविक रूप से ज्योतिष शास्त्र जातक के जीवन में घटित होने वाली समस्त प्रिय–अप्रिय घटनाओं का पूर्व में जान लेने का साधन है। जातक अल्पायु है मध्यमायु है, या दीर्घायु है इसका निर्धारण ज्योतिष शास्त्र अरिष्टकाल व्यतीत होने के उपरान्त करता है। अरिष्ट आयु का वह छोटा भाग जिसमें जातक संसार को छो़ड़कर मृत्यु को 12 वर्ष के मध्य प्राप्त हो जाता है। अतः आप इस इकाई के माध्यम से उन समस्त घटनाओं का, ग्रहों के संयोग से होने वाले योगों का नकारात्मक प्रभाव का नाम ही अरिष्ट है।

1.2 उद्देश्य :–

जीवन और मृत्यु काल के अधिकार क्षेत्र में है

यथा – ''कालाधीनं जगत् सर्वम्'' अर्थात् सम्पूर्ण संसार काल के अधीन है। अतः काल ही सर्वस्व है। परन्तु सामान्य व्यवहार में प्रत्येक जीव इस चराचर जगत् में अपने भविष्य को जानने के प्रति उत्सुक रहता है। इसलिए इस संसार के सभी जन ज्योतिष शास्त्र के प्रति नतमस्तक रहते हैं। इस इकाई का उद्देश्य भी कुछ इसी प्रकार से है कि जातक के ऊपर कोई अरिष्ट तो नहीं है जिसके कारण वह मृत्यु को प्राप्त हो। यही ज्ञान करवाना इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है।

1.3 मुख्य भाग खण्ड एक

अरिष्ट किसे कहते हैं

इस मृत्युलोक में मानव अपने कर्मानुबन्ध के अनुसार जन्म प्राप्त करता है तथा अपने जन्म–जन्मान्तर में किये गये शुभाशुभ कर्मवशात् अल्पायु, मध्यमायु या दीर्घायु को प्राप्त करता है ज्योतिष शास्त्र प्रमुख रूप से आयु का निर्धारण प्रमुखतया तीन भागों में

करता है। अल्पायु, मध्यमायु और दीर्घायु। किसी जातक को मध्यमायु प्राप्त है तो उसके स्वयं के कर्मों का आधार है क्योंकि इस संसार में दृश्य एवं अदृश्य रूप से सब कर्माधीन है।'' जातक अपने कर्मों के अनुरूप इस जन्म में सुख–दुःख, लाभ–हानि, व्यय–अपव्यय, राजयोग एवं दरिद्रयोग स्वयं के कर्मों से प्राप्त करता है। ठीक इसी प्रकार से व्यक्ति का दीर्घायु होना या अल्पायु होना भी जातक के जन्म–जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का ही प्रतिफल है। वास्तव में अरिष्ट भी कुछ इसी प्रकार का ग्रहयोग है। अरिष्ट के विषय में भिन्न–भिन्न ग्रन्थों में भिन्न–भिन्न मत हैं। प्रायः बाल अरिष्ट योगों के विषय में माता–पिता द्वारा कृत कर्मानुसार मिलने वाला प्रतिफल है। वस्तुतः शोध एवं अनुसंधान के उपरान्त हमारे ज्योतिष शास्त्र के अष्टादश आचार्यों के कथनानुसार यदि जातक की मृत्यु प्रथम चार वर्ष (जन्म से प्रारम्भ कर के मध्य) में होती है तो उसमें जीव का कोई दोष नहीं है उसको दण्ड उसकी माता के कर्मों का प्राप्त होता है। क्योंकि जन्म से लेकर प्रथम चार वर्ष तक अथवा गर्भ में मृत्यु को प्राप्त होना इन सभी कारणों में माता के कर्मों की अहम् भूमिका रहती है। क्योंकि ऐसे काल में जातक माता के द्वारा खाये अन्न–जल को ग्रहण करके अपने शरीर का पोषण करता है। अतः प्रथम चार वर्ष के मध्य बालक के अरिष्ट का विचार माता के जन्मांग चक्र से करना चाहिए। क्योंकि बालक का भरण–पोषण माता के द्वारा खाये गये अन्न–जल–दूध के द्वारा होता है इसलिए प्रथम चार वर्ष तक बाल अरिष्ट हेतु माता के जन्मांग चक्र से विचार करना चाहिए।

उपखण्ड– एक

1.3.1 आठ वर्ष तक बाल अरिष्ट योग

प्रायः अधिकतर देखा गया है कि जन्म के चार वर्ष के उपरान्त बालक भोजन ग्रहण करना प्रारम्भ कर देता है ऐसे बालक का भरण पोषण पिता द्वारा अर्जित धन के द्वारा होता है। अतः यदि चार वर्ष से आठ वर्ष के मध्य यदि जातक के जन्मांग में अरिष्ट योग है तो कारक पिता को माना गया है।

अतः ऐसे जातक की जन्म कुण्डली अथवा माता की जन्मकुण्डली से विचार नहीं करना चाहिए अपितु पिता के जन्मांग–चक्र का अवलोकन कर अरिष्ट के विषय में विचार करना चाहिए। क्योंकि ऐसे समय में जातक पिता द्वारा अर्जित धन के द्वारा जीवनयापन करता है अतः पितृकष्ट से जातक की मृत्यु होती है।

आठ से बारह वर्ष पर्यन्त अरिष्ट विचार :–

आठ वर्ष पूर्ण कर चुका जातक यदि अरिष्ट योग से ग्रसित होता है तो ऐसी अवस्था में माता–पिता के जन्मांग चक्रों से विचार नहीं करना चाहिए। क्योंकि आठ वर्ष के उपरान्त जातक को स्वयं आचार–विचार, लाभ–हानि, धर्म और अधर्म के विषय में ज्ञान प्रारम्भ हो जाता है। अतः यदि किसी जातक के जन्मांग चक्र में आठ वर्षों से आरम्भ करके

बारह वर्षों के मध्य यदि जातक की अरिष्ट वश मृत्यु होती है तो जातक के स्वयं कर्मवशात् अरिष्ट योग बनता है। अतः ऐसी अवस्था में अरिष्ट विचार जातक की जन्मकुण्डली आधारित ग्रहों के अनुसार करना चाहिए।

आचार्य वराहमिहिरानुसार अरिष्ट विचार :–

यदि किसी जातक का जन्म संध्याकाल लग्न में हुंआ हो और चन्द्रमा की होरा हो, पापग्रह राशियों के अन्तिम भाग में स्थित हो तो ऐसे समय में पैदा हुआ जातक मृत्यु को प्राप्त होता है।

अथवा केन्द्रों में पाप ग्रह शनि, मंगल, राहु बैठे हों और किसी केन्द्र में बैठे पापग्रह के साथ यदि चन्द्रमा बैठा हो तो जातक मृत्यु को प्राप्त होता है। यथा–

सन्ध्यायां हिमदीधितिहोरा पापैर्भान्तगतैनिर्धनाय।
प्रत्येकं शषिपापसमेतैः केन्द्रैर्वा स विनाषमुपैति।।

बाल–अरिष्ट योग–2

यदि किसी जातक की जन्मकुण्डली के पूर्वार्ध में अर्थात् दशम भाव से चतुर्थ भाग तक, अर्थात् पूर्व कपाल में पाप ग्रह हों, तथा लग्न कुण्डली के परार्ध पश्चिमकपाल चतुर्थभाव से दशम भाव तक शुभ ग्रह हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

और यदि लग्न और सप्तम से द्वितीय द्वादश स्थान स्थित पाप ग्रहों से भी जातक का शीघ्र मरण होता है।

यथा–

चक्रस्य पूर्वापरभागगेषु क्रूरेषु सौम्येषु च कीटलग्ने।
क्षिप्रं विनाषं समुपैति जातः पापैर्विलग्नास्तमयाभितष्च।।

अन्य मृत्यु का योग :–

लग्न में, सप्तम भाव में पापग्रहों से पापयुक्त चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की यदि दृष्टि नहीं हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है।

पापावुदयास्तगतौ क्रूरेण युतष्च शषी।
दृष्टष्च शुभैर्न यदा मृत्युष्च भवेदचिरात्।।

अपि च :–

यदि 12 वें स्थान में स्थित क्षीण चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की पंचमी से शुक्ल पक्ष की पंचमी पर्यन्त चन्द्रमा क्षीण होता है) यदि जातक के जन्मांग में हो, लग्न और अष्टमभाव में पाप ग्रह हों और केन्द्रभावों में शुभग्रह नहीं हो तो जातक मृत्यु को प्राप्त होता है।

यथा–

क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः।
केन्द्रेषु शुभाष्च न चेत्क्षिप्रं निधनं प्रवदेत्।।

यदि जन्मांग चक्र में पाप ग्रहों से युक्त चन्द्रमा सप्तम, द्वादश, अष्टम और लग्न में हो, केन्द्रभावों में अर्थात् प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भाव में शुभ ग्रहों की स्थिति न हो

और उसके साथ–साथ दृष्टि योग भी न हो तो ऐसी ग्रहस्थिति में उत्पन्न जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है।

यथा–

क्रूरेण संयुतः शषी स्मरान्त्यमृत्युलग्नगः।
कण्टकाद्बहिः शुभैरवीक्षितष्च मृत्युदः।।

अपि च :–

उपखण्ड– दो

1.3.2

यदि किसी जातक की जन्म कुण्डली में लग्न से छठे या आठवें भाव में गये हुए चन्द्रमा पर पापग्रहों में से किसी एक की दृष्टि हो और शुभग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो जातक का शीघ्र मरण होता है।

आठ वर्ष में बाल–अरिष्टयोग

यदि जन्म लग्न से छठे या आठवें भाव में गये हुए चन्द्रमा पर शुभ और अशुभ ग्रहों की दृष्टि का अभाव अर्थात् शुभ और अशुभ दोनों ग्रहों की दृष्टि नहीं हो तो ऐसी ग्रह योग स्थिति में उत्पन्न जातक आठ वर्ष तक जीवित रह सकता है।

चार वर्ष में अरिष्ट

वस्तुतः चन्द्रमा की उपर्युक्त ग्रह स्थिति वशात् अर्थात् शुभ और अशुभ ग्रह दृष्टि से रहित जातक की आयु 04 वर्ष तक कही जाती है।

एक मास में अरिष्ट

यदि षष्ठभाव में गये हुए शुभ ग्रहों पर पाप ग्रहों की दृष्टि होती है तो जातक का जीवन मात्र एक मास तक होता है।

यदि पाप ग्रह से पराजित लग्नेश सप्तमभावगत होता है तब भी जातक का जीवन एक मास तक का होता है।

शषिन्यरिविनाषगे निधनमाषु पापेक्षिते
शुभैरथ समाष्टकं दलमतष्च मिश्रैः स्थितिः।
असद्भिरवलोकिते बलिभिरत्र मासं शुभे
कलत्रसहिते च पापविजिते विलग्नाधिपे।।

अपि च –

माता सहित अरिष्ट योग–

यदि लग्न कुण्डली में अष्टम भाव तथा प्रथम–चतुर्थ–सप्तम–दशम स्थान में पाप ग्रह हों और लग्न भाव में क्षीण चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की पंचमी से शुक्ल पक्ष की पंचमी पर्यन्त) हो तो जातक का मरण होता है। पाप ग्रहों के मध्यगत होता हुआ चन्द्रमा अष्टम–सप्तम और चतुर्थ स्थानस्थ हो तो भी जातक का मरण होता है इस प्रकार की ग्रह स्थिति में लग्न की स्थिति हो अर्थात् पापग्रहों के मध्यगत लग्न, सप्तम–अष्टम भाव में पाप ग्रह गये होते हैं तो जातक के साथ उसकी माता की भी मृत्यु होती है।

किसी भी ग्रह स्थिति योग में चन्द्रमा पर बलवान् ग्रह की दृष्टि होने पर जातक की मृत्यु होती है माता की नहीं।

लग्ने क्षीणे शषिनि निधनं रन्ध्रकेन्द्रेषु पापैः
पापान्तस्थे निधनहिबुकद्यूनयुक्ते च चन्द्रे।
एवं लग्ने भवति मदनछिद्रसंस्थैष्च पापै–
र्मात्रा सार्धं यदि च न शुभैर्वीक्षितः शक्तिभृद्भिः।।

अन्य बालारिष्ट योग :–

यदि किसी जातक की कुण्डली में राशि के अन्तिम नवांश गत चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तथा लग्न से पंचमभाव और लग्नभाव पर पाप ग्रहों की स्थिति होने पर भी जातक की शीघ्र मृत्यु होती है।

यदि सप्तमस्थ पापग्रह और लग्नगत चन्द्रमा से भी जातक की मृत्यु होती है।

राश्यन्तगे सद्भिरवीक्ष्यमाणे चन्द्रे त्रिकोणोपगतैष्च पापैः।
प्राणैः प्रयात्याषु षिषुर्वियोगमस्ते च पापैस्तुहिनांषुलग्ने।।

यदि क्रमशः शनिग्रह द्वादश भाव में, सूर्य नवम भाव में, चन्द्रमा प्रथम भाव में और मंगल ग्रह अष्टमभाव में हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है। उक्त ग्रह स्थिति में बलवान् गुरु की दृष्टि से जातक का मरण नहीं होता। बाल्यजीवन में केवल अरिष्ट कहा जा सकता है।

यथा –

असितरविषषांकभूमिजैर्व्ययननवमोदयनैधनाश्रितैः।
भवति मरणमाषु देहिनां यदि बलिना गुरुणा न वीक्षिताः।।

अन्य प्रकार से अरिष्ट योग :–

पापग्रहों या पाप ग्रह से युक्त होकर चन्द्रमा पंचम, सप्तम, नवम, द्वादश और अष्टम भाव में होने पर जातक के लिए मृत्यु कारक योग सम्भव है परन्तु उपर्युक्त योग तभी सम्भव है जब उक्त योग के साथ शुक्रग्रह या बुध ग्रह अथवा गुरु ग्रह के साथ योग सम्बन्ध अथवा दृष्टि सम्बन्ध नहीं होगा क्योंकि शुभग्रह बुध, शुक्र ग्रह के योग सम्बन्ध से अथवा दृष्टि सम्बन्ध से जातक की मृत्यु नहीं होगी। यथा–

सुतमदनवान्त्यलग्नरन्ध्रेष्वषुभयुतो मरणाय षीतरष्मिः।
भृगुसुतषषिपुत्रदेवपूज्यैर्यदि बलिर्भिन युतोऽवलोकितो वा।।

अभ्यासप्रश्न

प्र0.1. निम्नप्रश्नों के उत्तर दीजिए–

(1) जन्म से प्रथम चार वर्ष तक अरिष्ट विचार किसकी जन्मपत्री से करना चाहिए?

(2) अरिष्ट का कितने चरणों में विचार किया जाता है?
(3) चार से आठ वर्ष में अरिष्ट विचार किसकी कुण्डली से किया जाता है?
(4) 8 से 12 वर्ष तक अरिष्ट विचार कहां से करना चाहिए?
(5) ग्रहों की कितनी अवस्थाएं होती हैं?

1.4 मुख्य भाग खण्ड– दो

अरिष्ट विचार महर्षि पराशरानुसार

पराशरमुनि के अनुसार आयु विचार करते समय सर्वप्रथम बालारिष्ट विचार करना चाहिए क्योंकि विभिन्न आयुर्दाय साधनों में भी न्यूनतम 22 वर्ष की आयु प्राप्त होती है तथा प्रत्यक्ष में उससे कम आयु में भी मरण देखा जाता है।

1.4.1– उपखण्ड–I

पाराशरीय अरिष्टाध्याय में जन्म से 24 वर्ष तक बालारिष्ट माना गया है। अतः 24 वर्ष तक बालारिष्ट का ही विचार करना चाहिए।

यथोक्तम् –

चतुर्विंषति वर्षाणि यावद् गच्छन्ति जन्मतः।
जन्मारिष्टं तु तावत् स्यादायुर्दायं न चिन्तयेत्।।[118]

जन्म लग्न से 6, 8, 12वें स्थान में चन्द्र हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक का शीघ्र मरण होता है तथा यदि शुभग्रह से अवलोकित हो तो 8वें वर्ष में मरण होता है–

षष्टारिष्फगष्चन्द्रः क्रूरैः खेटैष्चः वीक्षितः।
जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षैः शुभेक्षितः।।[119]

चन्द्र सदृश शुभग्रह भी 6, 8, 12 भाव में वक्री हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हों तो जातक का एक माह में मरण होता है परन्तु यदि लग्न में शुभ ग्रह का अभाव हो तभी यह योग घटित होगा अन्यथा नहीं। यथोक्तम् –

शषिवन्मृत्युदाः सौम्याष्चेद्वक्राः क्रूरवीक्षिताः।
षिषोर्जातस्य मासेन लग्ने सौम्यविवर्जिते।।[120]

लग्न में 5 भाव में शनि चन्द्र भौम हो जातक की माता तथा भाई का मरण होता है। यथोक्त–

यस्य जन्मनि धीस्थाः स्युः सूर्यार्कीन्दुकुजाभिधाः।
तस्य त्वाषु जनित्रि च भ्राता च निधनं व्रजेत्।।[121]

यदि लग्न अथवा अष्टम स्थान में भौम हो तथा पापग्रहों द्वारा युत अथवा दृष्ट हो तथा सौम्य ग्रहों में न युत हो, न दृष्ट हो तो यह योग भी मरण कारक होता है।

---

118 बृ0 पा0 हो0 शा0 अरिष्टाध्याय–श्लोक 2
119 बृ0 पा0 हो0 शा0 अरिष्टाध्याय–श्लोक 3
120 बृ0 पा0 हो0 शा0 अरिष्टाध्याय–श्लोक 4
121 बृ0 पा0 हो0 शा0 अरिष्टाध्याय–श्लोक 5

यथोक्त–

पापेक्षितो युतो भौमो लग्नगो न शुभेक्षितः।
मृत्युदस्त्वष्टमस्थोऽपि सौरेणार्केण वा शुभः।।[122]

ग्रहण के समय मरण योग :–

चन्द्र ग्रहण या सूर्य ग्रहण का समय हो तथा किसी राशि में राहु, चन्द्र, सूर्य एकत्र हों तथा लग्न पर शनि–भौम की दृष्टि हो तो जातक मात्र एक पक्ष जीवित रहता है।

यथोक्तम्–

चन्द्र सूर्यग्रहे राहुष्चन्द्रसूर्ययुतो यदि।
सौरिभौमेक्षितं लग्नं पक्षमेकं स जीवति।।[123]

मुख्य भाग खण्ड दो

1.4.2 उपखण्ड दो :–

पंचस्वरा ग्रन्थ में उल्लिखित प्रमाणों के आधार पर यदि विचार करें तो पंचस्वरा नामक ग्रन्थ में प्रजापति दास का कथन है कि प्राचीन ज्योतिर्विदों ने द्वादश भाव एवं उनसे विचारणीय शुभाशुभ विषयों का सूक्ष्मता पूर्वक विचार किया है। परन्तु अशुभ कर्म द्वारा प्राप्त रोगशोकादि से प्राप्त अरिष्ट विचार हेतु कोई स्पष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं होता दैवज्ञ प्रजापतिदास द्वारा रचित एक लघु ग्रन्थ पंचस्वरा उपलब्ध होता है जिसमें सूक्ष्म एवं सरल ढंग से अरिष्ट के विषय में विचार किया गया है। जन्म या गर्भ से चार वर्ष तक, चार वर्ष से आठ वर्ष तक और आठ वर्ष से बारह वर्ष तक। इसी प्रकार से मतान्तर से विभिन्न अरिष्टों का विचार 29 वर्ष से 32 वर्ष तक का वर्णन उपलब्ध होता है। एक स्थान पर उल्लेख प्राप्त होता है कि (24) चौबीस वर्ष पर्यन्त अरिष्ट का विचार करना चाहिए। इसके अन्तर्गत जातक की आयु का विचार नहीं करना चाहिए।

यथा–

चतुर्विंषति वर्षाणि यावद्गच्छन्ति जन्मतः।
तावद्रिष्टं निष्चित्य आयुर्दायं न चिन्तयेत्।।

अन्य एक उदाहरण में प्रजापतिदास जी कहते हैं कि 29 वर्ष तक गुप्त रूप से अरिष्ट विचार करना चाहिए। इसके अन्तर्गत कभी भी वक्ष्यमाण रीति से आयु का विचार नहीं करना चाहिए।

यथा–

नव नेत्राणि वर्षाणि यावद गच्छन्ति जन्मतः।
तावद्रिष्टं विधातव्यं गुप्तरूपं न चान्यथा।।

इसी ग्रन्थ में एक अन्य रीति की चर्चा उपलब्ध होती है कि त्रिपताकी चक्र का निर्माण विधि पूर्वक करना चाहिए वक्ष्यमान रीति के अनुसार ग्रहस्थापन करने के उपरान्त बालारिष्ट का विचार करना चाहिए।

---

122 बृ0 पा0 हो0 शा0 अरिष्टाध्याय–श्लोक 6
123 बृ0 पा0 हो0 शा0 अरिष्टाध्याय–श्लोक 7

यथा –

ऊर्ध्वं रेखा त्रयं लेख्यं तिर्यग्रेखात्रयं तथा।
वेधास्तिर्यक् क्रमाज्ज्ञेयो द्वाभ्यां द्वाभ्यां परस्परम्।।
षड्रेखास्तु समालिख्य पताकी वेधनिर्णये।
रव्यादिग्रहदानेन जन्मारिष्टं विधीयते।।

सर्वप्रथम तीन रेखा परस्पर सम और समानान्तर ऊपर से नीचे लिखकर उन पर तीन रेखा परस्पर समसमानान्तर तिरछी रेखा लिखें। पुनः दो–दो रेखाओं से परस्पर क्रम से कर्णाकार छः रेखा लिखें, अग्निकोण से वायव्यकोण तक छः तथा ईषान कोण से नैऋत्यकोण तक छः रेखाओं का निर्माण करें। इस तरह 3 पूर्वापर 3 याम्योत्तर तथा 6 + 6 कर्णाकार = 18 रेखाओं से यह त्रिपताकी चक्र बनता है। इसी प्रकार से त्रिपताकी चक्र बनाकर उपर्युक्त रीति के अनुसार ग्रहों का स्थापन कर बालारिष्ट का विचार करना चाहिए।
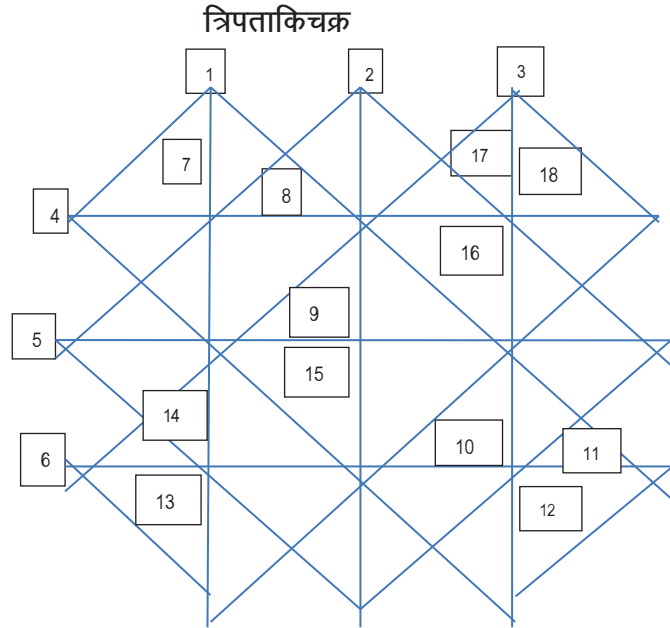
त्रिपताकिचक्र

त्रिपताकी चक्र में ग्रहस्थापन में प्रथम पूर्वापर रेखा के अन्त्य अर्थात् दक्षिण रेखाग्र से मेषादि राशियों की स्थापना होती है। अग्रिम श्लोक में ''वेदादि'' अंकों की स्थापना के लिए पूर्वा पर रेखा में से मध्य वाली रेखा से मेषादि राशियों की स्थापना की जाती है।

प्राचीन आचार्यों ने अंकस्थापन को कुम्भ से लेकर सव्यक्रम से मिथुन राशि तक ही माना है। अर्थात् अंकस्थापन में मीन–मेष–वृष तीन राशियां अंकों से विहीन है तथा सूर्यादि ग्रहों के स्थापन में उच्च सम–नीच स्थान के क्रम से वक्ष्यमाण प्रकार से तीन–दो–एक स्थान के योग से दिनादि का निश्चय किया जाता है। यथा–

कलषादद्वन्दपर्यन्तमंकदानं सुनिष्चितम्।

उच्चादिस्थानगानां च रव्यादीनां यथाक्रमम्।।

पूर्वोक्त श्लोकानुसार कथित इस श्लोक में उन्हीं संख्याओं को अन्य आचार्यों के प्रमाण द्वारा पुष्ट करते हैं कि कुम्भ राशि से विलोम क्रम से मिथुन राशि तक क्रमशः 4 |3 |14 |10 |6 |20 |2 |8 |5 | अंकों को स्थापन करना चाहिए।

यथा–

वेदपंचनखान्दत्वा बहुयष्ट समयं तथा।
भुवनं युगलष्चैव दष देयास्तथैव च।।

ग्रहों का वेध प्रकार :–

कथित रीति के अनुसार त्रिपताकी चक्र का निर्माण कर मेषादि राशियों की स्थापना कर जन्म समय में जो–जो ग्रह जिस–जिस राशि में हो उनको उन–उन राशियों में स्थापना करना चाहिए। एक रेखा में स्थित ग्रह से तीन स्थानों में अर्थात् ग्रह से दक्षिण और वामगत तियर्क रेखा में तथा सम्मुखस्थ रेखास्थ ग्रह से ग्रहों का वेध होता है।

यथा–

मेषादिनामचिह्नानि ग्रहयुक्तानि कारयेत्।
एकरेखास्थिते खेटे त्रितये वेध निष्चयः।।
लग्ने वा दक्षिणो वामे सम्मुखे ग्रहसंस्थिते।
दण्डे ज्ञेयं षिषोरिष्टं दिनं मासन्च हायनम्।।

वेधफल :–

त्रिपताकी चक्र में जो अंक स्थापित होते हैं उन अंकों और ग्रहस्थापन चक्र के अनुसार वेधायन विधि से कर्कादि राशियों का वेधैक्य अंक होता है वह इस प्रकार से है। कर्क राशि का 19 सिंह का 17 कन्या 36, तुला का 26, वृश्चिक 17, धनु का 29, मकर का 26 कुम्भ का 17 मीन का 29, मेष का 16, वृष का 17 और मिथुन राशि का 39 है। अंक स्थापन चक्र में जो अंक होते हैं उनका पूर्वोक्त वेधानुसार तीन–तीन स्थानों के अंकों का योग करके उनके मानों को यहां कहा गया है इस प्रकार से जो संख्या आवे उतने दिन–मास–वर्ष पर ग्रहों के बालानुसार बालारिष्ट के समय को निश्चित करना चाहिए। सुगमता के लिए यहां दोनों चक्रों को लिख दिया गया है। मेष–वृष–मिथुन इन तीनों राशियों में से स्वस्थापन के अंकाभाव के कारण दक्षिण–सम्मुख और वामस्थ स्थानों का योग किया गया है। उदाहरण स्वरूप जैसे मेष राशि के सम्मुख धनु राशि का अंक 10 दक्षिण स्थित कन्या का अंक 2 वाम रेखास्थित मीन का अंक 4 तीनों का योग 16 हुआ इसी प्रकार से वृष–मिथुन का 17 और 39 हुआ।

कर्क स्थानस्थित अंक 5 दक्षिण कर्णाकार स्थित अंक 10 तथा सम्मुख स्थित अंक 4 तीनों का योग 19 है। इसी तरह सिंहादि का क्रम 17 |36 |26 |17 |29 |26 |17 |29 हुआ।

यथा–

एकोनविंषतिः कर्के सिंहे सप्तदषैव तु।

षट्त्रिंषदेव कन्यायां तुला षड्विंषतिस्तथा।।

वृश्चिके सिंहवज्ज्ञेयं नवयुग्मं धनुर्धरे।
तुलायां च यथा वर्षं तथैव मकरेपि च।।
कुम्भे वृषे यथा सिंहे मीने चैव यथा धनुः।
मेषे षोडष वर्षाणि मिथुने च नवत्रयम्।।
पूर्वं वेदादयो येऽङ्कास्त्रिषु स्थानेषु कीर्तिताः।।
तेऽमी लाङ्गलवेधेऽस्मिनेकीकृत्य प्रकीर्तिताः।।
यथाङ्को दृष्यते मासो दिनं वर्षे तथैव च।
ग्रहाणां च बलं बुध्वा पूर्वोक्तं तु विनिर्दिषेत्।।

वेध चक्र
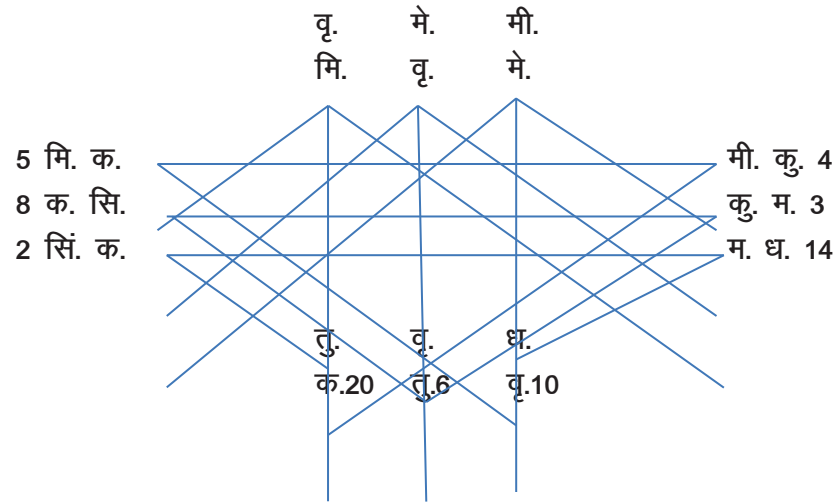
वेधैक्य चक्र
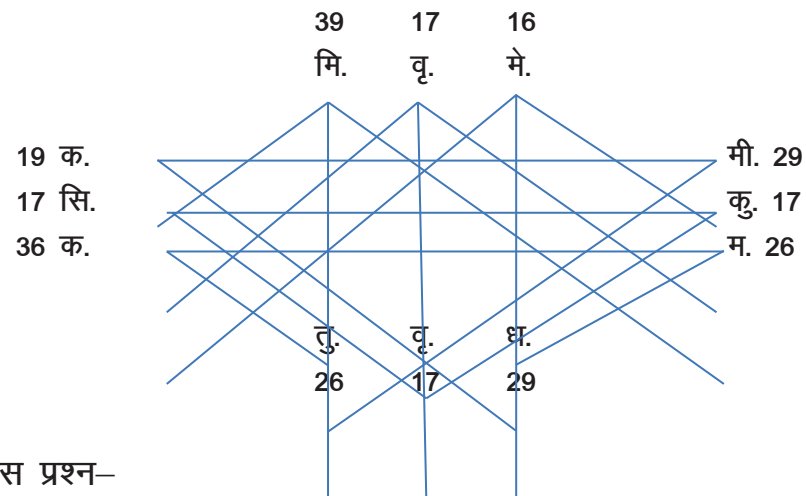
अभ्यास प्रश्न–

1.4.3 अधोलिखित प्रश्नों का परस्पर मिलान करें

क– सुतमदनवान्त्य	= क– अष्टम, प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव सहित।
ख– भृगुसुतशशिपुत्रदेवेज्य	= ख– केन्द्र भाव से रहित।
ग– राश्यन्तगे	= ग– कीट राशियां।
घ– केन्द्र त्रिकोण	= घ– पत्नी सहित।
ङ– हिमधितिरोहा	= ङ– चन्द्रमा के पापग्रहों के साथ।
च– शशिपापसमेतैः	= च– केन्द्र एवं त्रिकोण स्थान।
छ– कीटलग्ने	= छ– राशि का अन्तिम भाग।
ज– कष्टकाद् बहिः	= ज– चन्द्रमा की होरा।
झ– कलत्रसहिते	= झ– पंचम, नवम, सप्तम, एवं बारहवां भाव।
ञ– रन्ध्रकेन्द्रेषु	= ञ– शुक्र बुध एवं बृहस्पति ग्रह।

1.5 मुख्य भाग खण्ड तीन

बालारिष्ट का समय किस प्रकार से निर्धारित होगा इसके लिए परमावश्यक है कि अरिष्ट आने वाला है। ग्रह की किस अवस्था में अरिष्ट होने वाला है। कौन–कौन से ग्रह, कौन–कौन से भाव, कौन–कौन से भावेश अरिष्ट में कारक होंगे यह ज्ञान परमावश्यक है। इसी ज्ञान के आधार पर हम अरिष्ट के विषय में स्पष्ट जानकारी दे सकेंगे। त्रिपताकी चक्र निर्माण के उपरान्त ग्रह स्थापन राशि स्थापना करने के उपरान्त ग्रहवेध के विषय में जानना चाहिए। उसके उपरान्त यह आवश्यक है कि वेधकारक ग्रह, वेधकर्ता ग्रह का मित्र है अथवा शत्रु है अथवा पापग्रह है। इसके साथ–साथ हमें ग्रहबल के ऊपर भी ध्यान देना चाहिए। उसके उपरान्त ही समय निर्धारण करना चाहिए।

1.5.1 उपखण्ड 1

बालारिष्ट समय ज्ञान

वेधकारक पापग्रह यदि बलवान रहे तो वेधकारक पापग्रह जिस राशि में हो ''तद्भव एकोनविंषति कर्के'' वचन के अनुसार उस राशि संख्यातुल्य दिन पर बालारिष्ट जानना चाहिए। पापग्रह यदि मध्यबली हो तो ग्रहराशि के गतांक राशि तुल्य वर्ष में बालारिष्ट समझना चाहिए। यदि बेधकारक शुभग्रह बली हो तो शुभाग्रह गतांक राशि तुल्य वर्ष पर, मध्यबली हो तो उस राशि गतांक तुल्य मास पर और क्षीणबली हो तो उस राशि गतांक तुल्य दिन पर बालारिष्ट जानना चाहिए। **यथा–**

सबलेत्र ग्रहे पापे दिनमात्रं विधीयते।

मध्ये बले तथा मासो वर्षं चैवाबले तथा।।

बलान्विते शुभे वापि वर्ष विद्याद्यथातथम्।

मध्ये बले तथा मासं क्षीण वीर्ये तथा दिनम्।।

प्रजापति दास द्वारा त्रिपताकी चक्र के माध्यम से बालक के जन्मकालीन ग्रहों को त्रिपताकी चक्र में स्थापन कर लग्न में ग्रहों की गति स्थिति वश होने वाले अरिष्ट ज्ञान के विषय में विस्तृत रूप से चर्चा की है।

जन्मलग्न से अरिष्ट ज्ञान :–

त्रिपताकी चक्र में जन्मलग्न में यदि पापग्रह से अथवा शत्रु से ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तो जन्म लग्न राशि के गतांश तुल्य दिन संख्या पर बालक की मृत्यु होगी। यथा–

पापग्रहयुते लग्ने युते वा षत्रुवीक्षिते।

तदा दिनं भवेत्तस्य मरणाय सुनिष्चितम्।।

अपि च–

जन्मलग्न शुभ ग्रह एवं अशुभग्रह दोनों से दृष्ट हो अथवा युक्त हो तो जन्मलग्न गतांक तुल्य मास पर बालक का अरिष्ट समझें। यदि शुभग्रह अधिक बलवान हो तो मासतुल्य और यदि पापग्रह अधिक बलवान हो तो तत्संख्या गतांक तुल्य दिन पर ही अरिष्ट समझना चाहिए।

यथा–

तुल्यदृष्टि द्वयोर्वापि तुल्य योगो भवेद्यदि

तदा मासं विधातव्यं ग्रहाणांच बलाबलम्।।

असद्ग्रहयोगे लक्षणाद्यैर्दिनानि

विमिश्रेण मासा बलात्तारतम्यमिति।।

1.5.2 उपखण्ड–2

मुख्य भाग : खण्ड तीन

विभिन्न अरिष्ट योग एवं मतान्तर :–

उपखण्ड एक में आपने अरिष्ट विचार की तीन प्रमुख बिन्दुओं पर चर्चा की है। जिसमें जन्म से चार वर्ष पर्यन्त, पांच वर्ष से आठ वर्ष पर्यन्त तथा नौ से 12 वर्ष पर्यन्त जातक का मरण होना एवं कारण बनना इत्यादि।

उपखण्ड दो में हम अध्ययन करेंगे श्री प्रजापतिदास द्वारा रचित ''पंचस्वरा'' नामक ग्रन्थ के अनुसार कौन–कौन से ग्रह योगों की स्थिति में अरिष्ट योग बनता है। सारावली, जातकालंकार, पंचस्वरादि मध्ययुगीन कालीन आचार्यों ने आयुर्दाय के ऊपर विशेष चर्चा की है। जिसका उपखण्ड दो में हम अध्ययन करेंगे।

अन्य ज्योतिर्विद दैवज्ञों की ही तरह महर्षि पाराशर द्वारा विरचित वृहत्पाराशर–होराशास्त्र के आयुर्दायाध्याय में विभिन्न आयु सम्बन्धी योगों का वर्णन किया है। मैत्रेय मुनि

के आयु सम्बन्धी प्रश्न पूछने पर उनको महर्षि पाराशर आयु विचार का वर्णन किया है– यथोक्तम्–

मैत्रेय उवाच–

> **विप्ताविप्तकरौ योगौ भगवन्! भवतोदितौ।**
> **ब्रूहि मे सम्प्रति नृणामायुर्ज्ञानं विषेषतः।।**[124]

उत्तर में महर्षि पाराशर आयु सम्बन्धी योगों का वर्णन करते हैं जिसको दैवज्ञ वराहमिहिर ने बृहज्जातक ग्रन्थ में भी स्वीकृत किया है। महर्षि पाराशर ने अन्य पूर्णायु–मध्यायु–अल्पायु योगों का अधोलिखित वर्णन किया है।

- ❖ सुयोग होने पर आयु की वृद्धि तथा कुयोग होने पर आयु की हानि होती है। केन्द्र सद्ग्रह युक्त और लग्नेश भी शुभग्रहान्वित हों या गुरु से दृष्ट हों तो जातक पूर्णायु होता है।
- ❖ गुरुशुक्र युक्त लग्नेष केन्द्रगत हो या केन्द्रगत लग्न गुरु–शुक्र से दृष्ट हो तो भी जातक दीर्घायु होता है।
- ❖ लग्नेश तथा अष्टमेश से युक्त तीन ग्रह अपने–अपने उच्चस्थानगत हो और अष्टम स्थान पापग्रहों से रहित हो तो निश्चित ही जातक दीर्घायु होता है।
- ❖ अष्टमेश या शनि किसी भी स्वगृही या अपने उच्च में स्थित ग्रह के साथ हो तो जातक दीर्घायु होता है।

यथोक्तम् –

> **सुयोगोदायुगे वृद्धि कुयोगाद्धानिरिष्यते।**
> **तस्याद्योगा उदीर्यन्ते पूर्णमध्याल्पकारकाः।।**
> **सौम्य खेटान्विते केन्द्रे सषुभे लग्नये सति।**
> **किंवा जीवेक्षिते तत्र पूर्णायुः स्यात्तृणां तदा।।**
> **लग्नये केन्द्रगे जीवभार्गवाभ्यां समन्विते।**
> **वीक्षिते वा वदेदायुः पूर्णमेव न संषयः।।**[125]

अन्य दीर्घमध्यमाल्पायुयोगाः–

लग्नेश अष्टमेश में जो अधिक बलशाली हो तथा वह केन्द्रगत हो तो जातक दीर्घायु, पणफरस्थ हो तो जातक मध्यायु तथा आपोवलीमस्थ हो तो अल्पायु होता है।

लग्नेश सूर्य के मित्र हो तो दीर्घायु, सम हो तो मध्यायु तथा शत्रु हो तो जातक अल्पायु जानना चाहिए। इसी प्रकार लग्न तथा अष्टमेश से भी विचार करना चाहिए। लग्नेश तथा अष्टमेश स्वक्षेत्री हो तो दीर्घायु, समराशिगत हो तो मध्यायु तथा शत्रुराशि गति हो तो अल्पायु जातक मानना चाहिए।

> **लग्नरन्ध्रपयोर्मध्ये ग्रहो यः स्याद् बलाधिकः।**
> **तस्मिंश्च केन्द्रगे दीर्घमायुर्जातस्य निष्चितम्।।**

---

124 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 1 श्लोक

125 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 58–60 श्लोक

मध्यमं स्यात् पणफरे स्थित् आणेक्लिमेऽल्पकम्।
लग्नये सूर्यसुहृदि स्याद्दीर्घं तु समे समम्।।
स्वल्पमायू रिपौ तद्वद्वेद्यं रन्ध्राधिपादपि।
सुहृत्यसमारिराषिस्थे तत्रैवं फलमादिषेत्।।[126]

अल्पायु के अन्य योग :–

- ❖ षष्ठ, अष्टम तथा द्वादश में पापग्रह से युक्त लग्नेश हो तथा उस पर किसी भी शुभग्रह का संयोग अथवा दृष्टि न हो तो जातक अल्पायु या निःसन्तान होता है। केन्द्र स्थानों में स्थित पापग्रह यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तथा लग्नेश निर्बल हो तो जातक अल्पायु होता है।
- ❖ द्वितीय तथा द्वादश भाव पापग्रहों से युक्त हो तथा शुभग्रहों की दृष्टि या युति उन पर न हो तो भी जातक अल्पायु वाला होता है।
- ❖ लग्नेश तथा अष्टमेश दोनों ही अस्तगत हो अथवा नीचराशि स्थान गत हो तो जातक अल्पायु होता है परन्तु शुभाशुभ ग्रहों का योग होने पर मध्यायु जानना चाहिए।

यथोक्तम्–

रिपौ रन्ध्रेऽथवा रिष्फे सक्रूरे लग्नये सति।
सद्दृष्टियुतिहीने तु स्वल्पायुर्वाप्यसन्ततिः।।
यदि केन्द्रगताः क्रूराः सौम्यखेटैरवीक्षिताः।
निर्बलो लग्नपष्च स्यात् जातोऽत्राल्पायुरीरितः।।
धने सपापे रिष्फे च सद्ग्रहेक्षणवर्जितेः।
सत्खेरयुतिहीने च स्वल्पमायुर्विनिर्दिषेत्।।
निर्बलौ लग्नमृतिपावस्तनीचादिगौ यदि।
तदाल्पायुः सदसतोर्योगान्मध्यायुरीरितम्।।[127]

उपर्युक्त आयु योगों को जानकर मैत्रेय जी जिज्ञासावशात् पाराशर जी से पूछते हैं कि आयु कितने प्रकार की होती है तथा उनका प्रमाण क्या–क्या है?

यथोक्तम्–

भगन्नायुषो नानाभेदास्तु भवतोदिताः।
कियन्तस्ते कदाऽनायुरधिकायुष्च जातकः।।[128]

पाराशर विभिन्न आयु प्रकार का वर्णन करते हैं–

यथोक्तम्–

सप्तद्यायुर्मतं बालारिष्टे योगजरिष्टकम्।
अल्पमध्यम दीर्घं च दिव्यं चामितमेव च।।

---

126 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 70–72 श्लोक
127 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 74–77 श्लोक
128 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 51 श्लोक

बालारिष्टेऽष्ट वर्षाणि नखाब्दा योगरिष्टके।
दीर्घे विंषोतरषतं दिव्ये दषषताब्दकम्।।
अमितायुस्ततोऽग्रे स्यात् पुण्यवद्भिव्यरावते।।[129]

बालारिष्ट, योगारिष्ट, अल्पायु, मध्यायु, दीर्घायु, दिव्यायु तथा अमितायु यह सात प्रकार के आयुर्दाय हैं। बालारिष्ट में 8 वर्ष, योगारिष्ट में 20 वर्ष, दीर्घायु में 120 वर्ष दिव्यायु में 1000 वर्ष तथा अमितायु में सहस्राधिक वर्षों की आयु किंचित पुण्यवान् को ही प्राप्त होती है।

अमितदिव्ययुगान्तायुर्योग :–

कर्क लग्न में जातक का जन्म हो तथा उसमें चन्द्र तथा गुरु बैठे हों बुध व शुक्र केन्द्र में हो तथा अन्य ग्रह 5, 6, 11 भाव में हों तो जातक अमितायु वाला जानना चाहिए।

यथोक्त–

चन्द्रेज्यौ च कुलीरांगे ज्ञसितौ केन्द्र संस्थितौ।
अन्ये त्र्यायारिगाः खेटा अमितायुस्तदा भवेत्।।[130]

समस्त शुभ ग्रह केन्द्र या त्रिकोण भाव में बैठे हों तथा समस्त पाप ग्रह 3, 6,11 भावों में हो तथा अष्टम भाव में शुभ ग्रह की राशि हो तो जातक दिव्यायु होता है। यथोक्तम् –

सौम्याः केन्द्रत्रिकोणस्थाः पापास्त्र्यायारिगास्तथा।
शुभराशौ स्थिते रन्ध्रे दिव्यमायुस्तदा भवेत्।।[131]

उपर्युक्त योगों का पूर्ण फल उनकी शुभाशुभता पर निर्भर है। विभिन्न मिश्रित योगों में बलाबलानुसार मिश्रित योग जानना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न–

प्र0.2. अधोलिखित प्रश्नों में सही व गलत का निशान कोष्ठक में दिखाएं–

(क) केन्द्र में शनि, मंगल, राहु के साथ चन्द्रमां होने से मृत्यु होती है।
हां/नहीं

(ख) अरिष्ट विचार को तीन भागों में बांटा गया है।
हां/नहीं

(ग) जन्मकुण्डली को दो कपालों में विभाजित किया गया है।
हां/नहीं

(घ) क्षीण चन्द्रमा शुभ ग्रह की श्रेणी में आता है।
हां/नहीं

(ङ) द्यून सप्तम भाव की संज्ञा है।
हां/नहीं

---

129 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 52–54 श्लोक
130 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 55 श्लोक
131 बृ0 पा0 हो0 शा0– आयु0 56 श्लोक

1.6 सारांश –

उपर्युक्त इकाई में सर्वप्रथम आरम्भ में प्रस्तावित विषय के विषय में प्रस्तावना के माध्यम से अरिष्ट किसे कहते हैं उसका विचार किस प्रकार से करना चाहिए। अरिष्ट के विषय में सामान्य जन को ज्ञान करवाना यह उद्देश्य में स्पष्ट किया गया है। इकाई का प्रारम्भ मुख्य भाग खण्ड एक से प्रारम्भ होता है जिसमें प्रथम बिन्दु में प्रश्नवाचक के रूप में शीर्षक है कि अरिष्ट किसे कहते हैं? उपखण्ड दो में अरिष्ट का विचार, आयु के कौन–कौन से चरणों से करना चाहिए। आठ वर्ष तक, बारह वर्ष तक इत्यादि विषयों के विषय में जानकारी दी गई है। बालारिष्ट का विचार कब और ग्रहों की कौन सी अवस्था में करना चाहिए, पुनः अन्य आचार्यों के मतानुसार आठ वर्ष, चार वर्ष, एक मास, माता सहित अरिष्ट विचार के विषय में सूक्ष्मता के सार्थ वर्णन किया गया है। मुख्य भाग खण्ड एक के अन्त में अभ्यास प्रश्नों का उल्लेख किया गया है।

मुख्य भाग खण्ड दो के उपखण्ड एक में आचार्य पराशरानुसार विभिन्न प्रकार के अरिष्टों के विषय में सूक्ष्मता के साथ उदाहरण एवं प्रमाण सहित वर्णन किया गया है। जिसमें अरिष्ट के विषय में जन्म से 24 वर्षों तक अरिष्ट के विषय में वर्णन किया गया है।

मुख्य भाग खण्ड तीन में आचार्य मन्त्रेश्वर के मतानुसार अरिष्ट के विषय में वर्णन किया गया है जिसमें क्रमशः आचार्य मन्त्रेश्वर जी अरिष्ट को तीन विभागों में बांटते हैं। जिसमें क्रमशः प्रथम चार वर्ष तक माता के कारक ग्रहों के अनुसार अरिष्ट विचार, चार से आठ वर्ष तक पिता के ग्रहों के अनुसार अरिष्ट होता है। और आठ से बारह वर्षों में जातक स्वयं के शुभाशुभ कर्मवश जातक मृत्यु को प्राप्त होता है। प्रायः जातक ग्रन्थों में कुण्डली को आधार बनाकर अरिष्ट विचार किया जाता है परन्तु पंचस्वरा में आपने अध्ययन किया होगा त्रिपताका चक्र के द्वारा अरिष्ट विचार इत्यादि विषयों पर वर्णन किया गया है।

1.7 शब्दावली

बाल्यावस्था = प्रथम 20 वर्ष – 0^0 से 6^0 तक

कुमारावस्था = 20 से 40 वर्ष– 6^0 से 12^0 तक

युवावस्था = 40 से 60 वर्ष– 12^0 से 18^0 तक

वृद्धावस्था = 60 से 80 वर्ष– 18^0 से 24^0 तक

मृतावस्था = 80 से 100 वर्ष – 24^0 से 30^0 तक

अल्पायु = 50 वर्ष से पूर्व

मध्यायु = 70 वर्ष से पूर्व

दीर्घायु = 100 वर्ष तक

संध्यायां = सन्ध्याकाल प्रातः एवं सांय

होरा = राशि का आधा भाग 15^0

शशिपापसमेतैः = चन्द्रमा और पापग्रह

निधनाय = मृत्यु के लिए

केन्द्रस्थानम् = प्रथम भाव, चतुर्थ सप्तम एवं दशम भाव
उपैति = प्राप्त करता है।
चक्रस्य = राशि चक्र के
क्षिप्रं = शीघ्र ही
पूर्वापरभागेषु = लग्न के सप्तम भाव तक
उदयगत= लग्न में गया हुआ
चिरात् = देरी से
युतश्च = युक्त
क्षीणेचन्द्रे = क्षीण चन्द्रमा
व्ययगे = बारहवें भाव में गया हुआ
उदयाष्टमगैः = लग्न एवं अष्टम स्थान में
प्रवदेत् = कहना चाहिए
क्षिप्रं = शीघ्र ही
क्रूरेण = पापग्रह, मंगल, शनि आदि
निधनमाशु = शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होना
पापेक्षिते = पापग्रह के द्वारा देखा जाना
दलमतश्च = पक्ष में
असद्भिः= पापग्रह
अवलोकिते = देखने पर
बलिभिः = बलवान्
कलत्रसहिते = पत्नी के साथ
विलग्नाधिपे = लग्न स्वामी से रहित
रन्ध्र = अष्टम भाव
मदनछिद्र = सप्तम एवं अष्टम भाव
हिबुक = चतुर्थ भाव
द्यून = सप्तम स्थान
सार्धं = साथ
मात्रा = माता
राश्यन्तगे = राशि के अन्तिम भाग
सद्भिः = शुभ ग्रह
वीक्ष्यमाणे = देखे जाने पर
त्रिकोण = नवम एवं पंचम भाव
प्रयात्याषु = शीघ्र ही
अस्ते = सप्तम स्थान
असित = पापग्रह

मरणमाशु = मृत्यु के लिए शीघ्र ही
वीक्षिता = देखना
सुत = पंचम भाव
मदन = सप्तम भाव
नव = नवम भाव
अन्त्य = बारहवां भाव
शीतरश्मिः = चन्द्रमा
भृगसुत = शुक्रग्रह
शशिपुत्र = बुध
देवपूज्य = बृहस्पति
युतो = के साथ
अवलोकिते = देखने पर
षष्टारिष्फगः = 6,8,12 भाव
खेटैश्च = ग्रहों द्वारा
सौम्याः = शुभ ग्रह
वक्राः = वक्री ग्रह
सौम्यविवर्जिते = शुभ ग्रहों से रहित
धीस्थाः = पंचम भाव में स्थित
त्वाशु = शीघ्र ही
व्रजेत् = प्राप्त होता है
लग्नगो = लग्न में गया हुआ
सौरेण = शनि के द्वारा
सौरि = शनि
भवेद्यदि = यदि हो
विधातव्य = जानना चाहिए
असद्ग्रहयोगे = पापी ग्रह के योग में
लग्नाद्यैः = लग्न आदि
विमिश्रेण= मिश्रित
ऊर्ध्वं = ऊपर की ओर
तिर्यग्रेखा = तिरछी रेखा
षड्रेखास्तु = छः रेखा
समालिख्य = समान लिख कर
रव्यादि = सूर्यादि ग्रह
सुयोगे = शुभ योग होने पर
लग्नरन्ध्रपयोर्मध्ये = प्रथम एवं अष्टम भाव के मध्य

बलाधिकः = बल अधिक होने पर
पणफरे = 2,5,8,11 स्थान
सद्दृष्टियुतिहीने = शुभ ग्रहों की दृष्टि से रहित
सपापे = पापग्रह के साथ
सद्ग्रहेण वर्जिते = पापग्रह से रहित
लग्नमृतिपः = लग्न एवं अष्टम भाव
योगजरिष्टकम् = अरिष्ट योग
चामितमेव = अमित आयु
नखाब्दा = 20 वर्ष
योग रिष्टके = योगारिष्ट
विंशोत्तरशतं = 120 वर्ष
दशशताब्दकं = 110 वर्ष
चन्द्रजौ = चन्द्र और गुरु
ज्ञसितौ = बुध शुक्र
संस्थितौ = स्थित हो
त्र्यायिरिगाः = 3,11,6 में
अमितायुः = 120 वर्ष
केन्द्रत्रिकोणस्थाः = केन्द्र एवं त्रिकोण स्थान

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

मुख्य भाग खण्ड एक के प्रश्नोत्तर

1– माता की जन्म कुण्डली से।
2– तीन चरणों में।
3– पिता की कुण्डली से।
4– जातक की जन्म कुण्डली से।
5– पांच प्रकार की।

मुख्य भाग खण्ड दो के प्रश्नोत्तर

क– हां, ख– हां, ग– हां, घः नहीं, ङ– हां

मुख्य भाग खण्ड तीन के प्रश्नोत्तर

क – झ।
ख – ञ।
ग – छ।
घ – च।
ङ – ज।
च – ङ।
छ – ग।
ज – ख।
झ – घ।
ञ – क।

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थानां सूची

क्र0	ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1	बृहज्जातक	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी 2002 संवत्
2	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977
3	भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय कचौड़ी गली वाराणसी
4	चमत्कारचिन्तामणि	मालवीय दैवज्ञ धर्मेश्वर	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1975
5	जातकचन्द्रिका	जयदेव कवि	श्री कृष्णदास वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1970
6	जातकालंकार	गणेष	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
7	बृहत्पाराषरहोराषास्त्र	पराषर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
8	मुहूर्तप्रकाष	चतुर्थी लाल गौड़	ज्ञानसागर पुस्तकालय मुम्बई 1904
9	जातकभरणम्	ढुण्डीराज	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 1463
10	मुहूर्तचिन्तामणि	वराहमिहिर	मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स वाराणसी
11	जातकसारदीप	नृसिंह दैवज्ञ	मद्रास सर्वकार द्वारा प्रकाशित 1951
12	जातकतत्वम्	सुब्रह्मण्यं शास्त्री	वाराणसी
13	भारतीय कुण्डली विज्ञान	मीठालाल हिम्मतराम ओझा	मीरघाट वाराणसी 2028 संवत्
14	बृहदवकहोडाचक्रम्	वराहमिहिर	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
15	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
16	लघुजातकम्	वराहमिहिर	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 2025 संवत्
17	फलदीपिका	मन्त्रेश्वर	रंजन पब्लिकेशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली 1971 ई0

1.10 सहायक उपयोगी/पाठ्य सामग्री

क्र0	ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1	बृहज्जातक	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी 2002 संवत्
2	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977
3	भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय कचौड़ी गली वाराणसी
4	चमत्कारचिन्तामणि	मालवीय दैवज्ञ धर्मेश्वर	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1975

5	जातकचन्द्रिका	जयदेव कवि	श्री कृष्णदास वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1970
6	जातकालंकार	गणेष	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
7	बृहत्पाराषरहोराषास्त्र	पराषर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
8	मुहूर्तप्रकाष	चतुर्थी लाल गौड़	ज्ञानसागर पुस्तकालय मुम्बई 1904
9	जातकभरणम्	ढुण्डीराज	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 1463
10	मुहूर्तचिन्तामणि	वराहमिहिर	मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स वाराणसी
11	जातकसारदीप	नृसिंह दैवज्ञ	मद्रास सर्वकार द्वारा प्रकाशित 1951
12	जातकतत्वम्	सुब्रह्मण्यं शास्त्री	वाराणसी
13	भारतीय कुण्डली विज्ञान	मीठालाल हिम्मतराम ओझा	मीरघाट वाराणसी 2028 संवत्
14	वृहद्वकहोडाचक्रम्	वराहमिहिर	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
15	वृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
16	लघुजातकम्	वराहमिहिर	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 2025 संवत्
17	फलदीपिका	मन्त्रेश्वर	रंजन पब्लिकेशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली 1971 ई0

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

प्र0.1. बालारिष्ट का विचार करते हुए विस्तृत रूप से उल्लेख करें।

प्र0.2. अरिष्ट किसे कहते हैं? कितने प्रकार का है? उल्लेख करें।

प्र0.3. माता सहित अरिष्ट योग का विस्तार से उल्लेख करें।

प्र0.4. पराशरानुसार अरिष्ट का उल्लेख करते हुए प्रकाश डालें।

प्र0.5. बालारिष्ट का कालखण्ड निर्धारित करते हुए विभिन्न आचार्यों का मत स्पष्ट करें।

प्र0.6. अरिष्ट विचार में त्रिपताकि चक्र का निर्माण करते हुए स्पष्ट करें।

प्र0.7. ग्रह वेध होने पर क्या अरिष्ट सम्भव है? विस्तार से उल्लेख करें।

इकाई - 2 अरिष्ट भंग योग विचार

2.1— प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आप अरिष्ट भंग कैसे हो और कौन–कौन सी ग्रह स्थितियां जन्म कुण्डली में जिनके प्रभाववश आप यह कह सकें कि इस कुण्डली में अरिष्ट भंग हो रहा है। वस्तुतः सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही धाराओं के अनुरूप शरीर की उत्पत्ति ईश्वर ने की है। मानव के शरीर में जहां अमृत है वहीं यत्र–तत्र किसी भाग विशेष में विष की उपस्थिति भी है। वास्तविकता यह है कि भारतीय षड्दर्शन एवं ज्योतिषशास्त्र दोनो परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं क्योंकि भारतीय दर्शनानुसार ''यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे'' की कल्पना है और वास्तविकता है। ठीक उसी प्रकार से शरीर के भीतर एवं बाहर ग्रहों एवं पंचतत्वों का समावेश है। ईश्वर ने प्रकृति और पुरुष दोनों का सामंजस्य स्थापित करते हुए मानवशरीर की संरचना की है। अतः धार्मिक ग्रन्थों के अनुसार ''यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे'' की कल्पना के अनुरूप जब हम कार्यों का निष्पादन करते हैं तो हम स्वस्थ हृष्ट–पुष्ट दिखाई देते हैं। ठीक उसी प्रकार से शरीर निर्माण में जिन तत्वों का उपयोग हुआ है उन तत्वों को प्राप्त होने वाली अदृश्य रूपा शक्ति या ऊर्जा हमें आकाशस्थ ग्रहों के द्वारा प्राप्त होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि सकारात्मक एवं नकारात्मक रश्मियों से प्रदत्त ग्रह के विषय में सूक्ष्म दृष्टि से जानकर हम आगे बढ़ें। प्रायः सामान्य उक्ति है कि ''लोहा लोहे को काटता है'' परन्तु वह कैसे कटेगा यह गुत्थी यहां पर अरिष्ट योग एवं अरिष्ट भंग की स्थिति को स्पष्ट करती है। अतः आज आप ''अरिष्ट भंग योग'' इस विषय पर सूक्ष्मता से इस इकाई के माध्यम से ज्ञान ग्रहण करेंगे।

2.2— उद्देश्य—

इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है कि सामान्य जन को अरिष्ट भंग के विषय में ज्ञान ग्रहण करवाना। प्रायः ऐसा देखा गया है कि ग्रहों की जन्म कालीन स्थिति के अनुसार प्रायः दैवज्ञ बालारिष्ट की चर्चा किया करते हैं जिसके फलस्वरूप जन्म देने वाले माता–पिता चिन्तित हो उठते हैं। परन्तु ऐसा अक्सर समाज में देखा गया है कि दैवज्ञ ने जातक की कुण्डली देखकर जन्म से प्रथम चार वर्ष अथवा आठ वर्ष या 12 वर्ष या 30 वर्ष का उल्लेख तो कर दिया परन्तु उसके उपरान्त भी जातक स्वस्थ एवं हृष्ट–पुष्ट दिखाई पड़ता है तो सामान्य बात है कि दैवज्ञ ने अरिष्ट योग की चर्चा तो कर डाली परन्तु अरिष्ट भंग कैसे होगा इस विषय में नहीं जाना। अरिष्ट भंग का योग भी उसी जातक की कुण्डली में है लेकिन प्रायः हम ज्ञानाभाव के कारण उस विषय में नहीं जान पाते। इसलिए इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य अरिष्ट भंग के विषय में ज्ञान ग्रहण करवाना है।

2.3 मुख्य भाग खण्ड एक

अरिष्ट के विषय में जहां पर बलारिष्ट का विचार पूर्ववर्ती आचार्यों ने किया है वहीं

पर कौन–कौन से ऐसे कारक ग्रह हैं जिनके द्वारा आने वाले अरिष्ट को रोका जा सकता है। जिसको हमारे आचार्यों ने अरिष्टभंग की संज्ञा दी है। प्रस्तुत खण्ड में आप अरिष्ट भंग के विषय में सूक्ष्मता से अध्ययन करेंगे।

2.3.1 उपखण्ड एक

बृहद् पराशर होराशास्त्र में आयु के विशेष 7 विभागों में बालारिष्ट, योगारिष्ट तथा अल्पायु योग बताए गए हैं। यह योग व्यावहारिक दृष्टि से अशुभ माने जाते हैं। इन अशुभ योगों को शुभ ग्रहों की शुभ दृष्टि–स्थिति द्वारा भंग करके जातक को दीर्घायु योगों का वर्णन अरिष्ट भंगाध्याय में किया गया है। अरिष्ट भंग सम्बन्धी प्रश्न पूछने पर महर्षि पाराशर इनका वर्णन करते हैं–

यथोक्तम्– पाराशर उवाच–

इत्युक्तं तु मयाऽरिष्टं तदभंगं श्रृण्वतः परम्।

रिष्टं भंगं च दृष्टैव जातकस्य फलं दिशेत्।।[132]

लग्न स्थान से प्रथम–चतुर्थ–सप्तम दशम स्थानों में बुध–गुरु–शुक्र में से कोई भी ग्रह रहे तो सभी अरिष्ट सूर्य के प्रकाश द्वारा अन्धकार की तरह नष्ट हो जाते हैं।

यथोक्त–

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात् केन्द्रगतो यदि।

अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा।।[133]

एक ही गुरु यदि बली होकर लग्नगत हो जाए तो सभी अरिष्ट उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जिस प्रकार भक्ति पूर्वक शंकर जी को प्रणाम करने मात्र से सारे पाप समूह नष्ट हो जाते हैं। यथोक्त–

एक एव बली जीवो लग्नस्थोऽरिष्टसंचयम्।

हन्ति पापं त्रयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः।।[134]

बली लग्नेश यदि केन्द्रगत हो तो सभी अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं जैसे पिनाकपाणीं शंकर जी ने त्रिपुरों का संहार किया था। यथोक्त–

---

[132] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 1
[133] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 2
[134] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 3

एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः।

अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा।।[135]

शुक्ल पक्ष में रात्रि में जन्म हो और लग्न पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो या कृष्ण पक्ष में दिन में जन्म हो तथा लग्न पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो सभी अरिष्ट समाप्त हो जाते हैं। यथोक्त–

शुक्लपक्षे क्षपा जन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षते।

विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्ट विनाशनम्।।[136]

यदि तुला लग्न में 12 वें स्थान में सूर्य हो तो जातक शतायु होता है। तुला लग्न में 12वां सूर्य कन्या राशि आश्विन मास में उपरोक्त योग बनाता है। यथोक्तम्–

व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुलालग्ने तु जायते।

जीवेत् स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत्।।[137]

लग्न से चतुर्थ भाव में पाप ग्रह स्थित हों तथा गुरु 1–4–7–10–9–5 में से अन्यतम में हो तो जातक स्वस्थ, दीर्घायु एवं माता–पिता दोनों के कुल में आनन्द देने वाला होता है। यथोक्त–

लग्नाच्चतुर्थकः पापो गुरु केन्द्रत्रिकोणगः।

कुलद्वयानन्दकरः स्वस्थो दीर्घायुरर्भकः।।[138]

गुरु तथा मंगल दोनों एकत्र संयुक्त हों या मंगल पर गुरु की दृष्टि हो तो सभी अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं तथा माता–पिता के लिए भी शुभ होता है। यथोक्तम्–

गुरु भूमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथवा कुजः।

हत्वाऽरिष्टमशेषं च जनन्याः शुभकृदः भवेत्।।[139]

चतुर्थ या दशम में स्थित पापग्रह शुभग्रहों के मध्य में पड़े शुभग्रह केन्द्र 1,4,7,10 या त्रिकोंण 9,5 में हो तो पिता को सौख्य कहना चाहिए। यथोक्त–

---

[135] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 4
[136] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 5
[137] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 6
[138] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 7
[139] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 8

चतुर्थे दशमें पापः सौम्यमध्ये यथा भवेत्।

पितुः सौख्यकरो योगः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।।[140]

शुभ ग्रहों के बीच में पापग्रह हो और शुभग्रह केन्द्र या त्रिकोंण में हो तो शीघ्र ही सभी अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं तथा उस भाव का फल असफल नहीं होता। यथोक्त–

सौम्यान्तरगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।

सद्योनाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्थफलं न तत्।।[141]

उपर्युक्त विवेचन महर्षि पाराशरोक्त बृहद् पाराशर होराशास्त्र के अरिष्ट भंगाध्याय में वर्णित है। दैवज्ञ वराहमिहिर रचित बृहज्जातकम् के अरिष्टाध्याय में भी विभिन्न बालारिष्ट आदि योगों में अरिष्ट तथा अरिष्ट भंग योगों का वर्णन किया है–

शनि–सूर्य–चन्द्र और मंगल ग्रह क्रमशः 1,2,9,11 तथा 8 स्थानों में होने से जातक की शीघ्र मृत्यु हो जाती है। उक्त ग्रह स्थिति पर सबल गुरु की दृष्टि से मरण का अरिष्ट भंग होता है। बाल्य जीवन में कष्ट होता है।

असितरविशशांकं भूमिजैर्व्ययननवमोदयनैधनाश्रितैः।

भवति मरणमाशु देहिनां यदि बलिना गुरुणा च वीक्षिताः।।[142]

पपग्रहों या पापग्रहों से युक्त चन्द्र की स्थिति 5,7,9,12,8 वें भाव में जातक को मृत्यु देता है। परन्तु शुक्र, बुध या गुरु की दृष्टि या युति से उपर्युक्त योग का अरिष्ट भंग होता है। यथोक्त–

सुतमदननवान्त्यलग्नरन्ध्रेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः।

भृगुसुतशशिपुत्रदैवपूज्यैर्यदि बलिभिर्नयुतोऽवलोकितो वा।।[143]

अरिष्ट भंग योग

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणें वा पापदृष्टः शुभेक्षितः।

लग्नचन्द्रेन्यिहारिष्ट विनाशार्थ सुखं दिशेत्।।

---

[140] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 9
[141] बृ0 पा0 हो शा0 अरिष्ट भंगाध्याय– श्लोक 10
[142] बृहज्जातकम्– अरिष्टाध्याय श्लोकसंख्या 10
[143] बृहज्जातकम्– अरिष्टाध्याय श्लोकसंख्या 11

यदि बृहस्पति केन्द्र तथा त्रिकोण में हो उसे पापग्रह न देखें बल्कि शुभग्रह देखते हों तो वह उस प्राणी के लग्न चन्द्रमा और मुन्थहा इनसे उत्पन्न अरिष्ट नष्ट करके धन व सुख प्रदान करता है।

लग्ने धुने शस्तनुगाः सुरेव्यः क्रूरैरदृष्टः शुभमित्रदृष्टः।
रिष्टं निहत्यर्थयशः सुखास्ति दिशेत्स्वपाके नृपतिप्रसादम्।।

यदि सातवें स्थान का स्वामी और बृहस्पति लग्न में हो परन्तु दोनों (सप्तमेश तथा बृहस्पति) को पाप ग्रह न देखते हों किन्तु उसे शुभग्रह वा मित्र ग्रह देखते हों तो उस प्राणी के अरिष्टों को दूर कर देते और अपनी दशा में राजा को प्रसन्नता से धन, यश तथा सुख प्राप्त करते हैं।

त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैष्च सौम्यैः।
रत्नाम्बरस्वर्णयशः सुखान्तिर्नाशोऽप्यरिष्टस्य वर्गश्च पुष्टिः।।

यदि तीसरे, छठे, ग्यारहवें इनमें से किसी स्थान में पापग्रह हो और केन्द्र 1,4,7,10 तथा त्रिकोण 9,5 इनमें से किसी भी स्थान में शुभ ग्रह हो तो वह प्राणी रत्न, कपड़े, सोना और यश प्राप्त करता है। उसके अरिष्ट नष्ट हो जाते और उसका शरीर हृष्ट–पुष्ट रहता है।

आद्ये चतुष्के जननीकृताधैः मध्ये च पित्रार्जितपापसंधैः।
बालस्वदन्त्यासु चतुः शरत्सु स्वकीयदोवैः समुपैति नाशम्।।

चार वर्ष तक बालक माता–पिता के दोष से मर सकता हो माता को कोई रोग हो या पूर्व जन्म के कोई पाप हो या पालन–पोषण व दूध पिलाने में लापरवाही बरती जाए। पांच से आठ वर्ष तक पिता के पाप जैसे अधिक लाड़–प्यार, साहसिक कामों में लगा देना, उचित शिक्षा व चरित्र निर्माण न करना आदि से मृत्यु सम्भव हो। वैसे बारह वर्ष तक बालक अपनी शरारतों दोषों आदि से मृत्यु को प्राप्त हो सकता है।

तद्दोषशान्त्यै प्रतिजन्मतारमाद्वादशाब्दं जपहोमपूर्वम्।
आयुष्करं कर्म विधाय तातो बालं चिकित्सादिभिरेव रक्षेत्।।

अतः प्रतिवर्ष या प्रतिमास बालक के जन्म नक्षत्र व तिथि में या जन्मदिन पर जप होम दानादि करना चाहिए साथ ही आयु बढ़ाने वाले विधान वर्धापन आदि करते चलें। अपि च बालक को समयानुसार यथोचित दवा टीका आदि लगवाकर सम्भावित बालरोगों से रक्षा करें।

2.3.2 उपखण्ड दो

आयु के भेद

अष्टौ बालारिष्टमाद्यौ नराणां योगारिष्टं प्राहुराविशति स्यात्।
अल्पं चाद्वात्रिशतं मध्यमायुश्चासप्तत्याः पूर्णमायुः शतान्तम्।।

जन्म से आठ वर्ष तक बालारिष्ट योगों का प्रभाव रहता हो 20 वर्ष तक योगों के आधार पर प्राप्त योगारिष्ट योग तथा 32 तक अल्पायुयोग, 70 वर्ष तक मध्यायुयोग व तत्पश्चात्, 100 वर्ष तक पूर्णायुयोग होते हों, यह प्राचीन मत है।

नृणां वर्षशतं आयुस्तस्मिंस्त्रेधा विभज्यते।
अल्पं मध्यं दीर्घमायुरित्येवत्सर्वसम्मतम्।।

मनुष्य की पूर्णायु सामान्यतः 100 वर्ष है, अतः 3 से उसे भाग देने पर 33 वर्ष तक अल्पायु 67 वर्ष तक मध्यायु व बाद में दीर्घायु में तीन मानना सर्वसम्मत है।

गोचर से मृत्युकाल विवेक

सपापो लग्नेशो रविहतरुचिर्नीचरिपुगो
यदा दुःस्थानेषु स्थितिमुपगतो गोचरवशात्।
तनौ वा तथोगो यदि निध्नमाहुस्तनुभृतां
नवांशाद्द्रेक्काणाच्छिशिरकरलग्नादपि वदेत्।।

मारकदशा व आयु खण्ड का निश्चय करके जब आयुखण्ड में ये स्थितियां बनें तब मृत्यु की सम्भावना होती है।

1— लग्नेश पापयुक्त होकर नीचगत या शत्रुगत या अस्त हो।

2— लग्नेश यदि नीचस्तगत या पापयुक्त होकर 1,6,8,12 भावों में गोचर करे या लग्न से सम्बन्ध करे।

3— लग्न नवांशेश, लग्नद्रेष्काणेश, चन्द्रराशीश, चन्द्रद्रेष्काणेश, चन्द्रनवांशेश, में से कोई एक या अधिक युक्त प्रकार से पापयुक्त, नीचस्तगत, होकर लग्न में गोचर करें।

पिता आदि अरिष्टकारक योग

ताताम्बिका सोदरमातुलाश्च मातामही मातृपिता च बालः।
सूर्यादिकैः पंचमधर्मयातैः क्रूरर्क्षगैराशु हताः क्रमेण।।

लग्न से पंचम और नवम भावों में यदि पापग्रह की राशि हो और उनमें सूर्यादि ग्रह स्थित हों तो क्रमशः पिता, माता, सहोदर, भाई, मामा मातामही, मातामह, और जातक को मारते हैं। जन्म लग्न से पंचम और नवम में यदि पापग्रह की राशि में सूर्य हो तो पिता के लिए चन्द्रमा हो तो माता के लिए, मंगल हो तो सहोदर भाई के लिए, बुध हो तो मामा के लिए, बृहस्पति हो तो नानी के लिए शुक्र हो तो नाना के लिए और यदि शनि स्थित हो तो स्वयं के जातक के लिए अरिष्टकारक होता है।

वृद्धगर्ग

ताताम्बिकासोदरमातुलाश्च मातामही मातृपितृश्च सूक्तम्।
सूर्योदिखेयः खलु पंचमस्थाः निहनत्ति सर्वे क्रमषः प्रसूतौ।।

गर्ग के अनुासार केवल पंचम भाव में ग्रहस्थिति ही अरिष्ट कारक होती है।

''सगर्भ मातृ मृत्यु योग''

सभानुजे शीतकरे विलग्नाद् दिवाकरे रिःक गृहोपयाते।
धरासुते बन्धुगते वदानीं विपद्यते तज्जननी सगर्भा।।

सूर्य और शनि के साथ चन्द्रमा यदि द्वादश भाव में तथा धरासुत (भौम) चतुर्थ भाव में स्थित हो तो जातक की माता गर्भावस्था में ही मृत्यु को प्राप्त होती है।

आपो क्लिमस्थानगता नभोगा विधूतवीर्या यदि भानुमुख्याः।

मासद्वये तस्य ऋतुजये वा जातस्य चायुः कथयन्ति तंज्ञा।।

सूर्यादि सभी ग्रह यदि निर्बल होकर आपोक्तिम (3–6–9–12 वे भाव) में स्थित हो तो ऐसे जातक की 2 मास 3 मास आयु आचार्यों ने कहा है।

शुक जातक

आपोक्लिमे स्थिताः सर्वे ग्रहाः बलविवर्जिताः।
षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम्।

उदाहरण कुण्डली
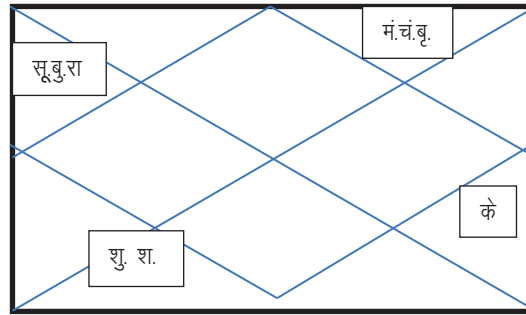
तीन वर्ष की आयु

बृहस्पति भौमगृहऽष्टमस्थः सूर्येन्दुभौमार्कजदृष्टमूर्तिः।

अब्दैस्त्रिभिर्मार्गवदृष्टिहीनो लोकान्तरं प्रापयति प्रजातम्।।

मंगल की राशि (मेष, वृश्चिक) का बृहस्पति यदि अष्टम भाव में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, और शनि से दृष्ट हो तथा उसे न देखता हो तो जातक तीन वर्ष में कालकवलित होता है।

त्रिवर्षायु योग

उदाहरण कुण्डली
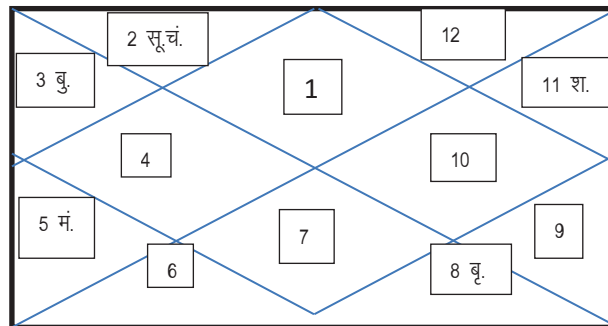
शुभग्रह कृत अरिष्ट भंग योग

जीवभार्गवसौम्यानामेकः केन्द्रगतो बली।
पापकृद्योगहीनष्चेत्सद्योऽरिष्टस्य भंगकृद्।।

बृहस्पति शुक्र और बुध में से कोई एक भी बलवान होकर यदि केन्द्र में स्थित हो और पापग्रह से युत दृष्ट न हो तो अरिष्ट का नाशक होता है।

माण्डव्य जातक

बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रभागतो बलवान्।
यद्यपि क्रूरसहायः सद्योरिष्टस्य भंगाय।। जा0 पा0

कश्यप–

एकोऽपि ज्ञार्य शुक्राणां लग्नात्केन्द्रगतो यदि।
अरिष्टं निखिले हन्ति तिमिरे भास्करो यथा।।

चन्द्रकृत अरिष्टभंग योग

स्वोच्चस्थः स्वगृहेऽथवापि सुह्रदां वर्गे च सौम्यस्य वा
सम्पूर्णः शुभवीक्षितः शशधरो वर्गे स्वकीयेऽपि वा।
शत्रूणामवलोकनादिरहितः पापैरयुक्तेक्षितोऽ–
रिष्टं हन्ति सुदुस्तरं दिनमणिः प्राले व राशिं यथा।।

अपनी उच्च राशि में अपनी राशि में मित्र के वर्ग में अथवा शुभग्रह के वर्ग में पूर्ण विम्ब से युक्त शुभग्रह से दृष्ट अथवा अपने वर्ग में स्थित चन्द्रमा यदि शत्रुग्रह से युत दृष्ट न हो तो कठिन अरिष्टों का उसी प्रकार नाश करता है जैसे सूर्य कुहरे के समूह को नष्ट करता है।

लग्नेशकृत अरिष्टभंग योग

लग्नेशो बलयुक्तश्चेत् त्रिकोणे वा चतुष्टये।
अरिष्टयोग जातोऽपि बालो जीवति निश्चयः।। जा0 पा0

लग्नेश यदि बलवान् होकर केन्द्र (1–4–7–10) वें भाव में अथवा त्रिकोण (5–7 वें भाव) में स्थित हो तो अरिष्ट योग में उत्पन्न बालक भी जीवित रहता है।

कश्यप–

एक एव हि लग्नेशः केन्द्र संस्थो बलान्वितः।
अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा।।

ग्रहकृत अरिष्टभंग योग

यस्य जन्मनि तुंगस्थाः स्वक्षेत्रास्थानमाश्रिताः।
चिरायुशं शिशुं जातं कुर्वन्त्यत्र न संशयः।।

जिसके जन्मकाल में सभी ग्रह अपनी उच्चराशि में और स्वग्रह में स्थित हों तो वे नवजात शिशु की दीर्घायुष्य प्रदान करने में सक्षम होते हैं।

एकांशभागो गुरुसूर्यपुत्रौ धर्मस्थितौ वा यदि कर्मसंस्थौ।
अर्कोदिये सौम्यनिरीक्ष्यमाणौ मुनिर्भवेदत्रा भवश्चिरायुः।।

एक हीं अंश (नवमांश) में स्थित होकर शनि और वृहस्पति यदि नवें या दशमें भाव में स्थित हों और लग्न में सूर्य शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक चिरायु और तापसी होता है।

मुनित्वप्रद योग
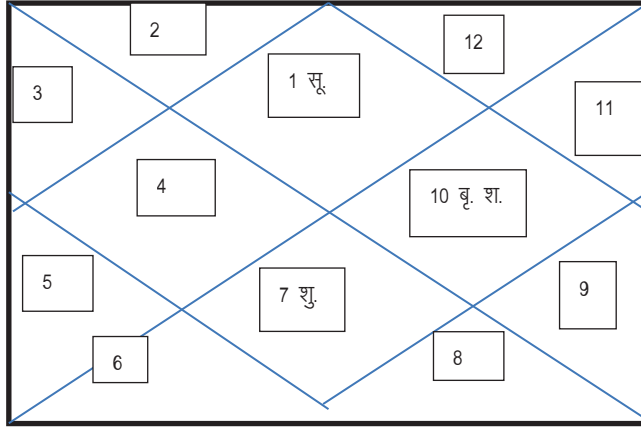
2.3.3 अभ्यास प्रश्न

क– पापग्रहों से युक्त चन्द्रमा 5,7,9,12,8 भावों में होने पर जातक दीर्घायु होता है– हाँ/नहीं

ख– गुरु की दृष्टि 1,2,9,11,8 भावस्थ अरिष्ट भंग करती है– हाँ/नहीं

ग– पापयुक्त, नीचगत, या अस्तंगत लग्नेश में मृत्यु की संभावना होती है– हाँ/नहीं

घ– बृहस्पति, शुक्र, बुध पापग्रह से दृष्टिहीन होने पर अरिष्ट नाशक होते हैं– हाँ/नहीं

ड.– चन्द्रमा पर पाप ग्रहों की दृष्टि माता का निधन नहीं करती है– हाँ/नहीं

2.4 मुख्य भाग खण्ड दो

प्रायः ज्योतिष शास्त्र में जातक के जन्मोपरान्त होने वाले अरिष्ट के विषय में जब हम विचार करते हैं तो केवल जातक के अरिष्ट का होना आवश्यक नहीं है अपितु जातक के जन्मोपरान्त कुछ ऐसे ग्रह जातक की जन्म कुण्डली में होते हैं जो संकेत देते हैं कि पिता को, माता को भ्राता को अथवा ज्येष्ठ पिता, माता, भ्राता या मामा आदि को कष्ट होने

वाला है ऐसा संकेत जातक की ग्रह–गोचरीय स्थिति के अनुसार लगाया जा सकता है। वस्तुतः आज के आधुनिक युग में भी लोग रूढ़ीवादी विचारधारा को नहीं छोड़ पा रहे हैं। जैसे अमुक बालक के जन्मोपरान्त यह अरिष्ट हुआ यह अशुभकारक है इत्यादि। जबकि व्यक्ति अपने कर्मों के अनुसार सुख–दुःख, लाभ–हानि, आय–व्यय का भोग करता है। ग्रह तो मात्र सूचक हैं, जो कि पूर्व में ही शुभ एवं अशुभ काल का संकेत देते हैं। इस खण्ड में आप अरिष्ट विचार में अध्ययन करेंगे।

2.4.1 उपखण्ड एक

पित्राद्यरिष्टम्

आदित्याद्यशये पापः पीड़ितो दशमाधिपः।
तदा पितुर्महत्कष्टं निधनं वेति कीर्तितम्।।

जन्मांग में सूर्य से दशम भाव में यदि पाप ग्रह स्थित हो तथा दशमेश शत्रुग्रहों द्वारा (शत्रुगृह में यह पीड़ित होता है। एकादश अध्याय के चतुर्थ श्लोक की टीका देखिए) पीड़ित हो तो जातक के पिता को महाकष्ट अथवा मृत्यु होती है।

भवति यदि शशांकपापयोस्तराले
जनुषि सुखनगस्थैः पापखेटैः शशांकात्।
विधुरपि बलहीनो नष्टकातिर्जनन्या
निधनमपि विशेषादाहुराचार्यवर्याः।।

यदि बलहीन क्षीण चन्द्रमा पापग्रहों के मध्य स्थित हो तथा उसमें (चन्द्रमा से) चतुर्थ और सप्तम भावों में पापग्रह स्थित हो तो जातक की माता के लिए अरिष्टकारक होता है। पिता के अरिष्ट सम्बन्धी अनेक योग अन्य जातक ग्रन्थों में कहे गये हैं। पाठकों के बोधार्थ उनमें से कुछ को यहां उद्धृत करना उचित जान पड़ता है।

लग्ने सौरिर्यदे भौमः षष्ठस्थाने च चन्द्रमा।
इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति।।
लग्ने जीवो धने मन्दरविभौमबुधास्तथा।
विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता।।
सूर्यः वापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यमः।
सूर्योत्सप्तमगः पापस्तदा पितृवधो भवेत्।।
सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनन्दनः।
राहुर्व्यये न यस्यैव पिता कष्टेन जीवति।।
दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रसमाश्रितः।
म्रियते तस्य जातस्त पिता शीघ्रं न संशयः।।
रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः।
कुजश्च सप्तमस्थाने पिता तस्य न जीवति।।
भौमांशकस्थिते भानौ स्वपुत्रेण निरीक्षिते।
प्राग्जन्मनो निवृत्तिः स्यान्मृत्युर्वाऽपि शिशोः पितुः।।

पाताले चाम्बरे पापौ द्वादशे च यदा स्थितौ।
पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशान्तरं ब्रजेत्।।
राहुजिवौ पुिक्षेत्रे लग्ने वाऽथ चतुर्थके।
त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तातं न पश्यति।।
भानुः पिता च जन्तूनां चन्द्रो माता तथैव च।
पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा।।
पित्रारिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम्।
भानाः षष्ठाब्दमर्क्षस्यैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।।
चतुस्स्रजगतैर्वाऽपि पित्रारिष्टं विनिर्दिशेत्।।

1– लग्न में शनि, सप्तम भाव में मंगल और षष्ठ भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है।

2– लग्न में बृहस्पति तथा शनि, सूर्य, भौम और बुध द्वितीय भाव में स्थित हो तो जातक के विवाह के समय उसके पिता का निधन होता है।

3– यदि सूर्य पापग्रहों से संयुक्त हो अथवा पापग्रहों के मध्य में स्थित हो और उससे सप्तमभाव में पापग्रह स्थित हो तो पिता का निधन हो जाता है।

4– यदि जन्मांग के सप्तम भाव में सूर्य और दशम भाव में भौम तथा द्वादश भाव में राहु स्थित न हो तो जातक का पिता आजीवन कष्ट भोगता है।

5– यदि दशम में शत्रुग्रही मंगल स्थित हो तो जातक के पिता का शीघ्र निधन हो जाता है।

6– षष्ठ भाव में यदि चन्द्रमा, लग्न में शनि तथा सप्तम भाव में मंगल स्थित हो तो जातक का पिता जीवित नहीं रहता है।

7– मंगल के नवांश में स्थित होकर सूर्य यदि शनि से यदि देखा जाता हो तो जातक की अथवा उसके पिता की मृत्यु होती है।

8– यदि चतुर्थ, दशम या द्वादश भावों में दो पापग्रह संयुक्त हों तो जातक माता–पिता के निधनोपरान्त प्रवासी होता है।

9– राहु के साथ बृहस्पति षष्ठ अथवा तनुभाव में स्थित हो तो 23वें वर्ष में जातक के पिता का निधन होता है।

10– सूर्य जातक के पिता होते हैं और चन्द्रमा जातक की माता होती होती है। अतः सूर्य यदि पापग्रहों के मध्य स्थित हो अथवा पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक के पिता के लिए अरिष्ट कारक होता है।

11– सूर्य से छठे, आठवें भावों में अथवा चतुर्थ और अष्टम भावों में यदि पापग्रह स्थित हो तथा शुभग्रह अन्यत्र स्थित हो तो जातक के पिता के लिए अरिष्टकारक होता है।

मातृकष्ट विचार

चन्द्रमा यदि पापानां त्रितयेन प्रदृश्यते।
मातृनाशो भवेतस्य शुभदृष्टे शुभं भवेत्।।

धने राहुर्बुधः शुक्रः सोरिः सूर्यो यथास्थित।
तस्य मातुः भवेन्मृत्युर्मृते पितरि जायते।।
पापात्सप्तमरन्ध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते।
बलिभिः पापकैर्दृष्टे जातो भवति मातृहा।।
उच्चस्थः वाऽथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः।
मातृहीनो भवेद्बालः अजाक्षीरण जीवति।।
चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रं यदा भवेत्।
तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत्।।
द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत्।
तदा मातुर्वधं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः।।
लग्ने क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च।
सप्तमे भवने क्रूरः परिवारक्षयंकरः।।
लग्नस्थे च गुरौ सौरी धने राहौ तृतीयगे।
इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति।।
क्षीणचन्द्राव्जिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः।
मता परित्यजेद्बालं षण्मासाच्च न संशयः।।
एकांशकस्थौ मन्दारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा।
शशिकेन्द्रगतौ वा द्विमातृभ्यां च जीवति।।

1– जन्मांग में स्थित चन्द्रमा पर यदि तीन पापग्रहों की दृष्टि हो तो जातक की माता का निधन होता है। यदि चन्द्रमा पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो शुभफल होता है।

2– जन्मांग के धनभाव में यदि राहु, बुध, शुक्र, सूर्य और शनि संयुक्त हो तो प्रथमतः माता और बाद में पिता का निधन होता है।

3– जन्मांग में पापग्रह से सातवां और आठवां भाव पापाक्रान्त हो पापग्रहों से संयुक्त चन्द्रमा किसी बलवान पापग्रह से सप्तम या अष्टम भावों में दृष्ट हो तो जातक मातृहन्ता होता है।

4– उच्चराशिगत अथवा नीचराशिगत सूर्य यदि जन्मांग के सप्तम भाव में स्थित हो, तो जातक मातृहीन होता है तथा बकरी के दूध से उसका पालन होता है।

5– जन्मांग में चन्द्रराशि से चतुर्थराशि में शत्रुगृही पापग्रह स्थित हो और केन्द्रभावों में कोई शुभग्रह न हो तो जातक माता के लिए अरिष्टकारक होता है।

6– द्वादश और षष्ठ भावों में दोनों भावों में पापग्रह स्थित हो तो माता का और यदि चतुर्थ और दशम भावों में पापग्रहों की स्थिति हो तो जातक के पिता का निधन होता है।

7– लग्न और द्वादश भाव में पापग्रह, द्वितीय भाव में शुभग्रह तथा सप्तमभाव में भी पापग्रह स्थित हो तो इस योग में उत्पन्न जातक अपने परिवार का विनाशक होता है।

8– जन्मलग्न में बृहस्पति धन (द्वितीय) भाव में शनि और तृतीय भाव में राहु स्थित हो तो जातक की माता जीवित नहीं रहती है।

9– क्षीण चन्द्रमा से त्रिकोण 5, 9 भावों में केवल पापग्रह स्थित हो तो माता छः मास के भीतर ही जातक का परित्याग कर देती है।

10– यदि एक ही राशि के नवांशगत होकर मंगल और शनि किसी भाव में स्थित हों, अथवा चन्द्रलग्न से केन्द्र 1,4,7,10 भावों में स्थित हो तो वह जातक दो माताओं से पालित होता है।

भ्रातृकष्ट–विचार

यदा पापखे चारिणो जन्मकाले
धरानन्दनाक्रन्तभावात् सहोत्थे।
तदैवाशु नाशं सहोत्थस्य धीरा,
मणित्थादयः प्राहुराचार्यमुख्याः।।

जन्मांग के जिस भाव में भौम स्थित हो उससे तृतीय भाव में यदि पापग्रह स्थित हो तो जातक के भाई के लिए अरिष्टकारक होता है ऐसा मणित्थ आदि प्रमुख आचार्यों का कथन है।

मातुलकष्ट–विचार

बुधारातिभावे तु पापा भवन्ति
वृत्तज्ञोऽपि नीचाश्रितो नष्टवीर्यः।
तदा मातुलानां विनाशो विशेषा–
दिति प्राहुराचार्यवर्यानराणाम्।।

बुधाधिष्ठित भाव से षष्ठ भाव में पापग्रहों के मध्य अथवा पापग्रहों से युक्त बुध अपनी नीच राशि का होकर बलहीन हो तो जातक के मामा का निधन होता है ऐसा श्रेष्ठ आचार्यो का कथन है।

सन्ततिकष्ट–विचार

बृहस्पतेः पंचमभावसंस्था महीजमान्दागुदिवाकराश्चेत्।
गुरोरपत्याधिपतिः सपापस्तदात्मजानां विरतिं वदन्ति।।

बृहस्पति से पंचम भाव में यदि मंगल, शनि, राहु या सूर्य स्थित हो तथा बृहस्पति से पंचम भाव का स्वामी भी पापग्रहों से युक्त हो तो जातक सन्तानहीन होता है अथवा उसकी सन्तान मृत्यु को प्राप्त होती है।

2.4.2 उपखण्ड दो

स्त्रीकष्ट–विचार

चेत्कवेरंगनागारगामी दिनेशो
विनाशोऽगनायाः सपापो निरुक्तः।
नैधने मन्दतः पापखेता बलिष्ठा,
नृणां नैधनं सत्वरं सन्दिशन्ति।।

जिस भाव में शुक्र स्थित हो उससे पंचम भाव में यदि पापग्रह से युक्त सूर्य स्थित हो तो जातक की पत्नी का निधन होता है। जिस भाव में शनि स्थित हो, उससे अष्टमभाव में यदि बलवान पापग्रह स्थित हो तो स्वयं जातक के लिए घातक होता है।

अरिष्टभंगयोगाः

भवतीन्दुरथो शुभान्तराले परिपूर्णः किरणैश्च जन्मकाले।
विनिहन्ति तदाशु दोषसंगानिभसंगानिव केसरी वलिष्ठः।।

सम्पूर्ण किरणों से युक्त चन्द्रमा यदि शुभ ग्रहों के मध्य स्थित हो तो वह हाथियों के झुण्ड को नष्ट करने वाले सिंह के समान अरिष्ट समूह का नाश कर देता है।

यदि जनुषि निशाकरोऽरिभावं गुस्कविचन्द्रजवर्गगो विशेषात्।
शमयति बहुकष्टजालमद्धा मुरहरनाम यथाघसंघतापम्।।

जिस प्रकार मुरारि (मुर नामक राक्षस का वध करने वाले) नाम कीर्तन मात्र से पापसमूहजस्थ नष्ट हो जाता है उसी प्रकार शत्रु भाव में स्थित बृहस्पति शुक्र बुध के वर्ग का चन्द्रमा अरिष्टों को नष्ट कर देता है।

यदि सकलन भोगवीक्ष्यमाणो लसित तनुर्जनुरिन्दुरेव सद्यः।
दिविचरजनितं विहन्ति दोषे खगपतिराशु यथा भुजंगजालम्।।

जैसे पक्षिराज गरुड़ सर्पसमूह को तत्काल विनष्ट कर डालता है वैसे ही जन्मलग्नस्थ सभी ग्रहों में दृष्ट चन्द्रमा अरिष्टों का नाश कर देता है।

भवति यदि तनोः क्षपाकरोऽयं मृतिभवने शुभखेटवर्गश्चेत्।
गदविकलतनुं पितेव बालं किल परितः परिरक्षति प्रसन्नः।।

शुभ ग्रहों के वर्ग में स्थित चन्द्रमा यदि लग्न से अष्टम भाव में स्थित हो तो वह जातक की रक्षा वैसे ही करता है जैसे पिता अपने रुग्ण बालक की रक्षा करता है।

शुभभवनगतस्तदीयभागे जनिसमये कविनाऽवलोकिमश्चेत्।
शमयति सकलं शशी त्वरिष्टं जलमिव पावकमंगिनामतीव।।

शुभग्रह की राशि अथवा नवांशस्थ चन्द्रमा यदि शुक्र से दृष्ट हो तो जातक के समस्त अरिष्टों का वैसे ही शमन कर देता है जैसे जल अग्नि को शान्त कर देता है।

बलवानपि केन्द्रगो विशेषादिह सौम्यो यदि लाभगो दिनेशः।
शमयत्यखिलामरिष्टमालमपि गांगं हि जलं यथाऽघजालम्।।

बलवान् शुभग्रह यदि केन्द्र में स्थित हो तथा एकादश (लाभ) भाव में सूर्य स्थित हो तो जातक के समस्त अरिष्टों का वैसे ही शमन करता है जैसे गंगा का जल पापसमूह को नष्ट कर देता है।

भवति हि जनुरंगपो बलिष्ठा एकलशुभैरवलोकितो न पापैः।
इह मृतिमपहाय दीर्घमायुर्वितरति वित्तसमुन्नतिं विशेषात्।।

यदि बलवान् लग्नेश पर सभी ग्रहों की दृष्टि हो और पापग्रह की उस पर दृष्टि न हो तो यह योग मृत्यु को किनारे कर जातक को दीर्घायुष्य और धन प्रदान करता है।

सुरपतिगुरुरंगधायगामी निजपदगोऽपि च तुंगतामुपेतः।

बहुतरखगजं निहन्ति दोषं हरिरिभयूथमुपागतं हि यद्वत्।।

स्वगृही अथवा स्वनवांशस्थ अथवा उच्चस्थ बृहस्पति लग्न में स्थित हो तो वह अनेक ग्रहजन्य दोषों को उसी प्रकार विनष्ट कर देता है जैसे हाथियों के झुण्ड में जाकर सिंह उनको विनष्ट कर देता है।

गुरुसितवर्गगा हि पापाः सकलशुभैरवलोकिता यदि स्युः।
खगकृतमपि वारयन्ति रिष्टं तृणराशीनिव वह्निबिन्दुरेकः।।

यदि सभी पापग्रह बुध, बृहस्पति और शुक्र के वर्ग में स्थित हो और उन पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो यह योग ग्रहजन्य अरिष्टों को वैसे ही विनष्ट कर देता है जैसे अग्नि की एक चिंगारी तृण समूह को नष्ट कर देती है।

सहजरिपुगतोऽथ लाभगो वा शुभैरवलोकितो युतो वा।
अगुरिह विनिहन्ति रिष्टजलं नगजाधीश इवाधिता पराशिम्।।

सभी शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट राहु यदि त्रिषडाय 3,6,11 वें भाव में स्थित हो तो वह अरिष्ट समूह को वैसे ही नष्ट कर देता है जैसे नगजाधीश पार्वती के पति भगवान शंकर स्मरण मात्र से ही त्रिताप (दैहिक, दैविक और भौतिक ताप) को नष्ट कर देते हैं।

अधिकबलयुता जनुर्नयोगा यदि सकला नरराशिगा भवन्ति।
हितभवननिजोच्चगेहगा वा बहुतरमाशु लयं प्रयातिरिष्टम्।।

यदि सभी पुरुषराशि (विषमराशि) गत ग्रह मित्र राशि में या अपनी उच्च राशि में स्थित हो तो अनेक अरिष्टों का शमन कर देता है।

इनके अतिरिक्त अन्य अनेक अरिष्टभंगयोग जातक ग्रन्थों में कहे गए हैं। जन्मांग में जिनकी उपस्थिति से अरिष्टयोगों का शमन होता है कतिपय पराशरोक्त अरिष्टभंग योग यहां उद्धृत किये जाते हैं।

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात्केन्द्रगतो यदि।
अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा।।
एक एव बली जीवो लग्नस्थोरिष्टसंचयम्।
हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः।।
एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः।
अरिष्टं निखिलं हन्ति विनाको त्रिपुरं यथा।।
शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्य निरीक्षिते।
विपरीतं कृष्णपक्षे तदारिष्टं विनाशनम्।।
व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुलालग्ने तु जायते।
जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुबालिको भवेत्।।
गुरुभौमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथवा कुजः।।
चतुर्थदशमे पापः सौम्यमध्ये यदा भवेत्।
पितुः सौख्यकरो योगः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।।
लग्नाच्चतुर्थे यदि पापखेटः केन्द्रत्रिकोणे सुरराजमन्त्री।

कुलद्वयानन्दकरः प्रसूतौ दीर्घायुरोग्य समन्वितश्च।।
सौम्यान्तरगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।
सद्यो नाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्थफलं न तत्।।

1– बुध, बृहस्पति और शुक्र में से कोई एक ग्रह यदि लग्न से केन्द्र में स्थित हो तो समस्त अरिष्ट का नाश कर देता है वैसे ही जैसे सूर्य अन्धकार का नाश कर देता है।

2– मात्र बृहस्पति ही बलवान होकर यदि लग्न में स्थित हो तो अरिष्ट समूह को विनष्ट कर देता है वैसे ही जैसे भगवान् शंकर को भक्तिपूर्वक किया गया प्रणाम पापशंकुल को नष्ट कर देता है।

3– भगवान् शंकर ने जैसे त्रिपुर नामक राक्षस का नाश किया था वैसे ही बलवान् लग्नेश यदि केन्द्रस्थ हो तो समस्त अरिष्टों का विनाश कर देता है।

4– शुक्लपक्ष की रात्रि में जन्म हो और लग्न पर सौम्य ग्रहों की दृष्टि हो अथवा कृष्णपक्ष में दिवा जन्म हो और लग्न पर सौम्य ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक के अरिष्टों का नाश होता है।

5– तुला लग्न में जन्म हो और द्वादश भाव में सूर्य स्थित हो तो जातक सौ वर्ष तक जीवित रहता है और दीर्घायु होता है।

6– मंगल और बृहस्पति संयुक्त हो अथवा मंगल बृहस्पति से दृष्ट हो तो अरिष्टों का नाश हो जाता है और और माता के लिए सुखद होता है।

7– चतुर्थ या दशम भाव में शुभ ग्रहों के मध्य पापग्रह स्थित हो तथा केन्द्र तथा त्रिकोण भावों में शुभग्रह स्थित हो तो यह योग पिता के लिए सुखकर होता है।

8– लग्न से चतुर्थ भाव में यदि पापग्रह और केन्द्र–त्रिकोण भावों में पुरराज मन्त्री बृहस्पति स्थित हो तो जातक चिरायु और निरोग रहता है।

9– पापग्रह शुभग्रहों के मध्य और शुभग्रह केन्द्र त्रिकोणगत हो तो यह योग अनेक अरिष्टों का नाश करता है तथा इन भावों के फल की वृद्धि करता है।

आयुनिर्णयः

ग्रहों की धातु एवं दोष

पितं धातुरुदाहृतोऽर्ककुजयोः श्लेष्मानिलौ ग्लौभयोः।
श्लेष्मेज्यस्य विदास्त्रिदोष उचितः स्यान्मातरिश्वा शनेः।।
सूर्याद्यैर्मृतिगैर्धनंजयपयः शस्त्रज्वराज्ञातरुक्।
क्षुन्तृड्दोषवशेन संघननभृद् गच्छेद् ध्रुवं पंचताम्।।

सूर्य एवं मंगल की धातु पित है। चन्द्रमा व शुक्र की धातु 'कफ' वात, गुरु की कफ, बुध त्रिदोष (वात, कफ, पित्त) और शनि की धातु वात है। अग्नि, जल, शस्त्राघात, ज्वर, अज्ञात व्याधि, क्षुधा एवं प्यास ये सूर्यादि ग्रहों के क्रमशः शनि वात दोष है। अष्टम स्थान में जन्मसमय में जो ग्रहस्थिति हो उसके दोष के कारण ही निश्चय से मृत्यु होती है। जन्म समय स्थान में जो ग्रह स्थित हो उसके धातु, प्रकृति दोष व शरीरराग में जन्म तत्तद् रोगों से मृत्यु समझनी चाहिए। प्रश्न भाग में भी उक्त अर्थ की पुष्टि की गई है। वहां पर

शरीर के सातों तत्वों को भी क्रमशः ग्रहों का प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। अस्थि, रक्त, मज्जा, त्वचा, वसा, वीर्य, स्नायु इनको भी क्रमशः सूर्यादि ग्रहों का प्रतिनिधित्व दिया है। अष्टम स्थान में जो भी राशि व ग्रह हो अथवा वह इस स्थान पर दृष्टि रखने वाले ग्रहों की राशियों से कालांग विभागानुसार ज्ञात शरीरांग में रोगादि होने से मृत्यु होती है।

2.4.3 रिक्त स्थानों की पूर्ति करें–

1– चन्द्रमा...ग्रह है।
पाप / शुभ

2– क्षीण चन्द्रमा...................................ग्रह है। शुभ / अशुभ

3– अष्टमस्थ गुरु दृष्टि...............का नाश करती है। मृत्यु / आयु

4– ....शुभ ग्रह है।
शनि,मंगल,राहु,केतु / बृहस्पति,चन्द्र,शुक्र,बुध

5– सूर्य के मित्रग्रह.............................हैं वृहस्पति,मगल,चन्द्रमा / शनि,शुक्र,राहु,केतु

2.5 मुख्य भाग खण्ड तीन

अरिष्ट भंग के विषय में भिन्न–भिन्न आचार्यों द्वारा पूर्व में किए गए शोध के आधार पर भिन्न–भिन्न मतान्तर हैं। पूर्व में खण्डों में आपने वराहमिहिर, पराशर आदि आचार्यों द्वारा अरिष्ट भंग योग के विषय में अध्ययन किया है। इस उपखण्ड में आप दैवज्ञ वैद्यनाथ कृत् ''जातक परिजात'' में वर्णित अरिष्ट भंग योगों का अध्ययन करेंगे।

उपखण्ड एक अरिष्ट भंग योग

ज्योतिष के फलित ग्रन्थों में बहुत से अरिष्ट योगों का वर्णन किया गया है। यह अरिष्ट योग जातक की आयु, पर, मान, प्रतिष्ठा इत्यादि का नाश करते हुए अशुभ फल प्रदान करते हैं। लेकिन जिस प्रकार एक लघुतम दीपक भी घनघोर अन्धकार का नाश कर देता है ठीक उसी प्रकार कुण्डली में भी शुभ ग्रह की दृष्टि या युक्ति से अथवा परिस्थिति वशात् क्रूर या पापग्रह की दृष्टि या युति के द्वारा भी उपर्युक्त अरिष्ट योगों का प्रभाव नष्ट हो जाता है तथा यह अरिष्ट भंग योग कहलाते हैं। इन अरिष्ट भंग योगों द्वारा मनुष्य शुभ फल प्राप्त करता है। इन अरिष्ट भंग योगों का जातक ग्रन्थों में विस्तृत वर्णन किया गया है–

- दैवज्ञ वैद्यनाथ कृत् ''जातक परिजात'' नामक ग्रन्थ में अरिष्टाध्याय में विभिन्न अरिष्ट भंग योगों का वर्णन प्राप्त होता है।
- यदि लग्नेश अत्यन्त बलवान हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो, केन्द्र भावों में स्थित हो, पापग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो ऐसा जातक सदा भाग्य से युक्त होकर दीर्घायु होता है। तथा–

अत्यन्तसत्वे यदि लग्ननाथे सौम्यान्विते तादृशदृष्टियोगे।

केन्द्रस्थिते पापदृशाविहीने सद्भाग्ययुग् जीवतिदीर्घमायुः।।[144]

उपर्युक्त योग का वर्णन बृहज्जातकम् की भटोत्पली टीका में भी मिलता है। यथा–

लग्नाधिपोऽति बलवान् शुभैरदृष्टः,
केन्द्रस्थिते शुभखगैरवलोक्यमानः।
मृत्युं विधूय विदधाति सुदीर्घमायुः,
सार्धं गुणैबहुभिरुर्जितया च लक्ष्म्या।।[145]

यदि जातक के जन्मांग में चन्द्रमा शुभग्रह में या शुभांश में हो तो सम्पूर्ण अरिष्टों का नाश हो करता है यदि उपर्युक्त योग में चन्द्रमा के ऊपर शुक्र की दृष्टि हो तो यह योग विशेषारिष्ट नाशक होता है। यथा–

चन्द्रः सम्पूर्णगात्रास्तु सौम्यक्षेत्रांशगोऽपि वा।
सर्वारिष्टनिहन्ता स्यात् विशेषाच्छुकवीक्षिताः।।[146]

उपर्युक्त योग का वर्णन वराहमिहिर कृत बृहज्जातक की भटोत्पली टीका में भी किया गया है। यथा–

चन्द्रः सम्पूर्णतनुः सौम्यर्क्षगतः स्थितः शुभस्यान्तः।
प्रकरोत्यरिष्टभंगः विशेषतः शुक्रसन्दृष्टः।।[147]

यदि जातक के जन्मांग में बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध इन तीनों सौम्य ग्रहों में से कोई भी एक ग्रह बलयुक्त होकर चारों केन्द्रभावों में से किसी भी स्थान में हो तथा उस ग्रह की किसी भी पापग्रह से सम्बन्ध न हो तो ऐसा योग जातक के अरिष्ट योगों का तुरंत संहार कर देता है। यथा–

जीवभार्गवसौम्यानामेकः केन्द्रगतो बली।
पापकृद्योगहीनश्चेत्सद्योरिष्टस्य भंगकृद्।।[148]

उपर्युक्त योग का वर्णन बृहज्जातक की भट्टोत्पली टीका के अरिष्ट भंग में किया गया है। यथा–

बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रमागतो बलवान्।
यद्यक्रूरसहायः सद्योरिष्टस्य भंगाय।।[149]

शीत ऋतु में रात्रिकाल घास पर पड़ी ओस रूपी जल की बूंदें प्रातःकाल तक जमकर हिम का रूप धारण तो कर लेती हैं परन्तु सूर्य की तप्त किरणें जिस प्रकार उस हिमावरण को भेदकर उस जलराशि का नाश करती हैं उसी प्रकार से ही यदि किसी जातक के जन्मांग में चन्द्रमा–

- अपनी उच्च राशि (वृष) में हो–

---

[144] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 71
[145] बृहज्जातकम्– अरिष्टाध्याय भट्टोत्पलि टीकायां अरिष्टभंगाः। श्लोक 2
[146] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 72
[147] बृहज्जातकम्– अरिष्टाध्याय भट्टोत्पलि टीकायां श्लोक 4
[148] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 73
[149] बृहज्जातकम्– अरिष्टाध्याय भट्टोत्पलि टीकायां श्लोक 5

- अपनी स्व राशि (कर्क) में हो–
- अपने मित्रों के वर्ग में हो–
- शुभ वर्गों में हो–
- पूर्णबिम्ब हो–
- अपने वर्ग में हो–

उपर्युक्त में से किसी एक स्थिति में होकर शत्रुग्रहों की दृष्टि युति से रहित हो तो अत्यन्त विकट अरिष्ट योगों का भी नाश हो करता है। यथा–

स्वोच्चस्थः स्वगृहेऽथवापि सुहृदां वर्गे च सौम्यस्य वा,
सम्पूर्णं शुभवीक्षितः शशधरो वर्गे स्वकीयेऽपि वा।
शत्रूणामवलोकनादि रहितः पापैरयुक्तेक्षितोऽ–
रिष्टं हन्ति सुदुस्तरं दिनमणिः प्रालेयराशिं यथा।।[150]

यदि किसी जातक का शुक्लपक्ष में रात्रि का जन्म हो अथवा कृष्णपक्ष में दिन में जन्म हो या शुक्लपक्ष में चन्द्रमा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तथा कृष्णपक्ष में अशुभ ग्रह से दृष्ट हो तो ऐसा चन्द्रमा षष्ठ या अष्टम स्थान में होने पर भी जातक की रक्षा उसी प्रकार करता है जिस प्रकार पिता अपने पुत्र की रक्षा करता है। यथा–

पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां,
कृष्णेऽथवाऽहनि शुभाशुभदृष्टिमूर्त्तिः।
तं चन्द्रमा रिपुविनाशगतोऽपि नूना–
मापत्सु रक्षति पितेव शिशुं प्रजातम्।।[151]

उपर्युक्त योग का वर्णन जातकाभरणम् में भी किया गया है। यथा–

वलपक्षे यदि जन्मरात्रौ कृष्णे दिवाऽष्टरिगतोऽपि चन्द्रः।
क्रमेण दृष्टः शुभपापखेटैः पितेव बालं परिपालयेत्सः।।[152]

जिस प्रकार भक्ति भाव से युक्त होकर श्रद्धावान भक्त द्वारा आशुतोष भगवान् शंकर के चरणों में एक बार किये हुए प्रणाम मात्र से ही उसके दुरूह से दुरूह कठिन से कठिन पापों का नाश क्षण भर में ही हो जाता है उसी प्रकार जातक के जन्मांग में पूर्ण बलवान् और निर्मल बिम्ब बृहस्पति की केन्द्र स्थानों (1,,4,7,10) में स्थिति मात्र से ही अनेक दुरूह अरिष्टों का नाश हो जाता है। यथा–

केन्द्रोपगोतिबलवान् स्फुरदंशमाली,
स्वर्लोकराजसचिवः शमयेदवश्यम्।
एको बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि,
भक्त्या प्रयुक्त इव शूलधरे प्रणामः।।[153]

---

[150] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 74
[151] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 75
[152] जातकाभरणम् अरिष्टभंग

अपि च–

लक्षान्दोषान् हन्ति देवेन्द्रमन्त्री केन्द्रप्राप्तः।।

यदि जातक की जन्मकुण्डली में लग्नाधीश बलयुक्त होकर त्रिकोण स्थानों (5,9) अथवा केन्द्र भावों (1,4,7,10) भावों में स्थित हो तो ऐसा लग्नेश जातक के सभी अरिष्टों का नाशक होता है। जातक के अन्यारिष्ट योग होने पर भी उपर्युक्त लग्नेश बालक को दीर्घायु देता है। यथा–

लग्नेशो बलयुक्तश्चेत् त्रिकोणे वा चतुष्टये।
अरिष्टयोगजातोऽपि बालो जीवति निश्चयः।।[154]

उपर्युक्त केन्द्रगत गुरु की शुभदृष्टि युति से शुभ योग का वर्णन मानसागरी में भी प्राप्य है। यथा–

किं कुर्वन्तु ग्रहाः सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः।

यदि जातक के जन्म समय में जन्मांग में बहुत से ग्रह स्व–स्व उच्चराशिगत हों अथवा बहुत से ग्रह स्वगृही हों तो वे सारे ग्रह जातक को चिरायु करते हैं इसमें कोई संशय नही है। यथा–

यस्य जन्मनि तुंगस्थाः स्वक्षेत्रस्थानमाश्रिताः।
चिरायुषं शिशुं जातं कुर्वन्त्यत्र न संशयः।।[155]

राहु सामान्यतः क्रूर ग्रह माना जाता है परन्तु क्रूर स्वभावग्रह होने पर भी राहु स्थितिवशात् अरिष्ट भंग योग बनाता है।

यदि जातक के जन्मांग में राहु लग्नस्थान से तीसरे, छठे या ग्यारहवें भाव में हो तो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो उसी प्रकार सब अरिष्टों का नाश करता है जिस प्रकार वायु रुई के ढेर का नाश करती है। यथा–

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्यैर्निरीक्षितः सद्यः।
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तलसंघतम्।।[156]

उपर्युक्त योग का वर्णन शौनक ऋषि द्वारा भी किया गया है। यथा– शौनकेन–

राहुस्तृतीये षष्ठे वा लाभे वा शुभसंयुते।
तद्दृष्टो वा तदाऽरिष्टं सर्वं शमयति ध्रुवम्।।[157]

बृहज्जातक में भी उपर्युक्त योग का वर्णन मिलता है। यथा–

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्ये निरीक्षितः सम्यक्।
नाशयति सर्वं दुरितं मारुत इव तूलसंघातम्।।[158]

---

153 जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 76
154 जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 77
155 जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 78
156 जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 79
157 जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 79 हिन्दीटीकायाम्
158 बृहज्जातक– मटोत्पली टीका–अरिष्टाध्याये

यदि जातक के जन्मांग में राहु मेष, वृष या कर्क लग्न में लग्नस्थ हो तो जातक की रक्षा उसी प्रकार करता है जैसे प्रसन्न राजा अपराधी पुरुष को क्षमा कर देता है। यथा–

अजवृषकर्कि विलग्ने रक्षति राहुनिरन्तर बालं।
पृथिवीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम्।।[159]

यदि जातक के जन्मांग में पूर्ण चन्द्रमा शुभवर्ग में स्थित हो तथा अन्य शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक के सभी अरिष्टों का नाश उसी प्रकार करता है जिस प्रकार गरुड़ जहरीले सर्पों का नाश करता है। यथा–

निशाकरः शोभनवर्गयुक्तः,
शुभिक्षितः पूरितदीप्तजालः।
जातस्य निःशेषमरिष्टमासुः,
निहन्तियद्वद् गरलं गरुत्मान्।।[160]

यदि जातक के जन्मांग में चन्द्र राशीश लग्न में हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तथा उच्चस्थ चन्द्रमा पर शुक्र की दृष्टि हो तो जातक के सभी अरिष्टों का नाश होता है। यथा–

चन्द्राधिष्ठितराशीशे लग्नस्थे शुभवीक्षिते।
भृगुणा वीक्षिते चन्द्रे स्वोच्चेऽरिष्टं हरेत्तदा।।[161]

यदि जातक के जन्मांग में लग्नेश अति बलवान् होकर केन्द्र में हो तथा उस पर पाप ग्रहों की दृष्टि न हो या शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वह मृत्यु को हराकर तेजस्विनी राजलक्ष्मी के साथ दीर्घायु प्रदान करता है। यथा–

लग्नाधिपोऽतिबलवानशुभैरदृष्टः
केन्द्रः स्थितः शुभखगैरवलोक्यमानः।
मृत्युं विधूय विदधाति स दीर्घमायुः
सार्धं गुणैर्बहुभिरुर्जितराजलक्ष्म्या।।[162]

2.5.2 उपखण्ड दो

विभिन्न अरिष्ट योगों को भंग करने वाले योग अधोलिखित है–

यदि जातक के जन्म समय में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब अर्थात् सोलह कला से परिपूर्ण हो और समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो सभी अरिष्टों का नाश करता है। यथा–

सर्वगगनभ्रमणैरदृष्टश्चन्द्रो विनाशयति रिष्टम्।
आपूर्यमाणमूर्तिर्यथा नृपः सन्नयेद्द्वेषम्।।[163]

---

[159] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 80
[160] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 81
[161] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 82
[162] जातक पारिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 83
[163] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 3

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार पूर्ण बिम्ब से युत चन्द्रमा मित्र ग्रहों के नवमांश में स्थित होकर शुक्र से दृष्ट हो तो सभी अरिष्टों को दूर करने में श्रेष्ठ होता है। अर्थात् अरिष्ट का विनाश करता है जैसे वायुरोग हरण में बस्ति क्रिया श्रेष्ठ होती है। यथा–

चन्द्रः सम्पूर्णतनुः शुक्रेण निरीक्षितः सुहृद्भागे।
रिष्टहराणां श्रेष्ठो वातहराणां यथा बस्तिः।।[164]

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार चन्द्रमा अपने परमोच्च (रा0 1 अं0 3) में स्थित हो तथा शुक्र द्वारा दृश्यमान हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे कफ व पित्त के दोष को विरेक (जुलाब) व वमन (उल्टी) नाश करता है। यथा–

परमोच्चे शिशिरतनुर्भृगुतनयनिरीक्षितो हरति रिष्टम्।
सम्यग्विरेकवमनं कफपित्तानां यथा दोषम्।।[165]

यदि जातक के जन्मांग चक्र में यदि क्षीण चन्द्रमा भी शुभ ग्रहों के वर्ग में, शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे जायफल के छिलके का क्वाथ (काढ़ा) महातिसार रोग का विनाश करता है। यथा–

चन्द्रः शुभवर्गस्थः क्षीणोऽपि शुभेक्षितो हरति रिष्टम्।
जलमिव महातिसारं जातीफलवल्कलक्वथितम्।।[166]

यदि जातक के जन्मांग में चन्द्रमा से 6,7,8 भावों में पापग्रह से रहित शुभ ग्रह हों तो अरिष्ट का नाश करते हैं जैसे उन्माद रोग का नाश कल्याण घृत करता है। यथा–

सप्ताष्टमषष्ठस्थाः शशिनः सौम्या हरन्त्यरिष्टफलम्।
पापैरमिश्रचाराः कल्याणघृतं यथोन्मादम्।।[167]

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार चन्द्रमा शुभ फल देने वाले शुभ ग्रह से युत हो और शुभ ग्रह के द्रेष्काण में हो तो सभी प्रकार के अरिष्टों का नाश उसी प्रकार से करता है जैसे लवण से युक्त घृत नेत्र रोग तथा लवणयुक्त जल पानी में मिलाकर कान में भरने से कान के दर्द का नाश करता है। यथा–

युक्तः शुभफलदायिभिरिन्दुः सौम्यैर्निहन्त्यरिष्टानि।
तेषामेव त्र्यंशे लवणमिश्रं घृतं नयनरोगम्।।[168]

यदि जातक के जन्मांग में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब से युत होकर शुभ ग्रह के द्वादशांश में हो तो अरिष्ट का विनाश होता है, जैसे (मट्ठा) के सेवन से गुदरोग (बवासीर) नष्ट हो जाता है। यथा–

अपूर्यमाणामूर्तिर्दादश भागे शुभस्य यदि चन्द्रः।
रिष्टं नयति विनाशं तक्राभ्यासो यथा गुदजम्।।[169]

---

[164] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 4
[165] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 5
[166] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 6
[167] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 7
[168] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 8
[169] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 9

यदि जातक के जन्मांग चक्र में चन्द्रमा शुभ ग्रह की राशि में लग्नेश से दृष्ट हो तथा अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है। जैसे कुलांगना अन्य के संग से अपने कुल का नाश करती है। यथा–

सौम्यक्षेत्रे चन्द्रो होरापतिना विलोकितो हन्ति।
रिष्टं न वीक्षितोऽन्यैः कुलांगना कुलमिवान्यगता।।[170]

यदि जातक के जन्मांग में चन्द्रमा पापग्रह की राशि में या पापग्रह के वर्ग में राशिस्वामी से दृष्ट हो तो जातक की रक्षा उसी प्रकार है जैसे लोभी पुरुष अपने धन की प्रयत्न से रक्षा करता है। यथा–

क्रूरभवने शशांको भवने शनिरीक्षितस्तदनुवर्गे।
रक्षति शिशुं प्रजातं कृपण इव धनं प्रयत्नेन।।[171]

यदि जातक के जन्मांग में राशिस्वामी बली हो और शुभ या मित्र ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे डरपोक मनुष्य संग्राम में उपस्थित होकर भी किसी को नहीं मारता। यथा–

जन्माधिपतिर्बलवान् सुहृदि रभिवीक्षितः शुभैर्भंगम्।
रिष्टस्य करोति सदा भीरुरिव प्राप्त संग्रामः।।[172]

यदि जन्म का अधिपति अर्थात् राशि का स्वामी लग्न में समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे काली मिर्च और बांस के ऊपर कोमल भाग को घिसकर प्रतिदिन आंख में लगाने से शुभ्रता (फूली) नष्ट हो जाती है। यथा–

जन्माधिपतिर्लग्ने दृष्टः सर्वै विनाशयति रिष्टम्।
घृष्टोषणविदलाभ्यां प्रत्येक कृतांजनं यथा शुक्लम्।।[173]

यदि पूर्ण बिम्ब चन्द्रमा अपनी उच्चराशि में वा अपनी राशि (कर्क) में, वा मित्र राशि के षड्वर्ग में अथवा शुभग्रह के वर्ग में वा अपने वर्ग में शुभग्रह से दृष्ट हो और स्वशत्रुग्रह व पापग्रह से अदृष्ट व अयुत हो तो अरिष्ट का विनाश करता है, जैसे सूर्य सुदुस्तर (पार करने में कठिन) प्रालेय राशि (पाला) को नष्ट करता है। यथा–

स्वोच्चस्थस्वगृहेऽथवापि सुहृदां वर्गेऽपि सौम्येऽथवा,
सम्पूर्णः शुभवीक्षितः शशधरो वर्गे स्वकीयेऽथवा।
शत्रूणामवलोकने न पतितः पापैरयुक्तेक्षितो,
रिष्टं हन्ति सुदुस्तरं दिनपतिः प्रालेयराशिं यथा।।[174]

यदि जातक के जन्मांग में चन्द्रमा से बारहवें भाग में बुध या शुक्र हो और ग्यारहवें भाव मे पापग्रह हों एवं दशम भाव में गुरु हो तो अरिष्ट का नाश होता है जैसे मुनि कुसुम

[170] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 10
[171] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 11
[172] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 12
[173] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 13
[174] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 14

(अगस्त्य पुष्प) के रस को सूंघने से कठिन चतुर्थ दिन में आने वाले रोग (ज्वर) का नाश होता है। यथा–

शशिनोऽन्त्ये बुधसितयोराये क्रूरेषु वाक्पतौ गगने।
दुरितं चातुर्थिकमिव नश्यति मुनिकुसुमरसकस्यै।।[175]

यदि जातक के जन्मांग में लग्न स्वामी से 6,3,10,11,4 में चन्द्रमा शुभग्रह से दृष्ट हो तो सब अरिष्टों का नाश होता है। जैसे राजा की सेना के पीछे चलने वाले मनुष्य को कोई कष्ट नहीं होता है। यदि एक ही राशि स्वामी बलवान् शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो चन्द्र कृत अरिष्ट का नाश करता है। यथा–

लग्नेश्वरस्य चन्द्रः षट्त्रिदशाय हिबुकेषु शुभदृष्टः।
क्षपयति समस्तरिष्टान्यनुयाते नृपतिरोध इव।।[176]
एको जन्माधिपतिः परिपूर्णबलः शुभैरदृष्टः।
हन्ति निशाकररिष्टं व्याघ्र इव मृगान् वने मतः।।[177]

यदि शुक्लपक्ष हो तो रात्रि में जन्म हो या कृष्ण पक्ष में दिन में जन्म हो तो 6,8 भाव में स्थित चन्द्रमा शुभाशुभग्रहों से दृष्ट होकर भी यत्न पूर्वक विपत्ति में रक्षा करता है। जैसे पिता अपने पुत्र को मारता नहीं अपितु रक्षा ही करता है। यथा–

पक्षे सित भवति जन्म यदि क्षपायां,
कृष्णेऽथवाऽहनि शुभाशुभदृश्यमानः।
तं चन्द्रमा रिपुविनाशगतोऽपि यत्नां,
दापत्सु रक्षति पितेव शिशुं न हन्ति।।[178]

जिस प्रकार पुराणोक्त उपायों के अनुसार महापातकादि दोषों से व्याप्त व्यक्ति भी भक्तिपूर्वक श्रीविष्णु के पाठान्तर से श्री शिवजी के प्रति एक नमस्कार करके दोनों देवों के कृपा प्रसाद द्वारा समस्त महापापों के दोष से विमुक्त हो जाता है उसी प्रकार यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार देदीप्यमान किरणों से युत बली गुरु अकेला भी लग्न स्थान में स्थित हो तो समस्त प्रकार के अरिष्टों का नाश करता है। यथा–

सर्वातिशय्यातिबलः स्फुरदंशुमाली,
लग्नेस्थितः प्रशमयेत् सुरराजमन्त्री।
एको बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि,
भक्त्या प्रयुक्त इव चक्रधरे प्रणायः।।[179]

जिस प्रकार सूर्यादि नवग्रहों की वेदोक्त मंत्रेत्यादि से पूजन करने वाला सभी प्रकार के पापों से रहित हो जाता है उसी प्रकार जन्म कुण्डली में यदि समस्त शुभग्रह पूर्ण

---

[175] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 15
[176] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 16
[177] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 17
[178] सारावली एकादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 18
[179] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 1

बलवान् हों तथा सभी पापग्रह निर्बल हों और शुभ ग्रह की राशि में लग्न शुभग्रहों से दृष्ट हो तो ऐसे जातक के सभी अरिष्टों (आपत्तियों) का नाश हो जाता है। यथा–

सौम्यग्रहैरतिबलैर्विबलैश्च पापै–
र्लग्नं च सौम्यभवने शुभदृष्टियुक्तम्।
सर्वापदा विरहितो भवति प्रसूतः,
पूजाकरः खलु यथा दुरितैर्ग्रहाणाम्।।[180]

यदि जन्मांग में सभी पापग्रह शुभग्रह के षड्वर्ग में, शुभग्रह के नवमांश के वर्गों में स्थित शुभग्रहों से दृष्ट हो तो सभी अरिष्टों का नाश करती है जैसे विरक्ता स्त्री अपने पति को नष्ट करती है। यथा–

पापा यदि शुभवर्गे सौम्येर्दृष्टा शुभांशवर्गस्थैः।
निघ्नन्ति तथारिष्टं पतिं विरक्ता यथा युवतिः।।[181]

यदि जातक के जन्म के समय जन्मांग चक्रानुसार लग्न से त्रिषडाय (तीसरे, छठे, एकादश) भाव में राहु शुभग्रह से दृष्ट हो तो सभी प्रकार के अरिष्टों का शीघ्र ही नाश करता है जैसे वायु रुई के ढेर को नष्ट कर देती है। यथा–

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात् सौम्येर्निरीक्षितः सद्यः।
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तूलसंघातम्।।[182]

यदि जातक के जन्मकाल के समय समस्त ग्रह शीर्षोदय (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मिथुन) राशि में मार्गी हो तो जातक के सभी प्रकार के अरिष्टों का नाश करता है जैसे अग्नि में छोड़ा हुआ घी नष्ट हो जाता है। यथा–

शीर्षोदयेषु राशिषु सर्वैर्गगनाधिवासिभिः सूतो।
प्रकृतिस्थैश्चारिष्टं विक्रयते घृतमिवाग्निष्ठम्।।[183]

यदि जातक की जन्मकुण्डली में कोई भी शुभग्रह युद्ध में विजयी हो एवं शुभ ग्रह से दृष्ट शुभ वर्ग में हो तो अवश्य ही समस्त अरिष्टों का नाश होता है जैसे प्रबल वायु या झंझावात द्वारा वृक्षों का नाश हो जाता है। यथा–

तत्काले यदि विजयी शुभग्रहः शुभनिरीक्षितो वर्गे।
तर्जयति सर्वरिष्टं मारुत इव पादपान् प्रबलः।।[184]

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार अरिष्टकारक ग्रह किसी ग्रह से घिरा हुआ पापग्रह से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है जैसे सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में स्नान करने से पाप का नाश होता है। यथा–

परिविष्टो गगनचरः क्रूरैश्च विलोकितो हरित् पापम्।
स्नानं सन्निहितानां कृतं यथा भास्करगृहणे।।[185]

---

[180] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 2
[181] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 3
[182] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 4
[183] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 5
[184] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 6

यदि जातक के जन्मकाल में सुन्दर मन्द वायु तथा मेघ हों तथा ग्रहसमुदाय बली व निर्मल बिम्ब हो तो क्षणभर में ही अरिष्ट का नाश उसी प्रकार होता है जैसे जलधारा के प्रवाह से धूलिसमुदाय का शमन होता है। यथा–

स्निग्धमृदुपवनभाजो जलदाश्च तथैव खेचराः शस्ताः।
स्वस्थाः क्षणाच्च रिष्टं शमयति रजो यथाम्बुधारौघः।।[186]

यदि जातक का जन्म अगस्त्य मुनि या मरीच्यादि सात ऋषिगण के उदय समय में होता है उसके (जातक के) समस्त अरिष्टों का नाश उसी प्रकार होता है जैसे घनघोर अन्धकारयुक्त रात्रि के पश्चात् पूर्व दिशा में सूर्य के आगमन से संसार के अन्धकार का नाश होता है। यथा–

उदये चागस्त्यमुनेः सप्तर्षीणां मरीचिपुपत्राणाम्।
सर्वारिष्टं नश्यति तम इव सूर्योदये जगतः।।[187]

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार मेष, वृष या कर्क लग्न में राहु हो तो समस्त अरिष्टों से रक्षा करता है जैसे राजा प्रसन्न होकर अपराध करने वाले को भी क्षमादान देकर उसकी रक्षा करता है। यथा–

अजवृषकर्किविलग्ने रक्षति राहुः समस्तपीडाभ्यः।
पृथिवीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम्।।[188]

यदि जातक के जन्मांग चक्र में अरिष्टकारक ग्रह के बिना सब ग्रह अपने–अपने द्रेष्काण में हों तो ब्रह्मा जी को आश्चर्य होता है अर्थात् ब्रह्मा द्वारा लिखा हुआ अरिष्ट भी नष्ट हो जाता है जैसे समतल भूमि में हाथी वृक्षादि को नष्ट करता है। यथा–

यातैस्त्रिभागमपरैः सरोजजन्मापि विस्मयं कुरुते।
भंजयति काष्ठमरिष्टं समस्तदेशे यथा करभः।।[189]

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार अधिक ग्रह शुभ फल देने वाले हों तो भी अरिष्ट का नाश होता है जैसे सूर्य से 5, 9 भाव में चन्द्रमा के रहने पर राजा की यात्रा के विघ्न दूर हो जाते हैं। यथा–

बहवो यदि शुभफलदाः खेटास्तत्रापि शोर्यतेरिष्टम्।
सूर्यात् त्रिकोण रन्दौ तथैव यात्रा नरेन्द्रस्य।।[190]

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार गुरु–शुक्र केन्द्र भावों में स्थित हों तो सौ वर्ष का जीवन होता है। यथा–

गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ जीवेद्वर्षशतं नरः।
गृहानिष्टं हिनस्त्याशु चन्द्रानिष्टं तथैव च।।[191]

---

[185] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 7
[186] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 8
[187] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 9
[188] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 10
[189] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 11
[190] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 12

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार पूर्ण चन्द्रमा व गुरु कर्क राशि में स्थित होकर चतुर्थ दशम में या लग्न में हो एवं शनि व बुध तुला राशि में हो और अन्य ग्रह तृतीय षष्ठ एकादश में हो तो जातक की अमित आयु होती है। यथा–

बन्ध्वास्पदोदयविलग्नगतौ कुलीरे,
गीर्वाणनाथसचिवः सकलश्च चन्द्रः।
जूके रवीन्दुतनयावपरे च लाभे,
दुश्चिक्यशत्रुभवनेष्वमितं तदायुः।।[192]

श्रीमत्कल्याण वर्मा द्वारा उपरोक्त अरिष्टभंग योग सारावली नामक ग्रन्थ में दिए गए हैं तथा इनके ज्ञान से ज्योतिषी राजा का प्रियपात होता है। यथा–

एते सर्वे भंगा मया निरुक्ताः पुरातनाः सिद्धाः।
यज्ञातिर्दैवविदो नरेन्द्रवाल्लभ्यमायान्ति।।[193]

दैवज्ञ कल्याण वर्मा रचित सारावली नामक ग्रन्थ के दशारिष्ट भंग नामकाध्याय में दशाकाल में अरिष्ट योगों के दोष को समाप्त करने वाले अरिष्ट भंग योगों का वर्णन अधोलिखित प्रकार से किया गया है–

यदि जातक के जन्मचक्रासार जातक की विंशोत्तरीत्यादि दशा में प्रवेश के समय एक भी बलवान् ग्रह, शुभग्रह व अधिमित्र के वर्ग में शुभग्रह से दृष्ट हो तो मृत्यु कारक नहीं होता अर्थात् उस दशा में जातक का मरण नहीं होता। यथा–

प्रवेशे बलवान्खेटः शुभैर्वा शुनिरीक्षितः।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो मृत्यवे न भवेत्तदा।।[194]

यदि दशारिष्टप्रद ग्रह निर्बल हो तथा अरिष्टभंग ग्रह बली हो तो निश्चित रूप से अरिष्ट का नाश होता है। यथा–

मूलं दशाधिनाथस्य विबलस्य दशा यदा।
बलिनः स्यात्तदा भंगो दशारिष्टस्य तद्ध्रुवम्।।[195]

यदि दशाप्रवेश के समय स्वोच्च, मूल त्रिकोणादि में स्थित तथा युद्ध में विजयीग्रह हो तो उसकी दशा में कष्ट नहीं होता अर्थात् अरिष्ट का नाश होता है। यथा–

युद्धे च विजयी तस्मिन्ग्रहयोगे शुभे यदि।
दशायां न भवेत्कष्टं स्वोच्चादिषु च संस्थितः।।[196]

2.5.3 अभ्यास प्रश्न

1– सूर्य की पूर्ण दृष्टि कौन से भाव पर होती है?

---

[191] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 13
[192] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 14
[193] सारावली द्वादशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 15
[194] सारावली त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 1
[195] सारावली त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 2
[196] सारावली त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः श्लोकसंख्या 3

2– शनि की विशेष दृष्टि क्या है?
3– दशम भाव से विचारणीय विषय क्या है?
4– पाताल संज्ञा कौन से भाव की है?
5– हिबुक किसे कहते हैं?
6– मारक स्थान कौन–कौन हैं?
7– पूर्व दिशा में कौन–कौन राशियां हैं?

2.6 सारांश

वस्तुतः मानव अपने जन्म–जन्मान्तरों में किए गए शुभाशुभ कर्मों के वशीभूत होकर सुख–दुःख, लाभ–हानि, आय–व्यय, अल्पायु, मध्यायु, दीर्घायु को प्राप्त करता है। क्योंकि सम्पूर्ण संसार ही कर्मों के अधीन है। यथा– ''कर्माधीनं जगत्सर्वम्'' मन कारक चन्द्रमा ग्रह है। ''मनस्तु हिमगुः'' मन के द्वारा ही हम सुख एवं दुःख की अनुभूति प्राप्त करते हैं। इस इकाई में आपने किन–किन ग्रहों की परिस्थितियों में ग्रहों का अरिष्ट भंग होता है, यह अलग –अलग आचार्यों की दृष्टि के अनुसार अध्ययन किया होगा। वास्तविक रूप से सम्पूर्ण इकाई में अरिष्टभंग के विषय में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है।

2.7 शब्दावली

संध्यायां = सन्ध्याकाल प्रातः एवं सांय
होरा = राशि का आधा भाग 15^0
शशिपापसमेतैः = चन्द्रमा और पापग्रह
निधनाय = मृत्यु के लिए
केन्द्रस्थानम् = प्रथम भाव, चतुर्थ सप्तम एवं दशम भाव
उपैति = प्राप्त करता है।
चक्रस्य = राशि चक्र के
क्षिप्रं = शीघ्र ही
पूर्वापरभागेषु = लग्न के सप्तम भाव तक
उदयगत= लग्न में गया हुआ
चिरात् = देरी से
युतश्च = युक्त
क्षीणेचन्द्रे = क्षीण चन्द्रमा
व्ययगे = बारहवें भाव में गया हुआ
उदयाष्टमगैः = लग्न एवं अष्टम स्थान में
प्रवदेत् = कहना चाहिए
क्षिप्रं = शीघ्र ही
क्रूरेण = पापग्रह, मंगल, शनि आदि
निधनमाशु = शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होना
पापेक्षिते = पापग्रह के द्वारा देखा जाना

दलमतश्च = पक्ष में
असद्भिः= पापग्रह
अवलोकिते = देखने पर
बलिभिः = बलवान्
कलत्रसहिते = पत्नी के साथ
विलग्नाधिपे = लग्न स्वामी से रहित
रन्ध्र = अष्टम भाव
मदनछिद्र = सप्तम एवं अष्टम भाव
हिबुक = चतुर्थ भाव
द्यून = सप्तम स्थान
सार्धं = साथ
मात्रा = माता
राश्यन्तगे = राशि के अन्तिम भाग
सद्भिः = शुभ ग्रह
वीक्ष्यमाणे = देखे जाने पर
त्रिकोण = नवम एवं पंचम भाव
प्रयात्याषु = शीघ्र ही
अस्ते = सप्तम स्थान
असित = पापग्रह
मरणमाशु = मृत्यु के लिए शीघ्र ही
वीक्षिता = दे**खना**
सुत = पंचम भाव
मदन = सप्तम भाव
नव = नवम भाव
अन्त्य = बारहवां भाव
शीतरश्मिः = चन्द्रमा
भृगसुत = शुक्रग्रह
शशिपुत्र = बुध
देवपूज्य = बृहस्पति
युतो = के साथ
अवलोकिते = देखने पर
षष्टारिष्फगः = 6,8,12 भाव
खेटैश्च = ग्रहों द्वारा
सौम्याः = शुभ ग्रह
वक्राः = वक्री ग्रह

सौम्यविवर्जिते = शुभ ग्रहों से रहित
धीस्थाः = पंचम भाव में स्थित
त्वाशु = शीघ्र ही
व्रजेत् = प्राप्त होता है
लग्नगो = लग्न में गया हुआ
सौरेण = शनि के द्वारा
सौरि = शनि
भवेद्यदि = यदि हो
विधातव्य = जानना चाहिए
असद्ग्रहयोगे = पापी ग्रह के योग में
लग्नाद्यैः = लग्न आदि
विमिश्रेण= मिश्रित
ऊर्ध्वं = ऊपर की ओर
तिर्यग्रेखा = तिरछी रेखा
षड्रेखास्तु = छः रेखा
समालिख्य = समान लिख कर
रव्यादि = सूर्यादि ग्रह
सुयोगे = शुभ योग होने पर
लग्नरन्ध्रपयोर्मध्ये = प्रथम एवं अष्टम भाव के मध्य
बलाधिकः = बल अधिक होने पर
पणफरे = 2,5,8,11 स्थान

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

मुख्यभाग उपखण्ड एक

क– नहीं। ख– हाँ। ग– हाँ।घ– नहीं ङ– नहीं

मुख्यभाग उपखण्ड दो

1– शुभ। 2– अशुभ। 3– मृत्यु। 4– बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा, बुध
5– बृहस्पति, मंगल, चन्द्रमा

मुख्यभाग उपखण्ड तीन

1– सप्तम भाव पर 2– तृतीय, दशम भाव पर, 3– कर्म, पिता एवं आकाश 4– चतुर्थ भाव
5– चतुर्थ भाव को 6– द्वितीय, सप्तम एवं अष्टम 7– मेष सिंह, धनु

2.9 सन्दर्भग्रन्थानां सूची

क्र0	ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1	बृहज्जातक	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी

			2002 संवत्
2	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977
3	भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय कचौड़ी गली वाराणसी
4	चमत्कारचिन्तामणि	मालवीय दैवज्ञ धर्मेश्वर	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1975
5	जातकचन्द्रिका	जयदेव कवि	श्री कृष्णदास वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1970
6	जातकालंकार	गणेष	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
7	बृहत्पाराषरहोराषास्त्र	पराषर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
8	मुहूर्तप्रकाष	चतुर्थी लाल गौड़	ज्ञानसागर पुस्तकालय मुम्बई 1904
9	जातकभरणम्	ढुण्डीराज	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 1463
10	मुहूर्तचिन्तामणि	वराहमिहिर	मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स वाराणसी
11	जातकसारदीप	नृसिंह दैवज्ञ	मद्रास सर्वकार द्वारा प्रकाशित 1951
12	जातकतत्वम्	सुब्रह्मण्यं शास्त्री	वाराणसी
13	भारतीय कुण्डली विज्ञान	मीठालाल हिम्मतराम ओझा	मीरघाट वाराणसी 2028 संवत्
14	बृहदवकहोडाचक्रम्	वराहमिहिर	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
15	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
16	लघुजातकम्	वराहमिहिर	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 2025 संवत्
17	फलदीपिका	मन्त्रेश्वर	रंजन पब्लिकेशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली 1971 ई0

2.10 सहायक उपयोगी/पाठ्य सामग्री

क्र0	ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1	बृहज्जातक	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी 2002 संवत्
2	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977
3	भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय कचौड़ी गली वाराणसी
4	चमत्कारचिन्तामणि	मालवीय दैवज्ञ धर्मेश्वर	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1975
5	जातकचन्द्रिका	जयदेव कवि	श्री कृष्णदास वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1970

6	जातकालंकार	गणेष	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
7	वृहत्पाराशरहोराशास्त्र	पराषर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
8	मुहूर्तप्रकाश	चतुर्थी लाल गौड़	ज्ञानसागर पुस्तकालय मुम्बई 1904
9	जातकभरणम्	ढुण्डीराज	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 1463
10	मुहूर्तचिन्तामणि	वराहमिहिर	मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स वाराणसी
11	जातकसारदीप	नृसिंह दैवज्ञ	मद्रास सर्वकार द्वारा प्रकाशित 1951
12	जातकतत्वम्	सुब्रह्मण्यं शास्त्री	वाराणसी
13	भारतीय कुण्डली विज्ञान	मीठालाल हिम्मतराम ओझा	मीरघाट वाराणसी 2028 संवत्
14	वृहद्वकहोडाचक्रम्	वराहमिहिर	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
15	वृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
16	लघुजातकम्	वराहमिहिर	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 2025 संवत्
17	फलदीपिका	मन्त्रेश्वर	रंजन पब्लिकेशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली 1971 ई0

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1– अरिष्ट की परिभाषा का उल्लेख करते हुए अरिष्टभंग योग का विवेचन करें।

2– बृहस्पति ग्रह की अरिष्टभंग में योगदान को वैज्ञानिकता के आधार पर स्पष्ट करें।

3– लग्न, सप्तम, अष्टम, द्वादश एवं द्वितीय भाव पर लघु निबन्ध लिखें।

4– मृत्युकारक योगों का सविस्तृत उल्लेख करें।

5– पितृकारक एवं मातृकारक अरिष्टयोगों का वर्णन करें।

इकाई - 3 अरिष्ट योगों का निदान

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई में आप ने अरिष्ट योग, अरिष्ट भंग योग के बारे में पढा। यदि किसी जातक की जन्म कुण्डली में अरिष्ट योग है तो उसका निदान भी ज्योतिष ग्रंथों में बताया गया है। जैसे कोई रोगी वैद्य के पास जाता है तो वैद्य उस रोगी की नाडी देखकर उसको जो रोग है उसको बताता है और साथ में आयुर्वेद के अनुसार उस रोग का निदान भी बताता है, उसी प्रकार दैवज्ञ भी जातक की जन्म कुण्डली को देखकर उसको अरिष्ट योग और साथ में उस अरिष्ट योग का निदान बताता है, वही दैवज्ञ सफल होता है। जातक अपने जीवन में सुख-दुख अपने कर्मों के द्वारा प्राप्त करता है।ऐसा सभी ज्योतिष शास्त्रों, नीति शास्त्रों व धर्म ग्रंथों में बताया गया है।जैसे श्रीरामचरितमानस में श्रीतुलसी दास जी ने कहा है-काहु न कोउ सुख दु:ख कर दाता, निज कृत करम भोग सबु भ्राता। संस्कृत विद्वान् ने भी कहा है-सुखस्य दुखस्य न कोSपि दाता, परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।अहं करोमीति वृथाभिमान: स्वकर्म सूत्रग्रथितो हि लोक:।। जातक के द्वारा किए हुए सुकृत्य व कुकृत्य के सूचक सूर्यादि नव ग्रह है।यदि जातक ने कुकृत्य किए है तो निश्चित रूप से उनका व्याधि के रूप में फल भी भोगेगा ही। जैसेकि कहा भी गया है- **पूर्वजन्म कृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते।** सृष्टि को सुचारू रूप से चलाने हेतु परमेश्वर ने सूर्यादि नवग्रहों को इसकी जिम्मेदारी सौंपी। यह सभी ग्रह संसार में स्थित सभी जड़-चेतन के कर्मों के अनुसार उसके लिए फलाफल की व्यवस्था करते हैं। व्यक्ति के व्याधि रूप दु:खों का निवारण भगवान् नाम समरण से, सूर्यादि ग्रहों के वैदिक मंत्र जप से, पौराणिक मंत्र जप से, गायत्री मंत्र जप से, बीज मंत्र जप से, मूलमंत्र जप से, रत्न-मणि, यंत्र धारण से, ओषधि से, तंत्र से, नव ग्रहों से सम्बंधित वस्तुओं के दान से, नव ग्रहों से सम्बंधित पादपों के आरोपण व पूजन से होता है।परन्तु किस जातक को कौन-सा निदान करना उचित रहेगा यह निर्धारण करना बहुत महत्वपूर्ण है। किस जातक के लिए कौन-सा(मंत्र,तंत्र,यंत्र, रत्न) निदान उचित है इसके बारे में हम आगे जानेंगे।

3.2 उद्देश्य-

क. इस इकाई में आप सूर्यादि नव ग्रहों के वैदिक मंत्र जानेंगे।

ख. सूर्यादि नव ग्रहों के पौराणिक मंत्र जानेंगे।

ग. नवग्रहों के बीज मंत्र जानेंगे।

घ. सूर्यादि नव ग्रहों के यंत्र के बारे में जानेंगे।

ङ नव ग्रहों के गायत्री मंत्र जानेंगे।

च. नवग्रहों के मूल मंत्र जानेंगे।

छ. सूर्यादि नव ग्रहों के रत्न जानेंगे।

ज. नव ग्रहों के मंत्रों की जप संख्या जानेंगे।

झ. सूर्यादि नव ग्रहों से सम्बंधित पादपों के बारे में जानेंगे।

ञ. सूर्यादि नव ग्रहों से सम्बंधित दान योग्य पदार्थ के बारे में जानेंगे।

1.3 मुख्य भाग खण्ड-1

मंत्रों की शक्ति तथा महत्त्व-

मंत्रों की शक्ति तथा इनका महत्त्व ज्योतिष में वर्णित सभी रत्नों एवं उपायों से अधिक है। मंत्रों के माध्यम से ऐसे बहुत से दोष नियंत्रित किए जा सकते हैं जो रत्नों तथा अन्य उपायों के द्वारा ठीक नहीं किए जा सकते। ज्योतिष में रत्नों का प्रयोग किसी कुंडली में केवल शुभ असर देने वाले ग्रहों को बल प्रदान करने के लिए किया जा सकता है तथा अशुभ असर देने वाले ग्रहों के रत्न धारण करना वर्जित माना जाता है क्योंकि किसी ग्रह विशेष का रत्न धारण करने से केवल उस ग्रह की ताकत बढ़ती है, उसका स्वभाव नहीं बदलता। इसलिए जहां एक ओर अच्छे असर देने वाले ग्रहों की ताकत बढ़ने से उनसे होने वाले लाभ भी बढ़ जाते हैं, वहीं दूसरी ओर बुरा असर देने वाले ग्रहों की ताकत बढ़ने से उनके द्वारा की जाने वाली हानि की मात्रा भी बढ़ जाती है। इसलिए किसी कुंडली में बुरा असर देने वाले ग्रहों के लिए रत्न धारण नहीं करने चाहिए।

वहीं दूसरी ओर किसी ग्रह विशेष का मंत्र उस ग्रह की ताकत बढ़ाने के साथ-साथ उसका किसी कुंडली में बुरा स्वभाव बदलने में भी पूरी तरह से सक्षम होता है। इसलिए मंत्रों का प्रयोग किसी कुंडली में अच्छा तथा बुरा असर देने वाले दोनों ही तरह के ग्रहों के लिए किया जा सकता है।मंत्र जप के द्वारा सर्वोत्तम फल प्राप्ति के लिए मंत्रों का जप नियमित रूप से तथा अनुशासनपूर्वक करना चाहिए। वेद मंत्रों का जप केवल उन्हीं लोगों को करना चाहिए जो पूर्ण शुद्धता एवं स्वच्छता का पालन कर सकते हैं। किसी भी मंत्र का जप प्रतिदिन कम से कम 108 बार जरूर करना चाहिए। सबसे पहले आप को यह जान लेना चाहिए कि आपकी कुंडली के अनुसार आपको कौन से ग्रह के मंत्र का जप करने से सबसे अधिक लाभ हो सकता है तथा उसी ग्रह के मंत्र से आपको जप शुरू करना चाहिए। विशेष स्थिति में स्थाई लाभ प्राप्त करने के लिए नवग्रहों के वेदिक मंत्रों का तथा साधारण स्थिति में नवग्रहों के मूल मंत्रों तथा बीज मंत्रों उच्चारण करना चाहिए। नवग्रहों के मंत्र निम्नलिखित हैं :

3.3.1 उपखण्ड- 1 नवग्रहों के वैदिक मंत्र-

सूर्य : ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च
हिरण्येन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

चन्द्र : ॐ इमं देवा असपत्नं सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय
महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष
वोSमी राजा सोमोSस्माकं ब्राह्मणानां राजा॥

मंगल : ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिव: ककुत्पति: पृथिव्या अयम्।अपां रेतां सि जिन्वति।

बुध : ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सं सृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत॥

गुरु : ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु।
यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥

शुक्र : ॐ अन्नात् परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् क्षत्रं पय: सोमं प्रजापति:।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोSमृतं मधु॥

शनि : ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शंय्योरभिस्त्रवन्तु न:।

राहु : ॐ कया नश्चित्र आ भुवदूती सदा वृध: सखा।
कया शचिष्ठया वृता॥

केतु : ॐ केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो मर्या अपेशसे।
समुषद्भिरजायथा:।

जातक नव ग्रहों के वैदिक मंत्रों के उच्चारण करने में निपुण नहीं है तो वे ग्रहों के बीज मंत्रों का भी जप कर सकते हैं यथा-

नवग्रहों के बीज मंत्र-

सूर्य : ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं स: सूर्याय नम:

चन्द्र : ॐ श्रां श्रीं श्रौं स: चन्द्राय नम:

मंगल : ॐ क्रां क्रीं क्रौं स: भौमाय नम:

बुध : ॐ ब्रां ब्रीं ब्रौं स: बुधाय नम:

गुरु : ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौं स: गुरवे नम:

शुक्र : ॐ द्रां द्रीं द्रौं स: शुक्राय नम:

शनि : ॐ प्रां प्रीं प्रौं स: शनये नम:

राहु : ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं स: राहवे नम:

केतु : ॐ स्त्रां स्त्रीं स्त्रौं स: केतवे नम:

जातक नव ग्रहों के बीज मंत्रों के उच्चारण करने में कठिनता अनुभव करता है तो वे ग्रहों के मूल मंत्रों का भी जप कर सकते हैं यथा-

नवग्रहों के मूल मंत्र-

सूर्य : ॐ सूर्याय नम:

चन्द्र : ॐ चन्द्राय नम:

मंगल : ॐ भौमाय नम:

बुध : ॐ बुधाय नम:

गुरु : ॐ गुरवे नम:

शुक्र : ॐ शुक्राय नम:

शनि : ॐ शनये नम: अथवा ॐ शनैश्चराय नम:

राहु : ॐ राहवे नम:

केतु : ॐ केतवे नम:

3.3.2. **नवग्रहों के तांत्रिक मंत्र** –

वर्तमान काल में तांत्रिक मंत्रों का प्रभाव शीघ्र व अधिक देखा जाता है अत: इस इकाई में नवग्रहों तांत्रिक मंत्र भी दिए जा रहे हैं-

सूर्य- ॐ घृणि: सूर्याय नम:

चंद्र- ॐ सों सोमाय नम:

भौम- ॐ अं अङ्गारकाय नम:

बुध- ॐ बुं बुधाय नम:

गुरु- ॐ बृं बृहस्पतये नम:

शुक्र- ॐ शुं शुक्राय नम:

शनि- ॐ शं शनैश्चराय नम:

राहु- ॐ रां राहवे नम:

केतु- ॐ कें केतवे नम:

नवग्रहों के पौराणिक मंत्र- वेदव्यास द्वारा रचित प्रभावी पौराणिक मंत्र का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है-

सूर्य- जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ।।

चंद्र- दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम् । नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुटभूषणम् ।।

भौम- धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कांतिसमप्रभम् ।कुमारं शक्तिहस्तं तं मंगलं प्रणाम्यहम् ।।

बुध- प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ।।

गुरु- देवानां च ऋषीनां च गुरुं कांचनसन्निभम् ।बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ।।

शुक्र- हिमकुंदमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ।।

शनि- नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।छायामार्तंड संभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ।।

राहु- अर्धकायं महावीर्यं चंद्रादित्यविमर्दनम् ।सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ।।

केतु- पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ।।

नव ग्रहों के गायत्री मंत्र-

सूर्य गायत्री - ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो भानुः प्रचोदयात्।

चन्द्र गायत्री - ॐ अमृतांगाय विद्महे कलारूपाय धीमहि तन्नो सोमः प्रचोदयात्।

मंगल गायत्री - ॐ अंगारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्।

बुध **गायत्री** - ॐ चंद्रपुत्राय विद्महे रोहिणीप्रियाय धीमहि तन्नो बुध: प्रचोदयात्।

गुरु गायत्री - ॐ अंगिरोजाताय विद्महे वाचस्पतये धीमहि तन्नो गुरु: प्रचोदयात्।।

शुक्र गायत्री - ॐ भृगुराजाय विद्महे दिव्यदेहाय धीमहि तन्नो शुक्र: प्रचोदयात्।।

शनि गायत्री - ॐ कृष्णांगाय विद्महे रविपुत्राय धीमहि तन्नो सौरि: प्रचोदयात्।

राहु गायत्री – ॐ शिरोरूपाय विद्महे अमृतेशाय धीमहि तन्नो राहुः प्रचोदयात्।।

केतु गायत्री - ॐ पद्मपुत्राय विद्महे अमृतेशाय धीमहि तन्नो केतु: प्रचोदयात्।।

उपर्युक्त सभी नव ग्रहों की मंत्र जप संख्या शास्त्रकारों ने निश्चित की हुई है जिस ग्रह की मंत्र संख्या जितनी बताई गई है उतनी ही जपनीय उचित होती है जैसे कि-

सूर्य जप संख्या- 7000

चंद्र जप संख्या- 11000

मंगल जप संख्या- 10000

बुध जप संख्या- 4000

गुरु जप संख्या- 19000

शुक्र जप संख्या- 16000

शनि जप संख्या- 23000

राहु जप संख्या- 18000

केतु जप संख्या- 17000

बहुविकल्पीय प्रश्न-

(क) सूर्य ग्रह का बीज मंत्र क्या है?

(अ)ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं स: सूर्याय नम: (ब)ॐ श्रां श्रीं श्रौं स: चन्द्राय नम:(स)ॐ क्रां क्रीं क्रौं स: भौमाय नम:

(ख) चंद्र ग्रह का मूल मंत्र क्या है?

(अ) ॐ सूर्याय नम: (ब) ॐ चन्द्राय नम: (स) ॐ भौमाय नम:

(ग) मंगल ग्रह का तान्त्रिक मंत्र क्या है?

(अ) ॐ घृणि: सूर्याय नम: (ब) ॐसों सोमाय नम: (ग) ॐअं अंगारकाय नम:

(घ) बुध ग्रह का जप संख्या कितनी होती है?

(अ) 4000 (ब) 18000 (स) 17000

(ङ) गुरु ग्रह का जप संख्या कितनी होती है?

(अ) 10000 (ब) 19000 (स) 23000

(च) शुक्र ग्रह का जप संख्या कितनी होती है?

(अ) 18000(ब) 17000(स) 16000

(छ) शनि ग्रह का जप संख्या कितनी होती है?

(अ) 23000 (ब) 16000 (स) 17000

(ज) राहु ग्रह का जप संख्या कितनी होती है?

(अ) 4000 (ब) 18000 (स) 23000

(झ) केतु ग्रह का जप संख्या कितनी होती है?

(अ) 17000 (ब) 10000 (स) 18000

3.4 मुख्य खण्ड भाग -2

यंत्रों की शक्ति

मंत्रों की भांति ही वैदिक ज्योतिष में यंत्रों को भी किसी कुंडली में उपस्थित दोषों के निवारण के लिए तथा शुभ योगों के फल बढाने के लिए एक शक्तिशाली उपाय की भांति प्रयोग किया जाता है। यंत्रों का प्रयोग किसी विशेष देवी, देवता अथवा ग्रह से शुभ फल प्राप्त करने के लिए अथवा किसी अशुभ ग्रह के प्रभाव को कम करने के लिए किया जाता है। मंत्रों की भांति ही यंत्रों को भी कुंडली के शुभ तथा अशुभ दोनों ही प्रकार के ग्रहों से लाभ प्राप्त करने के लिए उपयोग किया जा सकता है जबकि रत्नों का प्रयोग केवल कुंडली के शुभ ग्रहों से लाभ प्राप्त करने के लिए ही किया जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी कुंडली में सूर्य शुभ रूप से कार्य कर रहा है तो इस शुभ सूर्य के शुभ फलों को बढ़ाने के लिए उत्तम उपाय है माणिक्य को धारण करना जिससे सूर्य को अतिरिक्त उर्जा प्राप्त होगी तथा जातक को अपनी कुंडली के अनुसार सूर्य ग्रह से मिलने वाले शुभ फल में वृद्धि हो जाएगी। किन्तु यदि सूर्य किसी कुंडली में अशुभ रूप से काम कर रहा है तो इस स्थिति में जातक को सूर्य का रत्न माणिक्य धारण नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से कुंडली में अशुभ रूप से कार्य कर रहे सूर्य को अतिरिक्त बल प्राप्त हो जाएगा जिसके चलते ऐसा अशुभ सूर्य जातक को और भी अधिक हानि पहुंचाना शुरू कर देगा। इसलिए इस प्रकार की स्थिति में सूर्य का रत्न धारण नहीं करना चाहिए तथा इसी प्रकार कुंडली में अशुभ रूप से कार्य कर रहे किसी भी ग्रह का रत्न धारण नहीं करना चाहिए।

कुंडली में उपस्थित अशुभ अथवा नकारात्मक ग्रहों के निदान के लिए मंत्र तथा यंत्र बहुत अच्छे उपाय सिद्द हो सकते हैं जिनके उचित प्रयोग से कुंडली के अशुभ ग्रहों को शांत किया जा सकता है तथा उनसे लाभ भी प्राप्त किया जा सकता है। मंत्रों के प्रयोग की प्रक्रिया कठोर नियमों तथा अनुशासन का पालन करने की मांग करती है जिसके चलते जन साधारण के लिए इस प्रक्रिया का अभ्यास अति कठिन है। वहीं दूसरी ओर यंत्रों का प्रयोग रत्नो की भांति ही सहज तथा सरल है जिसके कारण अधिकतर जातक यंत्रों के प्रयोग से लाभ ले सकते हैं। यहां पर यह बात ध्यान देने योग्य है कि यंत्रों तथा मंत्रों के माध्यम से भी शुभ ग्रहों को अतिरिक्त शक्ति प्रदान की जा सकती है, रत्नों की तुलना में यंत्रों को अधिक ध्यान देना पड़ता है तथा इन्हें नियमित रूप से नमन इत्यादि भी करना पड़ता है जबकि मंत्रों के प्रयोग में कठोर नियम तथा अनुशासन का पालन करना पड़ता है तथा इसलिए यंत्रों और मंत्रों का प्रयोग अशुभ ग्रहों को नियंत्रित करने के लिए ही करना उचित है। मंत्रों की तुलना में यंत्र कहीं कम नियम तथा अनुशासन की मांग करते हैं तथा इसके अतिरिक्त यंत्र, पूजा

की तुलना में बहुत सस्ते भी होते हैं जिसके चलते सामान्य जातक के लिए इनका प्रयोग सुलभ है तथा इसी कारण यंत्रों का प्रचलन दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

निदान इकाई में हम जानेंगे कि किसी यंत्र की फल प्रदान करने की क्षमता के पीछे कौन सी शक्ति काम करती है। यंत्र आम तौर पर किसी धातु के टुकड़े पर किसी ग्रह विशेष के चित्रों, मंत्रों तथा अंकों इत्यादि का चित्रण करते हैं तथा इन्ही सब के माध्यम से अपने ग्रह विशेष की उर्जा तरंगों को संग्रहित तथा प्रसारित भी करते हैं। यहां पर यह बात ध्यान देने योग्य है कि अपना उचित शुभ फल प्रदान करने के लिए किसी भी यंत्र का शुद्धिकरण तथा प्राण प्रतिष्ठा की प्रक्रिया से होकर निकलना अति आवश्यक है तथा इन प्रक्रियाओं से बिना निकले ही प्रयोग किये जाने वाले यंत्र किसी जातक को कोई विशेष फल नहीं दे पाते। उदाहरण के लिए हम सभी जानते हैं कि एक मोमबत्ती के भीतर हमें प्रकाश देने योग्य अग्नि होती है किन्तु किसी बाहरी उपकरण अर्थात माचिस इत्यादि की सहायता के बिना यह आग प्रकट नहीं होती। इसी प्रकार कोई भी लोहे का टुकड़ा तब तक चुम्बक की भांति व्यवहार नहीं कर सकता जब तक किसी बाहरी उपकरण की सहायता से इसे चुम्बकीय गुण प्रदान न कर दिये जाएं। इसी प्रकार यंत्रों से शुभ फल प्राप्त करने के लिए उनका भी शुद्धिकरण तथा प्राण प्रतिष्ठा करनी पड़ती है जिसके पश्चात् ही इन यंत्रों में अपने ग्रह विशेष की शुभ उर्जा का संग्रह होता है जिसे वे निरंतर प्रसारित करते रहते हैं। किसी भी यंत्र को फल प्रदान करने की क्षमता देने के लिए इसे पहले वैदिक विधियों के द्वारा शुद्ध किया जाता है, तत्पश्चात् इस यंत्र में विशेष विधियों तथा मंत्रों के द्वारा इस यंत्र के ग्रह विशेष की उर्जा का संग्रह किया जाता है तथा इसके पश्चात इस यंत्र को किसी व्यक्ति विशेष के लिए संकल्पित किया जाता है जिससे इस यंत्र के शुभ फल केवल उस व्यक्ति को ही प्राप्त हों।

विधिवत् रूप से बनाया गया यंत्र आपको प्राप्त होने के पश्चात् अगले चरण में आपको इस यंत्र को अपने ज्योतिषि के परामर्श अनुसार अपने पास स्थापित करना होता है। आपका ज्योतिषि आपको अपने यंत्र को आपके घर में स्थित पूजा के स्थान में स्थापित करने के लिए कह सकता है अथवा इस यंत्र को सदैव अपने पास अपने बटुए अथवा जेब इत्यादि में रखने को भी कह सकता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक यंत्र के साथ अभ्यास करने के लिए कुछ विशेष विधियां भी दीं जातीं हैं जिनका अभ्यास जातक को नियमित रूप से करना होता है जिससे उसका यंत्र उत्तम रूप से कार्य करता रहता है।

आइए अब किसी यंत्र के फल देने की वास्तविक कार्यप्रणाली से जुड़े कुछ तथ्यों के बारे में चर्चा करते हैं। सामान्यतया प्रत्येक यंत्र विधिवत स्थापित होने के पश्चात् अपने ग्रह विशेष की शुभ उर्जा तरंगें प्रसारित करता है जो उस ग्रह की आपके आभामंडल में पहले से ही उपस्थित उर्जा तरंगो के साथ जाकर मिल जातीं हैं तथा आपके आभामंडल में उस ग्रह की उर्जा को पहले की तुलना में शुभ बना देतीं हैं। उदाहरण के लिए, विधिवत् बनाया गया तथा स्थापित किया गया एक सूर्य यंत्र सूर्य ग्रह की शुभ उर्जा तरंगें प्रसारित करता है तथा यह उर्जा तरंगें यंत्र के लिए संकल्पित जातक के

आभामंडल में प्रवेश करके वहां पर पहले से ही उपस्थित सूर्य की उर्जा तरंगों को अतिरिक्त उर्जा तथा शुभता प्रदान करतीं हैं जिससे जातक का आभामंडल पहले की तुलना में अधिक शुभ हो जाता है तथा जिसके कारण जातक को लाभ होता है। इस प्रकार इस सूर्य यंत्र से प्रसारित होने वाली सूर्य की शुभ उर्जा तरंगें जातक के आभामंडल में उपस्थित सूर्य ग्रह की उर्जा तरंगों के अशुभ होने की स्थिति में उनकी अशुभता को निरंतर कम करती जाएंगी तथा इन उर्जा तरंगों के शुभ होने की स्थिति में इन उर्जा तरंगों को और भी अधिक शुभ तथा बलवान् बनाती जाएंगीं जिससे जातक को अपनी कुंडली के अनुसार सूर्य से प्राप्त होने वाले लाभ में निरंतर वृद्धि होती जाएगी। इस प्रकार किसी ग्रह विशेष के यंत्र का प्रयोग उस ग्रह के शुभ फल बढ़ाने के लिए तथा अशुभ फल कम करने के लिए किया जा सकता है।

3.4.1. उपखण्ड-1

सूर्य यंत्र –

सूर्य यंत्र को तांबे पर खुदवाकर उसका नित्य पूजन करना चाहिए। सूर्य यंत्र को भोजपत्र पर अष्टगन्ध से लिखकर गले या दाहिने हाथ के बाजू पर धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

सूर्य यंत्र		
6	1	8
7	5	3
2	9	4

चन्द्र यंत्र- चन्द्रमा ग्रह की शान्ति हेतु चन्द्र होरा में चांदी के पत्र में चन्द्र यंत्र खुदवाकर या अष्टगन्ध से भोजपत्र पर लिखकर उसकी विधिवत, पूजन कर गले या दाहिनी भुजा में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

चंद्र यंत्र		
7	2	9
8	6	4
3	10	5

मंगल यंत्र- मंगल यंत्र को ताम्रपत्र पर खुदवाकर मंगल की होरा में या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर विधिवत पूजा कर गले में या दायें बाजू में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

मंगल यंत्र		
8	3	11
9	7	5
4	11	6

बुध यंत्र- बुध के यंत्र को चांदी कं पत्र पर खुदवाकर या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखवाकर उसकी विधिवत पूजा कर दायें भुजा में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

बुध यंत्र		
9	4	11
10	8	6
5	12	7

गुरु यंत्र- गुरु यंत्र को सोने या चांदी के पत्र पर लिखवाकर या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर पूजा प्रतिष्ठा करवाकर गले या दाहिनी भुजा में धारण करना अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

गुरु यंत्र		
10	5	12
11	9	7
6	13	8

शुक्र यंत्र- शुक्र यंत्र को चांदी के पत्र पर लिखवाकर या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर पूजा प्रतिष्ठा करवाकर गले या दाहिनी भुजा में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

शुक्र यंत्र		
11	6	13
12	10	8
7	14	9

शनि यंत्र- शनि यंत्र को सोने या चांदी के पत्र पर लिखवाकर या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर पूजा प्रतिष्ठा करवाकर गले या दाहिनी भुजा में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

शनि यंत्र		
12	7	14
13	11	9
8	15	10

राहु यंत्र- राहु यंत्र को सोने या चांदी के पत्र पर लिखवाकर या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर पूजा प्रतिष्ठा करवाकर गले या दाहिनी भुजा में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

राहु यंत्र		
12	7	14
13	11	9
8	15	10

केतु यंत्र- केतु यंत्र को सोने या चांदी के पत्र पर लिखवाकर या भोजपत्र पर अष्टगंध से लिखकर पूजा प्रतिष्ठा करवाकर गले या दाहिनी भुजा में धारण अथवा घर पर या दूकान पर रखकर प्रतिदिन पूजा करनी चाहिए।

केतु यंत्र		
13	8	15
14	12	10
9	16	11

इस प्रकार से यंत्रों के माध्यम से नव ग्रहों का निदान कर सकते हैं।

3.4.2. उपखण्ड-2

रत्नों का महत्त्व व प्रयोग-

रत्नों का प्रयोग ज्योतिष में किए जाने वाले उपायों में से एक बहुत शक्तिशाली उपाय है। प्राचीन काल से ही राजा महाराजा तथा धनवान् लोग रत्नों का प्रयोग करते आ रहे हैं तथा आज के युग में भी बहुत से धनवान् तथा प्रसिद्ध लोगों की उंगलियों में तरह-तरह के रत्न देखने को मिलते हैं। आइए इस इकाई में चर्चा करते हैं कि रत्नों की वास्तविक कार्यप्रणाली क्या होती है। क्या ये किसी दैवीय शक्ति से प्रेरित होकर कार्य करते हैं अथवा इनकी कार्यप्रणाली के पीछे वैज्ञानिक तथ्य हैं।

लगभग प्रत्येक कुंडली में ही एक या एक से अधिक ग्रह सकारात्मक स्वभाव के होने के बावजूद भी कुंडली के किसी भाव विशेष में अपनी उपस्थिति के कारण, कुंडली में किसी राशि विशेष में अपनी उपस्थिति के कारण अथवा एक या एक से अधिक नकारात्मक ग्रहों के बुरे प्रभाव के कारण बलहीन हो जाते हैं तथा कुंडली धारक को पूर्ण रूप से अपनी सकारात्मकता का लाभ देने में सक्षम नहीं रह जाते हैं। यही वह परिस्थिति है जहां पर ऐसे ग्रहों के रत्नों का प्रयोग इन ग्रहों को अतिरिक्त बल प्रदान करने का उत्तम उपाय है।

नवग्रहों के रत्नों में से प्रत्येक रत्न अपने से संबंधित ग्रह की उर्जा को सोखने और फिर उसे धारक के शरीर के किसी विशेष उर्जा केंद्र में स्थानांतरित करने का कार्य वैज्ञानिक रूप से करता है।

इस प्रकार जिस भी ग्रह विशेष का रत्न कोई व्यक्ति धारण करेगा, उसी ग्रह विशेष की अतिरिक्त उर्जा उस रत्न के माध्यम से उस व्यक्ति के शरीर में स्थानांतरित होनी शुरू हो जाएगी तथा वह ग्रह विशेष उस व्यक्ति को प्रदान करने वाले अच्छे या बुरे फलों में वृद्धि करता है।

माणिक्य-

यह रत्न ग्रहों के राजा माने जाने वाले सूर्य महाराज को बलवान् बनाने के लिए पहना जाता है। इसका रंग हल्के गुलाबी से लेकर गहरे लाल रंग तक होता है। धारक के लिए शुभ होने की स्थिति में यह रत्न उसे व्यवसाय में लाभ, प्रसिद्धि, रोगों से लड़ने की शारीरिक क्षमता, मानसिक स्थिरता, राज-दरबार से लाभ तथा अन्य प्रकार के लाभ प्रदान कर सकता है। किन्तु धारक के लिए अशुभ होने की स्थिति में यह उसे अनेक प्रकार के नुकसान भी पहुंचा सकता है। माणिक्य को आम तौर पर दायें हाथ की अनामिका उंगली में धारण किया जाता है। इसे रविवार को सुबह स्नान करने के बाद धारण करना चाहिए।

मोती-

यह रत्न सब ग्रहों की माता माने जाने वाले ग्रह चन्द्रमा को बलवान् बनाने के लिए पहना जाता है। मोती सीप के मुंह से प्राप्त होता है। इसका रंग सफेद से लेकर हल्का पीला, हलका नीला, हल्का गुलाबी अथवा हल्का काला भी हो सकता है। ज्योतिष लाभ की दृष्टि से इनमें से सफेद रंग उत्तम होता है । धारक के लिए शुभ होने की स्थिति में यह उसे मानसिक शांति प्रदान करता है तथा विभिन्न प्रकार की सुख सुविधाएं भी प्रदान कर सकता है। मोती को आम तौर पर दायें हाथ की अनामिका या कनिष्का उंगली में धारण किया जाता है। इसे सोमवार को सुबह स्नान करने के बाद धारण करना चाहिए।

लाल मूंगा-

यह रत्न मंगल को बल प्रदान करने के लिए पहना जाता है तथा धारक के लिए शुभ होने पर यह उसे शारीरिक तथा मानसिक बल, अच्छे दोस्त, धन तथा अन्य बहुत कुछ प्रदान कर सकता है। मूंगा गहरे लाल से लेकर हल्के लाल रगों में पाया जाता है, किन्तु मंगल ग्रह को बल प्रदान करने के लिए गहरा लाल अथवा हल्का लाल मूंगा ही पहनना चाहिए। इस रत्न को आम तौर पर दायें हाथ की अनामिका उंगली में मंगलवार को सुबह स्नान करने के बाद पहना जाता है।

पन्ना-

यह रत्न बुध ग्रह को बल प्रदान करने के लिए पहना जाता है तथा धारक के लिए शुभ होने पर यह उसे अच्छी वाणी, व्यापार, अच्छी सेहत, धन-धान्य तथा अन्य बहुत कुछ प्रदान कर सकता

है। पन्ना हल्के हरे रंग से लेकर गहरे हरे रंग तक में पाया जाता है। इस रत्न को आम तौर पर दायें हाथ की कनिष्का उंगली में बुधवार को सुबह स्नान करने के बाद धारण किया जाता है।

पीला पुखराज-

यह रत्न समस्त ग्रहों के गुरु माने जाने वाले बृहस्पति को बल प्रदान करने के लिए पहना जाता है। इसका रंग हल्के पीले से लेकर गहरे पीले रंग तक होता है। धारक के लिए शुभ होने की स्थिति में यह उसे धन, विद्या, समृद्धि, अच्छा स्वास्थय तथा अन्य बहुत कुछ प्रदान कर सकता है। इस रत्न को आम तौर पर दायें हाथ की तर्जनी उंगली में गुरुवार को सुबह स्नान करने के बाद धारण किया जाता है।

हीरा-

यह रत्न शुक्र को बलवान बनाने के लिए धारण किया जाता है तथा धारक के लिए शुभ होने पर यह उसे सांसरिक सुख-सुविधा, ऐश्वर्य, मानसिक प्रसन्नता तथा अन्य बहुत कुछ प्रदान कर सकता है। हीरे के अतिरिक्त शुक्र को बल प्रदान करने के लिए सफेद पुखराज भी पहना जाता है। शुक्र के यह रत्न रंगहीन तथा साफ़ पानी या साफ़ कांच की तरह दिखते हैं। इन रत्नों को आम तौर पर दायें हाथ की मध्यमा उंगली में शुक्रवार की सुबह स्नान करने के बाद धारण किया जाता है।

नीलम-

शनि का यह रत्न नवग्रहों के समस्त रत्नों में सबसे अनोखा है तथा धारक के लिए शुभ होने की स्थिति में यह उसे धन, सुख, समृद्धि, नौकर-चाकर, व्यापरिक सफलता तथा अन्य बहुत कुछ प्रदान कर सकता है किन्तु धारक के लिए शुभ न होने की स्थिति यह धारक का बहुत नुकसान भी कर सकता है। इसलिए इस रत्न को किसी अच्छे ज्योतिषि के परामर्श के बिना बिल्कुल भी धारण नहीं करना चाहिए। इस रत्न का रंग हल्के नीले से लेकर गहरे नीले रंग तक होता है। इस रत्न को आम तौर पर दायें हाथ की मध्यमा उंगली में शनिवार को सुबह स्नान करने के बाद धारण किया जाता है।

गोमेद-

यह रत्न राहु को बल प्रदान करने के लिए पहना जाता है तथा धारक के लिए शुभ होने की स्थिति में यह उसे अकस्मात् ही कही से धन अथवा अन्य लाभ प्रदान कर सकता है। किन्तु धारक के लिए अशुभ होने की स्थिति में यह रत्न उसका बहुत अधिक नुकसान कर सकता है और धारक को अल्सर, कैंसर तथा अन्य कई प्रकार की बिमारियां भी प्रदान कर सकता है। इसलिए इस रत्न को किसी अच्छे ज्योतिषि के परामर्श के बिना बिल्कुल भी धारण नहीं करना चाहिए। इसका रंग हल्के शहद रंग से लेकर गहरे शहद रंग तक होता है। इस रत्न को आम तौर पर दायें हाथ की मध्यमा उंगली में शनिवार को सुबह स्नान करने के बाद धारण किया जाता है।

लहसुनिया-

यह रत्न केतु को बल प्रदान करने के लिए पहना जाता है तथा धारक के लिए शुभ होने पर यह उसे व्यावसायिक सफलता देता है। रत्न किसी भी ग्रह को शक्ति प्रदान करने का सबसे तीव्र गति वाला तथा सरल उपाय है।

प्रश्नोत्तर-

मंजूषा से शब्दों को चुनकर रिक्त स्थानों को भरें-

माणि क्य	अनामि का	मो ती	मूं गा	मध्य मा	प न्ना	पुखरा ज	तर्ज नी	ही रा	नील म	गोमे द	लहसुनि या

(क) सूर्य ग्रह का रत्न.......... है?

(ख) चंद्र ग्रह का रत्न .... है?

(ग) मंगल ग्रह का रत्न ....अंगुली में धारण करते हैं?

(घ) बुध ग्रह का रत्न ....है?

(ङ) गुरु ग्रह का रत्न ....अंगुली में धारण करते हैं?

(च) शुक्र ग्रह का रत्न .... है?

(छ) शनि ग्रह का रत्न ....अंगुली में धारण करते हैं?

(ज) राहु ग्रह का रत्न ....अंगुली में धारण करते हैं?

(झ) केतु ग्रह का रत्न ....है?

(ञ) मंगल ग्रह का रत्न .... है?

(ट) गुरु ग्रह का रत्न .... है?

(ठ) शनि ग्रह का रत्न .... है?

(ड) राहु ग्रह का रत्न .... है?

3.5-मुख्य भाग खण्ड-3

नवग्रहों का व्यक्ति के जीवन पर पूर्ण रूप से प्रभाव देखा जा सकता है। इन नवग्रहों की शांति द्वारा जीवन की अनेक समस्याएं दूर हो जाती हैं। हमारे पूर्व ऋषियों द्वारा इस विषय में अनेक तथ्य कहे गए हैं। जिनमें मंत्रों का महत्व परिलक्षित होता है। इस विषय में ज्योतिष में अनेक सिद्धांत प्रचलित हैं। महर्षि वेद व्यास द्वारा रचित नवग्रहस्त्रोत भी इसी के आधार स्वरूप एक महत्वपूर्ण मंत्र जप है जिसके द्वारा समस्त ग्रहों की शांति एवं उनकी कृपा प्राप्ति संभव है।

नवग्रह स्तोत्र-

जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महदद्युतिम् ।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ।। 1 ।।

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम् ।

नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुटभूषणम् ।। 2 ।।

धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कांतिसमप्रभम् ।

कुमारं शक्तिहस्तं तं मंगलं प्रणाम्यहम् ।। 3 ।।

प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।

सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ।। 4 ।।

देवानां च ऋषीनां च गुरुं कांचनसन्निभम् ।

बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ।। 5 ।।

हिमकुंदमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ।। 6 ।।

नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।

छायामार्तंडसंभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ।। 7 ।।

अर्धकायं महावीर्यं चंद्रादित्यविमर्दनम् ।

सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ।। 8 ।।

पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ।। 9 ।।

इति श्रीव्यासमुखोद्गीतं यः पठेत् सुसमाहितः ।

दिवा वा यदि वा रात्रौ विघ्नशांतिर्भविष्यति ।। 10 ।।

नरनारीनृपाणां च भवेत् दुःस्वप्ननाशनम्।

ऐश्वर्यमतुलं तेषाम् आरोग्यं पुष्टिवर्धनम्॥ 11॥

ग्रहनक्षत्रजाः पीडास्तारकाग्निसमुद्भवाः।

ता सर्वाः प्रशमं यान्ति व्यासो ब्रुते न संशयः॥ 12॥

॥इति श्रीवेदव्यासविरचितं नवग्रहस्तोत्रं संपूर्णम्॥

3.5.1 **उपखण्ड-1**

सूर्य दान के पदार्थ-

सूर्य के अरिष्ट योग के निदान में दान के विषय में शास्त्र कहता है कि दान का फल उत्तम तभी होता है जब यह शुभ समय में सुपात्र को दिया जाए। सूर्य से सम्बन्धित वस्तुओं का दान रविवार के दिन दोपहर में ४० से ५० वर्ष के व्यक्ति को देना चाहिए। सूर्य ग्रह की शांति के लिए रविवार के दिन व्रत करना चाहिए। गाय को गेहुं और गुड़ मिलाकर खिलाना चाहिए। किसी ब्राह्मण अथवा गरीब व्यक्ति को गुड़ का खीर खिलाने से भी सूर्य ग्रह के विपरीत प्रभाव में कमी आती है। अगर आपकी कुण्डली में सूर्य कमज़ोर है तो आपको अपने पिता एवं अन्य बुजुर्गों की सेवा करनी चाहिए इससे सूर्य देव प्रसन्न होते हैं। प्रात: उठकर सूर्य नमस्कार करने से भी सूर्य की विपरीत दशा से आपको राहत मिल सकती है। सूर्य के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे टोटकों हेतु रविवार का दिन, सूर्य के नक्षत्र (कृत्तिका, उत्तरा-फाल्गुनी तथा उत्तराषाढ़ा) तथा सूर्य की होरा में अधिक शुभ होते हैं।

1. **औषधि स्नान-** सूर्य ग्रह की शान्ति के लिए इलाइची, देवदारू, केशर, खस, रक्त पुष्प, रक्त चन्दन, कनेर पुष्प, गंगाजल, मनः शिला को मिलाकर रविवार के दिन स्नान करने से अत्यन्त लाभ प्राप्त होता है।
2. आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ करे, सूर्य को अर्घ्य दे, गायत्री मंत्र का जप करे।
3. बछड़े सहित गाय का दान करें
4. गुड़, सोना, तांबा और गेहूं आदि सूर्य से सम्बन्धित वस्तुओं का दान व माणिक्य रत्न का दान करें

5. सूर्य को बली बनाने के लिए व्यक्ति को प्रातःकाल सूर्योदय के समय उठकर लाल पुष्प वाले पौधों एवं वृक्षों को जल से सींचना चाहिए।
6. रात्रि में ताँबे के पात्र में जल भरकर सिरहाने रख दें तथा दूसरे दिन प्रातःकाल उसे पीना चाहिए।
7. ताँबे का कड़ा दाहिने हाथ में धारण किया जा सकता है।
8. लाल गाय को रविवार के दिन दोपहर के समय दोनों हाथों में गेहूँ भरकर खिलाने चाहिए।
9. किसी भी महत्त्वपूर्ण कार्य पर जाते समय घर से मीठी वस्तु खाकर निकलना चाहिए।
10. हाथ में मोली (कलावा) छः बार लपेटकर बाँधना चाहिए।
11. लाल चन्दन को घिसकर स्नान के जल में डालना चाहिए।
12. पिता की सेवा करें।

चन्द्रमा दान के पदार्थ

चन्द्रमा के अरिष्ट योग के निदान में शंख का दान करना उत्तम होता है। इसके अलावा सफेद वस्त्र, चांदी, चावल, भात एवं दूध का दान भी पीड़ित चन्द्रमा वाले व्यक्ति के लिए लाभदायक होता है। जल दान अर्थात् प्यासे व्यक्ति को पानी पिलाना से भी चन्द्रमा की विपरीत दशा में सुधार होता है। अगर आपका चन्द्रमा पीड़ित है तो आपको चन्द्रमा से सम्बन्धित रत्न दान करना चाहिए। चन्दमा से सम्बन्धित वस्तुओं का दान करते समय ध्यान रखें कि दिन सोमवार हो और संध्या काल हो। ज्योतिषशास्त्र में चन्द्रमा से सम्बन्धित वस्तुओं के दान के लिए महिलाओं को सुपात्र बताया गया है अत: दान किसी महिला को दें। आपका चन्द्रमा कमज़ोर है तो आपको सोमवार के दिन व्रत करना चाहिए। गाय को गूंथा हुआ आटा खिलाना चाहिए तथा कौए को भात और चीनी मिलाकर देना चाहिए। किसी ब्राह्मण अथवा गरीब व्यक्ति को दूध में बना हुआ खीर खिलाना चाहिए। सेवा धर्म से भी चन्द्रमा की दशा में सुधार संभव है। सेवा धर्म से आप चन्द्रमा की दशा में सुधार करना चाहते है तो इसके लिए आपको माता और माता समान महिला एवं वृद्ध महिलाओं की सेवा करनी चाहिए। कुछ मुख्य बिन्दु निम्न है-

1. **औषधि स्नान** – चन्द्र ग्रह की शांति के लिए पंचगव्य, बेल गिरी, गजमद, शंख, सिप्पी,श्वेत चंदन, स्फटिक से स्नान करना चाहिए।
2. सोमवार का व्रत रखकर चावल, सफेद वस्त्र, सफेद वस्तुओं का दान करना चाहिए। सोमवार को प्रातः काल स्नानादि करके शिवलिंग पर जल तथा दूध चढाना चाहिए।
3. माता की सेवा करना, शिव की आराधना करना, मोती धारण करना चाहिए।

4. व्यक्ति को देर रात्रि तक नहीं जागना चाहिए। रात्रि के समय घूमने-फिरने तथा यात्रा से बचना चाहिए। रात्रि में ऐसे स्थान पर सोना चाहिए जहाँ पर चन्द्रमा की रोशनी आती हो।
5. ऐसे व्यक्ति के घर में दूषित जल का संग्रह नहीं होना चाहिए।
6. वर्षा का पानी काँच की बोतल में भरकर घर में रखना चाहिए।
7. वर्ष में एक बार किसी पवित्र नदी या सरोवर में स्नान अवश्य करना चाहिए।
8. सोमवार के दिन मीठा दूध पीना चाहिए।
9. सफेद सुगंधित पुष्प वाले पौधे घर में लगाकर उनकी देखभाल करनी चाहिए।

मंगल दान के पदार्थ

मंगल के अरिष्ट योग के निदान में पीड़ित व्यक्ति को लाल रंग का बैल दान करना चाहिए। लाल रंग का वस्त्र, सोना, तांबा, मसूर दाल, बताशा, मीठी रोटी का दान देना चाहिए। मंगल से सम्बन्धित रत्न दान देने से भी अरिष्ट योग कारक मंगल के दुष्प्रभाव में कमी आती है। मंगल ग्रह की दशा में सुधार हेतु दान देने के लिए मंगलवार का दिन और दोपहर का समय सबसे उपयुक्त होता है। जिनका मंगल पीड़ित है उन्हें मंगलवार के दिन व्रत करना चाहिए और ब्राह्मण अथवा किसी गरीब व्यक्ति को भर पेट भोजन कराना चाहिए। मंगल पीड़ित व्यक्ति के लिए प्रतिदिन 10 से 15 मिनट ध्यान करना उत्तम रहता है। मंगल पीड़ित व्यक्ति में धैर्य की कमी होती है अत: धैर्य बनाये रखने का अभ्यास करना चाहिए एवं छोटे भाई बहनों का ख्याल रखना चाहिए। मंगल के अरिष्ट योग कारक दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे दान हेतु मंगलवार का दिन, मंगल के नक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा) तथा मंगल की होरा में अधिक शुभ होते हैं।

1. लाल कपड़े में सौंफ बाँधकर अपने शयनकक्ष में रखनी चाहिए।
2. ऐसा व्यक्ति जब भी अपना घर बनवाये तो उसे घर में लाल पत्थर अवश्य लगवाना चाहिए।
3. बन्धुजनों को मिष्ठान्न का सेवन कराने से भी मंगल शुभ बनता है।
4. लाल वस्त्र लेकर उसमें दो मुठ्ठी मसूर की दाल बाँधकर मंगलवार के दिन हनुमान् मंदिर या किसी भिखारी को दान करनी चाहिए।
5. मंगलवार के दिन हनुमान चालीसा, बजरंग बाण, हनुमानाष्टक, सुंदरकांड का पाठ चाहिए।
6. बंदरों को गुड़ और चने खिलाने चाहिए।
7. अपने घर में लाल पुष्प वाले पौधे या वृक्ष लगाकर उनकी देखभाल करनी चाहिए।

8. भाइयों की सेवा करनी चाहिए।

बुध दान के पदार्थ

बुध के अरिष्ट योग के निदान में स्वर्ण का दान करना चाहिए। हरा वस्त्र, हरी सब्जी, मूंग की दाल एवं हरे रंग के वस्तुओं का दान उत्तम कहा जाता है। हरे रंग की चूड़ी और वस्त्र का दान किन्नरों को देना भी इस ग्रह दशा में श्रेष्ठ होता है। बुध ग्रह से सम्बन्धित वस्तुओं का दान भी ग्रह की पीड़ा में कमी ला सकती है। इन वस्तुओं के दान के लिए ज्योतिषशास्त्र में बुधवार के दिन दोपहर का समय उपयुक्त माना गया है। बुध की दशा में सुधार हेतु बुधवार के दिन व्रत रखना चाहिए। गाय को हरी घास और हरी पत्तियां खिलानी चाहिए। ब्राह्मणों को, दूध में पकाकर खीर भोजन करना चाहिए। अरिष्ट योग कारक बुध की दशा में सुधार के लिए विष्णु सहस्रनाम का जप भी कल्याणकारी कहा गया है। रविवार को छोड़कर अन्य दिन नियमित तुलसी में जल देने से बुध की दशा में सुधार होता है। अनाथों एवं गरीब छात्रों की सहायता करने से बुध ग्रह से पीड़ित व्यक्तियों को लाभ मिलता है। मौसी, बहन, चाची बेटी के प्रति अच्छा व्यवहार बुध ग्रह की दशा से पीड़ित व्यक्ति के लिए कल्याणकारी होता है। अरिष्ट योग कारक बुध के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे टोटकों हेतु बुधवार का दिन, बुध के नक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) तथा बुध की होरा में अधिक शुभ होते हैं।

---

१. अपने घर में तुलसी का पौधा अवश्य लगाना चाहिए तथा निरन्तर उसकी देखभाल करनी चाहिए। बुधवार के दिन तुलसी पत्र का सेवन करना चाहिए।

२. बुधवार के दिन हरे रंग की चूड़ियाँ हिजड़े को दान करनी चाहिए।

३. हरी सब्जियाँ का दान एवं हरा चारा गाय को खिलाना चाहिए।

४. बुधवार के दिन गणेशजी के मंदिर में मूँग के लड्डुओं का भोग लगाएँ तथा बच्चों को बाँटें।

५. घर में खंडित एवं फटी हुई धार्मिक पुस्तकें एवं ग्रंथ नहीं रखने चाहिए।

६. अपने घर में कंटीले पौधे, झाड़ियाँ एवं वृक्ष नहीं लगाने चाहिए। फलदार पौधे लगाने से बुध ग्रह की अनुकूलता बढ़ती है।

७. तोता पालने से भी बुध ग्रह की अनुकूलता बढ़ती है

८. नाक छिदवाएँ।

९. बंधुजनों की सेवा करें।

बृहस्पति दान के पदार्थ-

बृहस्पति के अरिष्ट योग के निदान हेतु जिन वस्तुओं का दान करना चाहिए उनमें केला, पीला वस्त्र, केशर, पीली रंग की मिठाइयां, हल्दी, पीला फूल और भोजन उत्तम कहा गया है। इस ग्रह की शांति के लए बृहस्पति से सम्बन्धित रत्न का दान करना भी श्रेष्ठ होता है। दान करते समय आपको ध्यान रखना चाहिए कि दिन बृहस्पतिवार हो और सुबह का समय हो। दान किसी ब्राह्मण, गुरु अथवा पुरोहित को देना विशेष फलदायक होता है। बृहस्पतिवार के दिन व्रत रखना चाहिए। कमज़ोर बृहस्पति वाले व्यक्तियों को केला और पीले रंग की मिठाईयां गरीबों, पक्षियों विशेषकर कौओं को देना चाहिए। ब्राह्मणों एवं गरीबों को दही चावल खिलाना चाहिए। बृहस्पतिवार के दिन पीपल के जड़ को जल से सिंचना चाहिए। गुरु, पुरोहित और शिक्षकों में बृहस्पति का निवास होता है अत: इनकी सेवा से भी बृहस्पति के दुष्प्रभाव में कमी आती है। ऐसे व्यक्ति को अपने माता-पिता, गुरुजन एवं अन्य पूजनीय व्यक्तियों के प्रति आदर भाव रखना चाहिए तथा महत्त्वपूर्ण समयों पर इनका चरण स्पर्श कर आशीर्वाद लेना चाहिए। गुरु के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे दान हेतु गुरुवार का दिन, गुरु के नक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्व-भाद्रपद) तथा गुरु की होरा में अधिक शुभ होते हैं।

1. सफेद चन्दन की लकड़ी को पत्थर पर घिसकर उसमें केसर मिलाकर लेप को माथे पर लगाना चाहिए या टीका लगाना चाहिए।
2. ऐसे व्यक्ति को मन्दिर में या किसी धर्म स्थल पर निःशुल्क सेवा करनी चाहिए।
3. किसी भी मन्दिर के सम्मुख से निकलने पर अपना सिर श्रद्धा से झुकाना चाहिए।
4. ऐसे व्यक्ति को परस्त्री / परपुरुष से संबंध नहीं रखने चाहिए।
5. गुरुवार के दिन मन्दिर में केले के पेड़ के सम्मुख गौघृत का दीपक जलाना चाहिए।
6. गुरुवार के दिन आटे के लोयी में चने की दाल, गुड़ एवं पीसी हल्दी डालकर गाय को खिलानी चाहिए।
7. पीले वस्त्र, पुखराज, पीले चावल, चने की दाल, हल्दी, शहद, पीले फल, धर्म ग्रन्थ, सुवर्ण, पीली मिठाई आदि दान करने चाहिए।
8. गौ सेवा करना तथा पीले वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए है।

9. गुरु की सेवा करनी चाहिए।

शुक्र का निदान-

शुक्र ग्रहों में सबसे चमकीला है और प्रेम का प्रतीक है। इस ग्रह के पीड़ित होने पर आपको ग्रह शांति हेतु सफेद रंग का घोड़ा दान देना चाहिए। रंगीन वस्त्र, रेशमी कपड़े, घी, सुगंध, चीनी, खाद्य तेल, चंदन, कपूर का दान शुक्र ग्रह के अरिष्ट योग के निदान में किया जाता है। शुक्र से सम्बन्धित रत्न का दान भी लाभप्रद होता है। इन वस्तुओं का दान शुक्रवार के दिन संध्या काल में किसी युवती को देना उत्तम रहता है। शुक्र ग्रह से सम्बन्धित क्षेत्र में आपको परेशानी आ रही है तो इसके लिए आप शुक्रवार के दिन व्रत रखें। मिठाईयां एवं खीर, घी व भात ब्राह्मणों एवं गरीबों को खिलाएं। शुक्र के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे निदान हेतु शुक्रवार का दिन, शुक्र के नक्षत्र (भरणी, पूर्वा-फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा) तथा शुक्र की होरा में अधिक शुभ होते हैं।

1. काली चींटियों को चीनी खिलानी चाहिए।
2. शुक्रवार के दिन सफेद गाय को आटा खिलाना चाहिए।
3. किसी काने व्यक्ति को सफेद वस्त्र एवं सफेद मिष्ठान्न का दान करना चाहिए।
4. किसी महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए जाते समय १० वर्ष से कम आयु की कन्या का चरण स्पर्श करके आशीर्वाद लेना चाहिए।
5. अपने घर में सफेद पत्थर लगवाना चाहिए।
6. किसी कन्या के विवाह में कन्यादान का अवसर मिले तो अवश्य करना चाहिए।
7. शुक्रवार के दिन गौ-दुग्ध से स्नान करना चाहिए।

शनि के निदान-

शनि के अरिष्ट योग के निदान में काली गाय का दान करना चाहिए। काला वस्त्र, उड़द की दाल, काला तिल, चमड़े का जूता, नमक, सरसों तेल, लोहा, खेती योग्य भूमि, बर्तन व अनाज का दान करना चाहिए। शनि ग्रह की शांति के लिए दान देते समय ध्यान रखें कि संध्या काल हो और शनिवार का दिन हो तथा दान प्राप्त करने वाला व्यक्ति ग़रीब और वृद्ध हो। शनि के कोप से बचने हेतु व्यक्ति को शनिवार के दिन एवं शुक्रवार के दिन व्रत रखना चाहिए। लोहे के बर्तन में दही चावल और नमक मिलाकर भिखारियों और कौओं को देना चाहिए। रोटी पर नमक और सरसों तेल लगाकर

कौआ को देना चाहिए। तिल और चावल पकाकर ब्राह्मण को खिलाना चाहिए। अपने भोजन में से कौए के लिए एक हिस्सा निकालकर उसे दें। शनि ग्रह से पीड़ित व्यक्ति के लिए हनुमान चालीसा का पाठ, महामृत्युंजय मंत्र का जप एवं शनिस्तोत्र का पाठ भी बहुत लाभदायक होता है। शनि ग्रह के दुष्प्रभाव से बचाव हेतु गरीब, वृद्ध एवं कर्मचारियो के प्रति अच्छा व्यवहार रखें। मोर पंख धारण करने से भी शनि के दुष्प्रभाव में कमी आती है। शनि के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे टोटकों हेतु शनिवार का दिन, शनि के नक्षत्र (पुष्य, अनुराधा, उत्तरा-भाद्रपद) तथा शनि की होरा में अधिक शुभ फल देता है।

1. शनिवार के दिन पीपल वृक्ष की जड़ पर तिल के तेल का दीपक जलाएँ।
2. शनिवार के दिन बाल एवं दाढ़ी-मूँछ नही कटवाने चाहिए।
3. भिखारी को कड़वे तेल का दान करना चाहिए।
4. भिखारी को उड़द की दाल की कचोरी खिलानी चाहिए।
5. किसी दुःखी व्यक्ति के आँसू अपने हाथों से पोंछने चाहिए।
6. घर में काला पत्थर लगवाना चाहिए।

राहु के उपाय

राहु के अरिष्ट योग के निदान में अपनी शक्ति के अनुसार संध्या को काले-नीले फूल, गोमेद, नारियल, मूली, सरसों, नीलम, कोयले, खोटे सिक्के, नीला वस्त्र किसी कोढ़ी को दान में देना चाहिए। राहु के निदान के लिए लोहे के हथियार, नीला वस्त्र, कम्बल, लोहे की चादर, तिल, सरसों तेल, विद्युत उपकरण, नारियल एवं मूली दान करना चाहिए। सफाई कर्मियों को भूरा अनाज देने से भी राहु की शांति होती है। राहु से पीड़ित व्यक्ति को इस ग्रह से सम्बन्धित रत्न का दान करना चाहिए। राहु से पीड़ित व्यक्ति को शनिवार का व्रत करना चाहिए इससे राहु ग्रह का दुष्प्रभाव कम होता है। मीठी रोटी कौए को दें और ब्राह्मणों अथवा गरीबों को चावल और मांसाहार करायें। राहु की दशा होने पर कुष्ट से पीड़ित व्यक्ति की सहायता करनी चाहिए। गरीब व्यक्ति की कन्या की शादी करनी चाहिए। राहु की दशा से आप पीड़ित हैं तो अपने सिरहाने जौ रखकर सोयें और सुबह उनका दान कर दें इससे राहु शांत होता है। राहु के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे दान हेतु शनिवार का दिन, राहु के नक्षत्र (आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा) तथा शनि की होरा में अधिक शुभ होते हैं।

1. ऐसे व्यक्ति को अष्टधातु का कड़ा दाहिने हाथ में धारण करना चाहिए।
2. हाथी दाँत का लाकेट गले में धारण करना चाहिए।
3. अपने पास सफेद चन्दन अवश्य रखना चाहिए। सफेद चन्दन की माला भी धारण की जा सकती है।
4. दिन के संधिकाल में अर्थात् सूर्योदय या सूर्यास्त के समय कोई महत्त्वपूर्ण कार्य नही करना चाहिए।
5. यदि किसी अन्य व्यक्ति के पास रुपया अटक गया हो, तो प्रातःकाल पक्षियों को दाना चुगाना चाहिए।
6. झुठी कसम नहीं खानी चाहिए।

केतु के उपाय

केतु के अरिष्ट योग के निदान में युवा व्यक्ति को कपिला गाय, कंबल, लहसुनिया, लोहा, तिल, तेल, सप्तधान्य शस्त्र, बकरा, नारियल, उड़द आदि का दान करना चाहिए है। ज्योतिषशास्त्र इसे अशुभ ग्रह मानता है अत: जिनकी कुण्डली में केतु की दशा चलती है उसे अशुभ परिणाम प्राप्त होते हैं। इसकी दशा होने पर शांति हेतु जो उपाय आप कर सकते हैं उनमें दान का स्थान प्रथम है। ज्योतिषशास्त्र कहता है केतु से पीड़ित व्यक्ति को बकरे का दान करना चाहिए। कम्बल, लोहे के बने हथियार, तिल, भूरे रंग की वस्तु केतु की दशा में दान करने से केतु का दुष्प्रभाव कम होता है। गाय की बछिया, केतु से सम्बन्धित रत्न का दान भी उत्तम होता है। शनिवार एवं मंगलवार के दिन व्रत रखने से केतु की दशा शांत होती है। कुत्ते को आहार दें एवं ब्राह्मणों को भात खिलायें इससे भी केतु की दशा शांत होगी। किसी को अपने मन की बात नहीं बताएं एवं बुजुर्गों एवं संतों की सेवा करें यह केतु की दशा में राहत प्रदान करता है। दुर्गा सप्तशती का पाठ व विष्णु सहस्त्र नाम का पाठ करना चाहिए। भगवान गणेश जी की आराधना भी लाभप्रद होती है। सिर में चोटी बाँधकर रखें।

1.5.2. **उपखण्ड-2**

नवग्रह के पौधे-

नव ग्रहों के अरिष्ट योग के निदान के लिए वनस्पति तंत्र में प्राकृतिक दृष्टिकोण से पेड़ व पौधों का विशेष महत्व है। भारतीय ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों को अपने अनुकूल बनाने के लिए वनस्पति की भूमिका अग्रणी है। इनके पूजन से कई समस्याएं दूर होती हैं।

नवग्रह के पौधे

सूर्य- आक/अर्क

चंद्र- पलाश

मंगल- खैर

बुध- अपामार्ग

गुरु –पीपल

शुक्र- उदुम्बर/गुलर

शनि- शमी

राहु- दूर्वा /चंदन

केतु- कुशा/अश्वगंधा।

जातक की कुण्डली में जो ग्रह प्रतिकूल हो उस ग्रह का जो पौधा कहा गया है उस पौधे का आरोपण करके उसका सिंचन व पूजन करना चाहिए जैसे- सूर्य ग्रह प्रतिकूल हो तो घर में आक का पौधा लगाना चाहिए। कुण्डली में सूर्यादि सभी ग्रहों को अनुकूल बनाने के लिए अपने घर में नवग्रह वाटिका का आरोपण करना चाहिए।

प्रश्नोत्तर-

परस्पर सही का मिलान कीजिए

	ग्रह	पौधे
क	सूर्य	१ पलाश
ख	चंद्र	२ आक
ग	मंगल	३ शमी
घ	बुध	४ पीपल
ङ	गुरु	५ उदुम्बर
च	शुक्र	६ दूर्वा
छ	शनि	७ कुशा
ज	राहु	८ अपामार्ग
झ	केतु	९ खैर

3.6 **सारांश**

व्यक्ति की कुण्डली में स्थित शुभाशुभ ग्रहयोग उसके पूर्व जन्म के कर्मों के द्योतक होते हैं। कुंडली की वैज्ञानिक आधार का सार रूप से इस इकाई में चर्चा की गई है। कुंडली में दिखाए जाने वाले नव ग्रहों का शुभाशुभ प्रभाव वास्तव में कुंडली धारक के शरीर में प्रत्यक्ष दिखाई देता है। मानव के कर्मों के अनुसार, मानव पर ग्रह अपने उर्जा का भंडारण तथा प्रसारण करते हैं। किसी व्यक्ति के जन्म के समय इनमें से कुछ उर्जा केंद्र उस समय की ग्रहों तथा नक्षत्रों की स्थिति के अनुसार सकारात्मक अथवा शुभ फलदायी उर्जा का पंजीकरण करते हैं, कुछ ग्रह नकारात्मक अथवा अशुभ फलदायी उर्जा का पंजीकरण करते हैं, कुछ ग्रह सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार की उर्जा का पंजीकरण करते हैं तथा कुछ ग्रह किसी भी प्रकार की उर्जा का पंजीकरण नहीं करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह अपनी किसी राशि विशेष में स्थिति, किसी भाव विशेष में स्थिति तथा कुछ अन्य महत्वपूर्ण तथ्यों के आधार पर विभिन्न उर्जा केंद्रों अथवा भावों में अपने बल तथा स्वभाव का पंजीकरण करवाते हैं। किसी व्यक्ति के जन्म के समय प्रत्येक ग्रह का उसके शरीर के इन उर्जा केंद्रों में अपने बल तथा स्वभाव का यह पंजीकरण ही उस व्यक्ति के लिए जीवन भर इन ग्रहों के बल तथा स्वभाव को निर्धारित करता है। कुण्डली में स्थित ग्रहों की बलाबल का विचार करके किस जातक के लिए कौन सा निदान उत्तम है यह निर्णय दैवज्ञ ही कर सकता है। अत: दैवज्ञ से निर्णय करवा कर लें। इस इकाई में ग्रहों के निदान के लिए बहुविध प्रकार बताए गए हैं जैसे कि- नव ग्रहों के वैदिक मंत्र, पौराणिक मंत्र, बीज मंत्र, मूल मंत्र, गायत्री मंत्र, ग्रहों के यंत्र, ग्रहों के रत्न, ग्रहों से सम्बंधित वस्तुओं के दान, ग्रहों के पौधे आदि। जातक स्वयं भी अपने सामर्थ्य के अनुसार माता-पिता की सेवा, दानादि उपाय कर सकता है अथवा ब्राह्मण से वैदिक, पौराणिक, बीज, मूल मंत्रों से ग्रहों का पूजन भी करवा सकते हैं।

3.7 शब्दावली-

(क) आक/अर्क-यह सूर्य ग्रह की शांति के लिए आक के पौधे का पूजन करना चाहिए, तथा हवन में भी आक के पौधे की सूर्य ग्रह की समिधा होती है, आक सफेद रंग का पौधा होता है।

(ख) पलाश-चंद्रमा के अरिष्ट योग के निदान के लिए पलाश की पूजा की जाती है तथा चंद्र के हवन में पलाश की समिधा की जाती है ।

(ग) खैर- मंगल के अरिष्ट योग के निदान के लिए खैर की पूजा की जाती है तथा मंगल के हवन में खैर की समिधा की जाती है ।

(घ) अपामार्ग- बुध के अरिष्ट योग के निदान के लिए अपामार्ग की पूजा की जाती है तथा बुध के हवन में अपामार्ग की समिधा की जाती है।

(ङ) पीपल- गुरु के अरिष्ट योग के निदान के लिए पीपल की पूजा की जाती है तथा गुरु के हवन में पीपल की समिधा की जाती है।

(च) उदुम्बर/गुलर- शुक्र के अरिष्ट योग के निदान के लिए उदुम्बर की पूजा की जाती है तथा शुक्र के हवन में उदुम्बर की समिधा की जाती है।

(छ) शमी- शनि के अरिष्ट योग के निदान के लिए शमी की पूजा की जाती है तथा शनि के हवन में शमी की समिधा की जाती है।

(ज) दूर्वा- राहु के अरिष्ट योग के निदान के लिए दूर्वा की पूजा की जाती है तथा राहु के हवन में दूर्वा की समिधा की जाती है।

(झ) कुशा– केतु के अरिष्ट योग के निदान के लिए कुशा की पूजा की जाती है तथा केतु के हवन में कुशा की समिधा की जाती है।

(ञ) माणिक्य- सूर्य के अरिष्ट योग के निदान के लिए अनामिका उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(ट) मोती- चंद्र के अरिष्ट योग के निदान के लिए कनिठिका उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(ठ) मूंगा- मंगल के अरिष्ट योग के निदान के लिए अनामिका उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(ड) पन्ना- बुध के अरिष्ट योग के निदान के लिए अनामिका उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(ढ) पुखराज- गुरु के अरिष्ट योग के निदान के लिए तर्जनी उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(ण) हीरा- शुक्र के अरिष्ट योग के निदान के लिए अनामिका उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(त) नीलम – शनि के अरिष्ट योग के निदान के लिए मध्यमा उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(थ) गोमेद- राहु के अरिष्ट योग के निदान के लिए मध्यमा उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

(द) लहसुनिया- केतु के अरिष्ट योग के निदान के लिए मध्यमा उंगली में यह नग धारण किया जाता है।

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

3.3. खण्ड के अभ्यास प्रश्नों क उत्तर-

बहुविकल्पीय प्रश्न-

(क)- (अ)ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं स: सूर्याय नम:

(ख)- (ब) ॐ चन्द्राय नम:

(ग)- (ग) ॐ अं अंगारकाय नम:

(घ)- (अ) 4000

(ङ)- (ब) 19000

(च)- (स) 16000

(छ)- (अ) 23000

(ज)- (ब) 18000

(झ)- (अ) 17000

3.4. खण्ड के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

(क) माणिक्य

(ख) मोती

(ग) अनामिका

(घ) पन्ना

(ङ) तर्जनी

(च) हीरा

(छ) मध्यमा

(ज) मध्यमा

(झ) लहसुनिया

(ञ) मूंगा

(ट) पुखराज

(ठ) नीलम

(ड) गोमेद

3.5. खण्ड के प्रश्नों के उत्तर-

क-२ आक

ख-१ पलाश

ग-९ खैर

घ-८ अपामार्ग

ङ-४ पीपल

च-५ उदुम्बर

छ-३ शमी

ज-६ दूर्वा

झ-७ कुशा

3.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

क्र.	ग्रंथ नाम	लेखक	प्रकाशन स्थान	संस्करण
१	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्भाविद्या भवन वाराणसी	२०००
२	सूर्यसिद्धांत	आर्ष ग्रंथ	चौखम्भाविद्या भवन वाराणसी	२००५
३	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	१९८६
४	बृहज्जातक	वराहमिहिर	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	२००६
५	फलदीपिका	मंत्रेश्वर	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	२०१०

3.10. सहायक पाठ्यग्रंथ सूची

क्र.	ग्रंथ नाम	लेखक	प्रकाशन स्थान	संस्करण		
१	जातक पारिजात	वैद्यनाथ	चौखम्भाविद्या भवन वाराणसी	२०००		
२	सर्वार्थचिंतामणि	वेंकटेश्वर	चौखम्भाविद्या भवन वाराणसी	२००५		
३	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	१९८६		
४	बृहज्जातक	वराहमिहिर	मोतीलाल बनारसी दास	२००६		

			वाराणसी			
५	फलदीपिका	मंत्रेश्वर	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	२०१०		
६	नित्यकर्म पूजापद्धति		गीताप्रेस गोरखपुर	२०१०		
७	कर्मठ गुरु	मुकुंदवल्लभ	मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी	१९७९		
८	श्रीजगन्नाथपंचांगम्	प्रो0मदनमोहनपाठक	ज्योतिर्विज्ञान-अनुसंधानकेंद्र लखनऊ	२०१८		
९	ज्योतिषतत्वांक		गीताप्रेस गोरखपुर	२०१४		

निबन्धात्मक प्रश्न

(क) मंत्रों की शक्ति व महत्त्व पर निबंध लिखो?

(ख) सूर्यादि ग्रहों के पौरिणिक मंत्र लिखो?

(ग) नव ग्रहों के वैदिक मंत्र लिखो?

(घ) यंत्रों के महत्त्व लिखो?

(ङ) नवग्रहस्तोत्र लिखो?

(च) रत्नों का मानवों के ऊपर कैसे प्रभाव पडता है?

(छ) नवग्रहों के पौधों को लिखो?

(ज) सूर्य ग्रह के दान की वस्तुओं को लिखो?

(झ) मंगल ग्रह के अरिष्ट योग के निदान लिखो?

(ञ) सूर्य ग्रह के अरिष्ट योग के निदान लिखो?

इकाई - 4 आयु विचार एवं साधन

4.1 प्रस्तावना

भारतीय दर्शन परम्परा में प्रत्येक मनुष्य मात्र के जीवन का परम लक्ष्य दुःख निवृति पूर्वक परमानंद सुख की प्राप्ति करना है। इस हेतु मनुष्य धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष चारों पुरुषार्थों हेतु प्रयत्नशील रहता है। प्रत्येक पाप–पुण्य, अच्छे–बुरे कर्मों का माध्यम पंचभौतिक तत्वों से निर्मित यह शरीर ही बनता है जिस प्रकार संसार की प्रत्येक भौतिक वस्तु की एक सीमा होती है उसी प्रकार इस पंचभौतिक तत्वों से निर्मित शरीर की भी एक समयावधि निश्चित होती है जिसे आयु भी कहते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप आयु के विषय में अध्ययन करेंगे। वस्तुतः आयु के होने पर ही भौतिक सुख–संसाधनों की उपयोगिता है। ''पुनरपि जननं पुनरपि मरणम्'' लोक प्रसिद्ध है क्योंकि इस धरा पर जो पैदा होता है उसकी मृत्यु होना निश्चित् है ज्योतिष शास्त्र सूचक शास्त्र के रूप में कार्य करता है। जातक के जन्मांग को आधार मानकर अरिष्ट योग, अरिष्ट भंग, राजयोग, राजभंग अन्पायु, मध्यायु, दीर्घायु आदि योगों पर विचार किया जाता है। इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य आयु के विषय में ज्ञान करवाना प्रमुख विषय है जिसे आप इस इकाई के माध्यम से जान सकेंगे।

4.3 मुख्य भाग खण्ड एक

गीता में भी स्वयं श्रीकृष्ण जी कहते हैं कि यह शरीर माध्यम मात्र है। आत्मा अमर है तथा शरीर नश्वर। पुराणों में भी वर्णित है कि–

जातस्य हि ध्रुवोर्मृत्योः ध्रुवोजन्म मृतस्य च।

वैदिक ज्ञान दर्शन के पोषक अथवा सहायक के रूप में वेदांगरूप में प्रतिष्ठित ज्योतिष विज्ञान भी उपरोक्त समस्त मान्यताओं को अक्षरशः सत्य मानता है तथा 84 लाख योनियों में से सर्वोत्कृष्ट मनुष्य योनि के महत्व को सर्वोपरि परिलक्षित करता है।

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।

यह शरीर ही सब प्रकार के लक्ष्य प्राप्ति का साधन है। सत्यादि युगों में मनुष्यों की आयु हजारों वर्षों होने का प्रमाण पौराणिक वाङ्मय से प्राप्त होता है। परन्तु कलियुग में मनुष्यों की आयु अत्पल्प मानी गयी है। संचित कर्मों के फलीभूत जन्मांग चक्र में अतीदीर्घायु योग वाले हठयोगादि क्रियाओं में निपुण अपवाद रूप सिद्धयोगियों को छोड़कर सामान्य मनुष्यों की आयु 120 वर्ष मानी गयी है। जिस पर किंचित भी पहुंचने वाले विरले ही व्यक्ति दिखाई देते हैं।

जीवन के हर एक विषय से सम्बन्धित जिज्ञासा पर कार्य करने वाले भारतीय ज्योतिर्विदों ने भी भिन्न–भिन्न प्रकार से आयु सम्बन्धी ज्योतिषीय योगों द्वारा आयु पक्ष का विचार किया है। त्रिस्कन्ध ज्योतिष मर्मज्ञ दैवज्ञ बराहमिहिर रचित ''बृहज्जातकम्'' ग्रन्थ में भी ''आयुर्दायाध्याय'' नामक अध्याय में 14 श्लोकों में आयु सम्बन्धी योगों का वर्णन किया

गया है।

आचार्य वराहमिहिर ने अपने आयुर्दायाध्याय नामक अध्याय के प्रथम श्लोक में अपने पूर्ववर्ती आचार्यों का उल्लेख किया है जिसमें मलेच्छ जातीय यवनाचार्य, महाम असुर रावण के श्वसुर आचार्यमय, आचार्य मणित्य तथा आचार्य पाराशर प्रमुख हैं। पुनः उपरोक्त आचार्यों के वचनों के आधार पर आचार्य वराहमिहिर राहु तथा केतु को छोड़कर अन्य सात ग्रहों की परमाणु वर्ष का निर्धारण करते हैं कि (नव = 9 , तिथि = 15, विषय = 5, अश्विनी = 2, भूत= 5, रुद्र = 11, दश = 10) में 10 जोड़कर सूर्यादि सप्तग्रहों की क्रमशः परमायु होती है यह सूर्यादि क्रम से क्रमशः 19, 25, 15, 12, 15, 21, 20 प्रत्येक ग्रह के आयु प्रमाण वर्ष बताये गये हैं।

स्पष्ट–चक्रम्

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
19 वर्ष	25 वर्ष	15 वर्ष	12 वर्ष	15 वर्ष	21 वर्ष	20 वर्ष

4.3.1 उपखण्ड एक

विभिन्न आचार्यों के मतानुसार आयु के विषय में आकलन–

मययवनमणित्थ शक्तिपूर्वे दिवसकरादिषु वत्सराः प्रदिष्टाः।
नवतिथिविषयाष्वि भूतरुद्रदषसहिता दषभिः स्वतुंगभेषुः।।

उपरोक्त विवेचन में सूर्यादि 7 ग्रहों की कुल दशा प्रमाण 127 वर्ष माना गया है जबकि लघुपाराशरी इत्यादि ग्रन्थों में 9 ग्रहों के दशावर्ष के अनुसार 120 परमायु मानी गयी है।

उपरोक्त विवेचन के अनुसार अपनी परम उच्च राशि में स्थित ग्रह ही उक्त पूर्ण आयु वर्षों को प्रदान करता है जैसे सूर्य मेष राशि के 10′ पर परमोच्च होता है तो जिस जातक की जन्मपत्री में सूर्यग्रह स्पष्ट की राश्यादि 0।10′।0।0 होगी उसी जातक के लिए सूर्यदशा के पूरे 19 वर्ष की आयु प्राप्त होगी।

यदि ग्रह अपने परम नीच स्थान पर हैं तो उक्त आयु का आधा आयु वर्ष कम हो जायेगा तथा आधा आयु वर्ष ही प्राप्त होगा। जैसे यदि सूर्य स्पष्ट 0।10।0।00। हो तो 19 वर्ष की आधी आयु दशा अर्थात् 9 वर्ष तथा 6 माह प्रमाण की आयु प्राप्त होगी। ऐसा ही चन्द्रादि अन्य ग्रहों की दशा आयु समझनी चाहिए।

स्पष्टार्थ–चक्रम्

	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
परमोच्च ग्रह आयु	19 वर्ष	25 वर्ष	15 वर्ष	12 वर्ष	15 वर्ष	21 वर्ष	20वर्ष
परमनीच ग्रह आयु	9 वर्ष 6 माह	12 वर्ष 6 माह	7 वर्ष 6 माह	6 वर्ष	7 वर्ष 6 माह	10 वर्ष 6 माह	10 वर्ष

प्रत्येक ग्रह की परमोच्च तथा परमनीच गत आयु निर्दिष्ट की गई है तथा उच्च तथा नीच के बीच में यत्र–तत्र में कहीं भी स्थित ग्रह की आनुपातिक आयु स्पष्ट करनी चाहिए।

उदाहरणार्थ यदि किसी की कुण्डली में सूर्य स्पष्ट 11।5′।0।0 है। सूर्य परमोच्च 1।10।0।0′ से सूर्य स्पष्ट घटाने पर 0।25′। = 25 अंश प्राप्त हुए 25 अंशों का कलात्मक मान = 25 X 60 = 1500 कला प्राप्त हुआ।

पूर्वोक्तानुसार यदि 6 राशियों के कलात्मक मान (6 X 30 X 60) 10800 कला में 114 मास की आयु का ह्रास हुआ तो 1500 कला में–

$$\frac{114 \times 1500}{10800} = \frac{171000}{10800} = 16 \text{ वर्ष } 10 \text{ मास}$$

1500 कला में 16 वर्ष 10 मास का ह्रास

इसे सूर्य के पूर्णायु 191001 वर्षादि में से घटाने पर 19।00।00 – 16।10।00 वर्षादि = 2 वर्ष 2 मास सूर्य के आयु वर्षादि प्राप्त हुए।

इसी प्रकार चन्द्रादि सभी ग्रहों की स्पष्ट आयु माननी चाहिए।

यथोक्तम् – बृहज्जातके

> **नीचेऽतोऽर्द्धं हसति हि ततष्चान्तरस्थेऽनुपातो।।**
> **होरा त्वंषप्रतिममपरे राषि तुल्यं वदन्ति।**
> **हित्वा वक्रं रिपुग्रह गतैर्हीयते स्वत्रिभागः।**
> **सूर्योच्छिन्नप्युतिषु च दलं प्रोज्ज्य शुक्रार्कपुत्रौ।।**

उपरोक्त विवेचनानुसार आयुर्दाय प्राप्त होने पर लग्न से 12–11–10–09–08–01 स्थानस्थित पापशुभ ग्रहों से आयु विचार वर्णित किया गया है–

जातक लग्न से 12वें भावस्थ पापग्रह से उस पाप ग्रह की आयु का अपहरण या ह्रास, 11वें भावस्थित पापग्रह से उस पाप ग्रह की आयु का आधा, दशमस्थ पापग्रह से उस पापग्रह की आयु का तृतीयांश, नवमस्थ पापग्रह से उस पापग्रह का चतुर्थांश, अष्टमस्थ पापग्रह से उस पापग्रह की आयु का पंचमांश तथा सप्तमस्थ पापग्रह से उस ग्रह का षष्ठांश तुल्य आयु का ह्रास हो जाता है।

इसी क्रम में लग्न से द्वादशादि विलोम क्रम में शुभ ग्रह की स्थितियों का वर्णन भी किया गया है।

द्वादशस्थ शुभग्रह से उस शुभग्रह के आगत आयु वर्ष का आधा, एकादशस्थ शुभग्रह से उस शुभग्रह का चौथाई, दशमस्थ शुभग्रह से उस शुभग्रह के आयुर्दाय का षष्ठांश, नवमस्थ शुभ्रगह से उस शुभग्रह के प्राप्त आयुदीय दषमांश तुल्य वर्षादि प्रमाण कम हो जाता है।

यथोक्तम्–

सर्वार्द्धत्रिचरणपंचषष्ठभागाः क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम्।
सत्स्वर्द्धं हसति तथैकराषिगानामेकोंऽषं हरति बली तथाह सत्यम्।।

उपर्युक्त विवेचनानुसार सूर्यादि ग्रहों का आयुर्दाय वर्णित किया गया है।

आयुर्दायाध्याय में न केवल मनुष्य अपितु अश्वादि अन्यान्य जीवों की भी पूर्णायु का वर्णन किया गया है।

मनुष्य की पूर्णायु का मान 120 वर्ष तथा 5 दिन होता है। घोड़े की आयु 32 वर्ष की, गर्दभ तथा ऊँट की पूर्णायु 25 वर्ष भैंस तथा बैल की आयु 24 वर्ष, कुत्ते की परमायु 12 वर्ष तथैव सिंह–विडाल आदि की भी परमायु 12 वर्ष की तथा बकरी–हरिण की पूर्णायु 16 वर्ष कही गयी है।

उपरोक्त विवेचनानुसार स्पष्ट होता है कि समृद्ध सम्पन्न परिवारों, राजप्रासाद अथवा अजायबघर इत्यादि स्थानों पर या गृह इत्यादि में स्नेहवशात् अथवा पशु–धन संरक्षण की दृष्टि से उक्त जातक पशुओं की भी जन्मांग के आधार पर परमाणु आदि शुभाशुभ का ज्ञान किया जाता रहा होगा।

यथोक्त्– बृहज्जातके–

समाः षष्टिर्द्विध्नी मनुजकारिणां पंच च निषा।
हयानां द्वात्रिंषत्खरकरभयोः पंचककृतिः।।
विरुपा साऽप्यायुर्वृषमहिषयोर्द्वादष शुनां।
स्मृतं ढागादीनां दषकसहिताः षट् च परमम्।।

यत्रः तिब्बत रूस क्वचित् भारत में भी 120 वर्ष से अधिक आयु प्रमाण के मानव दृष्टिगत हैं इसलिए 120 वर्ष संख्या आयु को मध्यम मान का आयु प्रमाण आचार्य द्वारा कहा गया।

120 वर्ष की पूर्ण आयु का योग :–

आचार्य वराहमिहिर द्वारा 120 वर्ष 5 दिन की पूर्णायु हेतु एक विशेष समयावधि पर घटित होने वाले दुर्लभ योग का वर्णन किया है। इस विवेचना में आचार्य द्वारा राहु केतु का कोई उल्लेख नहीं किया है। सम्भवतः यह ग्रह स्थिति किसी युग में वैशाख मास शुक्ल मास शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि को कदाचित् सम्भव होगी।

आचार्य के अनुसार –

मीन राशि के अन्तिम नवमांश में लग्न हो, बुध ग्रह वृष राशि के 25वें कला में हो बुध स्पष्ट 1 |0 |25 |0 हो तथा शेष ग्रह अपने–अपने परमोच्य में होंगे तो मनुष्य का आयु प्रमाण 120 वर्ष 5 दिन हो जाता है।

यथोक्तम्– बृहज्जातके –

अनिमिषपरमांषक्ते विलग्ने शषितनये गवि पद्यवर्गलिप्ते।
भवति हि परमायुषः प्रमाणं यदि सकलाः संहिताः स्वतुंगभेषुः।।

श्लोकानुसार रव्यादि स्पष्टग्रहाः

1	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न
राशि	0	1	1	1	3	11	6	11
अंश	10	3	28	0	4	27	20	29
कला	0	0	25	25	0	0	0	59
विकला	0	0	0	0	0	0	0	0

श्लोकानुसार जन्मांग चक्रम
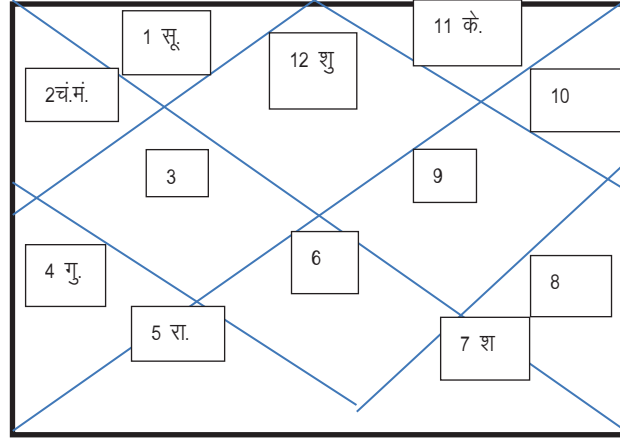
आचार्य वराहमिहिर ने सूर्यादि ग्रहों का आयुर्दाय विभाग निम्नवत् किया है–

सूर्य ग्रह की आयु	–	19 वर्ष
चन्द्र ग्रह की आयु	–	25 वर्ष
मंगल ग्रह की आयु	–	7 वर्ष 6 माह
बुध ग्रह की आयु	–	7 वर्ष 6 माह
गुरु ग्रह की आयु	–	15 वर्ष
शुक्र ग्रह की आयु	–	21 वर्ष
शनि ग्रह की आयु	–	16 वर्ष
लग्न अंतिम नवांश में	–'	9 वर्ष
कुल योग	–	**120 वर्ष 5 दिन**

उपर्युक्त आयु साधन को आचार्य मय–यवन–मणित्थ, पराशर के अतिरिक्त विष्णुगुप्त शर्मा (चाणक्य) दैवज्ञ, देवस्वामी तथा सिद्धसेन आदि आचार्यों ने भी स्वीकार किया है परन्तु इसके उपरान्त भी स्वयं दैवज्ञ वराहमिहिर तथा अन्य देवज्ञों ने भी इस साधन को किंचित् दोषपूर्ण बताया है।

4.3.2 उपखण्ड दो

बृहज्जातक के अनुसार आयु विचार

आयुर्दायं विष्णुगुप्तोऽपि चैवं देवस्वामी सिद्धसेनष्च चक्रे।
दोषष्चैषां जायतेऽष्टावष्टं हित्वा नायुर्विंषते स्यादधस्तात्।।

अर्थात् उपर्युक्त विधि से आयु साधन करने पर मनुष्य की न्यूनतम आयु 20 वर्ष तक आती है तथा विविध बालारिष्ट योगों द्वारा बच्चों की मृत्यु 8 वर्ष तक बतलायी गई है। इस प्रकार बालारिष्ट के समय बीतने की सीमा (8 वर्ष) तथा न्यूनतम आयुर्दाय मान (20 वर्ष) अर्थात् 8 से 20 वर्ष के मध्य में भी जातकों की मृत्यु प्रत्यक्ष पायी जाती है। अतः वराहमिहिर जी भी इस गणित को दोषपूर्ण मानते हैं परन्तु साथ ही इस साधन को पूर्णरूपेण से त्याज्य भी नहीं मानते।

अभ्यास प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1– सूर्य की परमायु क्या है?
क. 25 वर्ष ख. 19 वर्ष ग. 15 वर्ष घ. 12 वर्ष

2– चन्द्र की परमायु वर्ष कितने हैं?
क. 15 वर्ष ख. 21 वर्ष ग. 25 वर्ष घ. 20 वर्ष

3– सात ग्रहों की कुल दशा प्रमाण कितना है?
क. 127 ख. 120 ग. 100 घ. 105

4– सूर्य की उच्च राशि क्या है?
क. 25 मेष ख. 19 मिथुन ग. 15 सिंह घ. मीन

5– शनि की परमायु वर्ष कितने हैं?
क. 12 वर्ष ख. 15 वर्ष ग. 21 वर्ष घ. 20 वर्ष

6– गुरु की परमायु वर्ष कितने हैं?
क. 15 वर्ष ख. 21 वर्ष ग. 20 वर्ष घ. 12 वर्ष

7– शुक्र की परमायु वर्ष कितने हैं?
क. 15 वर्ष ख. 21 वर्ष ग. 20 वर्ष घ. 19 वर्ष

8– ग्रह पूर्ण आयु कब देता है?
क. परमोच्च ख. नीच में ग. स्वगृह में घ. शत्रुग्रह में

9– ग्रह की आयुवर्ष आधा कब होते हैं?
क. परमनीच में ख. परमोच्च में ग. सम गृह में घ. शत्रुग्रह में

4.4 मुख्य भाग खण्ड दो

4.4.1 उपखण्ड एक

बृहज्जातक में सत्याचार्यानुसार भी आयुर्दाय साधन दिया गया है।

आयु विचार का विवेचन न केवल उत्तरभारतीय ज्योतिष ग्रन्थों में दृष्टिगोचर होता है बल्कि दक्षिण भारत के विद्वान ज्योर्तिविदों ने भी ज्योतिष विषयगत ग्रन्थों में आयु सम्बन्धी

ज्योतिषीय तत्वों का विवेचन किया है जिनमें से एक प्रमुख ग्रन्थ है मंत्रेश्वर विरचित ''फलदीपिका'' निर्दिष्ट ग्रन्थ जितना दक्षिण भारत में स्वीकार्य है उतना ही उत्तर भारत में भी। मंत्रेश्वर रचित फलदीपिका नामक ग्रन्थ पहले पांडुलिपि रूप में ही सुरक्षित था जिसको 1960 के दशक में हिन्दी, तमिल, तेलगू, कन्नड़ इत्यादि कई भाषाओं में अनुवाद करके प्रकाशित किया गया। मंत्रेश्वर का जन्म दक्षिण भारत के नम्बूदरी ब्राह्मण में कुल हुआ था तथा यह ज्ञानोपार्जन के लिए सुदूर उत्तर में बद्रिकाश्रम, हिमाचल आदि क्षेत्रों में जाकर भी रहे। फलदीपिका को ज्योतिष वाङ्मय की उत्कृष्ट रचनाओं में से एक माना जाता है। आयु विचार के सम्बन्ध में दैवज्ञ मंत्रेश्वर का कथन है कि जब बच्चा पैदा होता है तब सबसे पहले उसकी आयु का ही विचार करना चाहिए अन्यान्य शुभाशुभादि फल बाद में देखने चाहिए।

यथोक्तम्–

जाते कुमारे सति पूर्वमार्यै,
रायुर्विचिन्त्यं हि तत् फलानि।
विचारणीया गुणिनि स्थितेतद्,
गुणाः समस्ताः खलु लक्षणज्ञैः।।[197]

जन्म समय निर्धारण के सम्बन्ध में दैवज्ञ मंत्रेश्वर विभिन्न आचार्यों के मत को स्पष्ट करते हुए बताते हैं कि भिन्न–भिन्न प्रकार से जन्म समय का निर्धारण करते हैं। कोई तो गर्भाधान के लग्न को ही मुख्य मानते हैं कोई बच्चे का सिर माँ के शरीर से बाहर आने को जन्म समय स्वीकार करते हैं। कई विद्वानों के मत में जब बालक का पूरा शरीर पृथ्वी पर आ जाये तो कुछेक का मानना है कि नालच्छेदन को जन्म समय मानना चाहिए।

वस्तुतः उपुर्यक्त सभी विचारों पर सम्यक्तया अवलोकन करने पार नालच्छेदन के समय को ही उपयुक्त जन्म समय माना जा सकता है क्योंकि नालच्छेदन से पूर्व बालक माँ के शरीर का ही अंगमात्र माना जा सकता है नालच्छेदन के बाद ही बालक का पृथक जीव के रूप में अस्तित्व माना जा सकता है।

यथोक्तम्–

केचिद्यथाधानविलग्नमन्ये शीर्षोदयं भूपतनं च केचित्।
होराविदष्चेतनकाययोन्योर्वियोगकालं कथयन्ति लग्नम्।।[198]

4.4.2 उपखण्ड दो

आयु विचार में दैवज्ञ मंत्रेश्वर का कथन है कि बारह वर्ष की अवस्था तक आयु का विचार निश्चय पूर्वक नहीं किया जा सकता है क्योंकि कुण्डली में दीर्घायु होने पर भी बालक माता–पिता या अपने संचित पाप कर्मों के कारण अल्प मृत्यु को प्राप्त करता है।

यथोक्तम्–

आद्वादषाब्दान्नरयोनिजन्मनामायुष्बला निष्यियितुं न शक्तये।

---

[197] फलदीपिका– आयु0 अ0 1 श्लोक

[198] फलदीपिका– आयु0 अ0 2 श्लोक

मात्रा च पित्रा कृतपापकर्मणा बालग्रहैनाषमुपैति बालकः।।[199]

बच्चों की अल्प मृत्यु के सम्बन्ध में दैवज्ञ मंत्रेश्वर का मत है कि प्रथम 4 वर्ष की आयु तक माता द्वारा किये पाप कर्मों के कारण अपमृत्यु होती है तथा आठ से बारह वर्ष के मध्य पिता द्वारा किये पाप कर्मोंके कारण अपमृत्यु होती है तथा आठ से बारह वर्ष तक बालक के अपने संचित पाप कर्मों के द्वारा अपमृत्यु होती है।

यथोक्तम्–

आद्ये चतुष्के जननीकृताद्यै

र्मध्ये च पित्रार्जित पापसंघेः।

बालस्तदन्त्यासु चतुः शरत्सु

स्वकीय दौषेः समुपैति नाषम्।।[200]

उपरोक्त दोष के निवारण के लिए जातक के पिता को 12 वर्ष की आयु पर्यन्त जन्मदिवसादि शुभावसरों पर मंत्र–मणि, औषध–दामादि होमादि प्रक्रिया को करना चाहिए तथा बालक की चिकित्सा तथा अन्य आयु वृद्धि के साधनों का उपयोग करना चाहिए।

फ.दी. के अनुसार आयुर्दाय में जन्म से 8 वर्ष तक बालारिष्ट कहलाता है 8 से 20 वर्ष की अवस्था तक योगारिष्ट। बीस से 32 वर्ष तक अल्पायु कहलाती है। 32 वर्ष से 72 वर्ष मध्यमायु तथा 72 से 100 वर्ष तक दीर्घायु 100 वर्ष पूर्णायु कही गई है।

यथोक्तम्–

अष्टौ बालारिष्टमादौ नराणां,

योगादिष्टं प्राहुराविंषति स्यात्।

अल्पं चाद्वात्रिंषतं मध्यमायु,

श्चासप्तत्याः पूर्णमायुः शतान्तम्।।[201]

साधारणतः 100 वर्ष मनुष्य की पूर्णायु कही गई है। इसे तीन भागों में विभाजित किया गया है। अल्पायु (32 वर्ष तक) मध्यायु (72 वर्ष तक) दीर्घायु (100 वर्ष) तक।

यथोक्तम्–

नृणां वर्षषतं ह्यायुस्तस्मिंस्त्रेधा विभज्यते।

अल्पं मध्यं दीर्घमायुरित्यतत्सर्वसम्मतम्।।[202]

इसके उपरान्त दैवज्ञ मंत्रेश्वर ने अल्प–मध्य–दीर्घायु निर्धारण के विभिन्न योगों का वर्णन किया है।

अल्पायु योग–दो राशियों की सन्धि में यदि बालक का जन्म हो और लग्न पाप ग्रहों से युत हो या दृष्ट हो तो जातक की अल्पायु में हो जाती है।

यदि गण्डान्त में जन्म हो तो माता–पिता या स्वयं का नाश शीघ्र होता है परन्तु

---

[199] फलदीपिका– आयु0 अ0 3 श्लोक
[200] फलदीपिका– आयु0 अ0 4 श्लोक
[201] फलदीपिका– आयु0 अ0 6 श्लोक
[202] फलदीपिका– आयु0 अ0 7 श्लोक

यदि बच जाय तो जातक राजा के समान वैभवशाली होता है। (मीन, मेष, कर्क–सिंह तथा वृश्चिक–धनु) की सन्धि गण्डान्त कहलाती है।

जो बालक पाप ग्रहों से युत या दृष्ट सन्धि में पैदा होता है उनकी अल्पायु होती है।

यथोक्तम्–

पापाप्तेक्षितराषिसन्धिजनने सद्यो विनाषं ध्रुवं,
गण्डान्ते पितृमातृहा षिषुमृतिर्जीवेहादि क्ष्मापतिः।
जातः सन्धिचतुष्टयेऽप्यषुभसंयुक्तेक्षिते स्यान्मृति–
र्मृत्योर्भागपते च सा सति विधौ केन्द्रेऽष्टमे वा मृतिः।।[203]

इसके अतिरिक्त अल्प–मध्य–दीर्घायु का विवेचन अधोलिखित योगों द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

यथोक्तम्–

लग्नेन्द्वोस्तदीधीषयोरपि मिथो लग्नेषरन्ध्रेषयो,
द्रेष्काणात्स्वनवांषकादपि मिथस्तद्द्वादषांषात्क्रमात्।
आयुर्दीर्घसमाल्पतां चरनगत्द्यंगैष्चरेऽथ स्थिरे।
ब्रूयाद्द्वन्द्वचरस्थिरैरुभयथैः रथास्नुद्विदेहाटनैः।।[204]

(क) लग्न द्रेषकाण राशि और चन्द्र द्रेष्काण राशि। यदि दोनों चर हो या एक स्थिर में तथा दूसरी द्विस्वभाव में हो तो दीर्घायु योग। यदि दोनों स्थिर या एक चर एक द्विस्वभाव में हो तो अल्पायु। यदि दोनों द्विस्वभाव या एक चर एक स्थिर में हो तो मध्यमायु होता है।

(ख) लग्नेष नवांश राशि और चन्द्र नवांश राशि। यदि दोनों चर में हो एक स्थिर एक द्विस्वभाव में हो तो दीर्घायु। यदि दोनों स्थिर में या एक चर एक द्विस्वभाव में हो तो अल्पायु। यदि दोनों द्विस्वभाव में हो या एक चर एक स्थिर में हो तो मध्यायु होता है।

(ग) लग्नेष द्वादशांश राशि ओर रन्ध्रेश द्वादशांश राशि। यदि दोनों चर में हो या एक स्थिर एक द्विस्वभाव में तो जातक दीर्घायु। यदि दोनों चर में हो या एक चिर एक द्विस्वभाव में हो तो जातक अल्पायु। यदि दोनों द्विस्वभाव में हो या एक चर एक स्थिर में हो तो जातक मध्यायु होता है।

तीनों प्रकार से विवेचन करने पर बहुमत से जो निर्णय आये वह निर्णय मानना चाहिए।

उपरोक्त विवचेन के लिए लग्न के साथ द्रेष्काण–नवांश–द्वादशांशादि षड्वर्गों की आवश्यकता होती है।

अन्य दीर्घायु योग :–

यदि लग्न का स्वामी अतिबलवान हो, अशुभ ग्रहों से न देखा जाता हो केन्द्र में

---

[203] फलदीपिका– आयु0 अ0 9 श्लोक

[204] फलदीपिका– आयु0 अ0 14 श्लोक

बैठा हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ऐसा बलवान लग्नेश मारको को रोकता है तथा दीर्घायु के साथ–साथ गुण, लक्ष्मी और ऐश्वर्य प्रदान करता है।

यथोक्तम्–

लग्नाधिपोऽतिबलवानषुभैरदृष्टः, केन्द्रः स्थितः शुभखगैरवलौक्यमानः।
मृत्युं विहाय विदधाति स दीर्घमायुः सार्द्धं गुणैर्बहुभिरुर्जितराजलक्ष्म्याः।।[205]

विभिन्न ज्योतिष ग्रन्थों में भिन्न–भिन्न रीति से व्यक्ति की आयु सम्बन्धी योगों का वर्णन किया है जो किंचिद मतान्तरों के बाद मूल रूप से समान प्रतीत होते हैं। भारतीय सनातन संस्कृति के आधार स्तम्भ रूपी चार वेदों से उत्पन्न ज्योतिष वृक्ष रूपी इस कल्प वृक्ष में विभिन्न योग रूपी सुमधुर फलों का आस्वादन चिरकाल से सतत् रूप में किया जा रहा है भारत के उत्तर–दक्षिण भाग में ही नहीं भारत से बाहर यवन अरब देश के लोगों ने भी ज्योतिष विद्या का पूर्ण रूप में अंगीकार किया है। इसके साथ ही हमारी उदारप्रवृति संस्कृति के उपासक भारतीय मनीषियों ने भी संस्कृति के इस गुण को स्वीकार करते हुए पुराणोक्त मलेच्छ जातीय पाश्चात्य लोगों को भी यवनाचार्य की उपाधि से अलंकृत करके भारतीय ज्योतिष के आधुनिक स्वरूप में स्थान दिया है।

4.4.3 अभ्यास प्रश्न

1– आयु विचार जन्म के कितने वर्ष के उपरान्त करना चाहिए?
2– अरिष्ट विचार को कितनी श्रेणियों में बांटा गया है?
3– पूर्णायु का निर्धारण कितने वर्षों का है?
4– अल्पायु कितने वर्षों तक मानी गई है?
5– 32 से 72 वर्षों को आयु की किस श्रेणी में रखा गया है?

4.5 मुख्य भाग खण्ड तीन

4.5.1 उपखण्ड एक

मनुष्यों की आयु सम्बन्धी योगों का वर्णन फलित ग्रन्थों में प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। दैवज्ञ वैद्यनाथ कृत जातक परिजात में आयु सम्बन्धी अधोलिखित योगों का वर्णन प्राप्त होता है।

मनुष्यों की आयु के 7 भेद माने गए हैं मनुष्य अपने जन्मांगचक्रानुसार शुभाशुभ योगादि के माध्यम तथा क्रियमाण कर्मों के प्रभाव से उपरोक्त आयु वर्ग को प्राप्त करता है–

1– बालारिष्ट–

विभिन्न दूषित योगों द्वारा बालक आठ वर्ष की अवस्था तक ही मृत्यु को प्राप्त करता है यह बालारिष्ट कहलाता है।

2– योगारिष्ट–

[205] फलदीपिका– आयु0 अ0 21 श्लोक

बलारिष्ट के बाद (8 वर्ष से 20 वर्ष) 20 वर्ष तक की आयु में मृत्यु योगारिष्ट कहलाती है।

3– अल्पायु–

20 वर्ष से 32 वर्ष की आयु अल्पायु कहलाती है। विभिन्न आयुसाधनों द्वारा न्यूनतम आयु इसी वर्ग के मध्य आती है।
ये तीनों आयुवर्ग अल्पायु के अन्तर्गत विभिन्न अरिष्टयोगों द्वारा प्रदत्त होते हैं। ये अति अशुभ माने गए हैं।

4– मध्यायु–

32 वर्ष से 70 वर्ष की आयु मध्यायु कहलाती है। विभिन्न अल्पायु योगों में अरिष्टभंग की अवस्था में जातक मध्यायु प्राप्त करता है।

5– दीर्घायु–

जन्मांग में अरिष्टयोगों के अभाव में शुभ योगों के प्रभाव से जातक दीर्घायु को प्राप्त करता है। दीर्घायु 70 वर्ष से 100 वर्ष तक की आयु मानी गई है।
सामाजिक व्यवहार में भी शरीर की नश्वरता के आधार पर इस आयु वर्ग में मृत्यु होना व्यावहारिक ही समझा जाता है।

6– देवायु–

दीर्घायु के अनन्तर दैवयोग से प्रदत्त आयु दैवायु कही जाती है। इसकी सीमा 120–130 वर्ष तक कही जा सकती है।

7– असंख्यायु–

दीर्घायु के उपरान्त अपवाद स्वरूप विशिष्ट लोग ही योगाभ्यासादि क्रियाओं, श्वास, प्रश्वास नियन्त्रण करके, मन्त्रादि अनुष्ठानों द्वारा, संचित तथा क्रियमाण शुभ कर्मो द्वारा असंख्यायु को प्राप्त करते हैं।

पूर्वोक्त सात प्रकार के आयु के योग कहे गए हैं। सातों योग उत्तरोत्तर क्रम से अशुभ से शुभ की ओर माने गए हैं। यथा–

बालारिष्टं योगसंजातमल्पं तेषां भंगान्मध्यमं दीर्घमायुः।
दिव्यं योगाभ्यासमन्त्रक्रियाद्यैरायुः सप्तैतानि संकीर्तितानि।।[206]

विभन्न प्रकार के आयुयोगों का वर्णन किया गया है–

बालारिष्ट योग

यदि जातक के जन्मांग में रवि–चन्द्र–मंगल–गुरु एकत्र हों या मंगल–गुरु–शनि–चन्द्रमा एकत्र हों या रवि–शनि–मंगल–चन्द्रमा एकत्र हों जो जातक की 5वें वर्ष में मृत्यु होती है। यथा–

रविचन्द्रभौमगुरुभिः कुजगुरुसौरेन्दुभिः सहैकस्थैः।
रविशनिभौमशशांकैर्मरणं खलु पंचभिर्वर्षैः।।[207]

---

[206] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 107
[207] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 43

योगारिष्ट

यदि जातक के जन्मांग में केन्द्रों में पापग्रह हों तथा उन्हें चन्द्रमा व शुभग्रह न देखते हों या यदि चन्द्रमा छठे या आठवें भाव में हो तो बालक जन्म से 20 वर्ष तक सुखी रहे तथा 20 वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो। यथा–

केन्द्रेषु पापेषु निशाकरेण सौम्यग्रहैरीक्षणवर्जितेषु।
षष्ठाष्टमे वा यदि शीतरश्मौ जातः सुखी विंशतिवत्सरान्तम्।।[208]

मध्यायु योग–

यदि जातक के जन्मांग में लग्नेश बलरहित हो तथा बृहस्पति केन्द्र (1,4,7,10) या त्रिकोण (5,9) में हो तथा पापग्रह 6,8,12 में हो तो जातक के मध्यायु होती है। यथा–

बलहीनो विलग्नेशे जीवे केन्द्रत्रिकोणगे।
षष्ठाष्टमव्यये पापे मध्यमायुरुदाहृतम्।।[209]

उपर्युक्त तीन प्रकार के योग अशुभ माने गए हैं।

पूर्णायु योग

यदि जातक के जन्मांग में केन्द्र चतुष्टय भाव (1,4,7,10) शुभग्रहों से युक्त हों, लग्नेश शुभग्रह से युक्त हो और गुरु से दृष्ट हो तो पूर्ण आयु कारक योग बनता है। यथा–

चतुष्टये शुभै युक्ते लग्नेशे शुभ संयुते।
गुरुणा दृष्टि संयोगे पूर्णमायुविनिर्दिशेत्।।[210]

यदि जातक के जन्मांग में केन्द्रस्थ लग्नेश गुरु तथा शुक्र से युत हो या शुक्र व गुरु उसे देखते हों तो पूर्णायु योग होता है। यथा–

केन्द्रान्विते विलग्नेशे गुरुशुक्रसमन्विते।
ताभ्यां निरीक्षिते वाऽपि पूर्णमायुविनिर्दिशेत्।।[211]

यदि जातक के जन्मांग में तीन ग्रह उच्च राशि के हों तथा लग्नेश व अष्टमेश से युक्त हों तथा अष्टम भाव पापग्रह से रहित हो तो पूर्णायु योग बनता है। यथा–

उच्चान्वितैस्त्रिभिः खेटैर्लग्नरन्ध्रेशसंयुतैः।
रन्ध्रे पापविहीने च दीर्घमायुविनिर्दिशेत्।।[212]

यदि जातक के जन्मांग में अष्टमभाव में तीन ग्रह हों तथा अपनी राशि उच्चराशि या मित्र स्थान या अपने वर्ग के हों और लग्नेश बलवान् हो तो पूर्णायु योग होता है। यथा–

रन्ध्रैस्थितैस्त्रिभिः खेटैः स्वोच्चमित्रस्ववर्गगैः।
लग्नेशबलसंयुक्ते दीर्घमायुविनिर्दिशेत्।।[213]

---

208 जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 60
209 जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 84
210 जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 85
211 जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 86
212 जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 87

जातक के जन्मांग में उच्चराशिस्थ कोई ग्रह शनि या अष्टमेश से युक्त हो तो यह योग जातक को दीर्घायु देता है। यथा–

स्वोच्चस्थितेन केनापि खेचरेण समन्वितः।
शनिर्वा रन्ध्रनाथोर्वा दीर्घमायुविनिर्दिशेत्।।[214]

यदि जातक के जन्मांग में पापग्रह त्रिषडाय (तीसरे, छठे, तथा एकादश) स्थान में हों तथा शुभग्रह केन्द्रस्थानों (1,4,7,10) या त्रिकोण (नवम, पंचम) स्थानों में हों तथा लग्नेश बली हो तो जातक दीर्घायु होता है। यथा–

त्रिषडायगताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः।
लग्नेशो बलसंयुक्तः पूर्णमायु विनिर्दिशेत्।।[215]

यदि जातक के जन्मांग में शुभग्रह षष्ठ, सप्तम, अष्टम भाव में हो तथा पापग्रह तीसरे, छठे तथा एकादश भाव में हो तो जातक को पूर्णायु देते हैं। यथा–

षट्सप्तरन्ध्रभावेषु शुभेषु सहितेषु च।
त्रिषडायेषु पापेषु दीर्घमायुविनिर्दिशेत्।।[216]

यदि जातक के जन्मांग में पापग्रह 12वें भाव या छठे भाव में, लग्नेश केन्द्रभावों में स्थित हो व अष्टम स्थान में पापग्रह तथा दशमेश अपनी उच्चराशि में हो तो बहुत विद्वानों का मत है कि उपर्युक्त दोनों योग दीर्घायु प्रदान करते हैं। यथा–

रिःफशत्रुगताः पापाः लग्नेशो यदि केन्द्रगा।
रन्ध्रस्थानगतापापाः कर्मेशः स्वोच्चराशिगः।
योगोद्वयेऽपि दीर्घायुरुपैति बहुसम्मत्।।[217]

यदि जातक के जन्मांग में अष्टमेश जिस भाव में हो उस भाव का स्वामी, जिस राशि में स्थित हो उस राशि का स्वामी तथा लग्न का स्वामी लग्नेश, ये तीनों केन्द्र स्थानों (लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम) में हो तो जातक दीर्घायु प्राप्त करता है। यथा–

रन्ध्रेशस्थग्रहाधीशो यस्मिन् राशौ व्यवस्थितः।
तदीशो लग्ननाथश्च केन्द्रगो यदि तादृशम्।।[218]

जिस जातक का द्विस्वभाव लग्न में जन्म हो, लग्नेश केन्द्र स्थानों (1,4,7,10) में हो तथा अपनी उच्चराशि या मूलत्रिकोण राशि का हो तो वह जातक चिरकाल तक जीवित रहकर परम भाग्यशाली होता है। यथा–

द्विस्वभावं गते लग्ने तदीशे केन्द्रगेपि वा।
स्वोच्चेमूलत्रिकोणे वा चिरं जीवति भाग्यवान्।।[219]

---

[213] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 88
[214] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 89
[215] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 90
[216] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 91
[217] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 92
[218] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 93
[219] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 94

जिस जातक का जन्म द्विस्वभाव लग्न में हो तथा लग्नेश से केन्द्र में दो पापग्रह हों तो वह जातक दीर्घायु प्राप्त करता है। यथा–

द्विस्वभावं गते लग्ने लग्नेशात् केन्द्रगौ यदि।
द्वौ पापौ यस्य जनने तस्यायुर्दीर्घमादिशेत्।।[220]

यदि जातक के जन्मांग में सूर्य, शनि और मंगल चर राशि के नवांश में हों, बृहस्पति और शुक्र स्थित राशि के नवांश में हो तथा शेषग्रह (चन्द्र, बुध, राहु, व केतु) द्विस्वभाव राशि के नवांश में हो तो वह जातक सौ वर्ष तक जीवित रहता है। यथा–

चरांशकस्था रविमन्दभौमाः स्थितरांशकस्थौ गुरुदानवेज्यौ।
शेषाश्च युग्मांशगता यदि स्युस्तदा समुद्भूत नरः शतायुः।।[221]

4.5.2 उपखण्ड दो

यदि जातक के जन्मांग में सूर्य, गुरु और भौम, शनि के नवांश में स्थित हों या नवम भाव में स्थित हों या उसके नवांश में बलवान् होकर स्थित हों और लग्न स्थान में चन्द्रमा हो तो जातक लक्ष्मीयुक्त युगान्त आयु प्राप्त करता है। यथा–

मन्दांशकस्था रविजीवभौमा धर्मस्थितास्तन्नवभागसंस्थाः।
बलान्विता लग्नगतो हिमांशुर्युगान्तमायुः श्रियमादधाति।।[222]

यदि जातक के जन्मांग में बृहस्पति और शनि एक ही अंश के होकर धर्मभाव (नवम) या कर्मभाव (दशम) में स्थित हो तथा सूर्योदय कालीन इस जन्मस्थिति पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो वह जातक चिरायु मुनि होता है। यथा–

एकांशभागौ गुरुसूर्यपुत्रौ धर्मस्थितौ वा यदि कर्मसंस्थौ।
अर्कोदये सौम्यनिरीक्ष्माणौ मुनिर्भवेदत्र भवश्चिरायुः।।[223]

अमित आयु

यदि जातक का जन्म कर्क लग्न में हो तथा बृहस्पति तथा चन्द्रमा लग्नगत हों, बुध तथा शुक्र अन्य केन्द्रों में हों (4,7,10) तथा शेष ग्रह (सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु) त्रिषडाय (तृतीय, षष्ठ, एकादश) स्थानों में हो तो जातक अमितायु होता है। यथा–

गुरुशशिसहिते कुलीरलग्नें शशितनये भृगुजे च केन्द्रयाते।
भवरिपुसहजोपगैश्च शेषेरमितमिहायुरनुक्रमाद्विना स्यात्।।[224]

उपयुक्त योग का वर्णन सारावली में भी किया गया है। यथा–

कर्किलग्ने गुरुः सेन्दुः केन्द्रगो बुधभार्गवौ।
शेषेस्त्रिषष्ठलाभस्थैरमितायुर्भवेन्नरः।।[225]

---

[220] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 95
[221] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 96
[222] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 97
[223] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 98
[224] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 99

देव सादृश्य ग्रह स्थिति

यदि जातक के जन्मांग चक्र में त्रिकोण भावों (नवम, पंचम) में कोई भी पापग्रह न हो, केन्द्रभावों (लग्न, सप्तम, चतुर्थ, दशम) में कोई भी शुभग्रह न हो अष्टमभाव पापग्रहों से रहित हो तो जातक देवता के सदृश आयुवान् होता है। यथा–

त्रिकोणे पापनिर्मुक्ते केन्द्रे सौम्य विवर्जिते।
रन्ध्रे पापविहीने च जातस्त्वमरसन्निभः।।[226]

यदि जातक के जन्मांग में लग्नादि भावों से शनि से लेकर मंगल पर्यन्त ग्रह स्थित होकर अपने–अपने वैशेषिकांक हो तो यह जातक उच्च दीर्घायु प्राप्त करता है। यथा–

शन्यादिभौमपर्यन्तं लग्नादौ खेचराः स्थिताः।
वैशेषिकोशसंयुक्ता जातस्त्वमरसन्निभः।।[227]

असंख्यायुः प्राप्तिः

यदि जातक के जन्मांग चक्रानुसार मेष का अन्त्यलग्न गुरु या शुक्र से युत हो और चन्द्रमा वृष राशि के मध्य नवांश में स्थित हो, मंगल अपने सिंहासनांश में हो जो जातक मंत्रगल के प्रयोग से असंख्यायु प्राप्त करता है। यथा–

मेषान्त्यलग्ने सगुरौ भृगौ वा निशाकरे गोगृहमध्यमांशे।
सिंहासनांशे यदि वा धराजे जातस्त्वसंख्यातमुपैति मन्त्रैः।।[228]

मुनिसमत्वम्

यदि शनि देवलोकांश में हो, मंगल पारावतांश में हो, गुरु सिंहासनांश में हो तो जातक मुनि के सदृश होता है। यथा–

देवलोकांशे मन्दे भौमे पारावतांशके।
सिंहासने गुरौ लग्ने जातो मुनिसमो भवेत्।।[229]

अथ युगान्त आयु विचार

यदि जातक के जन्मांग चक्र में गुरु गोपुरांश का होकर केन्द्र भावों में हो, शुक्र पारावतांश होकर त्रिकोण में हो तथा कर्क लग्न हो तो जातक अत्यधिक शुभता से युक्त युगान्त पर्यन्त दीर्घायु प्राप्त करता है। यथा–

गोपुरांशे गुरौ केन्द्रे शुक्रे पारावतांशके।
त्रिकोणे कर्कटे लग्ने युगान्तं स तु जीवति।।[230]

अथ ब्रह्मपद प्राप्ति योग

---

[225] सारावली
[226] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 100
[227] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 101
[228] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 102
[229] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 103
[230] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 104

यदि जातक के जन्मांग में कर्क लग्न धनु के अंश (16अंश 40 कला के बाद 20 अंश तक) का हो तथा उस पर बृहस्पति हो तथा तीन या चार ग्रह केन्द्र भावों में हो तो जातक ब्रह्मपद को प्राप्त करता है। यथा–

चापांशे कर्कटे लग्ने तस्मिन् देवेन्द्रपूजिते।
त्रिचतुर्भिग्रहैः केन्द्रे जातो ब्रह्मपदं व्रजेत्।।[231]

यदि जातक के जन्मांग में धनु राशि में मेष का नवांश (8/2/20) लग्न हो उसमें बृहस्पति हो, सप्तम भाव में शुक्र हो और कन्या राशि में चन्द्रमा हो तो यह योग जातक को परमपद अर्थात् मोक्ष प्रदान करता है। यथा–

लग्ने सेज्ये भृगौ कामे कन्यायामुडुनायके।
चापे मेषांशके लग्ने जातो याति परं पदम्।।[232]

पराशरादि ज्योतिर्विदों ने तीन प्रकार के आयुसाधनों का वर्णन किया है। इन आयुसाधनों में भिन्न भिन्न गणितीय विधियों द्वारा आयु का साधन किया जाता है इन आठ प्रकार के आयु साधनों का वर्णन दैवज्ञ वैद्यनाथ कृत ''जातक परिजात'' नामक प्रसिद्ध ज्योतिषीय ग्रन्थ में भी किया गया है।

आठ प्रकार के आयुसाधन अधोलिखित हैं–

1– निसर्गायु, 2– पिण्डायु, 3– लग्नायु, 4– अंशकायु, 5– रश्मिजायु, 6– चक्रायु, 7– नक्षत्रायु, 8– अष्टवर्गजायु।

निसर्गपैण्ड्याशकरश्मिचक्रनक्षत्रदायाष्टकवर्गजानि।
पराशराद्यैः कथितानि यानि संग्रह्य तानि क्रमशः प्रवच्मि।।[233]

विभिन्न आयुर्दायों में कौन सा ग्राह्य है इसका वर्णन बताया गया है कि–

1– यदि जन्म समय में जन्मांग में सूर्य बली हो तो पिण्डायु ग्रहण करनी चाहिए।

2– यदि जन्म समय में जन्मांग में चन्द्रमा बली हो तो निसर्गायु ग्रहण करनी चाहिए।

3– यदि जन्म समय में जन्मांग में बुध बली हो तो रश्मिजायु ग्रहण करनी चाहिए।

4– यदि जन्म समय में जन्मांग में भौम बली हो तो अष्टकवर्गायु ग्रहण करनी चाहिए।

5– यदि जन्म समय में जन्मांग में शुक्र बली हो तो अंशकायु ग्रहण करनी चाहिए।

6– यदि जन्म समय में जन्मांग में गुरु बली हो तो नक्षत्रायु ग्रहण करनी चाहिए।

7– यदि जन्म समय में जन्मांग में शनि बली हो तो चक्रायु ग्रहण करनी चाहिए।

8– यदि जन्म समय में जन्मांग में लग्न बली हो तो लग्नायु ग्रहण करनी चाहिए।

---

[231] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 105
[232] जातक परिजात अरिष्टाध्याय श्लोक सं0 106
[233] जातक परिजात आयुर्दायाध्याय श्लोक सं0 1

यहां सबसे अधिक बली ग्रह से सम्बन्धित आयुर्दाय ग्रहण करना चाहिए। यथा–

पैण्डयं भानौ निसर्गप्रभवमुडुपतौ रश्मिजं सोमपुत्रे।
भौमेर्भिन्नाष्टवर्गोदितमसुरगुरौ कालचक्रोद्भवायुः।।
देवाचार्ये दशायुर्दिनकरतनये सामुदायं बलिष्ठे।
लग्ने यद्यांशकायुर्भवति बलयुते चाहुराचार्यमुख्याः।।[234]

आयु के अधिकारी

जो व्यक्ति धर्म–कर्म में निरत, देवभक्त, जितेन्द्रिय, मान, वाद, धैर्ययुक्त, सतकुल सीमा में निरत है। वह उपर्युक्त शुभ दीर्घायु प्राप्त करता है। यथा–

ये धर्ममार्गनिरता द्विजदेवभक्ता,
ये पश्यभोजनरता विजितेन्द्रियाश्च।
ये मानवादधृतिसत्कुलशीलसीमा–
स्तेषामिदं कथितमायुरुदारधीभिः।।[235]

जो पापी, लोभी, चोर, देव ब्राह्मण निदक मद्य–मांसादि खाने वाले होते हैं उनकी अकाल मृत्यु होती है। यथा–

ये पापलुब्धाश्चोराश्च देवब्राह्मणनिन्दकाः।
सर्वाशिनश्च ये तेषामकालमरणं नृणाम्।।[236]

जिनकी धर्म में विकल्प बुद्धि है, दुःशील और बैर करने वाले हैं। ब्राह्मण–देवता और दूसरे का धन हरण करने वाले हैं, सबको भय प्रदान करने वाले हैं, चुगलखोरों की, अपने धर्म से हीन की, पापकर्म से जीविका करने वाले की, शास्त्रों को न मानने वाले मूर्खों की अपमृत्यु होती है। यथा–

धर्मे विकल्पबुद्धीनां दुःशीलानां च विद्विषाम्।
ब्राह्मणानां च देवानां परद्रव्यापहारिणाम्।।
भयंकराणां सर्वेषां मूर्खाणां पिशुनस्य च।
स्वधर्माचरहीनानां पापकर्मोपजीविनाम्।।
शास्त्रेष्वनियतानां च मूढानामपमृत्यवः।
अन्येषामुत्तमायुः स्यादिति शास्त्रविदोविदुः।।[237]

4.5.3 अभ्यास प्रश्न

1– बालारिष्ट का कालनिर्धारण क्या है?
2– योगरिष्ट किसे कहते हैं?

[234] जातक परिजात आयुर्दायाध्याय श्लोक सं0 33
[235] जातक परिजात आयुर्दायाध्याय श्लोक सं0 35
[236] जातक परिजात आयुर्दायाध्याय श्लोक सं0 36
[237] जातक परिजात आयुर्दायाध्याय श्लोक सं0 37, 38, 39

3– देवायु किसे कहते हैं?
4– मुनिसमत्वम् कब होता है?
5– सूर्य बलि होने पर कौन सी आयु ग्रहण करनी चाहिए?

4.6 सारांश

वैदिक ज्ञान दर्शन के पोषक अथवा सहायक के रूप में वेदांगरूप में प्रतिष्ठित ज्योतिष विज्ञान भी उपरोक्त समस्त मान्यताओं को अक्षरशः सत्य मानता है तथा 84 लाख योनियों में से सर्वोत्कृष्ट मनुष्य योनि के महत्व को सर्वोपरि परिलक्षित करता है। **शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।** जन्म समय निर्धारण के सम्बन्ध में दैवज्ञ मंत्रेश्वर विभिन्न आचार्यों के मत को स्पष्ट करते हुए बताते हैं कि भिन्न–भिन्न प्रकार से जन्म समय का निर्धारण करते हैं। कोई तो गर्भाधान के लग्न को ही मुख्य मानते हैं कोई बच्चे का सिर माँ के शरीर से बाहर आने को जन्म समय स्वीकार करते हैं। कई विद्वानों के मत में जब बालक का पूरा शरीर पृथ्वी पर आ जाये तो कुछेक का मानना है कि नालच्छेदन को जन्म समय मानना चाहिए।

विभिन्न दूषित योगों द्वारा बालक आठ वर्ष की अवस्था तक ही मृत्यु को प्राप्त करता है यह बालारिष्ट कहलाता है।बलारिष्ट के बाद (8 वर्ष से 20 वर्ष) 20 वर्ष तक की आयु में मृत्यु योगारिष्ट कहलाती है। 20 वर्ष से 32 वर्ष की आयु अल्पायु कहलाती है। विभिन्न आयुसाधनों द्वारा न्यूनतम आयु इसी वर्ग के मध्य आती है। ये तीनों आयुवर्ग अल्पायु के अन्तर्गत विभिन्न अरिष्टयोगों द्वारा प्रदत्त होते हैं। ये अति अशुभ माने गए हैं। 32 वर्ष से 70 वर्ष की आयु मध्यायु कहलाती है। विभिन्न अल्पायु योगों में अरिष्टभंग की अवस्था में जातक मध्यायु प्राप्त करता है। जन्मांग में अरिष्टयोगों के अभाव में शुभ योगों के प्रभाव से जातक दीर्घायु को प्राप्त करता है। दीर्घायु 70 वर्ष से 100 वर्ष तक की आयु मानी गई है। सामाजिक व्यवहार में भी शरीर की नश्वरता के आधार पर इस आयु वर्ग में मृत्यु होना व्यावहारिक ही समझा जाता है। दीर्घायु के अनन्तर दैवयोग से प्रदत्त आयु दैवायु कही जाती है। इसकी सीमा 120–130 वर्ष तक कही जा सकती है। दीर्घायु के उपरान्त अपवाद स्वरूप विशिष्ट लोग ही योगाभ्यासादि क्रियाओं, श्वास, प्रश्वास नियन्त्रण करके, मन्त्रादि अनुष्ठानों द्वारा, संचित तथा क्रियमाण शुभ कर्मो द्वारा असंख्यायु को प्राप्त करते हैं।

4.7 शब्दावली

अल्पायु = 50 वर्ष से पूर्व
मध्यायु = 70 वर्ष से पूर्व
दीर्घायु = 100 वर्ष तक
संध्यायां = सन्ध्याकाल प्रातः एवं सांय
होरा = राशि का आधा भाग 15^0

शशिपापसमेतैः = चन्द्रमा और पापग्रह
निधनाय = मृत्यु के लिए
केन्द्रस्थानम् = प्रथम भाव, चतुर्थ सप्तम एवं दशम भाव
उपैति = प्राप्त करता है।
चक्रस्य = राशि चक्र के
क्षिप्रं = शीघ्र ही
पूर्वापरभागेषु = लग्न के सप्तम भाव तक
उदयगत= लग्न में गया हुआ
चिरात् = देरी से
युतश्च = युक्त
क्षीणेचन्द्रे = क्षीण चन्द्रमा
व्ययगे = बारहवें भाव में गया हुआ
उदयाष्टमगैः = लग्न एवं अष्टम स्थान में
प्रवदेत् = कहना चाहिए
क्षिप्रं = शीघ्र ही
क्रूरेण = पापग्रह, मंगल, शनि आदि
निधनमाशु = शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होना
पापेक्षिते = पापग्रह के द्वारा देखा जाना
दलमतश्च = पक्ष में
असद्भिः= पापग्रह
अवलोकिते = देखने पर
बलिभिः = बलवान्
कलत्रसहिते = पत्नी के साथ
विलग्नाधिपे = लग्न स्वामी से रहित
रन्ध्र = अष्टम भाव
मदनछिद्र = सप्तम एवं अष्टम भाव
हिबुक = चतुर्थ भाव
द्यून = सप्तम स्थान
सार्धं = साथ
मात्रा = माता
राश्यन्तगे = राशि के अन्तिम भाग
सद्भिः = शुभ ग्रह
वीक्ष्यमाणे = देखे जाने पर
त्रिकोण = नवम एवं पंचम भाव
प्रयात्याषु = शीघ्र ही

अस्ते = सप्तम स्थान
असित = पापग्रह
मरणमाशु = मृत्यु के लिए शीघ्र ही
वीक्षिता = देखना
सुत = पंचम भाव
मदन = सप्तम भाव
नव = नवम भाव
अन्त्य = बारहवां भाव
शीतरश्मिः = चन्द्रमा
भृगसुत = शुक्रग्रह
शशिपुत्र = बुध
देवपूज्य = बृहस्पति
युतो = के साथ
अवलोकिते = देखने पर
षष्टारिष्फगः = 6,8,12 भाव
खेटैश्च = ग्रहों द्वारा
सौम्याः = शुभ ग्रह
वक्राः = वक्री ग्रह
सौम्यविवर्जिते = शुभ ग्रहों से रहित
धीस्थाः = पंचम भाव में स्थित
त्वाशु = शीघ्र ही
व्रजेत् = प्राप्त होता है
लग्नगो = लग्न में गया हुआ
सौरेण = शनि के द्वारा
सौरि = शनि
भवेद्यदि = यदि हो
विधातव्य = जानना चाहिए
असद्ग्रहयोगे = पापी ग्रह के योग में
लग्नाद्यैः = लग्न आदि
विमिश्रेण = मिश्रित
ऊर्ध्वं = ऊपर की ओर
तिर्यग्रेखा = तिरछी रेखा
षड्रेखास्तु = छः रेखा
समालिख्य = समान लिख कर
रव्यादि = सूर्यादि ग्रह

सुयोगे = शुभ योग होने पर
बलाधिकः = बल अधिक होने पर
पणफरे = 2,5,8,11 स्थान
सपापे = पापग्रह के साथ
सद्ग्रहेण वर्जिते = पापग्रह से रहित
लग्नमृतिपः = लग्न एवं अष्टम भाव
योगजरिष्टकम् = अरिष्ट योग
चामितमेव = अमित आयु
नखाब्दा = 20 वर्ष
योग रिष्टके = योगारिष्ट
विंशोत्तरशतं = 120 वर्ष
दशशताब्दकं = 110 वर्ष
चन्द्रजौ = चन्द्र और गुरु
ज्ञसितौ = बुध शुक्र
संस्थितौ = स्थित हो
त्र्यायिरिगाः = 3,11,6 में
अमितायुः = 120 वर्ष

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

मुख्य भाग खण्ड एक

1– ख, 2– ग, 3– ख, 4– क, 5– घ, 6– क, 7– ख, 8– क, 9– ग।

मुख्य भाग खण्ड दो

क– 12 वर्षों के उपरान्त
ख– तीन श्रेणियों में
ग– 100 वर्षों का
घ– 32 वर्षों तक
ङ– मध्यायु में

मुख्य भाग खण्ड तीन

1– 12 वर्ष पर्यन्त
2– 20 वर्ष पर्यन्त
3– देवप्रदत्त आयु
4– शनि देवलोकांश, मंगल पारावतांश, गुरु सिंहासनांश में होने पर
5– पिण्डायु ग्रहण करनी चाहिए।

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

क्र0	ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1	बृहज्जातक	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी 2002 संवत्
2	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977
3	भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय कचौड़ी गली वाराणसी
4	चमत्कारचिन्तामणि	मालवीय दैवज्ञ धर्मेश्वर	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1975
5	जातकचन्द्रिका	जयदेव कवि	श्री कृष्णदास वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1970
6	जातकालंकार	गणेष	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
7	बृहत्पाराषरहोराषास्त्र	पराषर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
8	मुहूर्तप्रकाष	चतुर्थी लाल गौड़	ज्ञानसागर पुस्तकालय मुम्बई 1904
9	जातकभरणम्	ढुण्डीराज	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 1463
10	मुहूर्तचिन्तामणि	वराहमिहिर	मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स वाराणसी
11	जातकसारदीप	नृसिंह दैवज्ञ	मद्रास सर्वकार द्वारा प्रकाशित 1951
12	जातकतत्वम्	सुब्रह्मण्यं शास्त्री	वाराणसी
13	भारतीय कुण्डली विज्ञान	मीठालाल हिम्मतराम ओझा	मीरघाट वाराणसी 2028 संवत्
14	बृहदवकहोडाचक्रम्	वराहमिहिर	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
15	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
16	लघुजातकम्	वराहमिहिर	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 2025 संवत्
17	फलदीपिका	मन्त्रेश्वर	रंजन पब्लिकेशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली 1971 ई0

4.10 सहायक उपयोगी/पाठ्य सामग्री

क्र0	ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1	बृहज्जातक	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी 2002 संवत्
2	सारावली	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977

3	भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय कचौड़ी गली वाराणसी
4	चमत्कारचिन्तामणि	मालवीय दैवज्ञ धर्मेश्वर	मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1975
5	जातकचन्द्रिका	जयदेव कवि	श्री कृष्णदास वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1970
6	जातकालंकार	गणेश	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
7	बृहत्पाराशरहोराशास्त्र	पराशर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
8	मुहूर्तप्रकाश	चतुर्थी लाल गौड़	ज्ञानसागर पुस्तकालय मुम्बई 1904
9	जातकभरणम्	ढुण्डीराज	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 1463
10	मुहूर्तचिन्तामणि	वराहमिहिर	मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स वाराणसी
11	जातकसारदीप	नृसिंह दैवज्ञ	मद्रास सर्वकार द्वारा प्रकाशित 1951
12	जातकतत्वम्	सुब्रह्मण्यं शास्त्री	वाराणसी
13	भारतीय कुण्डली विज्ञान	मीठालाल हिम्मतराम ओझा	मीरघाट वाराणसी 2028 संवत्
14	वृहद्वकहोडाचक्रम्	वराहमिहिर	सत्यम पब्लिकेशन नई दिल्ली
15	वृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
16	लघुजातकम्	वराहमिहिर	ठाकुरदास एण्ड सन्स वाराणसी 2025 संवत्
17	फलदीपिका	मन्त्रेश्वर	रंजन पब्लिकेशन अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली 1971 ई0

4.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1– आयु के विषय में आचार्यों के भिन्न–भिन्न मत हैं? स्पष्ट करें।

2– वराहमिहिरानुसार आयु का विचार स्पष्ट करें?

3– योगरिष्ट पर विस्तृत विवेचना करें।

4– अल्पायु, मध्यायु, एवं दीर्घायु पर एक लघु निबन्ध लिखें।

5– ब्रह्मपद प्राप्ति योग का विस्तृत उल्लेख करें।

खण्ड - 4

फलादेश विवेचन

इकाई - 1 पंचांग फल विचार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 तिथि फल विचार
1.4 वार फल विचार
1.5 नक्षत्र फल विचार
1.6 योग फल विचार
1.7 करण फल विचार
1.8 बोध प्रश्न
1.9 सारांश
1.10 पारिभाषिक शब्दावली
1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना –

प्रस्तुत इकाई होराशास्त्र एवं फलादेश विवेचन शीर्षक से संबंधित है। ज्योतिषशास्त्र के मुख्य तीन स्कन्ध हैं – 1. सिद्धान्त, 2. संहिता एवं 3. होराशास्त्र। प्रत्येक कार्य का एक समय, परिणाम एवं फल होता है। यदि आवश्यक है तो किसी कार्य का अनुष्ठान शुद्ध समय एवं उचित ढंग से किया जाये। यदि समय शुद्ध होता है तो कार्य का परिणाम सुखद होता है अन्यथा धन, समय एवं क्षमता तीनों व्यर्थ हो जाते हैं, इससे वचने के लिये हमारे ऋषियों ने अपने तपोबल से चारों वेदों के मन्त्रों का साक्षात किया। ये चारों वेद भारतीय संस्कृति के सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ है, इनका मुख्य प्रतिपाद्य विषय यज्ञ कर्म का संपादन है जो ज्योतिषशास्त्र की सहायता के विना संभव नहीं है। यही कारण है कि ज्योतिषशास्त्र को कालविधान शास्त्र कहा जाता है। यज्ञ संपादन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान पंचांग का है जिसके स्पष्ट एवं शुद्धमान के अभाव में यज्ञकर्म का फल नष्ट हो जाता है तथा शुभ फल के स्थान पर यज्ञकर्ता को अशुभफल की प्राप्ति होती है। पंचांग के पाँच अंग हैं – 1. तिथि, 2. वार, 3. नक्षत्र, 4. योग एवं 5. करण।

इससे पूर्व के इकाईयों में आपने तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के गणितीय आनयन की प्रक्रिया एवं एक स्थान के पंचांग से दूसरे स्थान का स्थानीय तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के गणितीय आनयन की प्रक्रिया को जान लिया है। इस इकाई में हम तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के फल के विषय में विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

1. छात्र प्रतिपदादि तिथियों के धर्मशास्त्रीय महत्त्व एवं इनमें जन्म लेने वाले जातकों के शुभाशुभ फलों को जानने में समर्थ होंगे।
2. वारों के होराशास्त्रीय महत्त्वों को समझने में समर्थ होंगे।
3. नक्षत्रों का ज्योतिषशास्त्रीय विश्लेषण एवं इनमें जन्म लेने वाले जातकों के शुभाशुभ फलों को जानने में समर्थ होंगे।
4. योगों का धर्मशास्त्रीय महत्त्व एवं इनमें जन्म लेने वाले जातकों के शुभाशुभ फलों को जानने में समर्थ होंगे।
5. चर एवं स्थिर करणों के स्वरूप, महत्त्व एवं इनमें जन्म लेने वाले जातकों के शुभाशुभ फलों को जानने में समर्थ होंगे।
6. छात्र संहिता स्कन्ध के अनुसार तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के स्वरूप, महत्त्व एवं उसका विश्लेषण करने में समर्थ होंगे।

1.3 तिथि फल विचार

होराशास्त्र के अन्तर्गत जातक के जन्म समय को आधार मानकर उसके जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त घटित होने वाली शुभ एवं अशुभ घटनाओं का आकलन किया जाता है। सूर्य एवं चन्द्रमा का दैनिक अन्तर तिथि कहलाता है। एक चान्द्र मास में दो पक्ष होते हैं, शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष। शुक्ल पक्ष में पंद्रह तिथियाँ प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी,

पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी एवं पूर्णिमा तथा कृष्ण पक्ष में भी पंद्रह तिथियाँ प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी एवं आमावश्या होती हैं। शुक्ल एवं कृष्ण पक्ष की तिथियाँ नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता एवं पूर्णा संज्ञक हैं।

पक्ष	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
शुक्ल	प्रतिपदा	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी
	षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी
	एकादशी	द्वादशी	त्रयोदशी	चतुर्दशी	पूर्णिमा
	प्रतिपदा	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी
कृष्ण	षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी
	एकादशी	द्वादशी	त्रयोदशी	चतुर्दशी	अमावश्या

जातक के स्वरूप, स्वभाव एवं व्यक्तित्व पर तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का प्रभाव सर्वाधिक पड़ता है। मानव के जीवन में षोडश संस्कार का अत्यधिक महत्त्व है, जो पंचांग की सहायता से ही सम्पन्न होता है। इस इकाई में हम मुख्यरूप से प्रतिपदादि तिथियों में जन्म लेने वाले जातकों के स्वरूप एवं स्वभाव का क्रमशः अध्ययन करेंगे।

प्रतिपदा तिथि का फल –

बहुजनपरिवारश्चारुविद्यो विवेकी कनकमणिविभूषावेषशाली सुशीलः।
अतिसुललितकान्तिर्भूमिपालाप्तवित्तः प्रतिपदि यदि सूतिर्जायते यस्य जन्तोः।।

प्रतिपदा तिथि में जन्म हो तो बहुत परिवार वाला, उत्तम विद्वान, विवेकी, सुवर्ण
मणि आदि धन से युक्त, सुशील, सुन्दर स्वरूप, राजा से धन प्राप्त करने वाला मनुष्य होता है।

जातक पारिजात के अनुसार प्रतिपदा तिथि में जन्म लेने वाला जातक महा उद्योगी, धर्माचरणवाला होता है। जबकि मानसागरी में कहा गया है कि प्रतिपदा तिथि में जन्म लेनेवाला जातक पापियों के साथ रहने वाला, धन से हीन, कुल को सन्ताप देनेवाला तथा व्यसन में आसक्त अन्तःकरणवाला होता है।

द्वितीया तिथि का फल –

दाता दयालुर्गुणवान् विवेकी चंचत्सदाचारविचारधन्यः।
प्रसन्नमूर्तिर्बहुगीतकीर्तिर्मर्त्यो द्वितीयातिथिसम्भवः स्यात्।।

द्वितीया तिथि में जन्म लेने वाला दाता, दयालु, गुणी, विवेकी, सदाचारी, प्रसन्नमुख तथा विख्यात यश वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार द्वितीया तिथि में जन्म लेने वाला जातक तेजस्वी तथा विपुल पशु–बल–यश से युक्त होता है। द्वितीया तिथि के सम्बन्ध में मानसागरी में कहा गया है कि इस तिथि में जन्म लेनेवाला जातक सदा पराई स्त्री में आसक्त रहने वाला, पवित्रता से हीन, चोर और स्नेह से हीन होता है।

तृतीया तिथि का फल –

> **कामाधिकश्चाप्यनवद्यविद्यो बलान्वितो राजकुलाप्तवित्तः।**
> **प्रवासशीलश्चतुरो विलासी मर्त्यस्तृतीयाप्रभवोऽभिमानी।।**

तृतीया में जन्म हो तो अत्यन्त कामुक, उत्तम विद्वान्, बली, राजा से धन लाभ करने वाला, विदेशवासी, चतुर, विलासी और अभिमानी होता है।
जातक पारिजात के अनुसार तृतीया तिथि में जन्म लेने वाला जातक पुण्यवान, डरपोक और बुद्धिपूर्वक वाक्य बोलने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार तृतीया तिथि में उत्पन्न जातक चैतन्य रहित, अत्यन्त विकल, द्रव्यहीन और दूसरों से द्वेष करने में सदा रत रहता है।

चतुर्थी तिथि का फल –

> **ऋणप्रवृत्तिर्बहुसाहसः स्याद्रणप्रवीणः कृपणस्वभावः।**
> **द्यूते रतिर्लोलमना मनुष्यो वादी यदि स्याज्जनने चतुर्थी।।**

चतुर्थी में जन्म लेने वाला मनुष्य ऋण लेने में प्रवृत्त, बहुत साहसी, संग्राम में प्रवीण, कृपण स्वभाव, जुआरी, चंचल और वादी होता है।
जातक पारिजात के अनुसार चतुर्थी तिथि में जन्म लेने वाला जातक दूसरों की
आशाओं को पूर्ण करने वाला, घूमक्कर प्रवृत्तिवाला, चतुर एवं मंत्रनिष्ठ होता है।
मानसागरी में कहा गया है कि चतुर्थी तिथि में उत्पन्न जातक बहुत भोगी, दानी, मित्रों के साथ स्नेह करने वाला, पण्डित, धन और सन्तान से युक्त होता है।

पंचमी तिथि का फल –

> **सम्पूर्णगात्रश्च कलत्रपुत्रमित्रान्वितो भूतदयान्वितश्च।**
> **नरेन्द्रमान्यस्तु नरोवदान्यः प्रसूतिकाले किल पंचमी चेत्।।**

जन्म समय में पंचमी तिथि हो तो सम्पूर्ण अंगों से युक्त, स्त्री मित्रादि से सुखी, प्राणियों पर दया करने वाला, राजा का मान्य और दानी होता है।
जातक पारिजात के अनुसार पंचमी तिथि में जन्म लेने वाला जातक समस्त आगम शास्त्रों का ज्ञाता, कामी तथा दुर्बल होता है। मानसागरी के अनुसार मनुष्य व्यवहार को जाननेवाला, गुण को ग्रहण करने वाला, माता पिता की रक्षा करने वाला, दानी, भोगी और अपने शरीर से प्रसन्न रहता है।

षष्ठी तिथि का फल –

> **सत्यप्रतिज्ञो धनसूनुसम्पद्दीर्घोरुजानुर्मनुजो महौजाः।**
> **प्रकृष्टकीर्तिश्चतुरो वरिष्ठः षष्ठ्यां प्रजातो व्रणकीर्णगात्रः।।**

षष्ठी तिथि में जन्म हो तो सत्य प्रतिज्ञा वाला, धन पुत्र मित्रादि से युक्त, लम्बी जाँघ वाला महापराक्रमी, विख्यातयश, चतुर, श्रेष्ठ और व्रण से युक्त देह वाला होता है।
जातक पारिजात के अनुसार षष्ठी तिथि में जन्म लेने वाला जातक अल्पबली, राजा के तुल्य धन धान्य से पूर्ण, बुद्धिमान और धी होता है। मानसागरी में विशेष प्रतिपादित किया गया है। इसके अनुसार षष्ठी तिथि में उत्पन्न जातक अनेक देशों में गमन करने वाला,

सदा झगड़ा करने वाला, केवल अपने पेट का भरण पोषण करनेवाला होता है।

सप्तमी तिथि का फल –

ज्ञानी गुणज्ञो हि विशालनेत्रः सत्पात्रदेवार्चनचित्तवृत्तिः।
कन्याजनेता परवित्तहर्ता स्यात्सप्तमीजो मनुजोऽरिहन्ता।।

सप्तमी में जन्म लेने वाला ज्ञानी, गुणग्राही, बड़ी आँख वाला, साधु और देवता का आदर करने वाला, कन्या संतान वाला, दूसरों के धन को हरने वाला और शत्रु को जीतने वाला होता है। जातक पारिजात के अनुसार सप्तमी तिथि में जन्म लेने वाला जातक कठिन जंघा और कठोर वचन बोलने वाला, मनुष्यों का स्वमी, कफप्रकृति वाला और प्रधान बली होता है। मानसागरी के अनुसार जातक थोड़े में संतोष करने वाला, तेजयुक्त, सौभाग्य और गुण से युक्त, पुत्रवान और
धन से सम्पन्न होता है।

अष्टमी तिथि का फल –

नानासम्पत्सूनुसौख्यः कृपालुः पृथ्वीपालप्राप्तविद्याधिकारः।
कान्ताप्रीतिश्चंचलाचित्तवृत्तिर्यस्याष्टम्यां सम्भवो मानवस्य।।

अष्टमी में जन्म हो तो वह मनुष्य अनेक प्रकार की सम्पत्ति और पुत्रों से सुखी, दयालु, राजा के द्वारा विद्याधिकार प्राप्त करने वाला, स्त्री से प्रीति करने वाला और चंचल चित्तप्रकृति वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार अष्टमी तिथि में जन्म लेने वाला जातक विशेष कामी, पुत्र एवं स्त्री में लीन, कफ प्रकृतिवाला होता है। मानसागरी में कहा गया है कि जातक धर्मात्मा, सत्यवक्ता, दानी, भोगी, दयावान्, गुणों को जानने वाला और सब कामों को जानने वाला होता है।

नवमी तिथि का फल –

पराङ्मुखो बन्धुजनस्य कार्ये कठोरवाक्यश्च सुधीविरोधी।
नरः गताचारसमादरः स्यात् यस्य प्रसूतौ नवमी तिथिश्चेत्।।

नवमी में जन्म लेने वाला बन्धुजनों के कार्य से विमुख, कठोर भाषी, पण्डितों का विरोधी और आचारहीन होता है।

जातक पारिजात के अनुसार नवमी तिथि में जन्म लेने वाला जातक विख्यात, दिव्यशरीर, दुष्ट स्त्री–पुत्रवाला और कामी होता है। मानसागरी के अनुसार यदि जातक का जन्म नवमी तिथि में हो तो जातक देवताओं की आराधना करने वाला, पुत्रवान्, धन और स्त्री में आसक्त चित्तवाला और सदा शास्त्रों के अभ्यास में रत रहनेवाला होता है।

दशमी तिथि का फल –

धमकबुद्धिर्भववैभवाढ्यः प्रलम्बकण्ठो बहुशास्त्रपाठी।
उदारचित्तोतितरां विनितो रम्यश्च कामी दशमीभवः स्यात्।।

दशमी में जन्म लेने वाला धर्म में बुद्धि रखने वाला, संसारी सम्पत्ति से युक्त, दीर्घ गर्दन वाला, बहुत शास्त्रों का ज्ञाता, उदार हृदय, अत्यन्त नम्र, सुन्दर और कामी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार दशमी तिथि में जन्म लेने वाला जातक धर्मात्मा, चतुर बचन बोलने वाला, स्त्री पुत्र से स्पन्न, श्रीमान एवं धनी होता है । मानसागरी के अनुसार दशमी तिथि में जन्म लेनेवाला जातक धर्म और अधर्म को जानने वाला, देवताओं की सेवा करने वाला, यज्ञ करने वाला, तेजस्वी और सदा
सौख्य युक्त रहता है।

एकादशी तिथि का फल –

छेवद्विजार्चावृतदानशीलः सुनिर्मलान्तःकरणः प्रवीणः।
पुण्यैकचित्तोत्तमकर्मकृत्स्यादेकादशीजो मनुजः प्रसन्नः।।

एकादशी में जन्म हो तो देव और ब्राह्मण का पूजक, दानी, पवित्र हृदय, चतुर, पुण्यात्मा, उत्तम क्रिया करने वाला और सदा प्रसन्न रहता है।

जातक पारिजात के अनुसार एकादशी तिथि में जन्म लेने वाला जातक दासों से युक्त एवं धनवान् होता है। मानसागरी में कहा गया है कि एकादशी तिथि में उत्पन्न जातक थोड़े में संतोष करने वाला, राजाओं के घर में रहने वाला, पवित्र, धनवान, पुत्रवान् और बुद्धिमान होता है।

द्वादशी तिथि का फल –

जलप्रियो वै व्यवहारशीलो निजालयावासविलासशीलः।
सदान्नदाता क्षितिपालवित्तः स्याद् द्वादशीजो मनुजः प्रजावान्।।

द्वादशी तिथि में जन्म हो तो जल का प्रेमी, व्यवहारज्ञ, अपने बनाये घर में सुख से रहने वाला, सदा अन्न का दान करने वाला, राजा से धन पाने वाला और सन्तानयुक्त होता है।
जातक पारिजात के अनुसार द्वादशी तिथि में जन्म लेने वाला जातक अत्यन्त पुण्य कर्म में लिप्त रहनेवाला, त्यागी, धनी और पंडित होता है। द्वादशी तिथिमें उत्पन्न जातक चंचल ज्ञानवाला, सदा खिन्न और देशों में घूमनेवाला होता है।

त्रयोदशी तिथि का फल –

रूपान्वितः सात्विकताप्रयुक्तः प्रलम्बकण्ठश्च नरप्रसूतिः।
नरोऽतिशूरश्चतुरः प्रकामं त्रयोदशीनामतिथौ प्रसूतः।।

त्रयोदशी में जन्म हो तो सुन्दर स्वरूप, सत्वगुणी, दीर्घ गर्दन वाला, पुत्र सन्तान वाला, शूर वीर, चतुर होता है।

जातक पारिजात के अनुसार त्रयोदशी तिथि में जन्म लेने वाला जातक लोभी, अतिकामी और धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सिद्ध, पंडित, शास्त्राभ्यास करनेवाला, इन्द्रियों को वश में रखने वाला और सदा परोपकारी होता है।

चतुर्दशी तिथि का फल –

क्रूरोऽतिशूरश्चतुरः सहासः कन्दर्पलीलाकुलचित्तवृत्तिः।
स्याद् दुःसहोऽत्यन्तविरूद्धभाषी चतुर्दशीजः पुरुषः सरोषः।।

चतुर्दशी में जन्म लेने वाला मनुष्य क्रूर, शूरवीर, चतुर, हास्यप्रिय, कामातुर,
असहनशील, सबके विरूद्ध बोलने वाला और क्रोधी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार चतुर्दशी तिथि में जन्म लेने वाला जातक दूसरे के धन को ग्रहण करने वाला, दूसरे के स्त्री के साथ रमण करने वाला, हीनबुद्धि होता है। मानसागरी

के अनुसार जातक धनी, धर्मात्मा, वीर, सज्जनों के वाक्य का पालन करनेवाला, राजा से मान पाने वाला और यशस्वी होता है।

शुक्ल पक्ष के पूर्णिमा तिथि का फल –

अतिसुललितकायो न्यायसम्प्राप्तवित्तो बहुयुवतिसमेतो नित्यसंजातहर्षः।
प्रबलतरविलासोत्यन्तकारुण्यपुण्यो गुणगणपरिपूर्णः पूर्णिमाजातजन्मा।।

शुक्लपक्ष की पूर्णिमा तिथि में जन्म हो तो सुन्दर शरीर, न्याय से धनार्जन करने वाला, बहुत स्त्रियों से युक्त, आनन्द सहित, अत्यन्त विलासी, दयालु और गुण से युक्त होता है।

जातक पारिजात के अनुसार पूर्णिमा तिथि में जन्म लेने वाला जातक धनी, कुल में यशस्वी, प्रसन्नचित्त होता है। मानसागरी के अनुसार जातक श्रीमान्, बुद्धिमान्, बहुत भोजन की लालसा रखनेवाला, उत्साही और पराई स्त्री में आसक्त रहने वाला होता है।

कृष्ण पक्ष की अमावास्या तिथि का फल –

शान्तो मनस्वी पितृमातृभक्तः क्लेशाप्तवित्तश्च गमागमेच्छुः।
मान्यो जनानां हतकान्तिहर्षो दर्शोद्भवः स्यात्पुरुषः कृशांगः।।

अमावाश्या में जन्म हो तो वह मनुष्य शान्त स्वभाव, माता एवं पिता का भक्त, मनस्वी, क्लेश से धन उपार्जन करने वाला, चलने फिरने वाला, लोगों में मान्य, कान्ति हर्ष से हीन और कृश शरीर होता है।

जातक पारिजात के अनुसार अमावश्या तिथि में जन्म लेने वाला जातक आशा रखने वाला, पितर एवं देवताओं की पूजा में तत्पर होता है। मानसागरी के मतानुसार जातक आलसी, दूसरों के साथ द्वेष रखनेवाला, कुटिल, मूर्ख, पराक्रमी, मूढ़ राजाओं का मन्त्री और ज्ञानवान् होता है।

1.4 वार फल विचार –

रविवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

शूरोल्पकेशो विजयी रणाग्र श्यामारुणः पित्तचयप्रकोपः।
छाता महोत्साहयुतो महौजा दिने दिनेशस्य भवेन्मनुष्यः।।

रविवार में जन्म हो तो शूरवीर, थोड़े केशवाला, रण में विजयी, रक्तश्याम वर्ण, पित्त प्रकृति, दाता, उत्साही और महा तेजस्वी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार रविवार में जन्म लेने वाला जातक मानी, पिंगल – बाल–नेत्र–शरीर एवं समर्थ होता है। मानसागरी में विषेष कहा गया है कि रविवार को जन्म लेने वाला जातक अधिक चतुर, तेजस्वी, युद्धप्रेमी, दानी और अत्यन्त उत्साह रखनेवाला होता है।

सोमवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

प्राज्ञः प्रशान्तः प्रियवाग्विधिज्ञः शश्चन्नरेन्द्राश्रयवृत्तिवर्ती।
सुखे च दुःखे च समस्वभावो वारे नरः शीतकरस्य जातः।।

सोमवार में जन्म लेने वाला मनुष्य पण्डित, शान्त स्वभाववाला, प्रियवक्ता, व्यवहार जानने वाला, सदा राजा का आश्रित तथा सुख दुख में समान बुद्धि रखता है।

जातक पारिजात के अनुसार सोमवार में जन्म लेने वाला जातक कामी, कन्तियुक्त शरीरवाला एवं अहर्निश दयालु होता है। मानसागरी के अनुसार सोमवार में जन्म लेनेवाला

जातक बुद्धिमान, मधुर वचन बोलने वाला, गम्भीरस्वभाव, राजा के आश्रय से जीनेवाला, दु:ख एवं सुख को समान माननेवाला और धनवान होता है।

मंगलवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

वक्रोक्तिरत्यन्तरणप्रियः स्यान्नरेन्द्रमन्त्री च धरोपजीवी।
सत्त्वान्वितस्तीव्रतरस्वभावो दिने भवेन्नावनिनन्दनस्य।।

मंगलवार में जन्म हो तो कटाक्ष सहित बोलने वाला, युद्ध प्रिय, राजमन्त्री, भूमि से जीविका करने वाला, सत्वगुणी तथा तीक्ष्ण स्वभाव वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार मंगलवार में जन्म लेने वाला जातक क्रूर, सदा साहसवादी और कार्यपरायण होता है। मानसागरी के अनुसार मंगलवार में उत्पन्न जातक टेढ़ी बुद्धिवाला, वृद्धावस्था तक जीनेवाला, बलवान्, सेनापति और अपने परिवार के पालन में प्रधान होता है।

बुधवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

सद्रूपशाली मृदुवाग्विलासः श्रीमान्कलाकौशलतासमेतः।
वणिक् क्रियायां हि भवेदभिज्ञः प्राज्ञो गुणज्ञो ज्ञदिनोद्भवो यः।।

बुधवार में जन्म हो तो सुन्दर स्वरूप, कोमल वचनभाषी, सम्पत्तियुक्त, कलाओं में कुशल, व्यापार में अभिज्ञ, पण्डित और गुणज्ञ होता है।

जातक पारिजात के अनुसार बुधवार में जन्म लेने वाला जातक देव ब्राह्मणों का पूजक और सुबचन बोलने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार बुधवार में जन्म लेनेवाला जातक लिखने से जीविका करने वाला, मीठी वाणी बोलने वाला,
बुद्धिमान्, पंडित और रूप तथा धन से युक्त होता है।

गुरुवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

विद्वान धनी सर्वगुणोपपन्नो मनोरमः क्ष्मापतिलब्धकामः।
आचार्यवर्यश्च जनः प्रियः स्याद्वारे गुरोर्यस्य नरस्य जन्म।।

बृहस्पतिवार में जन्म हो तो वह मनुष्य विद्वान्, धनी, गुणवान, सुन्दर शरीर वाला, राजा से मनोवांछित सिद्धि को प्राप्त करने वाला, गुरुजनों का प्रिय तथा लोक में मान्य होता है। जातक पारिजात के अनुसार गुरुवार में जन्म लेने वाला जातक यज्ञ करने वाला, राजवल्लभ, गुणवान् और विख्यात् होता है। मानसाबरी में जातक के जन्म का फल जातकाभरण एवं जातक पारिजात के अनुसार ही कहा गया है।

शुक्रवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

सुनीलसत्कुंचितकेशपाशः प्रसन्नवेषो मतिमान् विशेषात्।
शुक्लाम्बरप्रीतिधरो नरः स्यात्सन्मार्गगो भार्गववारजन्मा।।

शुक्रवार में जन्म लेने वाला जातक काले घुँघराले बालों से युक्त, प्रसन्नमुख, अतिबुद्धिमान, श्वेत वस्त्र को चाहने वाला तथा सन्मार्गगामी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार शुक्रवार में जन्म लेने वाला जातक बहुत बड़े भूखण्ड का स्वामी, सर्वप्रिय एवं कामबुद्धिवाला होता है। मानसागरी के अनुसार शुक्रवार में उत्पन्न जातक चंचल चित्तवाला देवताओं का द्वेषी, सदा धन क्रीड़ा में रत रहनेवाला, सुन्दर रूपवाला और अति मनोहर वचन बोलने वाला होता है।

शनिवार को जन्म लेने वाले जातक का फल –

अकालसम्प्राप्तजराप्रवृत्तिर्बलोज्झितो दुर्बलदेहयष्टिः।
तमोगुणी क्रौर्यचयाभिभूतः शनेर्दिने जातजनुर्मनुष्यः।।

शनिवार में जन्म हो तो मनुष्य असमय में ही बुढ़ापे से युक्त अर्थात् दुर्बल देह, तामसी और दुष्ट स्वभाव वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार शनिवार में जन्म लेने वाला जातक प्रायः मन्दबुद्धि, परान्न खानेवाला, दूसरे के धन से धनवान, वाद–प्रमाद से युक्त, वैरी एवं बन्धुजनों के विकास में बाधक होता है। मानसागरी के अनुसार शनिवार में जन्म लेनेवाला मनुष्य चंचल चित्तवाला, क्रूर स्वभाववाला, दुःखी चित्तवाला, पराक्रमी, नीच दृष्टिवाला और दृढ़ प्रतिज्ञावाला, अधिक केशवाला और सदा वृद्ध स्त्री में रत रहनेवाला होता है।

1.5 नक्षत्र फल विचार –

अश्विनी नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सदैव सेवाभ्युदितो विनीतः सत्यान्वितः प्राप्तसमस्तसम्पत् ।
योषाविभूषात्मजभूरितोषः स्यादश्विनी जन्मनि मानवस्य ।।

अश्विनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला सेवा कार्य में अभ्युदय को प्राप्त होता है तथा उसका स्वभाव नम्र, सत्य बोलने वाला, सर्व सुख सम्पन्न और स्त्री एवं पुत्र के सुख से युक्त रहता है । जातक पारिजात के अनुसार अश्विनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक अतिबुद्धिमान, धनवान्, विनयवान्, ज्ञानवान एवं यशवाला होता है। मानसागरी में कहा गया है कि अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न जातक सुन्दर रूपवाला, सुभग, भाग्यवान हर एक कामों में चतुर, मोटा देहवाला, धनवान् और लोगों का प्रिय होता है।

भरणी नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सदापकीर्तिर्हि महापवादैर्नाना विनोदैश्च विनीतकालः।
जलातिभीरुश्चपलः खलश्च प्राणी प्रणीतो भरणीभजातः।।

भरणी में उत्पन्न मनुष्य लोकापवाद से अयश पाने वाला, अपने समय को नाना प्रकार के विनोद द्वारा व्यतीत करता है। जल से भीरु अर्थात् नित्य स्नानादि क्रिया भी नहीं करता है। वह चंचल और दुष्ट स्वभाव वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार भरणी नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक विकल, परस्त्रीगामी, क्रूर, कृतघ्न और धनी होता है। मानसागरी के मतानुसार जातक नीरोग, सत्यवक्ता, सुन्दर जीवन, दृढ़ नियमवाला, सुखी और धनवान् होता है।

कृत्तिका नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

क्षुधाधिकः सत्यधनैर्विहीनो वृथाटनोत्पन्नमतिः कृतघ्नः।
कठोरवाग्गर्हितकर्मकृत्स्याच्चेत्कृत्तिका जन्मनि यस्य जन्तोः।।

कृत्तिका में जन्म लेने वाला क्षुधा से पीडित, सत्य धन से रहित, व्यर्थ घूमने वाला, कृतघ्न, कटुवक्ता और अहित करने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार कृत्तिका नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक तेजवान्, प्रभुसदृश, ज्ञानी और विद्यावान् होता है। मानसागरी के अनुसार जातक कृपण, पाप कर्म करनेवाला, हर समय भूखा, नित्य पीडित रहनेवाला और सदा नीच कर्म करनेवाला होता है।

रोहिणी नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

धर्मकर्मकुशलः कृषीबलश्चारुशीलविलसत्कलेवरः।
वाग्विलासकलिताखिलाशयो रोहिणी भवति यस्य जन्मभम्।

रोहिणी में उत्पन्न जातक धर्म कर्म करने में कुशल, कृषि कर्म से जीविका चलाने वाला, सुंदर स्वभाव और शरीर वाला, वाक्पटु, मेधावी अर्थात् गूढ़ विषय को अति स्पष्टतया समझाने की कला में निपुण होता है।

जातक पारिजात के अनुसार रोहिणी नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक परच्छिद्रान्वेषी, कृशांग, ज्ञानी एवं परस्त्रीगामी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक धनवान्, उपकार को जानने वाला, बुद्धिमान्, राजा से मान्य, प्रिय बोलनेवाला, सत्यवक्ता और सुन्दर रूपवाला होता है।

मृगशिरा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

शरासनाभ्यासरतो विनीतः सदानुरक्तो गुणिनां गणेषु।
भोक्ता नृपस्नेहभरेण पूर्णः सन्मार्गवृत्तो मृगजातजन्मा।।

मृगशिरा नक्षत्र में जन्म लेने वाला धनुर्विद्या में पारंगत, नम्र, गुणों का आदर करने वाला, विलासी, राजा का प्रिय और सन्मार्गगामी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार मृगशिरा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक सौम्यमन, यात्री, कुटिलदृष्टि, कामातुर एवं रोगी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक चंचल, चतुर,धीर, कपट कर्म करनेवाला, स्वार्थी, अहंकारी और दूसरों के साथ द्वेष करनेवाला होता है।

आर्द्रा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

क्षुधाधिको रुक्षशरीरकान्तिर्बन्धुप्रियः कोपयुतः कृतघ्नः।
प्रसूतिकाले च भवेत्किलार्द्रा दयार्द्रचेता न भवेन्मनुष्यः।।

आर्द्रा नक्षत्र में जिसका जन्म हो वह क्षुधातुर, रूक्ष शरीर वाला, कुटुम्बियों का प्रिय, कुपित रहने वाला, कृतघ्न तथा दया से हीन होता है।

जातक पारिजात के अनुसार आर्द्रा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक दरिद्र, घूमनेवाला, विशेषबली, क्षुद्रकर्मी और शीलवान् होता है। मानसागरी के अनुसार जातक कृतघ्न, क्रोधी, पाप में रत रहनेवाला, शठ और धन धान्य से हीन होता है।

पुनर्वसु नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

प्रभूतमित्रः कृतशास्त्रयत्नः सद्रत्नचामीकरभूषणाढ्यः।
दाता धरित्रीवसुभिः समेतः पुनर्वसुर्यस्य भवेत्प्रसूतौ।।

जिसका जन्म पुनर्वसु नक्षत्र में हो तो वह मित्रों से युक्त, शास्त्राभ्यास करने वाला, रत्न सुवर्णादि आभूषणों से परिपूर्ण, दानी एवं द्रव्य और भूमि से युक्त होता है।

जातक पारिजात के अनुसार पुनर्वसु नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक मूढ़, धन–बल से विख्यात, कवि एवं कामी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक शान्त स्वभाववाला, सुखी, अत्यन्त भोगी, सुभग, सब जनों का प्रेमी और पुत्र, मित्र आदि से युक्त होता है।

पुष्य नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

प्रसन्नगात्रः पितृमातृभक्तः स्वधर्मसक्तो विनयाभियुक्तः।

भवेन्मनुष्यः खलु पुष्यजन्मा सम्माननानाधनवाहनाढ्यः।।

यदि पुष्य नक्षत्र में जन्म हो तो मनुष्य स्वस्थ शरीर वाला, माता पिता का भक्त, अपने धर्म में आस्था रखने वाला, नम्र, लोक में मान्य और धन वाहनादि के सुख से पूर्ण होता है।

जातक पारिजात के अनुसार पुष्य नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक ब्राह्मण देवता का प्रिय, धनवान, बुद्धिमान, राजा का प्रिय एवं बन्धुयुक्त होता है । मानसागरी के अनुसार जातक देव, धर्म, धन से युक्त, पुत्र से युत, पंडित, शान्तस्वभाव, सुभग और सुखी होता है।

आश्लेषा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

वृथाटनः स्याददितिदुष्टचेष्टः कष्टप्रदश्चापि वृथा जनानाम्।
सार्पे सदर्थो हि वृथार्पितार्थः कन्दर्पसन्तप्तमना मनुष्यः।।

जातक यदि आश्लेषा नक्षत्र में पैदा हो तो वह व्यर्थ घूमने वाला, दुष्ट प्रकृति से व्यर्थ लोगों को कष्ट देने वाला तथा अपने उत्तम धन को भी कुमार्ग में ही खर्च करता है और विलासी, कामातुर होता है।

जातक पारिजात के अनुसार श्लेषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक मोटी बुद्धिवाला, कृतघ्न, कोपी एवं आचारवान् होता है । मानसागरी के अनुसार जातक सब पदार्थों को खानेवाला, यमराज के समान आचरणवाला, कृतघ्न, ठग, दुर्जन और अपने कार्यों को करनेवाला होता है।

मघा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

कठोरचित्तः पितृभक्तियुक्तस्तीब्रस्वभावस्त्वनवद्यविद्यः।
चेज्जन्मभं यस्य मघानघः सन्मतिः सदारातिविघातदक्षः।।

मघा में उत्पन्न होने वाला जातक कठोर हृदय वाला, पिता का भक्त एवं तीब्र स्वभाव वाला होता है । वह विद्यावान, पाप रहित, बुद्धिमान एवं शत्रु को जीतने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार मघा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक अहंकारी, पुण्य कर्म में सदा लिप्त रहने वाला, स्त्री के वश में रहनेवाला, मानी एवं धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक बहुत नौकर रखनेवाला, धनी, भोगी, पिता का भक्त, बड़ा उद्योगी, सेनापति या राजसेवा करनेवाला होता है।

पूर्वफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

शूरस्त्यागी साहसी भूरिभर्त्ता कामार्तोऽपि स्याच्छिरालोऽतिदक्षः।
धूर्तः क्रूरोऽत्यन्तसज्जातगर्वः पूर्वाफाल्गुन्यस्ति चेज्जन्मकाले।।

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म होने से मनुष्य शूरवीर, दानी, बहुतों का पोषक और चतुर होता है किन्तु वह धूर्त, कामातुर, कठोर हृदय और अति घमण्डी भी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक चपल, कुकर्म करने वाला, त्यागी एवं दृढ़कामी होता है । मानसागरी के अनुसार जातक विद्या, गौ, धन इन सबसे युक्त, गम्भीर, स्त्रियों को प्रिय, सुखी और पंडितों से पूजित होता है।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

दाता दयालुः सुतरां सुशीलो विशालकीर्तिनृपतेः प्रधानः।
धीरो वरोत्यन्तमृदुर्नरः स्याच्चेदुत्तराफाल्गुनिका प्रसूतौ।।

उत्तराफाल्गुनी में उत्पन्न हुआ जातक दाता, दयालु, शीलवान, कीर्तिमान और राजा का मन्त्री होता है तथा उसका स्वभाव अत्यन्त कोमल और धैर्य धारण करने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक भोगी, मानी, कृतज्ञ और पंडित होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सहनशील, वीर, कोमल वचन बोलनेवाला, धनुर्वेद के अर्थ को जाननेवाला बड़ा योद्धा और लोगों का प्रिय होता है।

हस्त नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

दाता मनस्वी सुतरां यशस्वी भूदेवदेवार्चनकृत्प्रयत्नः।
प्रसूतिकाले यदि यस्य हस्तो हस्तोद्गता तस्य समस्तसम्पत्।।

हस्त नक्षत्र में जन्म लेने वाला बालक दाता, मनस्वी, अति यशवाला, देव और ब्राह्मणों का भक्त तथा सब प्रकार की सम्पत्ति से सम्पन्न होता है।

जातक पारिजात के अनुसार हस्त नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक काम धर्म में रत, प्रज्ञावान, उपकारी, धनवान होता है। मानसागरी के अनुसार जातक मिथ्या बोलनेवाला, ढ़ीठ, मदिरापान करनेवाला, बन्धुओं से हीन, चोर और परस्त्रीगामी होता है।

चित्रा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

प्रतापसन्तापितशत्रुपक्षो नयेऽतिदक्षश्च विचित्रवासः।
प्रसूतिकाले यदि यस्य चित्रा बुद्धिर्विचित्रा खलु तस्य शास्त्रे।।

चित्रा नक्षत्र में जातक का जन्म हो तो वह अपने प्रताप के द्वारा शत्रु को दबाने वाला, नीतिशास्त्र में दक्ष, नाना प्रकार के वस्त्रों को धारण करने वाला, शास्त्रादि में अद्भुत बुद्धिवाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार चित्रा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक अत्यन्त गुप्त कार्यों में रत, शीलवान, मानी एवं स्त्री में रत होता है। मानसागरी के अनुसार जातक पुत्र और स्त्री से युक्त, सदा सन्तुष्ट, धन धान्य से युक्त, देवता और ब्राह्मणों का भक्त होता है।

स्वाती नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

कन्दर्परूपः प्रभयासमेतः कान्तापरप्रीतिरतिप्रसन्नः ।
स्वाती प्रसूतौ मनुजस्य यस्य महीपतिप्राप्तविभूतियुक्तः ।।

स्वाती में जन्म लेने वाला मनुष्य कामदेव के समान सुन्दर स्वरूप वाला, अनेक स्त्रियों से प्रीति रखने वाला, प्रसन्नचित्त और राजा से धन लाभ करने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार स्वाती नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक देव ब्राह्मण का प्रिय करने वाला, भोगी, धनी एवं मंदबुद्धि होता है। मानसागरी के अनुसार जातक अत्यन्त चतुर, धर्मात्मा, कृपण, स्त्रियों का प्रेमी, सुशील और देवताओं का भक्त होता है।

विशाखा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सदानुरक्तोऽग्निसुरक्रियायां धातुक्रियायामपि चौग्रसौम्यः।
यस्य प्रसूतौ च भवेद्विशाखा सखा न कस्यापि भवेन्मनुष्यः।।

विशाखा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक देवादि पूजन के निमित्त हवनादि क्रिया में रत रहने वाला, धातु क्रिया में कभी उग्र तो कभी सौम्य दिखने बाला तथा किसी का भी मित्र नहीं होता है।

जातक पारिजात के अनुसार विशाखा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक अहंकारी, स्त्री के वशीभूत, शत्रु को जीतने वाला एवं बहुत क्रोधी होता है । मानसागरी के अनुसार जातक लोभी, अधिक मानी, कठोर, कलहप्रिय और देवताओं में रत रहता है।

अनुराधा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सत्कान्तिकीर्तिश्च सदोत्सवः स्याज्जेता रिपूणां च कलाप्रवीणः।
स्यात्सम्भवे यस्य किलानुराधा समद्धिशाला विविधा च तस्य।।

यदि जातक का जन्म अनुराधा में हो तो कान्तिमान, यश वाला, सर्वदा उत्सव करने वाला, शत्रु का नाश करने वाला तथा अनेक कलाओं में निपुण और बहुत सम्पत्ति का भोगी होता है ।

जातक पारिजात के अनुसार अनुराधा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक सुन्दर प्रिय वचन बोलने वाला, धनी, सुख में रत, पूज्य, यशस्वी और व्यापक होता है। मानसागरी के अनुसार जातक पुरूषार्थ से परदेश में रहनेवाला, अपने भाई बन्धुओं के कार्य में सर्वदा उद्यत और सदा ढ़ीठ होता है।

ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सत्कीर्तिकान्तिर्विभुतासमेतो वित्तान्वितोऽत्यन्तलसन्प्रतापः।
श्रेष्ठः प्रतिष्ठो वदतां वरिष्ठो ज्येष्ठोद्भवः स्यात्पुरुषो विशेषात्।।

ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न होने से जातक उत्तम कान्ति, यश और प्रभुता से युत, धनी, सतप्रतापी, नेता, लोक में मान्य एवं उत्तम वक्ता होता है।

जातक पारिजात के अनुसार ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक कोप करने वाला, परस्त्रीगामी, विभु एवं धर्मात्मा होता है। मानसागरी के अनुसार जातक अधिक मित्रवाला, सर्वश्रेष्ठ, काव्यकर्ता, सहनशील, पण्डित, धर्म में तत्पर और शूद्र से पूजित होता है।

मूल नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

मूलं विरूद्धावयवं समूलं कुलं हरत्येव वदन्ति सन्तः।
चेदन्यथा सत्कुरुते विशेषात्सौभाग्यमायुश्च कलाभिवृद्धिम्।।
सुखेन युक्तो धनवाहनाढ्यो हिंस्रो बलाढ्यः स्थिरकर्मकर्ता।
प्रतापितारातिजनो मनुष्यो मूले कृती स्याज्जननं प्रपन्नः।।

मूल नक्षत्र के विरूद्ध अवयव में जन्म धारण करने वाला जातक कुल का नाशक किन्तु इसके विपरीत शुभावयव में जन्म लेने वाला जातक सौभाग्य तथा दीर्घ आयु वाला एवं कुल की वृद्धि करने वाला होता है।

मूल नक्षत्र में जिसका जन्म होता है वह सुखी,धन वाहन से युक्त, हिंसक, बलवान्, स्थिर कर्म करने वाला, शत्रुओं को जीतने वाला और विद्वान होता है।

जातक पारिजात के अनुसार मूल नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक चतुर वचन बोलने वाला कुशल धूर्त, कृतघ्न एवं धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सुख से युक्त, धन, वाहन से युक्त, हिंसा करनेवाला, बल से युत, स्थिरतापूर्वक काम करनेवाला, अपने प्रताप से बन्धुओं को दबानेवाला, पण्डित और पवित्र होता है।

अभुक्तमूल नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

ज्येष्ठान्त्यघटिकैका च मूलस्याद्यघटीद्वयम्।
अभुक्तमूलमित्युक्तं तत्रोत्पन्नशिशोर्मुखम्।।
अष्टवर्षाणि नालोक्यं तातेन शुभमिच्छता।
तद्दोषपरिहारार्थं शान्तिकं प्रोच्यतेऽधुना।।

ज्येष्ठा के अन्त की एक घटी एवं मूल नक्षत्र के प्रारम्भ की दो घटी को अभुक्तमूल कहा गया है। इस काल में उत्पन्न होने वाले शिशु का मुख आठ वर्ष पर्यन्त देखना पिता के लिये अशुभ है । दोष निवारणार्थ शान्ति विधान को भी कहते हैं ।

रत्नैः शतौषधीमूलैः सप्तमृद्भिः प्रपूरयेत्।
शतच्छिद्रं घटं तस्मान्निःसृतेन जलेन हि।।
बालकाम्बापितृस्नाने विप्रैः सम्पादिते सति ।
जपहोमप्रदाने च कृते स्यान्मंगलं ध्रुवम्।।
विरूद्धावयवे मूले विधिरेवं स्मृतो बुधैः ।
मुनीनां वचनं सत्यं मन्तव्यं क्षेममीप्सुभिः।।

यदि बालक के माता पिता नवरत्न, शतौषधी के मूल एवं सप्तमृत्तिका को सौ छिद्रों वाले पानी से भरे हुये घड़े में छोड़कर ब्राह्मणों के द्वारा छिद्रों से निकलते हुए जल से स्नान कर जप, होम, दानादि के करने से अवश्यमेव कल्याण होता है, इस प्रकार कल्याण की अभिलाषा चाहने वालों को मुनि का वचन मानना चाहिए।

मूलस्य पादत्रितये क्रमेण पितुर्जनन्याश्च ध्नस्य रिष्टम् ।
चतुर्थपादः शुभदो नितान्तं सार्पे विलोमं परिकल्पनीयम् ।।

यदि जातक मूलके प्रथम तीन चरणों में जन्म ले तो क्रम से पिता, माता और धन को हानि होती है, चतुर्थ चरण शुभ कहा गया है किन्तु आश्लेषा नक्षत्र में ठीक इसके विपरीत फल होता है अर्थात् प्रथम चरण शुभ, द्वितीय में धन का, तृतीय में माता का तथा चतुर्थ में पिता का नाश होता है ।

कृष्णे तृतीया दशमी बलक्षे भूतो महीजार्किबुधैः समेतः ।
चेज्जन्मकाले किल यस्य मूलमुन्मूलनं तत्कुरुते कुलस्य ।।
दिवा सायं निशि प्रातस्तातस्य मातुलस्य च ।
पशूनां मित्रवर्गस्य क्रमान्मूलमनिष्टदम् ।।
मूर्ध्नि पंच मुखे पंच स्कन्धयोर्घटिकाष्टकम् ।
गजाश्च भुजयोर्युग्मं हस्तयोर्हृदयेऽष्टकम् ।।
युग्मं नाभौ दिशो गुह्ये षट् च पादयोः ।
विन्यस्य पुरुषाकारे मूलस्य फलमादिशेत् ।।
छत्रलाभः शिरोदेशे वदने पितृघातकम् ।
स्कन्धयोर्भूर्वहत्वं च बाहुयुग्मे त्वकर्मकृत् ।।
हत्याकारः करद्वन्द्वे राज्याप्तिर्हृदये भवेत् ।
अल्पायुर्नाभिदेशे च गुह्ये च सुखमद्भुतम् ।।
जंघायां भ्रमणप्रीतिः पादयोर्जीविताल्पता ।
घटीफलं किल प्रोक्तं मूलस्य मुनिपुंगवैः ।।

बालक के जन्म समय कृष्णपक्ष की तृतीया, दशमी एवं शुक्ल की चतुर्दशी तथा मंगल, शनि, बुध से युक्त मूलनक्षत्र हो तो कुलनाशक होता है। यदि दिन में जन्म हो तो पिता के कुल , सन्ध्या में माता के कुल, रात्रि में पशुओं का और प्रातः काल में मित्रवर्गों का अनिष्ट होता है। पुरुषाकार मूलनक्षत्र के आदि से 5 घटी मस्तक में, 5 घटी मुख में, 8 घटी दोनों कन्धों में, दोनों बाहु में 8 घटी, दोनों हथेली में दो घटी, हृदय में 8 घटी, नाभी में 2 घटी, गुदामार्ग में 10 घटी, दोनों घुटनों में 6 घटी और दोनों पैरों में 6 घटी का विन्यास किया गया है।

मस्तक की घटी में जन्म हो तो छत्र लाभ, मुख की घटी में पिता का नाश, कन्धे की घटी में भारवाही, भुज की घटी में कुकर्म करने वाला, हथेली की घटी में हींसा करने वाला, हृदय की घटी में राज्य लाभ, नाभि की घटी में अल्पायु, गुदामार्ग की घटी में अद्भुत मुख वाला,

जाँघ की घटी में भ्रमण करने वाला और पैर की घटी में जन्म हो तो जातक अल्पायु होता है। इस प्रकार मूल के घटी विभाग में मुनियों ने जन्म फल को कहा है।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

भूयो भूयस्तोयपानानुरक्तो भोक्ता चंचद्वाग्विलासः सुशीलः।
नूनं सम्पज्जायते तस्य गाढ़ा पूर्वाषाढ़ा जन्मभं यस्य पुंसः।।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में जिसका जन्म होता है वह बार बार पानी पीने की इच्छा करने वाला, भोगी, मृदु और प्रिय बोलने वाला, सुशील तथा अधिक सम्पत्ति वाला होता है।
जातक पारिजात के अनुसार पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक मानी, सुखी और शांत बुद्धिवाला होता है । मानसागरी के अनुसार जातक देखने मात्र से उपकार करनेवाला, भाग्यवान्, सब जनों का प्रिय और सम्पूर्ण विषयों का पंडित होता है।

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

दाता दयावान् विजयी विनीतः सत्कर्मकर्ता विभुतासमेतः।
कान्तासुतावाप्तसुखो नितान्तं वैश्वे सुवेषः पुरुषोऽभिमानी।।

उत्तराषाढ़ा में जन्म लेने वाला दानी, दयालु, विजयी, विनययुक्त, सत्कार्यकर्ता, प्रभुत्ववान् स्त्री और सन्तानों से अतिसुखी होता है।
जातक पारिजात के अनुसार उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक मान्य, शान्तगुण से युक्त, सुखी, धनवान और पंडित होता है । मानसागरी के अनुसार जातक बहुत मित्रवाला, बड़ा देहवाला, विनयी, सुखी, शूर और विजयी होता है ।

अभिजित् नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

अतिसुललितकान्तिः सम्मतः सज्जनानां ननु भवति विनीतश्चारुकीर्तिः सुरूपः।
द्विजवरसुरभक्तो व्यक्तवाङ्मानवः स्यादभिजिति यदि सूतिर्भूपतिः स स्ववंशे ।।

अभिजित् में जन्म लेने वाला सुन्दर, सज्जनों का प्रिय, विजयी, यशस्वी, देवता और ब्राह्मणों का भक्त, स्पष्टवक्ता और अपने कुल में श्रेष्ठ होता है। अभिजित् नक्षत्र में जिसका जन्म होता है वह अत्यन्त सुन्दर कान्तिवाला, सज्जनों का सम्मत, विनीत, सुन्दर कीर्तिवाला, सुन्दर रूपवाला, ब्राह्मण और देवता का भक्त, स्पष्ट वक्ता और अपने खानदान में राजा बनकर रहनेवाला होता है।

श्रवण नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

शास्त्रानुरक्तो बहुपुत्रमित्रः सत्पात्रभक्तिर्विजितारिपक्षः।
प्राणी पुराणश्रवणप्रवीणश्चेज्जन्मकाले श्रवणं हि यस्य।।

श्रवण नक्षत्र में जन्म होने से जातक शास्त्र में संलग्न, अधिक पुत्र एवं मित्रों वाला, सत्पात्रों का भक्त तथा शत्रु का नाश करने वाला एवं पुराण श्रवण करने में तेज होता है।
जातक पारिजात के अनुसार श्रवण नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक ब्राह्मण एवं देवताओं की भक्ति में रत, राजा, धनी और धर्मवान होता है। मानसागरी के अनुसार जातक किसी के उपकार को जाननेवाला, सुन्दर, दानी, सभी गुणों से यक्त, लक्ष्मीवान् और अधिक सन्तानवाला होता है।

धनिष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

आचारदातादरचारुशीलो धनाधिशाली बलवान् कृपालुः।
यस्य प्रसूतौ च भवेद्धनिष्ठा महाप्रतिष्ठा सहितो नरः स्यात्।।

यदि जातक का धनिष्ठा नक्षत्र में जन्म हो तो श्रेष्ठ आचरण वाला, व्यवहार कुशल, धनाढ़्य,

बलवान्, दयालु और अति प्रतिष्ठा वाला होता है।
जातक पारिजात के अनुसार धनिष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक आशावान्, धनवान्, मोटे ऊरू–कण्ठ वाला और सुखी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक गाने का प्रिय, भाईयों से पूज्य, सोना तथा रत्नों से भूषित और सैकड़ों मनुष्यों का मालिक बनकर रहता है।

शतभिषा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

> **शीतभीरूरतिसाहसी सदा निष्ठुरो हि चतुरो नरो भवेत्।**
> **वैरिणामतिशयेन दारूणो वारूणोडुनि च यस्य संभवः।।**

शतभिषा में जन्म हो तो मनुष्य शीत से डरने वाला, अत्यन्त साहसी, कठोर ह्दयी, चतुर तथा शत्रुओं का नाश करने में समर्थ होता है ।
जातक पारिजात के अनुसार शतभिषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक काल को जानने वाला अर्थात् ज्योतिषशास्त्र को जानने वाला, शान्त, अल्पभोजी और साहसी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक कृपण, धन से पूर्ण, पराई स्त्री
की सेवा करनेवाला और परदेश में कामी होता है।

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

> **जितेन्द्रियः सर्वकलासु दक्षो जितारिपक्षः खलु यस्य नित्यम्।**
> **भवेन्मनीषा सुतरामपूर्वा पूर्वादिका भाद्रपदा प्रसूतौ।।**

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में उत्पन्न जातक जितेन्द्रिय, सब कलाओं में निपुण, शत्रु का नाशक तथा बुद्धिमान् होता है।
जातक पारिजात के अनुसार पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक तेज वचन बोलने वाला, धूर्त, भयार्त और कोमल होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सभाओं में बोलनेवाला, सुखी, सन्तान से युक्त, बहुत सोनेवाला और निरर्थक होता है।

उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

> **कुलस्य मध्येऽधिकभूषणं च नात्युच्चदेहः शुभकर्मकर्ता।**
> **यस्योत्तराभाद्रपदा च जन्यां धन्यो भवेन्मानधनो वदान्यः।।**

उत्तराभाद्र में जन्म होने से जातक अपने कुल में श्रेष्ठ, मध्यम देहवाला, सत्कर्म करने वाला, धनाढ़्य, अभिमानी और कीर्तिशाली होता है।
जातक पारिजात के अनुसार उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक कोमलगुणी, त्यागी, धनी और पंडित होता है। मानसागरी के अनुसार जातक गौरवर्ण का, सत्त्व गुण से युक्त, धर्म को जानने वाला, शत्रुओं को नाश करनेवाला, देवता के तुल्य और साहसिक होता है।

रेवती नक्षत्र में जन्म लेने वाले जातक का फल –

> **चारुशीलविभवो जितेन्द्रियः सद्धनानुभवनैकमानसः।**
> **मानवो ननु भवेन्महामती रेवती भवति यस्य जन्मभम्।।**

रेवती नक्षत्र में जन्म लेने से मनुष्य अच्छे स्वभाव का, धनी, जितेन्द्रिय, शुद्ध नीयत से द्रव्य लाभ करनेवाला तथा तीक्ष्ण बुद्धिवाला होता है ।
जातक पारिजात के अनुसार रेवती नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक ऊरू में चिह्नवान्, कामातुर, मन्त्री, पुत्र–स्त्री–मित्र से युक्त, स्थिर और श्रीरत होता है । मानसागरी के

अनुसार जातक सभी अंगों से पूर्ण, पवित्र, चतुर, साधु, वीर, पण्डित और लोक में धन–धान्यों से सुशोभित रहता है।

1.6 योग फल विचार –

विष्कम्भ योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

शश्वत्कान्तापुत्रमित्रादिसौख्यं स्वातन्त्र्यं स्यात्सर्वकार्यप्रसंगे।
चंचद्देहोत्पादने मानसं चेद्विष्कंभे वै सम्भवो यस्य जन्तोः।।

विष्कम्भ योग में उत्पन्न होने से जातक सर्वथा स्त्री–पुत्र–मित्रादि से सुखी, सब कार्य को करने में स्वतंत्र रहने वाला एवं शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि में विशेष तत्पर रहने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार विष्कम्भ योग में जन्म लेनेवाला जातक शत्रुओं को जीतने वाला, धनवान् और पशुमान् होता है। मानसागरी के अनुसार जातक रूपवान, भग्यवान्, अनेक तरह के अलंकारों से पूर्ण, बुद्धिमान् और पंडित होता है।

प्रीति योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

वक्ता चंचद्रूपसंपत्तियुक्तो दातात्यन्तं स्यात्प्रसन्नाननश्च।
जातानन्दः सद्विनोदप्रसंगाद्धर्मप्रीतिः प्रीतिजन्मा मनुष्यः।।

प्रीति योग में जन्म लेनेवाला जातक उत्तम वक्ता, स्वरूपवान, सम्पत्तियुक्त अत्यन्त दाता, प्रसन्न मुखवाला तथा दूसरों के आनन्द से आनन्दित होने वाला और धर्मात्मा होता है।

जातक पारिजात के अनुसार प्रीति योग में जन्म लेनेवाला जातक परस्त्री के वश में रहता है। मानसागरी के अनुसार जातक स्त्रियों का प्यारा, तत्त्व को जाननेवाला, उत्साही और स्वार्थ के लिये नित्य उद्यम करने वाला होता है।

आयुष्मान योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

अर्थाप्त्यर्थं साहसैरन्वितश्च नानास्थानोद्यनियानप्रवृत्तिः।
यस्यायुष्मान् संभवे संभवेद्वै स्यादायुष्मान्मानवो मानयुक्तः।।

जिस बालक का जन्म आयुष्मान योग में हो वह द्रव्योपार्जन के लिये प्रयत्नशील, बगीचों में घूमने का शौकीन, बहुत वर्ष तक जीने वाला और मानी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार आयुष्मान योग में जन्म लेनेवाला जातक दीर्घायु एवं रोगरहित होता है। मानसागरी के अनुसार जातक मानी, धनवान्, काव्यकर्ता, बहुत वर्षों तक जीनेवाला, बलिष्ठ या सत्व गुण से युक्त और युद्ध में विजयी होता है।

सौभाग्य योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

ज्ञानी धनी सत्यपरायणः स्यादाचारशीलो बलवान् विवेकी।
सुश्लाघ्य सौभाग्यविराजमानः सौभाग्यजन्मा हि महाभिमानी।।

सौभाग्य योग में जन्म लेने वाला जातक ज्ञानवान्, धनवान्, सत्यपरायण, अच्छे आचरण वाला, बली, विवेकयुक्त, रूपवान्, सौभाग्यवान् और घमण्डी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार सौभाग्य योग में जन्म लेनेवाला जातक सुखी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक राजा का मंत्री, सब कामों में चतुर और स्त्रियों का परम स्नेही होता है।

शोभन योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सत्वरोतिचतुरः सदुत्तरश्चारुगौरवयुतश्च सन्मतिः।
नित्यशोभनविधानतत्परः शोभनो भवति शोभनोद्भवः।।

शोभन योग में जन्म लेनेवाला जातक जबाब कुशल, सुन्दर, गौरवी, उत्तम बुद्धिवाला एवं सर्वदा सत्कार्य में तत्पर रहने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार शोभन योग में जन्म लेनेवाला जातक भोगी एवं हत्या करने में रूचि रखने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार जातक अतिशय रूपवान्, अनेक पुत्र स्त्री से युक्त, सब कामों में तत्पर रहनेवाला और समरभूमि में आने के लिये सर्वदा तैयार रहता है।

अतिगण्ड योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सदा मदो यो गलरुक् सरोषो विशालवक्त्रांघ्रिरतीव धूर्तः।
कलिप्रियो दीर्घहनुर्मनुष्यः पाखण्डिकः स्यादतिगण्डजातः।।

अतिगण्ड योग में जिसका जन्म हो वह अहंकारी, गले की पीडा से पीडित, कोधी,लम्बे कद का, धूर्त, कलह करने वाला, बड़ी ठोड़ी वाला और पाखण्डी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार अतिगण्ड योग में जन्म लेनेवाला जातक धनवान होता है। मानसागरी के अनुसार जातक अपनी माता का नाश करने वाला होता है।

सुकर्मा योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

हृष्टः सदा सर्वकलाप्रवीणः ससाहसोत्साहसमन्वितश्च।
परोपकारी सुतरां सुकर्मा भवेत्सुकर्मा परिसूतिकाले।।

यदि बालक सुकर्मा योग में उत्पन्न हो तो सर्वदा प्रसन्न, कलाओं में निपुण, साहसी और उत्साही होता है। वह दूसरों का उपकार करने वाला और सत्कर्मगामी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार सुकर्मा योग में जन्म लेनेवाला जातक धर्म एवं आचार मे रत होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सुन्दर काम करनेवाला, सब लोगों से स्नेह रखनेवाला, सुन्दर स्वभाववाला, स्नेही, भोगवान् और गुणवान् होता है।

धृति योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

प्राज्ञो वदान्यः सततं प्रहृष्टः श्रेष्ठः सभायां चपलः सशीलः।
नयेन युक्तो नियमेन धृत्या धृत्याह्वये यस्य नरस्य जन्म।।

धृतियोग में जन्म लेने वाला ज्ञानी, दानी, आनन्द से रहने वाला, सभा में श्रेष्ठ, चंचल, सुशील और नीति नियमानुसार चलने वाला, धैर्यवान् होता है।

जातक पारिजात के अनुसार धृति योग में जन्म लेनेवाला जातक परस्त्री के धन से धनवान् होता है। मानसागरी के अनुसार जातक धैर्य रखनेवाला, कीर्तिवान्, धन से युक्त, भाग्यशाली, सुख से सम्पन्न, विद्वान और गुणी होता है।

शूल योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

नरो दरिद्रामयसंयुतश्च सत्कर्मविद्याविनयैर्विरक्तः।
यस्य प्रसूतिर्यदि शूलयोगे शूलव्यथा तस्य भवेत्कदाचित्।।

शूलयोग में जातक का जन्म हो तो दरिद्र, रोगपीडित, कुकर्मी, मूर्ख, विनय रहित और कदाचित शूल रोग से कष्ट पाने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार शूल योग में जन्म लेनेवाला जातक कोप के वश में रहने वाला एवं कलह करने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार जातक कष्ट से युक्त, धर्मात्मा, सभी शास्त्रों में निष्णात, विशिष्ट ज्ञानी, तथा यज्ञ करने वाला होता है।

गण्ड योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

धूर्तः सुहृत्कार्यपरांमुखश्च क्लेशी विशेषात्परुषस्वभावः।
चेत्संभवे यस्य भवेच्च गण्डः प्रचण्डकोपः पुरुषः प्रदिष्टः।।

गण्डयोग में जन्मलेने वाला जातक धूर्त, मित्र के कार्य में सहयोग न देने वाला, कलह करने वाला, स्वभाव का कठोर और अत्यधिक क्रोधी होता है ।

जातक पारिजात के अनुसार गण्ड योग में जन्म लेनेवाला जातक दुराचारी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक गण्डरोग से यक्त, अनेक कष्ट भोगने वाला, बड़ा शिरवाला, छोटे शरीरवाला, बलवान्, भोग करनेवाला, प्रतिज्ञा का पालन करनेवाला होता है।

वृद्धि योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सुसंग्रहप्रीतिरतीव दक्षो धनान्वितः स्यातक्रियावियाभ्याम् ।
प्रसूतिकाले यदि यस्य वृद्धिर्भाग्याभिवृद्धिर्नियमेन तस्य ।।

वृद्धि योग में जन्म हो तो जातक संग्रह में रूचि रखने वाला, चतुर, व्यापार से धन लाभ करने वाला और भग्यवान होता है।

जातक पारिजात के अनुसार वृद्धि योग में जन्म लेनेवाला जातक पण्डित के समान बोलने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार जातक रूपवान्, अनेक स्त्री पुत्र से युक्त, धनी, भोग और बलवान् होता है।

ध्रुव योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

निश्चला हि कमला सदालये संभवेच्च वदने सरस्वती।
चारूकीर्तिरपि चेद्ध्रुवं तदा चेद्ध्रुवो भवति यस्य संभवे।।

ध्रुवयोग में जातक का जन्म हो तो घर में सदा लक्ष्मी का निवास और मुख में सरस्वती विराजमान रहती है जिसके कारण निश्चल कीर्ति सर्वत्र व्याप्त होती है।

जातक पारिजात के अनुसार ध्रुव योग में जन्म लेनेवाला जातक विशेष धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक दीर्घायु, सभी का प्रिय, स्थिर काम करने वाला, स्थिर मतिवाला होता है।

व्याघात योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

क्रूरोऽल्पदृष्टिः कृपया विहीनो महाहनुः स्यादपवादवादी।
असत्यताप्रीतिरतीव मर्त्यो व्याघातजातः खलु घातकर्ता।।

व्याघातयोग में जन्म हो तो जातक क्रूर,मन्द दृष्टि, दयारहित, बड़ी ठोडीवाला, एक दूसरे की निन्दा करने वाला, मिथ्याभाषी तथा हिंसक प्रकृति का होता है।

जातक पारिजात के अनुसार व्याघात योग में जन्म लेनेवाला जातक घातक होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सब विषयों को जानने वाला, सबों से पूजित, कार्य मात्र को करने वाला एवं संसार में प्रख्यात होता है।

हर्षण योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सुस्निग्धगात्रः कृतशास्त्रयत्नः सुरक्तभूषावसनानुरक्तः।
प्रसूतिकाले यदि हर्षणश्चेत्स मानवो वै रिपुकर्षणः स्यात्।।

हर्षण्योग में जन्म लेने वाला जातक कोमल शरीरवाला, शास्त्राभ्यासी, रक्तवस्त्र एवं अलंकरणों से प्रेम करने वाला और शत्रुओं का नाशक होता है।

जातक पारिजात के अनुसार हर्षण योग में जन्म लेनेवाला जातक ज्ञानी एवं बड़े यज्ञों को करने वाला होता है। मानसागरी के अनुसार जातक बड़ा भाग्यवान्, राजवल्लभ, निडर, सर्वदा धनों से युक्त, विद्या और शास्त्र में निपुण होता है।

वज्र योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सुधीः सुबन्धुर्गुणवान्महौजाः सत्यान्वितो रत्नपरीक्षकः स्यात्।
चेत्संभवे यस्य च वज्रयोगः सवज्रयुक्तोत्तमभूषणाढ्यः।।

वज्र योग में जातक का जन्म हो तो बुद्धिमान, उत्तम बध्यु से युक्त, गुणी, महाबली, सत्य बोलने वाला, रत्नपरीक्षक और हीरा तथा मूल्यवान आभूषणों को धारण क्रने वाला होता है। जातक पारिजात के अनुसार वज्र योग में जन्म लेनेवाला जातक धनी एवं कामी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक वज्र के समान कठोर मुष्टिवाला, सब विद्या और अस्त्रों में निपुण, धन धान्य से युक्त, तत्व को जाननेवाला और पराक्रमी होता है।

सिद्धि योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

उदारचेताश्चतुरः सुशीलः शास्त्रादरः सारविराजमानः।
प्रसूतिकाले यदि यस्य सिद्धिर्भाग्याभिवृद्धिः सततं हि तस्य।।

यदि जातक का जन्म सिद्धियोग में हो तो उदार हृदयवाला, चतुर, सुन्दर स्वभाव का, शास्त्र को मानने वाला, तत्वज्ञानी और सर्वदा भाग्य की वृद्धि होती है।

जातक पारिजात के अनुसार सिद्धि योग में जन्म लेनेवाला जातक सर्वजन का आश्रित एवं प्रभु के समान सहायक होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सर्वसिद्धियों से युक्त, दानी भोगी, सुख सम्पन्न, कान्तिमान, शोक करनेवाला और रोगों से युक्त होता है।

व्यतीपात योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

उदारबुद्धिः पितृमातृवाक्ये गदार्तमूर्तिश्च कठोरचित्तः।
परस्य कार्ये व्यतिपाततुल्यो नरः खलु स्याद्वयतिपातजन्मा।।

व्यतिपात योग में जन्म लेने वाला अपने माता पिता के वचनों को मानने वाला, गुप्तांग रोगी, कठोर हृदय और दूसरों के कार्य में बाधा डालने वाला होता है ।

जातक पारिजात के अनुसार व्यतीपात योग में जन्म लेनेवाला जातक मायावी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक कष्ट से जीनेवाला, भाग्य से जी जाये तो जातक वाद में श्रेष्ठ होता है।

वरीयान योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

उत्पन्नभोक्ता विनयोपपन्नो द्रव्याल्पता सद्वययतासमेतः।
सुकर्मसौजन्यतया वरीयान् भवेद्वरीयान् प्रभवे हि यस्य।।

वरीयान योग में जन्म हो तो जातक अन्न धनादि को भोगने वाला, नम्रतायुक्त, द्रव्य की अल्पता रहने पर भी शुभमार्ग में धन का व्यय करने वाला, अच्छे कर्म में लिप्त रहने वाला और श्रेष्ठ मन वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार वरीयान योग में जन्म लेनेवाला जातक दुष्कामी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक बलिष्ठ, शिल्पशास्त्र तथा कलाओं में निपुण और गान तथा नृत्य में कुशल होता है।

परिघ योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

असत्यसाक्षी प्रतिभूर्वहूनां व्यक्तात्मकर्मा क्षमया विहीनः।
द्रक्षोऽल्पभक्षी विजितारिपक्षस्त्वघर्षितौ वै परिघोद्भवः स्यात्।।

जिस जातक का जन्म परिघयोग में हो वह झूठी गवाही और अनेकों की जमानत लेनेवाला, अपने द्वारा किये गये कर्म को स्पष्ट करने वाला, क्षमारहित, चतुर, कम खानेवाला, शत्रु को पराजित करनेवाला और कठीन कार्य को सरलता से करने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार परिघ योग में जन्म लेनेवाला जातक विद्वेषी तथा धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक अपने कुल की उन्नति करनेवाला, शास्त्रों को जाननेवाला, सुन्दर काव्य रचनेवाला, वक्ता, दानी, भोगी और प्रिय वाणी बोलने वाला होता है।

शिव योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

सन्मन्त्रशास्त्राभिरतो नितान्तं जितेन्द्रियश्चारुशरीरयष्टिः।
योगः शिवो जन्मनि यस्य जन्तोः सदा शिवं तस्य शिवप्रसादात्।।

शिव योग में जन्म लेनेवाला जातक मन्त्रशास्त्र का ज्ञाता, इन्द्रियों को वश में रखनेवाला,सुन्दर देहवाला और भगवान शिव की कृपा से सर्वदा सुखी रहता है।
जातक पारिजात के अनुसार शिव योग में जन्म लेनेवाला जातक शास्त्रज्ञ, धनी, शान्त और राजा का प्रिय होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सब कल्याणों का पात्र, संसार में महादेव के समान और सर्वदा बुद्धि से युक्त होता है।

सिद्ध योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

जितेन्द्रियः सत्यपरोऽतिगौरः सर्वेषु कार्येष्वतिकोविदश्च।
भवेत्प्रसूतौ यदि सिद्धियोगः सिद्ध्यन्ति कार्याणि कृतानि तस्य।।

सिद्धि योग में जातक का जन्म हो तो जितेन्द्रिय, सत्यवक्ता, अतिगौरवर्ण, सब कार्य में कुशल और अनेकों कार्य को एक समय में सफल करने में सक्षम होता है।
जातक पारिजात के अनुसार सिद्धि योग में जन्म लेनेवाला जातक धर्म में रूचि रखने वाला एवं यज्ञ करनेवाला होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सिद्धि को देनेवाला, मन्त्र सिद्धि करनेवाला, सुन्दरी स्त्री से युक्त और सब प्रकार की सम्पति से संपन्न होता है।

साध्य योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

नूनं विनीतश्चतुरः सुहास्यः स्वकार्यदक्षो जितशत्रुपक्षः।
सन्मन्त्रविद्याविधिनैव सर्वं संसाधयेत्साध्यभवो हि दक्षः।।

साध्ययोग में जातक का जन्म हो तो जातक नम्र स्वभाववाला, चतुर, हँसमुख स्वभाववाला, कार्यकुशल,शत्रुओं को हराने वाला तथा मन्त्र विद्या के प्रभाव से सिद्धि प्राप्त करता है।
जातक पारिजात के अनुसार साध्य योग में जन्म लेनेवाला जातक शुभ आचरणवाला होता है। मानसागरी के अनुसार जातक मानसिक सिद्धि पानेवाला, अधिक यश तथा सुख पानेवाला, विलम्व से कार्य करनेवाला, प्रख्यात और सबों का अनुकुल रहनेवाला होता है।

शुभ योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

शुभप्रचारः शुभवाग्विलासः शुभस्य कर्ता शुभलक्षणश्च।
शुभोपदेशं कुरुते नराणां यस्य प्रसूतौ शुभनामयोगः।।

जिस जातक का जन्म शुभयोग में हो वह सत्कार्य करनेवाला, सुन्दर वचन बोलने वाला, शुभ लक्षणों से युक्त एवं लोगों को सदुपदेश देने वाला होता है ।
जातक पारिजात के अनुसार शुभ योग में जन्म लेनेवाला जातक चंचल अंगवाला, धनवान्, कामातुर एवं कफ प्रकृति का होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सैकड़ों शुभ कार्यों से युक्त, धनवान्, विज्ञान तथा ज्ञान से युक्त, दानी और ब्राह्मणों का भक्त होता है।

शुक्ल योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

जितेन्द्रियः सत्यवचा महौजा वाग्वादसंग्रामजयाभ्युपेतः।
सन्मानशुक्लाम्बरधारणेच्छुः शुक्लोद्भवो वै भयसंयुतः स्यात्।।

शुक्लयोग में जन्मलेने वाला जातक जितेन्द्रिय, सत्यभाषी, अत्यन्त बलवान्, वाद विवाद और युद्ध में जयलाभ करने वाला, आदर पाने की इच्छा रखने वाला तथा श्वेत वस्त्र से प्रीति रखने वाला होता है।
जातक पारिजात के अनुसार शुक्ल योग में जन्म लेनेवाला जातक धर्म में तत्पर, चतुर वचन बोलने वाला, कोधी, चंचल एवं पंडित होता है। मानसागरी के अनुसार जातक सभी कलाओं से युक्त, सभी अर्थ को जाननेवाला, कवि, पराक्रमी, वीर, धनवान् और सर्वजनों का प्रिय होता है।

ब्रह्म योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

विद्याभ्यासप्रीतिरत्यन्तचेता नित्यं सत्याचारजातादरश्च।
शान्तो दान्तो जायते चारुकर्मा ब्रह्मायोगः संभवे यस्य प्रंसः।।

ब्रह्मयोग में उत्पन्न होनेवाला जातक विद्याभ्यास में रत रहनेवाला, सत्य आचरण रखने से आदरणीय, शान्त स्वभाव, दाता तथा सर्वदा सुकर्म करने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार ब्रह्म योग में जन्म लेनेवाला जातक मानी, छिपा हुआ विशेष धनवाला, त्यागी और विवेकियों में श्रेष्ठ होता है। मानसागरी के अनुसार जातक बड़ा विद्वान्, वेदादि शास्त्रों में प्रवीण, सर्वदा ब्रह्मज्ञान में आसक्त और सब कामों में निपुण होता है।

ऐन्द्र योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

प्राज्ञो बलीयान् विपुलामलश्रीयुक्तः कफात्मा हि भवेन्महौजाः।
निजान्वये वै मनुजो नरेन्द्रस्त्वैन्द्रोद्भवश्चारुतरप्रभावः।।

ऐन्द्रयोग में जन्म लेनेवाला जातक बलवान्, तेजस्वी, कफरोग से पीडित और अपने कुल में राजा के समान प्रभाव वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार ऐन्द्र योग में जन्म लेनेवाला जातक सर्वजन का उपकार करने वाला, सर्वज्ञ, बुद्धिमान् और धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक राजकुल में जन्म ले तो निश्चय ही राजा होता है परन्तु अल्प आयु वाला, सुखी, भोगी और गुणी होता है।

वैधृति योग में जन्म लेने वाले जातक का फल –

चंचलश्च कुटिलः खलमैत्रः शास्त्रभक्तिरहितो हतचित्तः।
साध्वसे मनसि तस्य नो धृतिर्वैधृतिर्भवति यस्य जन्मनि।।

जिस जातक का जन्म वैधृतियोग में होता है वह चंचल और चुगलखोर, दुष्टों से सम्पर्क रखने वाला, शास्त्र में अविश्वास रखने वाला, मलिन हृदयवाला और भय की बात से अधीर होने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार वैधृति योग में जन्म लेनेवाला जातक माया करने वाला, निन्दा करने वाला, बलवान्, त्यागी और धनी होता है। मानसागरी के अनुसार जातक उत्साह रहित, क्षुधा से पीडित और मनुष्यों से मैत्री करने पर भी प्रेम प्राप्त नहीं होता है।

1.7 करण फल विचार–

बव करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

कामी दयालुर्बलवान् सुशीलो विचक्षणः शीघ्रगतिः सभाग्यः।
बवाभिधाने जननं हि यस्य नानाविधा तस्य भवेत्सुसंपत्।।

बवकरण में जन्म लेने वाला जातक कामी, दयालु, बली, सुन्दर स्वभाव का, पंडित,जल्दी चलने वाला,भाग्यशाली तथा नाना प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त होता है।

जातक पारिजात के अनुसार बवकरण में जन्म लेनेवाला जातक बालकवत् कार्य करनेवाला, और प्रतापी होता है।

बालव करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

शूरतातिबिलसद्बलवत्तासंयुतो भवति चारुविलासः।
काव्यकृद्वितरणप्रणयश्चेद्बालवेऽमलमतिश्च कलाज्ञः।।

बालवकरण में जन्म लेनेवाला जातक बहादुर, विलासी, काव्यकर्ता, दाता, बुद्धिमान और कलाओं का ज्ञाता होता है।

जातक पारिजात के अनुसार बालवकरण में जन्म लेनेवाला जातक विनय चरित्र वाला और राजपूज्य होता है।

कौलव करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

कामी प्रगल्भोभिमतो बहूनां नूनं स्वतंत्रो बहुमित्रसौख्यः।
बलान्वितः कोमलवाग्विलासः श्रेष्ठः कुले कौलवजातजन्मा।।

कौलवकरण में जन्म लेनेवाला जातक कामी, निडर, बहुतों का प्रिय, स्वच्छन्द, अधिक मित्रवाला, बली, मधुर वाणी बोलने वाला और उत्तम कुल में जन्म लिया होता है।

जातक पारिजात के अनुसार कौलवकरण में जन्म लेनेवाला जातक हाथी घोड़ों से युक्त, सुन्दर और चरित्रवान् होता है।

तैतिल करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

चारुकोमलकलेवरशाली केलिलालसमनाश्च कलाज्ञः।
वाग्विलासकुशलोऽतिसुशीलस्तैतिले विमलधीश्चलदृक् स्यात्।।

तैतिलकरण में जन्म लेनेवाला जातक सुन्दर तथा सुकुमार, क्रीड़ा विलास करने में चतुर, कलाओं में निपुण, कुशल वक्ता, अत्यन्त सुशील, निर्मल बुद्धि और चंचल दृष्टि वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार तैतिलकरण में जन्म लेनेवाला जातक कोमल एवं चतुरता पूर्वक वचन बोलने वाला और पुण्यात्मा होता है।

गर करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

परोपकारे विहितादरश्च विचारसारश्चतुरो जितारिः।
शूरोऽतिधीरः सुतरामुदारो गरे नरश्चारुकलेवरश्च।।

गर करण में जन्म लेने वाला जातक परोपकारी, आदरणीय, विवेकी, चतुर, शत्रु को पराजित करने वाला, शूर, अतिधीर, उदार ह्रदय और सुन्दर देहवाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार गरकरण में जन्म लेनेवाला जातक शत्रुरहित एवं प्रतापी होता है।

बणिज करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

कलाप्रवीणः सुतरां सहासः प्राज्ञो हि सन्मानसमन्वितश्च।
प्रसूतिकाले बणिजः हि यस्य बाणिज्यतोर्थागमनं हि तस्य।।

बणिज करण में जन्म लेने वाला जातक कलाओं में निपुण, हमेशा हसने वाला, पंडित, सम्मानयुक्त तथा व्यापार से धन लाभ करने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार बणिजकरण में जन्म लेनेवाला जातक वक्ता,विनयी और चंचल होता है।

विष्टि करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

चारूवक्त्रचपलो बलशाली हेलयासिदरितारिकुलश्च।
जायते खलमतिर्बहुनिद्रा यस्य जन्मसमये खलु भद्रा।।

विष्टि करण में जन्म लेने वाला जातक स्वरूपवान्, चंचल, बलशाली, शत्रु को जीतने वाला किन्तु दुर्बुद्धि और अधिक सोने वाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार विष्टिकरण में जन्म लेनेवाला जातक सबका विरोधी, पापकर्मा, अपवादी, सब जनों से पुजानेवाला और स्वतंत्र होता है।

शकुनि करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

अतिसुललितबुद्धिर्मन्त्रविद्याविधाने गुणगणसमवेतः सर्वदा सावधानः।

ननुजनकृतसख्यः सर्वसौभाग्ययुक्तो भवति शकुनिजन्मा शाकुनज्ञानशीलः।।

शकुनिकरण में जन्म लेनेवाला जातक मन्त्रशास्त्र में निपुण, गुणवान्, हमेशा सावधान रहनेवाला, अधिक मित्रवाला, भाग्यवान और शकुन जाननेवाला होता है।

जातक पारिजात के अनुसार शकुनिकरण में जन्म लेनेवाला जातक कालज्ञ, स्थिर सुखवाला और अनिष्ट का भण्डार होता है।

चतुष्पद करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

नरः सदाचारपरांमुखः स्याद् संग्रहः क्षीणशरीरयष्टिः।
चतुष्पदे यस्य भवेत्प्रसूतिश्चतुष्पदात्सत्त्वयुतो मनुष्यः।।

चतुष्पदकरण में जन्म लेनेवाला जातक सदाचार से रहित, संग्रह करने में असमर्थ, दुर्बल देहवाला और चौपायों के सुख से सुखी होता है।

जातक पारिजात के अनुसार चतुष्पदकरण में जन्म लेनेवाला जातक सर्वज्ञ, अच्छी बुद्धि, यश और धनवाला होता है।

नाग करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

दुःशीलवक्रचलनो बलवान् खलात्मा कोपानलाहतमतिः कलिकृत्कुलोत्थैः।
द्रोहात्कुलक्षयभवादतिदीर्घकाले जातो हि नागकरणे रणरंगधीरः।।

नागकरण में जातक का जन्म हो तो वह बुरे स्वभाव का, चंचल, बलवान्, दुष्ट
हृदयवाला, क्रोध से दुर्बुद्धि को प्राप्त होकर कुकर्म करने वाला, द्रोह से कुल का नाश करनेवाला और रणधीर होता है।

जातक पारिजात के अनुसार नागकरण में जन्म लेनेवाला जातक तेजयुक्त, धनवान्, विशेष बलवान् और बोलने में चतुर होता है।

किंस्तुघ्न करण में जन्म लेने वाले जातक का फल –

धर्मेप्यधर्मे समतामतिः स्यादंगेप्यनंगे विबलत्वमुच्चैः।
मैत्र्याममैत्र्यां स्थिरता न किंचित्किंस्तुघ्नजातस्य हि मानवस्य।।

यदि जातक का जन्म किंस्तुघ्नकरण में हो तो वह धर्म, अधर्म, मित्र, और अमित्र इनमें समान बुद्धि रखने वाला, कामातुर तथा बलहीन होता है।

जातक पारिजात के अनुसार किंस्तुघ्नकरण में जन्म लेनेवाला जातक परकार्य करनेवाला, चपलबुद्धि और हास्यप्रिय होता है।

1.8 बोध प्रश्न

1. प्रतिपदा तिथि में उत्पन्न जातक के फल को लिखिए ?
2. रविवार में उत्पन्न जातक के फल को लिखिए ?
3. उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न जातक के फल को लिखिए ?
4. आयुष्मान योग में जन्म लेने वाला जातक का स्वभाव कैसा होता है ?
5. करण के कितने भेद होते हैं ? उनको लिखिए ।

1.9 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पंचांग के मुख्य पाँच अंग होते हैं । तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण । इसमें तिथियों को दो भागों में विभक्त किया गया है, शुक्ल एवं कृष्ण पक्ष के रूप में । शुक्लपक्ष की पंद्रहवीं तिथि पूर्णिमा संज्ञक तथा कृष्णपक्ष की पंद्रहवीं तिथि अमावश्या संज्ञक होती है। जहाँ सूर्य एक मास में एक राशि का भ्रमण

पूरा करता है वहीं चन्द्रमा एक मास में पूरे भचक्र का एक भ्रमण पूरा कर लेता है। सूर्य एवं चन्द्रमा का दैनिक अन्तर ही तिथि कहलाता है । होराशास्त्र में सूर्य को आत्मा का कारक एवं चन्द्र को मन का कारक माना जाता है । इसी प्रकार चन्द्रमा का अश्विनी से रेवती तक नक्षत्रों में दैनिक परिभ्रमण चान्द्रनक्षत्र कहलाता है । 12 राशियों को 27 नक्षत्रों में विभाजित किया गया है। सूर्य एवं चन्द्रमा का अन्तर 12^{0} होने पर जहाँ एक तिथि होती है वहाँ सूर्य एवं चन्द्रमा का योग 800 कला होने पर एक योग होता है । वे योग विष्कुम्भ से वैधृति पर्यन्त 27 होते हैं। तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं । करण दो प्रकार के होते हैं, चलकरणों की संख्या सात हैं तथा स्थिरकरणों की संख्या चार । पंचांग का मूख्य कारक सूर्य एवं चन्द्रमा हैं । इन पंचांगों का महत्त्व केवल मुहूर्त्त निर्धारण में ही नहीं है, अपितु इनमें जन्म लेनेवाले जातक का स्वरूप भी भिन्न– भिन्न होता है । पंचांग फल विचार नामक इकाई के माध्यम से आपने तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण में जन्म लेने वाले जातकों में जो अन्तर होता है, उसका अध्ययन किया है ।

1.10 पारिभाषिक शब्दावली

उद्योगी – उद्यम करने वाला,
तेजस्वी – युक्त, प्रखर बुद्धिवाला,
चंचल – जिसका मन स्थिर नहीं रहता,
शास्त्राभ्यास – शास्त्रों के अध्ययन में संलग्न रहने वाला ।
कृपण – कम खर्च करने वाला,
ढ़ीठ – विना किसी का परवाह किये काम करने वाला,
अपना स्वार्थ सिद्ध करने वाला,
सुशील – सौम्य स्वभाववाला, सुन्दर स्वभाववाला ।
मिथ्या – झूठ , असत्य
वल्लभ – स्त्रियों का प्रेमी
विनीत – सज्जन, सरल स्वभाव यक्त,
निरर्थक – विना अर्थ का, विना किसी काम का
निष्णात – पारंगत, कार्य को सुन्दर ढंग से करने वाला, सिद्ध, निपुण ।
स्नेही – सबका प्रिय
कृतघ्न – उपकार को न माननेवाला,
सात्विक – सत्य का आचरण कर्ता ।

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जातकपारिजात – श्री वैद्यनाथ दैवज्ञ – चौखम्भा प्रकाशन
जातकाभरणम् – श्री ढुण्ढिराज दैवज्ञ–ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुक्सेलर, वाराणसी
मानसागरी – व्याख्याकार – श्री मधुकान्त झा –चौखम्भा विद्याभवन वाराणसी
भारतीय ज्योतिष सिद्धान्त स्कन्ध –प्रो.सच्चिदानन्द मिश्र –राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रतिपदा, द्वितीया, सप्तमी, नवमी एवं एकादशी तिथियों के फलों का विवेचन कीजिए।
2. रविवारादि में जन्म फल का विस्तृत विवेचन कीजिए।

3. बवादि चलकरण के फलों को समझाइए।
4. विष्कुम्भ, आयुष्मान, वरीयान, व्यतिपात योगों के फलों को लिखिए।
5. चित्रा, रेवती, मघा, आश्लेषा, भरणी, स्वती नक्षत्रों के फलों पर प्रकाश डालिए।

इकाई – 2 भावफल विचार

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना –

प्रस्तुत इकाई एम.ए ज्योतिष पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष के इकाई दो भावफल विचार शीर्षक से संबन्धित है। आकाश में सूर्य का भ्रमण वृत्त क्रान्तिवृत्त है तथा चन्द्रादि ग्रहों का भ्रमण वृत्त विमण्डल है। क्रान्तिवृत्त एवं विमण्डल का अंशात्मक मान 360° है। क्रान्तिवृत्त में 27 नक्षत्रों की स्थिति है तथा इन 27 नक्षत्रों का 12 समान भागों में विभाजन मेषादि से मीनान्त तक की 12 राशियाँ है। जातक के जन्म के समय क्रान्तिवृत्त का जो भाग उदय क्षितिज से लगता है अर्थात् जन्म के समय जिस राशि का उदय क्षितिजवृत्त में होता है, वही प्रथम लग्न वा प्रथम भाव कहलाता है। इस प्रकार जन्मांग में 12 भाव होते हैं। जन्मांग के इन्ही 12 भावों से जातक के जीवन की सभी शुभाशुभ घटनाओं का विचार किया जाता है। हमारे आचार्यों ने इन बारह भावों की संज्ञाएँ की है। जन्मांग के बारह भावों में प्रथम, चतुर्थ, सप्तम एवं दशम भावों की केन्द्र संज्ञा, पाँचवें एवं नवम भावों की त्रिकोण संज्ञा, तीन, छः एवं एकादश भाव की त्रिषडाय संज्ञा, द्वितीय, पंचम, अष्टम एवं एकादश भाव की पणफर तथा तृतीय, षष्ठ, नवम एवं द्वादश भावों की आपोक्लिम संज्ञा की गयी है। भाव के द्वारा फलादेश करने की पद्धति के कई भेद हैं। भारत के कुछ प्रान्तों में भाव को स्थिर रखा जाता है, अर्थात् कोष्ठक के मध्य में लग्न लिखा जाता है। लग्न की जो राशि होती है उसी संख्या को मध्य में लिखा जाता है जबकि कुछ स्थानों पर मेषादि राशि को स्थिर रखते हुये जो लग्न की राशि आती है उसमें लग्न लिखा जाता है तथा वहीं से भाव की गणना करते हुये फलादेश किया जाता है। जन्मांग में भाव का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। जन्मांग में कुछ भावों की शुभ संज्ञा तथा कुछ की अशुभ संज्ञा की गयी है। जन्मांग में केन्द्र और त्रिकोणगत भावों की शुभ संज्ञा होती है, अर्थात् इन भावों में सभी ग्रह शुभ फल देते हैं। जबकि 6, 8 एवं 12 भाव में सभी ग्रह अपने मूल स्वरूप को खो देते हैं।
इस इकाई में हम जन्मांग गत बारह भावों के माध्यम से विविध ग्रहफलों का अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

1. राशियों एवं भावों के परस्पर संबंध को जान सकेंगे।
2. द्वादश भावों की संज्ञाओं एवं उनसे विचारणीय विषयों को छात्र जान सकेंगे।
3. भाव एवं भावेश के सम्बन्धों को छात्र जान सकेंगे।
4. केन्द्र, त्रिकोण, पणफर एवं आपोक्लिम संज्ञक भावगत ग्रहों के फल को छात्र जान सकेंगे।
5. भावगत ग्रह फल को जान सकेंगे।
6. इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र फलादेश की प्रक्रिया को विधिवत समझ सकेंगे।

2.3 भावफल विचार में विशेष

जन्मांग में बारह भावों की तनु, धन, सहज, सुहृत, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय एवं व्यय संज्ञाएँ हैं। ज्योतिष के ग्रन्थों में प्रत्येक् भावों के अनेक पर्याय दिये गये है। उसी प्रकार द्वादश भावों से विचारणीय विषय भी अलग –अलग हैं। प्रथम भाव से शरीर, रूप, वर्ण, ज्ञान, बलाबल, स्वभाव, सुख–दुख, का विचार कियाजाता है। द्वितीय भाव से कुटुम्ब, धन, धान्य, मृत्यु, शत्रु, धातु रत्नादि का विचार किया जाता है। तृतीय भाव से पराक्रम, मृत्यु, भाई, उपदेश, यात्रा तथा माता–पिता के मृत्यु का विचार किया जाता है। चतुर्थ भाव से बन्धु–बान्धव, वाहन, मातृसुख, खजाना, जमीन, घर, वगीचा,आदि का विचार किया जाता है। पंचम भाव से यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि वैभव, पुत्र, राज्यापभ्रंश, आदि का विचार किया जाता है। षष्ठ भाव से मामा, मरण की आशंका, शत्रु, व्रण, रोग आदि का विचार किया जाता है। सप्तम भाव से स्त्री, मार्ग, यात्रा, पद प्राप्ति, वाणिज्य, अपनी मृत्यु आदि का विचार किया जाता है। अष्टम भाव से आयु, मृत्युस्थान, बवासीर, भगन्दर, गुप्त विद्या, सौभाग्य, पूर्व जन्मादि का विचार किया जाता है। नवम भाव से भाग्य, धर्म, पिता, साला, भाभी, तीर्थयात्रादि का विचार किया जाता है। दशम भाव से राज्य, आकाशवृत्ति, पिता, सम्मान, ऋण, प्रवासादि का विचार किया जाता है। एकादश भाव से अनेक प्रकार की वस्तुओं की उत्पत्ति, पुत्र, स्त्री, आय, बड़ा भाई, कान, पशु समृद्धि आदि का विचार किया जाता है। द्वादश भाव से व्यय, शत्रु–वृत्तान्त, रिष्फ, मृत्यु, शयन सुख, श्रृंगारादि विषयों का विचार किया जाता है [238]।

2.4 भावफल विचार हेतु विशेष सिद्धान्त

लग्नादि भावों में जो भाव शुक्र, बुध, गुरु और अपने पति से युक्त वा दृष्ट हो और पाप ग्रह से युत वा दृष्ट न हों तो वे शुभफल देते हैं । नीच राशिगत तथा शत्रुराशिस्थ ग्रह जिस भाव में हों उस भाव का नाश करता है। अपने मूलत्रिकोण में, अपने उच्च स्थान में, मित्र राशि में, पापग्रह जहाँ हो उस भाव की वृद्धि करता है। जिस भाव का स्वामी षष्ठ, द्वादश या अष्टम स्थान में हों, एवं दुःस्थान षष्ठ, अष्टम, द्वादश भावों का स्वामी जिस भाव में हो उस भाव का नाश होता है। यदि उसे शुभग्रह देखते हों तो अन्यथा फल होता है, अर्थात् उस भाव का नाश नहीं होता है। लग्न से जिस भाव का पति केन्द्र में हो या त्रिकोण में हो उसे शुभग्रह देखते हों, उच्चादि वर्ग में प्राप्त होकर बलवान् हो तो उस भाव की पुष्टि होती है। लग्नादि प्रत्येक भावों के उस उस भाव से त्रिकोण, चतुर्थ, सप्तम, या दशम गृह में शुभग्रह या उसका पति युक्त हो वहाँ पापग्रहों की दृष्टि तथा योग न हो तो भावों का समस्त शुभफल तथा पुष्टि कहना चाहिए। यदि ऐसा न हो तो उस भाव का नाश होता है। यदि उक्त स्थान मिश्र ग्रह से युक्त हों तो सब मिश्रफल होते हैं। लग्नादि जिस भाव का स्वामी सूर्य के किरण से आक्रान्त हो, अष्टम स्थान में प्राप्त हो, नीच या शत्रु गृह में प्राप्त हो, यदि शुभग्रह से युक्त न हो तो उस भाव का विनाश होता है, अर्थात् ये भाव फलप्रद नहीं होते हैं। यदि भाव का स्वामी दुःस्थान में शत्रुभवन में हो, अस्त हो, या दुर्बल

[238] वृहत्पराशर होराशास्त्र भावविवेचनाध्याय श्लो. 2–16,

हो तो भावाश्रित ग्रह भाव को सम्पन्न करने में असमर्थ होते हैं। यदि कोई ग्रह दुष्ट स्थान में स्थित हो वा शत्रुगृह या नीचांश से संयुक्त हो तो वह अशुभफल देता है। यदि अपने उच्च या मित्र के नवांश या राशि में शुभग्रह से दृष्ट हो तो शुभ होता है। जिस किसी भाव का स्वामी जहाँ बैठा हो उसका पति दुष्टस्थान में हो तो उस मूल भाव को दुर्बल करता है। यदि वह अपने उच्च, मित्र राशि, स्वराशि में स्थित हो तो उस भाव की पुष्टि करता है। जिस भाव से 11, 2, 3 स्थान में गत ग्रह उस भावेश के मित्र या उसके उच्च स्थान के स्वामी हों और यदि वे ग्रह अस्तंगत, शत्रुराशिगत या नीचगत न हों तो वे ग्रह उस भाव को पुष्ट और बलवान् बनाते हैं। जो ग्रह भाव के अंश के बराबर होकर जिस भाव में हो उस भाव के पूर्ण फल को देता है। भाव से अल्प वा अधिक ग्रह हो तो त्रैराशिक से फल का अनुमान करना चाहिए।

2.5 भावफल विचार

प्रथम भावफल

लग्नादि बारह भावों को देह, धन, पराक्रमादि संज्ञाएँ नाम तथा गुणानुरूप हैं। इनमें लग्न भाव विशेषतया सभी सुखों का आश्रय है। लग्न के बलयुक्त होने पर अन्य भावगत अनेक न्यूनताएँ स्वतः समाप्त हो जाती है। जातक के सभी शुभाशुभ फलों का आधार शरीर है, क्योंकि सभी शुभाशुभ फलों का भोग शरीर से ही होता है। यही कारण है कि इसे कर्माश्रय या फलाश्रय मना जाता है। लग्न वा प्रथम भाव की बलवत्ता जातक के भाग्य, सुख, धन एवं आयु आदि सभी शुभफलों के भोग को सीधे निर्देशित करती है। जिस प्रकार जल को खराब, टूटे–फूटे बर्तन में रखने से वह नष्ट हो जाता है उसी प्रकार जातक के जन्मांग में श्रेष्ठ भाग्य एवं धनादि के योग भी लग्न की निर्बलता के कारण अपना प्रभाव खो देते हैं, जैसाकि कहा गया है–

" भावा द्वादश तत्र सौख्यशरणं देहं मतं देहिनां, तस्मादेव शुभाशुभाख्यफलजः कार्यो बुधैर्निणयः"

लग्नेश केन्द्र (1,4,7,10) या त्रिकोण (9,5) में स्थित हों तो जातक को शारीरिक सौख्य होता है। वही यदि लग्नेश त्रिक (6,8,12) भाव में हों तो शारीरिक सौख्य नहीं होता है । लग्नेश यदि अस्तंगत हों, नीच स्थान या शत्रुक्षेत्रगत हों तो शरीर में रोग कहना चाहिए। परन्तु यदि शुभग्रह केन्द्र या त्रिकोण स्थानगत हों तो रोगों से मुक्त शरीर होता है। लग्न या चन्द्रमा पर पापग्रहों की दृष्टि या संयोग हो, शुभ ग्रहों की दृष्टि नहीं हों तो जातक शारीरिक सुख से वंचित होता है। लग्न में शुभग्रह रहें तो जातक देखने में सुन्दर, पापग्रह रहें तो कुरूप होता है। लग्न पर शुभग्रहों की युति या दृष्टि होने पर निःसन्देह उसे शारीरिक सुख होता है।

लग्नेश, बुध, गुरु अथवा शुक्र केन्द्र या त्रिकोण गत हों तो जातक दीर्घायु, मतिमान्, धनि तथा राजप्रिय होता है। चरराशिगत लग्नेश यदि शुभग्रह से दृष्ट हों तो भी जातक यशस्वी, धनी, शारीरिक सौख्य सम्पन्न तथा विविध भोगों को भोगने वाला होता है। चन्द्र युक्त गुरु,

बुध एवं शुक्र लग्न या केन्द्र में हों तो जातक राजलक्षण युक्त होता है[239]।

देहाधीशः स पापो व्ययरिपुमृतगश्चेत्तदा देहसौख्यं,
न स्याज्जन्तोर्निजर्क्षे व्ययरिपुमृतिपस्तत्फस्यैव कर्ता।
मूर्तौ चेत् क्रूरखेटस्तदनु तनुपतिः स्वीयवीर्येण हीनो,
नानातंकाकुलः स्याद् व्रजति हि मनुजो व्याधिमाधिप्रकोपम्।।

जातकालंकार में विशेषरूप से पापग्रह युक्त लग्न का त्रिक भाव में होना शारीरिक सुख से वंचित करता है। लग्नेश त्रिक भाव में त्रिकेश में से किसी एक, दो या तीनों से युक्त हो तो शारीरिक सुख से वंचित होता है। क्रूरग्रह से युक्त बलहीन लग्नेश लग्न में हो तो मनुष्य अनेक मानसिक, शारीरिक कष्ट एवं रोगादि से युक्त होता है।

लग्ने क्रूरेऽथ याते खलखचरगृहं लग्ननाथे रवीन्दू,
क्रूरान्तः स्थानसंस्थावथ दिनपनिशानाथयोर्द्यूनयायी।
भूमीपुत्रस्तु पृष्ठादुदयमधिगतश्चन्द्रजश्चेन्मनस्वी
स्यादन्धो दुष्टकर्मा परभवनरतः पूरुषः क्षीणकायः।।

लग्न में क्रूरग्रह हो और लग्नेश किसी क्रूरग्रह की राशि में हो, सूर्य लग्न से अथवा चन्द्र लग्न से सप्तम में मंगल हो, बुध पृष्ठोदय राशि मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर में हो तो व्यक्ति स्वेच्छाचारी, मनमौजी, अन्धा, कुकृत्य करने वाला, परोपजीवी एवं दुर्बल होता है।

अंगाधीशः स्वगेहे बुधगुरुकविभिः संयुतः केन्द्रगो वा,
स्वीये तुंगे स्वमित्रे यदि शुभभवने वीक्षितः सत्त्वरूपः।
स्यान्नूनं पुण्यशीलः सकलजनमतः सर्वसंपन्निधानं,
ज्ञानी मन्त्री च भूपः सुरुचिरनयनो मानवो मानवानाम्।।

यदि लग्नेश लग्न में हो या शुभग्रहों से बुध, गुरु एवं शुक्र से युक्त होकर केन्द्र में हो, लग्नेश स्वोच्च राशि में हो या स्वमित्र गृह में या शुभग्रह की राशि में शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक सुन्दर शरीर युक्त, पुण्यशाली, सर्वलोकप्रिय, ज्ञानी, मन्त्री एवं राजा होता है।

द्वितीय भावफल

द्वितीय भाव को धन भाव कहा जाता है। धन भाव का कारक गुरु हैं। वस्तुतः किसी भी भाव का शुभाशुभ फल का विचार उस भाव के अधिपति भाव कारक एवं उस भाव पर शुभाशुभ ग्रहों की युति एवं दृष्टि के आधार पर किये जाते हैं। अतः धन भाव का कारक गुरु द्वितीयेश से युक्त होकर स्वराशि में अथवा केन्द्र में स्थित हो तो जातक सर्वसम्पत्तिवान् होता है। परन्तु गुरु से युक्त होकर धनेश यदि त्रिक में हो तो जातक कष्ट को भोगने वाला एवं धनहीन होता है। अर्थात् द्वितीय भाव कारक गुरु एवं द्वितीयेश के बल व शुभता के आधार पर धनवान् तथा निर्धन होने का विचार जातकालंकार में किया गया है।

कोशाधीशः स्वराशौ सुरगुरुसहितः सर्वसंपत्प्रदः स्यात्

---

[239] वृहत्पराशर होराशास्त्र भावविवेचनाध्याय श्लो. 1–7,

केन्द्रे वाथ त्रिके चेद् भवति हि मनुजः क्लेशभाग् द्रव्यहीनः।

महर्षि पाराशर के मत में धनेश धन भाव में केन्द्र अथवा त्रिकोण में कहीं भी रहें तो जातक निःसंदेह धन धान्य से युक्त होता है। यदि धनेश त्रिक भाव में हो तो धनक्षय करता है। पाराशर के मत में धनभाव गत शुभग्रह धनदायक होता है तथा धन भावगत पापग्रह धनहानी करनेवाला होता है। धनेश गुरु धनभाव में अथवा मंगल के साथ हों तो जातक धनवान् होता है। पाराशर के मत में धनेश का लाभेश से सम्बन्ध धनदायक होता है । जैसा कि धनेश लाभ में या लाभेश धन भाव में हों अथवा दोनों केन्द्र या त्रिकोण में हो तो जातक धनवान् होता है। धनेश से नवम एवं पंचम में लाभेश का होना, गुरु शुक्र से युक्त या दृष्ट होना धन प्राप्ति योग बनाता है ।

धनाधिपो धने केन्द्रे त्रिकोणे वा यदा स्थितः।
धनधान्ययुतो जातो जायते नात्र संशयः।।
षष्ठेऽष्टमे व्यये वा चेद् धनक्षयकरस्तु सः।
अर्थेऽर्थदः शुभे ज्ञेयः क्रूरस्तत्रार्थनाशकः।।
धनाधिपो गुरुर्यस्य धनस्थानस्थितो यदि।
भौमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत्।।
धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे वा धनं गते।
तावुभौ केन्द्रगौ कोणस्थितौ वा धनवान्नरः।।
धनेशे केन्द्रराशिस्थे लाभेशे तत्त्रिकोणगे।
गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत्।।

धनेश एवं लाभेश षष्ठभाव गत हों तथा धन एवं लाभ भाव पापग्रहों से युत या दृष्ट हों तो जातक दरिद्र होता है। धनेश एवं लाभेश अस्तंगत होकर पापग्रहों से युक्त हों तो जातक जन्म से ही दरिद्र होकर भिक्षान्न पर ही आश्रित रहता है । धनेश एवं लाभेश त्रिक स्थान गत हों, मंगल एकादश में, तथा राहु धन स्थान में हो तो राजदण्ड से उसकी सम्पदा का विनाश होता है। लाभ स्थान गत गुरु, धन भावगत शुक्र, धनेश शुभग्रह संयुक्त और द्वादश स्थान भी शुभग्रह युक्त हों तो जातक का धर्ममूलक धनव्यय कहना चाहिए। धनेश अपने उच्च या स्वभवन गत हों, और गुरु की उनपर दृष्टि हो तो जातक सर्वजन प्रिय विख्यात् व्यक्ति होता है। शुभग्रह युक्त धनेश पारावत आदि शुभवर्ग में स्थित हों तो जातक के घर में स्वतः अनेकविध सम्पत्ति होती है [240]।

कुण्डली में द्विताय व द्वादश भाव से नेत्र सम्बन्धी शुभाशुभ विचार किया जाता है। पराशर के मत में द्वितीयेश बलवान् हो तो जातक सुन्दर नेत्र से युक्त होता है। यदि त्रिक भाव में हो तो नेत्र में रोग उत्पन्न होता है [241]।

नवग्रहों में सूर्य एवं चन्द्र ज्योति स्वरूप हैं जो हमारे दोनों नेत्रों के प्रतीक के रूप में माने

[240] वृहत्पराशर होराशास्त्र भावविवेचनाध्याय श्लो. 7–16,
[241] वृहत्पराशर होराशास्त्र भावविवेचनाध्याय श्लो. 13,

गये हैं। शुक्र काणा ग्रह है, अतः इन तीनों ग्रहों का त्रिकभाव में नेत्रेश के साथ होना नेत्र में विकार उत्पन्न करता है। कुण्डली में यदि द्वितीय एवं द्वादश भावों के अधिपति शुक्र व लग्नेश से युक्त होकर त्रिक में आ जाये तो जातक नेत्रहीन होता है। चन्द्रमा शुक्र व पाप ग्रह से युक्त होकर द्वितीय भाव में हो तो भी जातक नेत्रहीन होता है। चन्द्र के साथ शुक्र यदि त्रिक भाव में बैठ जाए तो जातक रात्र्यन्धत्व को प्राप्त करता है। लग्नेश शुक्र व सूर्य से युक्त होकर त्रिक में बैठ जाए तो जातक जन्मान्ध होता है। जातकालंकार के अनुसार पिता, माता, भ्राता, पुत्र, पत्नी आदि भावों के अधिपति सूर्य व शुक्र से यक्त होकर अगर त्रिक भाव में हों तो क्रमशः तत्तत् सम्बन्धियों का अन्धत्व योग बनाता है ।

स्वान्त्याधीशो त्रिकस्थो कवितनुपयुतौ स्यात्तदा नेत्रहीन–
श्चन्द्रः पापेन युक्तो धनभवनगतः शुक्रयुंनेत्रहीनः।।
शुक्रः सेन्दुस्त्रिकस्थो जनुषि निशि नरः प्राप्नुयादन्धकत्वं,
जन्मान्धः सार्कशुक्रस्तनुभवनपति स्यात्तदानीं मनुष्यः।
एवं तातानुजाम्बासुतनिजगृहिणीस्थाननाथाः स्थिताश्चे–
दादेश्यं तत्र तेषां प्रवरमतियुतैरन्धकत्वं तदानीम्।।

जातक पारिजात में द्वितीय भाव से मुख विचार किया गया है। धन भाव में शुभग्रह यदि उच्चादि वर्ग में हो तो जातक का सुन्दर मुख होता है। यदि धन भाव में शुभग्रहों का वर्ग हो तो जातक वाक्सिद्धि प्राप्त करता है। धन भाव में मंगल को सूर्य देखता हो तो आज्यस्पर्श रोग होता है। धन भावगत राहु को पापग्रह देखता हो तो वह जातक कुत्सित अन्न को खाने वाला होता है। धन स्थान में पापग्रह हो तो जातक दुर्मुख होता है । धन भावगत पापग्रह को पापग्रह देखता हो तो क्रोधान्वित मुखवाला और उस स्थान का स्वामी गुलिक से युक्त हो तो मनुष्य पापी होता है। धनस्थान का स्वमी केन्द्रगत हो तो विकसित मुख, सौन्दर्य युत जातक होता है, अपने उच्च स्थान में, अपने मित्र के वर्ग में हो, शुभग्रह से देख जाता हो तो सुमुख होता है। द्वितीयेश राहु से युक्त होकर दुष्ट स्थान में हो वा राहु से युक्त स्थान के स्वामी के साथ हो तो उन दोनों की दशा, अन्तर्दशा में उस जातक को दन्तरोग हो और बुध की अन्तर्दशा में जीभ में रोग होता है [242]।

जातक पारिजात में द्वितीय भाव से विद्या का विचार किया गया है। द्वितीय भाव का स्वामी गुरु से युक्त अष्टम स्थान में हो तो जातक गूंगा होता है। अपने स्थान या अपनी उच्च राशि का ग्रह कहीं भी दोष करने वाला नहीं होता है। द्वितीयेश, बुध और बृहस्पति अष्टम स्थान में हों तो जातक विद्या से रहित होता है। यदि ये सभी केन्द्र या त्रिकोण में हों, वा अपने गृह में हों तो विद्या से युक्त होता है। यदि बृहस्पति केन्द्र या त्रिकोण में हो और शुक्र उच्च स्थान में हो, वा द्वितीयेश बुध हो तो वह मनुष्य गणितज्ञ होता है। मंगल द्वितीय स्थान में शुभग्रह के साथ हो उसे बुध देखता हो वा बुध केन्द्र में हो तो मनुष्य गणितज्ञ

[242] जातक पारिजात प्रथम द्वितीय भावफलाध्याय, श्लो. 70 – 74,

होता है [243]।

तृतीय भावफल

कुण्डली में तृतीय भाव से भाई एवं पराक्रम का विचार किया जाता है यही कारण है कि तृतीय भाव को भातृ भाव भी कहते हैं। भातृभाव का कारक ग्रह मंगल है। अतः तृतीयेश एवं मंगल का तृतीय भाव में होना, तृतीय भाव को पूर्ण दृष्टि से देखना भ्रातृ सुख प्रदान करता है। तृतीय भाव का शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होना भी जातक को भ्रातृ सुख से युक्त करता है। परन्तु यदि तृतीयेश एवं तृतीयभाव कारक मंगल पापग्रहों से युक्त या पापग्रहों के राशि में हो तो भ्रातृ सुख से हीन होता है।

सहजे सशुभे दृष्टे सौम्यैर्वा भ्रातृमान् जनः।।
सभौमो भ्रातृभावेशो भ्रातृभावमभीक्षते।
भ्रातृक्षेत्रगतो वापि सुखं भ्रातुर्विनिर्दिशेत्।।
तौ पापयोगतः पापक्षेत्रयोगेन वा पुनः।
उत्पाट्य सहजान् सद्यो निहता नात्र संशयः।।

गणेशकवि ने जातकालंकार में कहा है कि तृतीयेश का मंगल के साथ त्रिक में होना जातक को भाईयों से हीन करता है। परन्तु तृतीयेश स्वराशिगत हो एवं शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक के भाई होते हैं। यदि शुभग्रहों से युक्त तृतीयेश केन्द्र में हो तो भ्रातृसुख खूब देता है, परन्तु पापग्रहों से युक्त तृतीयेश केन्द्र में हो तो विपरीत फल को देने वाला होता है । अर्थात् भ्रातृ भावेश का शुभग्रहों से युक्त होना शुभ भावों में केन्द्र, त्रिकोण में होना भाईयों के सुख को देने वाला होता है अन्यथा पाप युक्त त्रिक भावगत होना भाईयों के सुख से वंचित कर देता है।

भ्रातृस्थानेशभौमौ व्ययरिपुनिधनस्थानगौ बन्धुहीनः
स्वक्षेत्रे सौम्यदृष्टे सहजभवनपे मानवः स्याच्च तद्वान्।
केन्द्रस्थे बन्धुसौख्यं शुभविहगयुते स्याददभ्रं नराणां
पापैश्चेदन्यथैतत्तदनु निजधिया ज्ञेयमित्थं समस्तम्।।

श्री वैद्यनाथविरचित जातकपारिजात ग्रन्थ में न केवल तृतीय भा को अपितु तृतीय, नवम, एकादश एवं सप्तम भाव को भ्रातृभाव कहा है। इन भावों के स्वामियों की दशा में भ्रातृ लाभ होता है ऐसा कहा गया है।

भ्रातृस्थानेशतद्राशितद्भावस्थद्युचारिणाम्।
मध्ये बलसमेतस्य दशा सोदरवृद्धिदा।।

तृतीयेश, तृतीयभावगतराशि तथा तृतीय भावगत ग्रहों में से बलवान् ग्रह की दशा भाई की वृद्धि करनेवाली होती है। भ्रातृभावेश और भ्रातृकारक नीच राशि में हो, अस्तंगत हो या नीचांश में हो वा क्रूर षष्ठ्ंयश में हो तो भाई का जन्म नाश करने के निमित्त होता है। तृतीयेश, तृतीयभाव कारक, तृतीयभाव ये तीनों अत्यन्त क्रूरग्रह से युक्त हो तो जातक का

[243] जातक पारिजात प्रथम द्वितीय भावफलाध्याय, श्लो. 76, 77, 81, 82,

बाल्यावस्था में ही भाई का नाश हो जाता है। तृतीयभाव से केन्द्र या त्रिकोण में पापग्रह हो तो भाई का नाश होता है । शुभग्रह से भ्रातृ वृद्धि होती है।

भ्रातृस्थानेशतद्राशितद्भावस्थद्युचारिणाम्।
मध्ये बलसमेतस्य दशा सोदरवृद्धिदा।।
नीचास्तगौ सोदरनायकाख्यौ नीचांशगौ पापसमागतौ वा।
क्रूरादिषष्ठ्यंशगतौ तदानीं भ्रातृन्समुत्पाद्य विनाशहेतुः।।
अतिक्रूरसमायुक्ते भावे वा कारकेऽपि वा।
तद्भावनायके वाऽपि बाल्ये सोदरनाशकम्।।
त्रिकोणकेन्द्रे यदि पापखेटे तृतीयभावादनुजस्य नाशम्।
शुभोपयाते सहजाभिवृद्धिः शुभाशुभं मिश्रफलं वदन्ति।

तृतीयभाव का स्वामी उच्च राशि का होकर अष्टम में हो, पापग्रह से युक्त हो, चरराशि में, चर नवांश में हो तो युद्ध के पहले दृढ़ हो जाता है। भ्रातृकारक बलहीन हो, क्रूरषष्ठ्यंशक में हो और तृतीयेश शुभग्रह से युत हो तो जातक युद्ध में विजयी होता है। तृतीयेश सूर्य से युक्त हो तो जातक वीर होता है। चन्द्रमा से युक्त हो तो मानसिकरूप से धैर्यवान् होता है। मंगल से युक्त हो तो दुष्ट, जड़ और क्रोधी होता है। बुध से युक्त हो तो सात्विक बुद्धिवाला, बृहस्पति से युक्त हो तो धीरगुणयुक्त और सम्पूर्णशास्त्र में विशारद होता है। शुक्र से युक्त हो तो कामी और काम के ही कारण कलह में दक्ष होता है। शनि से युक्त हो तो जड़, राहु से युक्त हो तो डरपोक, केतु से युक्त हो तो बाहरी और हृदय रोग से युक्त एवं गुलिक से युक्त हो तब भी डरपोक होता है । लग्न में बृहस्पति तृतीयेश से युक्त हो तो चतुष्पदों का भय होता है। जलचर लग्न हो तो जातक जल का प्रमादी हो अर्थात् जल में डूबने का भय होता है। मंगल से युक्त ग्रह बली हो तो पराक्रम, बल और गान सुख प्राप्त होता है। मंगल, तृतीयेश और सहज राशिस्थ तीनों ग्रह बलवान् हों तो रणभूमि में वीर होता है। इन तीनों की अन्तर्दशा या दशा में मूल आदि का सुख होता है जातक का समय सत्कथा वा सत्कार्य में व्यतीत होता है तथा भ्रातृ पुत्र का लाभ होता है। बलवान् भ्रातृस्थानेश शुभ वर्ग में हो तो सात्विकी, तृतीयेश नीच, मूढ़, शत्रुराशि में हो तो साहसी होता है [244]।

चतुर्थ भावफल

चतुर्थ भाव से विद्या, माता, सुख, बन्धु, वाहन, भूमि और गृह का विचार किया जाता है।

चतुर्थेश चतुर्थ भाव में शुभग्रह से युत वा दृष्ट हो और बुध बलवान् हो तो जातक विद्या–विनय से युक्त बुद्धिमान् होता है। यदि चतुर्थेश दुष्टस्थान में पापग्रह से युक्त हो और पापग्रह दृष्ट हो वा पापराशि में हो तो मनुष्य विद्या से हीन होता है। चतुर्थेश, बृहस्पति औ बुध षष्ठ, तृतीय, द्वादश या अष्टम स्थान में स्थित हों तो विद्या–बुद्धि–विवेक की हानि

[244] जातक पारिजात तृतीय–चतुर्थ भावफलाध्याय, श्लो. 33–41,

करते हैं और उक्त ग्रह नीच या शत्रुस्थान में हो तब भी विद्या, बुद्धि एवं विवेक की हानी होती है परन्तु उक्त ग्रह स्वगृही, स्वोच्च स्थान या त्रिकोण या केन्द्र में हो तो जातक श्री, विद्या, विनयादि गुणों से युक्त होता है [245]। वस्तुतः चतुर्थ भाव विद्या संज्ञक भाव (पंचम भाव) का व्यय भाव है अतः चतुर्थ भाव के बली होने पर पंचम भाव जन्य फल का व्यय नहीं होगा। यही कारण है कि जातक पारिजात में चतुर्थ भाव से विद्या का विचार किया गया है।

यदि शुभवर्गस्थ बलवान् शुक्र वा चन्द्रमा केन्द्र में शुभग्रह से देखा जाता हो तथा मातृ भाव सबल हो तो माता दीर्घायु होती है। बलहीन सुखेश षष्ठ स्थान वा द्वादश स्थान में हो, लग्न में पापदृष्ट पापग्रह हो तो माता का नाश होता है। क्षीणचन्द्रमा अष्टम, षष्ठ वा द्वादश में पापग्रह से युक्त हो, चतुर्थभाव पापग्रह से युक्त हो तो माता की निःसंदेह मृत्यु होती है। चतुर्थस्थान पापग्रह से दृष्ट शनि हो, अष्टमेश शत्रुगृह में वा नीचराशि में हो तो माता का नाश होता है। तृतीय और पंचम भाव में पाप ग्रह हो, चतुर्थेश शत्रु राशि में वा नीच राशि में हो तथा चन्द्रमा पापग्रह के साथ हो तो माता का नाश होता है [246]।

पातालेशः स्वराशौ शुभखचरयुतो भाग्यनाथेन युक्तः,
सामन्तः स्यात्ततश्चेत्सुरपतिगुरुणा वाहनेशस्तनुस्थः।
संदृष्टो राजपूज्यस्तदनु च हिबुकाधीश्वरो लाभसंस्थो,
यानं पश्यन्नराणां निवहमभिमतं वाहनानां प्रदत्ते।।

चतुर्थ भाव से यश, प्रतिष्ठा, उच्च पद एवं वाहन सुख का विचार किया जाता है। चतुर्थेश अपनी राशि में नवमेश एवं शुभग्रह से युक्त हो हो तो जातक मण्डलेश्वर, जिलाधीश, सामन्त, पार्षद आदि होता है। बृहस्पति की पूर्ण दृष्टि से युक्त चतुर्थेश लग्न में हो तो जातक पूज्य, प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय होता है। बृहस्पति से दृष्ट चतुर्थेश एकादश भाव में हो तो जातक को वाहनों की प्राप्ति होती है। चतुर्थेश चतुर्थ को देखे और चतुर्थेश को गुरु देखे तो भी जातक को वाहनों का सुख मिलता है। वस्तुतः चतुर्थ सुख स्थान एवं नवम भाग्य स्थान है। जातक को सुख भाग्य से मिलता है अतः नवमेश एवं चतुर्थेश के परस्पर संबन्धसे अनेक प्रकार के सुख मिलते हैं। एकादश स्थान प्राप्ति स्थान है अतः चतुर्थेश यदि एकादश में गुरु से युक्त या दृष्ट होकर बैठेगा तो भाग्य योग एवं वाहनों का सुख बनेगा।

स्वक्षेत्रे तुर्यनाथस्तनुपतिसहितः स्यादकस्माद्गृहाप्तिः,
सौहार्दं वा सुहृद्भिस्तदितरगृहगश्चेद्गृहाऽलाभयोगः।
यावन्तः पापखेटा धनदशमगृहप्रान्त्यपैश्चेत् त्रिकस्था,
युक्तास्तावत्प्रमाणा ज्वलनवशगताः क्लेशदा स्युर्गृहानुः।।
यावन्तो वाहनस्थाः शुभविहगदृशां गोचरा नो भवेयु–
स्तावन्तो वा विरामाः परमगुणवतां वाहनानां नृणां स्युः।
क्रूराः पश्यन्ति यानं व्ययनिधनगताश्चेत्तदा तद्वदेव

---

[245] जातक पारिजात तृतीय–चतुर्थ भावफलाध्याय, श्लो. 60–61,
[246] जातक पारिजात तृतीय–चतुर्थ भावफलाध्याय, श्लो. 62–66,

प्राज्ञैरादेश्यमेषां खलु शुभकरणं शान्तिकं वाहनानाम्।।

यदि लग्नेश से युक्त चतुर्थेश स्वक्षेत्र में हो तो अकस्मात् गृह लाभ होता है और मित्रों से उत्तम मित्रता होती है। यदि लग्नेश से युक्त चतुर्थेश स्वक्षेत्र में न हो अर्थात् अनिष्ट स्थानों में शत्रु या नीचादि क्षेत्रों में हो तो गृह लाभ नहीं होता है। द्वितीय, चतुर्थ, दशम एवं द्वादश स्थानों के अधिपतियों में से कुछ से या सबसे युक्त होकर जितने पापग्रह षष्ठ, अष्टम एवं द्वादश स्थानों में हों उतने घर जातक के अग्नि से नष्ट हो जाते हैं या कष्टप्रद होते हैं।
चतुर्थ स्थान में जितने पापग्रह, शुभग्रहों की दृष्टि से रहित हों, उतने ही अच्छे वाहन नष्ट हो जाते है। अथवा अष्टम व द्वादश स्थान में स्थित जितने पाप ग्रह चतुर्थ स्थान पर दृष्टि रखें, उतनी ही संख्या में वाहनों का विनाश होता है।

जातक पारिजात में कहा गया है कि बृहस्पति गोपुराद्यंश में हो वा सुख स्थान में हो, द्वितीय, एकादश और चतुर्थ भावों में ग्रह हो तो सुखी होता है। सुख भाव में बुध की दृष्टि हो वा चतुर्थ भाव दो शुभग्रहों के वीच में वा बृहस्पति के राश्यंश में हो तो सदा पुण्य कर्म में रत रहता है। शुभराशिगत बलवान् ग्रह चौथे भाव में लग्न से सम्बन्ध करने वाला तथा अधिक गुण युक्त हो तो उस ग्रह की जाति वाले मनुष्यों से उसे सदा सुख मिलता है तथा उस ग्रह की धातु से उसे संपति प्राप्त होता है। लग्न से अष्टम भाव का स्वामी चतुर्थ में ,नीच या शत्रु गृह में प्राप्त हो और वह यदि लग्नेश का शत्रु हो तो उसके प्रकोप से शरीर आदि के सौख्य का नाश होता है। चतुर्थ भाव स्थित, चतुर्थ भाव को देखने वाला, चतुर्थ भाव का कारक, बलवान् हों तो अत्यन्त सुख होता है। यदि ये सभी नीच, शत्रु गृह या अस्तंगत हो तो अनिष्ट देने वाला होता है। ये तीनों ग्रह शुभ हों तो सुख होता है। चतुर्थ स्थान में नवमेश शुक्र के साथ हो तथा विशेष बलवान् हो तो बहुत काल तक सुख भोगता है। शुभ ग्रह से युक्त भाग्येश यदि अष्टम, षष्ठ वा व्यय में हो तो अल्प समय तक ही सुख की प्राप्ति होती है [247]।

चतुर्थेश शुभग्रह हो, शुभग्रह उसे देखते हों और सुख का कारक बल से परिपूर्ण हो तो जातक बन्धुओं से पूज्य होता है। चतुर्थेश केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में हो तथा वैशेषिकांश में हो और पापग्रह से दृष्ट युत न हो तो बन्धुओं का उपकार करने वाला होता है। यदि चतुर्थ भाव में पापग्रह नीचगत या अस्तंगत ग्रह के साथ बैठा हो और उस पर शुभग्रह का दृष्टि योग नहीं हो तो वह सदा मित्रों का विरोधी होता है [248]।

संक्षिप्त रूप में कहा जा सकता है कि चतुर्थ भाव पर शुभग्रहों की दृष्टि, शुभग्रहों की स्थिति, चतुर्थेश का प्रबलत्व अर्थात् चतुर्थेश पर शुभग्रहों की दृष्टि जातक को विद्या, मातृसुख, वाहनसुख, गृहसुख एवं जीवन में सर्वविध ऐश्वर्य देता है इसके विपरीत जातक जीवन पर्यन्त कष्ट भोगता है।

[247] जातक पारिजात तृतीय–चतुर्थ भावफलाध्याय, श्लो. 81–86,
[248] जातक पारिजात तृतीय–चतुर्थ भावफलाध्याय, श्लो. 91–93,

अभ्यास प्रश्न : – 1

1. प्रथम भाव से विचार करते हैं –
क. धन, ख. आयु, ग. तनु, घ. जाया
2. द्वितीय भाव का कारक ग्रह है –
क. सूर्य, ख. गुरु, ग. शनि, घ. मंगल
3. धन भाव में शुभग्रह यदि उच्चादि वर्ग में हो तो जातक मुख होता है –
क. सुन्दर ख. कुरूप ग. काला, घ. इनमें से कोई नहीं
4. तृतीय भाव से विचार करते हैं –
क. पिता, ख. दादा, ग. भाई, घ. मौसी
5. चतुर्थ भाव से विचार करते हैं–
क. चाचा ख. माता ग. पिता, घ. शरीर का

पंचम भावफल

पंचम भाव से देवता, राजा, पुत्र, पिता, बुद्धि और पुण्य का विचार किया जाता है। जातक पारिजात में कहा है कि पंचम भाव को पुरूषग्रह देखता हो या उसमें स्थित हो तो जातक पुरूष देवता की पूजा करता है। समराशि पंचम में हो, शुक्र एवं चन्द्रमा पंचम में बैठा हो या दोनों की दृष्टि हो तो स्त्री देवता की आराधना में जातक लिप्त रहता है। पंचम भाव में सूर्य हो तो सूर्य की, चन्द्रमा शुक्र हो तो गौरी की, मंगल हो तो कार्तिक का, बुध हो तो विष्णु का, बृहस्पति हो तो शंकर का, शनि, राहु या केतु का पंचम में योग हो तो क्षुद्र देवताओं की आराधना में तत्पर होता है [249]।

विद्यास्थानाधिपो वा बुधगुरुसहितश्चेत् त्रिके वर्तमानो,
विद्याहीनो नरः स्यादथ नवमनिजक्षेत्रकेन्द्रेषु तद्वान्।
बालत्वं वृद्धता वा यदि गगनसदां जन्मकाले तदा स्या–
त्प्रज्ञामान्द्यं नराणामथ यदि विहगः स्वर्क्षगो दोषहृत् स्यात्।।
वाक्स्थानेशो गृरुर्वा व्ययरिपुविलयस्थानगो वाग्विहीन–
श्चैवं पित्रादिकानां पतय इह युता मूकता स्यच्च ताभ्याम्।
वगीशात्पंचमेशास्त्रिकभवनगतः पुत्रधर्मांगनाथा
रन्घ्रे द्वेष्यान्तिमस्था यदि जनुषि नृणामात्मजानामभावः।।
कुम्भे चेत्पंचपुत्रास्तदनु च मकरे नन्दनेऽप्यात्मजाः स्यु–
स्तिस्रो भौमः सुतानां त्रितयमथ सुतादायको रौहिणेयः।
इत्थं काव्यः शशांको जनुषि च गुरुणा केवलेनैव पुत्राः
पंच स्युः केतुराह्वोः क्रियवृषभवने कर्कटे नो विलम्बः।।

अर्थात् यदि पंचमेश 6,8,12 भावों में हो और बुध,गुरु भी उक्त स्थानों में ही कहीं स्थित हो तो मनुष्य विद्याहीन होता है। अकेला पंचमेश भी त्रिक स्थानों में हो तो जातक विद्याहीन

[249] जातक पारिजात पंचम–षष्ठ भावफलाध्याय, श्लो. 2,

होता है। इसके विपरीत यदि पंचमेश पंचम, नवम या केन्द्रों में कहीं हो तो जातक विद्वान् होता है। पंचमेश के साथ यदि बुध गरु भी हो तो प्रकाण्ड विद्वान् होता है। यदि जन्मांग में पंचमेश या विद्याकारक ग्रह बाल्य या वृद्धावस्था में हो तो जातक मन्दबुद्धि होता है। यदि बाल्य वृद्धावस्था गत ग्रह स्वराशि में हो तो उक्त दोष नष्ट हो जाता है।

यदि द्वितीय स्थान का स्वामी ग्रह और गुरु इनमें कोई एक या दोनों 6,8,12 स्थानों में गये हों तो मनुष्य वाणी हीन होता है। इसी प्रकार जातक की कुण्डली में माता, पिता, भ्राता आदिस्थानों के स्वामी उनसे द्वितीयेश व गुरु से युक्त होकर त्रिक स्थानों में गये हो तो उन संबन्धियों की मूकता कहनी चाहिए। यदि बृहस्पति से पंचम स्थान का स्वामी एवं लग्न, पंचम तथा नवमेश त्रिक स्थानों में गये हों तो मनुष्य को सन्तानहीन योग होता है।

यदि पंचम स्थान में कुंभ राशि में शनि हो तो पाँच पुत्र होते हैं। यदि पंचम में मकर राशिगत शनि हो तो तीन पुत्रियाँ होती है। स्वक्षेत्री या उच्च राशिगत भौम पंचमभावगत हो तो तीन पुत्र होतो हैं। पंचम स्थान में बुध, शुक्र या चन्द्रमा स्वक्षेत्रगत हो तो कन्या सन्तान देने वाले होते हैं। अकेला स्वक्षेत्री बृहस्पति पंचमभाव में हो तो पाँच पुत्र होते हैं। यदि पंचम में राहु या केतु मेष या कर्क में हो तो सन्तान प्राप्ति में विलम्ब नहीं होता है।

षष्ठ भाव फल

षष्ठेशे पापयुक्ते तनुनिधनगते नुः शरीरे व्रणाः स्यु–
श्चादेश्यं तज्जनित्रीजनकसुतवधूबंधुमित्रादिकानाम्।
इत्थं तत्स्थानगामी शिरसि दिनमणिश्चानने शीतभानुः
कण्ठे भूमीतनूजो हृदि शशितनयो वाक्पतिर्नाभिमूले।।
नेत्रे पृष्ठे च शुक्रो दिनकरतनयः स्यात्पदे चाधरे चेत्
केतुर्वा सैंहिकेयस्तदनु तनुपतिर्भौमवित्क्षेत्रसंस्थः।
आभ्यामालोकितः सन् भवति हि कतिचित्स्थानगो वा,
तदानीं नेत्रे रोगी नरः स्यात्प्रवरमतियुतैर्होरिकैर्ज्ञेयमेवम्।।
षष्ठेशे लग्नयाते भवति हि मनुजो वैरिहन्ता धनस्थे–
पुत्रात्तार्थोऽतिदुष्टः सहजभवनगे ग्रामदुःखाकरः स्यात्
नाभिस्थाने च रोगी तनुनिधनपती शत्रुभावस्थितौ ना,
नेत्रे वामेतरे स्यादसुरकुलगुरुः सूर्यजस्त्वंघ्रिरोगी।।

यदि षष्ठ स्थन का स्वामी पापग्रहों से युक्त होकर लग्न या अष्टम स्थान में स्थित हो तो मनुष्य के शरीर में व्रण होता है। इसी प्रकार माता, पिता, पुत्र, वधू, बन्धु मित्रादि के शरीर में भी व्रण कहना चाहिए। षष्ठ भाव का स्वामी यदि सूर्य हो और वह अष्टम या लग्न में बैठा हो तो सिर में, चन्द्रमा हो तो मुख में, मंगल हो तो गले में, बुध हो तो हृदय में, बृहस्पति हो तो पेट में व्रण कहना चाहिए । शुक्र व्रण कारक हो तो आँख व कमर में, शनि हो तो पैरों में, राहु या केतु हो तो होठों में व्रण होता है । यदि लग्नेश, मंगल या बुध की राशि में हो तब मनुष्य के नेत्रों में विकार होता है। यदि षष्ठेश लग्न में हो तो मनुष्य अपने शत्रुओं का नाशक होता है। षष्ठेश द्वितीय में हो तो मनुष्य का धन उसके बेटे छीन लेते हैं,

तथा ऐसा व्यक्ति अतिदुष्ट भी होता है। षष्ठेश तृतीय भाव में हो तो व्यक्ति ग्राम को कष्ट देने वाला होता है। लग्नेश व अष्टमेश षष्ठ में हो तो मनुष्य नाभि रोगी होता है। शुक्र षष्ठ या अष्टम में हो तो दाँए नेत्र में विकार होता है। यदि शनि षष्ठ वा अष्टम में हो तो मनुष्य के पैरों में रोग होती है। बृहतपाराशर होराशास्त्र में जातकालंकारोक्त विषय का ही प्रतिपादन किया गया है [250]।

वस्तुतः लग्नेश यदि मंगल या बुध के क्षेत्र में हो, लग्नेश पर बुध या मंगल की दृष्टि हो, द्वितीय द्वादश में चन्द्रमा या शुक्र हो अथवा अष्टम स्थान में मन्द प्रकाश ग्रह हो अथवा सूर्य व शुक्र 6,8,12 में लग्नेश युक्त हों या चन्द्र शुक्र त्रिक में लग्नेश के सथ हों तो नेत्र ज्योति की उत्तरोतर अधिक क्षीणता होती है। सामान्यतः 6,8,12 भावों के स्वामी जिस भाव में बैठते हैं उस भाव के फल को क्षीण करते हैं, लेकिन ग्रन्थकार लग्न में षष्ठेश की स्थिति शत्रुनाशक बनाता है।

सप्तम भाव फल

यावन्तो वा विहंगा मदनसदनगाश्चेन्निजाधीशदृष्टा–
स्तावन्तो निर्विवाहास्त्वथ सुमतिमता ज्ञेयमित्थं कुटुम्बे।
कार्यो होरागमज्ञैरधिकबलवतां खेचराणां हि योगा–
दादेश्यं तत्रवीर्यरविविधुकुभुवामंगदिक्शैलसंख्यम्।।
केन्द्रस्था वा त्रिकोणे यदि खलु गृहणीकारकाख्या नभोगाः
कामार्थेशौ निजर्क्षे परिणयनविधिः स्यात्तदानीं नुरेकः।
जायाधीशः कुटुम्बाधिपतिरपि युतश्चेत्त्रिके गर्हिताख्यै–
र्यावद्भिः शुक्रयुक्तो नितमिह भवेत् तावतीनां विरामः।।
लग्नस्थे सप्तसप्तौ दिनमणितनये कामगेऽथार्कमन्दौ द्यूने,
चन्द्रे नभस्थे न च यदि गुरुणाऽऽलोकिते नो प्रसूते।
द्वेष्येशे मित्रमन्दौ द्विषि सितकिरणेऽस्ते बुधेनेक्षिते नो,
सूते द्वेष्ये जलर्क्षे यदि कुजरविजौ गर्भिणी स्यान्न नारी।।

सप्तम स्थान में जितने ग्रह हों जातक के उतने ही विवाह होते हैं। लेकिन उन पर सप्तमेश की दृष्टि आवश्यक है। इसी प्रकार कुटुम्ब स्थान अर्थात् द्वितीय स्थान में जितने ग्रह द्वितीयेश से दृष्ट हो, उतने ही विवाह होते हैं। ज्योतिर्विदों को अधिक बल वाले ग्रह के योगों से विवाह की संख्या का विचार करना चाहिए। सूर्य, चन्द्र व मंगल का क्रमशः 6,10,7 रूपा बल होता है तथा शेष ग्रहों की 6 रूपा बल होता है।

स्त्रीकारक ग्रहों की स्थिति यदि केन्द्र या त्रिकोणों में हो और सप्तमेश या द्वितीयेश अपनी राशि में स्थित हो तो मनुष्य का एक ही विवाह होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश यदि पाप ग्रहों से युक्त होकर 6,7,8, में शुक्र सहित हों तो उतनी ही स्त्रियों का नाश होता है। अथवा 6,8,12 भावों में उक्त पाप ग्रह हों तो उतनी स्त्रियों का नाश हो जाता है।

---

[250] बृहत्पाराशर होराशास्त्र षष्ठभावफलाध्यायः श्लोकः 1–12,

यदि लग्न में सूर्य हो और सप्तम में शनि हो तो ऐसी स्थिति में गर्भ धारण भी नहीं होता है। यदि सूर्य व शनि सप्तम में एकत्र हों और दशम स्थान में चन्द्रमा गुरु की दृष्टि से रहित हो तो ऐसे पुरुष की स्त्री को कभी सन्तान नहीं होती है। षष्ठेश और सूर्य शनि षष्ठ भाव में हो और बुध से दृष्ट होकर चन्द्रमा सप्तम में हो तो भी उक्त फल होता है। यदि षष्ठ व चतुर्थ स्थान में मंगल व शनि हों तो भी गर्भ धारण नहीं होता है।

बृहत्पाराशर होराशास्त्र में कहा गया है कि सप्तेश स्वभवन या स्वोच्च में रहे तो स्त्री का पूर्ण सुख होता है, किन्तु वहीं सप्तमेश स्वभवन, स्वोच्च, स्ववर्गोत्तमादि को छोड़कर अन्यत्र 6,8,12 में स्थित हों तो जातक की स्त्री रूग्णा होती है। सप्तम भवन में शुक्र हो तो जातक अत्यन्त कामी होता है। कहीं भी स्थित शुक्र पापग्रहयुक्त हो तो स्त्री की मृत्यु होती है। प्रबल सप्तमेश शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो जातक सर्वसम्पत्तिशाली होता है। जायेश अस्तंगत, नीच तथा शत्रु राशि स्थित या अति दुर्बल हो तो उस जातक की स्त्री रुग्णा होती है और उसे अनेक स्त्री होने का योग होता है। जायेश शुक्र या शनि के राशि वृष, तुला, मकर, कुम्भ राशि गत होते हुये शुभग्रहों से दृष्ट हो या स्वोच्च सप्तमेश शुभग्रह से दृष्ट हों तो निश्चय ही मनुष्य अनेक स्त्रीवाला होता है।

अष्टम भावफल

केन्द्रगो मृतिनाथस्तु दीर्घायुष्यप्रदः स्मृतः।
आयुः स्थानाधिपः पापैः सहैवायुषि संस्थितः।।
करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्र संस्थितः।
एवं हि शनिना चिन्ता कार्या तर्कैर्विचक्षणैः।
कर्माधिपेन च तथा चिन्तनं कार्यमायुषः।।
षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये।
लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति।।
स्वस्थाने स्वाशके किंवा मित्रेशे मित्रमंदिरे।
दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः।।
लग्नाष्टमपकर्मेशमन्दाः केन्द्रत्रिकोणयोः।
लाभे वा संस्थितास्तद्वद् दिशेयुदीर्घमायुषम्।।
वीक्षितः केन्द्रगैः सौम्यैर्लग्नपोऽतिबलान्वितः।
सद्वित्तं सद्गुणं चापि दीर्घमायुः प्रयच्छति ।।
लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चन्द्रे लाभसमन्विते।
रन्घ्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः।।
एषु यो बलवांस्तस्यानुसाराद् दैवविद्वरः।
विचार्य बहुधा विद्वान् जातकस्यायुरादिशेत्।।

अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तो जातक दीर्घायु होता है। अष्टमेश या लग्नेश पापग्रहों के साथ अष्टम में रहे तो जातक अल्पायु होता है। इसी प्रकार शनि तथा दशमेश से भी आयु का विचार करना चाहिए। षष्ठेश अथवा व्ययेश षष्ठ, व्यय स्थान गत या लग्न और अष्टम भाव

में हो तो जातक दीर्घायु होता है। लग्नेश अष्टमेश तथा पंचमेश अपने क्षेत्र, अपने नवांश या मित्र के घर में हो तो भी जातक दीर्घायु होता है। लग्नेश, अष्टमेश, दशमेश तथा शनि केन्द्र, त्रिकोण अथवा लाभ स्थानगत हो तो भी दीर्घायु होता है। प्रबल लग्नेश केन्द्रगत शुभ ग्रहों से देखा जाय तो धन, गुण से युक्त जातक दीर्घायु होता है। लग्नेश अपने उच्चराशि, चन्द्रमा लाभस्थान तथा गुरु अष्टम स्थान गत हों तो जातक दीर्घायु होता है।

जातकालंकार में कहा गया है कि यदि शुक्र, बुध और बृहस्पति अष्टम स्थान में स्थित हो या ये स्थिर राशियों 2,5,8,11 में हो तो मनुष्य कठिन एवं कष्टकर, कठोर कार्य करने वाला होता है। ऐसा व्यक्ति हृदय से कठोर, भावुकता से न्यून होता है। यदि अष्टमेश पाप ग्रह होकर एकादश में हो तो मनुष्य अल्पायु होता है। यदि अष्टमेश शुभ ग्रह से युक्त हो तो मनुष्य दीर्घायु होता है। शुभग्रह बुध, गुरु, शुक्र यदि तीनों या इनमें से दो भी स्थिर राशि में या अष्टम स्थान में स्थित हों तो मनुष्य के कार्य प्रायः सरलता से सिद्ध नहीं होते हैं। उसे कार्य सिद्धि के लिये प्रभूत परिश्रम करना पड़ता है। लेकिन अष्टम स्थान में शुभग्रह आयु के लिये हितकारक होते हैं।

यदि अष्टमेश पाप ग्रहों से युक्त होकर षष्ठ या द्वादश स्थानों में स्थित हो तो मनुष्य अल्पायु होता है। लग्नेशयुक्त अष्टमेश, षष्ठ या द्वादश में हो तो भी मनुष्य अल्पायु होता है। यदि अष्टमेश अष्टम में हो तो मनुष्य दीर्घायु होता है। यदि शनि अष्टम में हो तो भी मनुष्य दीर्घायु होता है। यदि अष्टमेश द्वितीय स्थान में हो तो मनुष्य प्रायः विरोधियों से घिरा हुआ और तस्कर होता है। 6,12 में अष्टमेश का होना आयु के लिये हानिकारक है। ऐसी स्थिति में अष्टमेश पापयुक्त या लग्नेशयुक्त भी हो तो यह कुप्रभाव अधिक होगा। अष्टमेश शुभग्रह हो या पापग्रह यदि अष्टम में होगा तो आयु की वृद्धि करेगा [251]।

बोध प्रश्न : – 2

1. गुरु पंचम भाव में हो तो पुत्र होते हैं –

क. 5, ख. 7, ग. 3, घ. 4,

2. अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तो जातक होता है –

क. अल्पायु, ख. दीर्घायु ग. मध्यायु, घ. भोगी

3. सप्तम भाव को कहते हैं –

क. आयु भाव, ख. मारक भाव ग. मातृ भाव घ. कर्म भाव

4. पंचम भाव से विचार किया जाता है –

क. पुत्र का, ख. मित्र का ग. पत्नी का, घ. भाई का,

5. षष्ठ भाव को कहते हैं –

क. पुत्र, ख. शत्रु,ग. जाया घ. मृत्य

[251] जातकालंकार श्लो. 26–27,

नवम भावफल

नवम भाव से पिता, पुण्य एवं भाग्य का विचार किया जाता है। प्रबल भाग्येश यदि भाग्य स्थानगत होवे तो जातक भाग्यवान् होता है। गुरु भाग्यस्थ हो, भाग्येश केन्द्रस्थ हो और लग्नेश भी प्रबल हो तो पूर्ण भाग्यशाली जातक होता है। बलिष्ठ भाग्येश शुक्रयुक्त होकर भाग्य स्थानगत होता है और गुरु लग्न से 1,4,7,10 स्थानों में हो तो जातक का पिता भाग्यवान् होता है। भाग्य स्थान से दूसरे या चौथे में मंगल हो और भाग्येश अपने नीचस्थानगत हो तो जातक का पिता निर्धन होता है। भाग्येश परमोच्चांशस्थ हो, भाग्यभाव का नवांश गुरुयुक्त हो और लग्न से केन्द्र स्थानों में शुक्र हो तो जातक का पिता दीर्घायु होता है। केन्द्रस्थित भाग्येश शुक्र दृष्ट हो तो जातक का पिता वाहनों से युक्त राजा या राजतुल्य होता है। भाग्येश कर्मस्थान में और कर्मेश भाग्य स्थानगत हो और शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो जातक का पिता धनाढ्य एवं यशस्वी होता है। सूर्य अपने परमोच्चांश पर स्थित हो, भाग्येश लाभस्थान गत हो तो जातक धर्मिष्ठ, राजप्रिय तथा पितृसेवी होता है । लग्न से नवम, पंचम में सूर्य हो और सप्तम स्थानस्थित भाग्येश गुरु से युत या दृष्ट हो तो जातक पितृभक्त होता है। भाग्येश धनभावगत और धनेश भाग्य स्थानगत हो तो 32 वर्ष के बाद जातक वाहन तथा यश का भागी होता है। षष्ठेश युक्त लग्नेश यदि भाग्य राशिस्थ हो तो पिता पुत्र में परस्पर शत्रुता होती है, साथ ही पिता कुत्सित स्वभाव का होता है [252]।

परमोच्चांशगे शुक्रे भाग्येशेन समन्विते।
भ्रातृस्थाने शनियुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत्।
गुरुणा संयुते भाग्ये तदीशे केन्द्रराशिगे।।
विंशाद् वर्षात्परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत्।
परमोच्चांशगे सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे।।
षट्त्रिंशाच्च परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत्।
लग्नेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे लग्नसंयुते।।
गुरुणा संयुते द्यूने लाभः स्याद्धनयानयोः।
भाग्याद् भाग्यगते राहौ भाग्येशे निधनं गते।।
अथवा नीचराशिस्थे भाग्यहीनो भवेन्नरः।

शुक्र यदि भाग्येश के साथ अपने परमोच्चांश में हो और सहज स्थान यदि शनि युक्त हो तो जातक बहुत भाग्यशाली होता है। भाग्यस्थान गत गुरु हो और भाग्येश केन्द्र राशिगत हो तो 20 वर्ष की अवस्था के बाद भाग्योदय कहना चाहिए। बुध अपने परमोच्चांशगत हों और भाग्येश नवमभावगत हो तो 36 वर्ष की अवस्था के बाद भाग्योदय कहना चाहिए। लग्नेश यदि भाग्यराशिगत हो, भाग्येश लग्नस्थ हो और सप्तमस्थ गुरु हो तो धन, वाहन की प्राप्ति

[252] बृहत्पाराशर होराशास्त्र नवमभावफलाध्यायः श्लोकः 1–11,

कहनी चाहिए। भाग्यस्थान से नवम में राहु, भाग्येश अष्टमभाव या नीच राशिगत हो तो मनुष्य भाग्यहीन होता है।

भाग्येशो मूर्तिवर्ती सुरपतिगुरुणालोकितो भूपवन्द्यो,
लग्नस्थो वाहनेशो नवमपतिरुभौ पश्यतश्चेत्स्वगेहम्।
सर्वासामास्पदं स्यान्मनुज इह तदा सम्पदां वाहनेशो,
रन्ध्रस्थानस्थितश्चेद् व्रजति हि मनुजो भाग्यराहित्यमेवम्।।
हीनानां वाहनानां तदनु चपलता प्राप्तिरेवं नराणां,
ज्ञेया होरागमज्ञैरथ नवमपतौ लाभगे राजवन्द्यः।
दीर्घायुर्धर्मशीलस्तदनु धनवपुर्वाहनेशाः स्वगेहे,
धर्मेशो लग्नवर्ती जनुषि यदि गजस्वामिसिंहासनानाम्।।

यदि नवमेश लग्न में स्थित हों और उसे बृहस्पति देखता हो तो मनुष्य राजपूज्य होता है। यदि चतुर्थेश व नवमेश लग्न में हों और अपने अपने भावों को देखते हों तो मनुष्य सभी संपतियों का स्वामी होता है। यदि चतुर्थेश अष्टम स्थान में हो तो मनुष्य का भाग्य सिद्ध नहीं होता है।

यदि चतुर्थेश अष्टम में हो तो ऐसे व्यक्ति को घटिया वाहनों की प्राप्ति होती है और मस्तिष्क में चंचलता बनी रहती है। यदि नवमेश एकादश स्थान में स्थित हो तो मनुष्य राजाओं द्वारा परिपूजित होता है। साथ ही ऐसा व्यक्ति दीर्घायु व धार्मिक होता है । यदि 1,2,4 भावों के स्वामी स्वक्षेत्र में हो और नवमेश लग्न में गया हो तो मनुष्य हाथी घोड़े आदि वाहनों व सिंहासन पर आधिपत्य रखता है।

वस्तुतः भाग्यविमर्श करते समय भाग्य से सम्बद्ध लग्न, धन, सुख, नवम, दशम, एकादश भावों पर ध्यान देना आवश्यक है। इन भावों में ग्रह स्थिति वा इन भावेशों की स्थिति, शुभाशुभ ग्रहों के योग या वृद्धि, सभी बातों पर ध्यान देना चाहिए। सभी राजयोग भाग्यविमर्श के अन्तर्गत हैं। अतः भाग्यभाव, भाग्येश, गुरु, बुध शुक्र, सूर्य एवं चन्द्रमा की स्थिति शुभ हो तो जातक परम भाग्यशाली होता है। विशेषतः पुरूष के जन्मांग में सूर्य एवं स्त्री के जन्मांग में चन्द्र का प्रबल होना परम आवश्यक है।

दशम भावफल

दशमभाव से आज्ञा, मान, भूषण, वस्त्र, व्यापार, निद्रा, प्रवज्या, आगम, कर्म, जीवन, यश, विज्ञान और विद्या का विचार किया जाता है। जातक पारिजात में कहा है कि दशमेश निर्बल हो तो जातक चंचल बुद्धि और दुराचारी होता है। बृहस्पति, बुध, शनि और सूर्य बलरहित और दुष्टस्थान में हो तो जातक सत्कर्महीन हो। दशवें में राहु वा सूर्य हो तो गंगास्नान का फल देता है। मीन राशि दशमभाव में हो और वह बुध तथा मंगल से युक्त हो तो जातक मुक्त होता है। दशमेश शुक्र से युक्त केन्द्र में बैठा हो, द्वादश में बुध हो वा

द्वादश का स्वामी वहाँ हो, उच्चराशि का हो तो जातक महान् पुण्य का भागी होता है [253]। बलवान् पांच या चार ग्रह केन्द्र या त्रिकोण में से एक स्थान में स्थित हों उनमें सबसे अधिक बलवाले ग्रह का आश्रमस्थ जातक होगा। दशम में बलवान् तीन ग्रह स्वोच्चादि वर्गस्थित हों, कर्मेश अधिक बलवान् हो तो दशमेश के सामान गण वाला होता है। यदि कर्मेश बल रहित होकर सप्तम भाव में स्थित हो तो जातक दुराचारी होता है। प्रवज्या योग को बनाने वाला ग्रह सूर्य, शनि एवं मंगल से युक्त हो तो मनुष्य धन, पुत्र, स्त्री से रहित होकर सन्यास प्राप्त करता है [254]।

लग्न से या चन्द्रमा से दशम भाव में जो ग्रह हो उस ग्रह के द्रव्य से मनुष्य की जीविका होती है। लग्न से वा चन्द्रमा से दशम सूर्य हो तो पिता से धन मिलता है। चन्द्रमा हो तो माता से, मंगल हो तो शत्रु से, बुध हो तो मित्र से, गुरु हो तो भाई से, शुक्र हो तो स्त्री से, शनि हो तो सेवक आदि से धनों की प्राप्ति होती है। यदि लग्न एवं चन्द्रमा दोनों से दशमभाव में ग्रह हों तो अपनी अपनी दशा में दोनों फल देंगे । यदि दशम में बहुत ग्रह हों तो अपनी दशा में सभी ग्रह धन देंगे। यदि लग्न एवं चन्द्रमा से दशमभाव में कोई ग्रह न हो तो लग्न, चन्द्रमा, सूर्य इनसे दशम भाव के पति जिस नवांश में हों उसका स्वामी जो ग्रह हो उसकी वृत्ति से धन की प्राप्ति कहनी चाहिए [255]।

स्वराश्यंशोच्चगे पूर्णबलोपेते तु कर्मपे।
पितृसौख्यान्वितो जातः पुण्यकर्मा सुकीर्तिमान्।।
कर्माधिपो बलोनश्चेत् कर्मवैकल्यमादिशेत्।
राहुः केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत्।।
सौम्ययुक्ते शुभस्थाने संस्थिते कर्मपे सति।
वाणिज्यतो राजतो वा लाभो हानिर्विपर्यये।।
दशमे पापसंयुक्ते कामे पापसमन्विते।
दुष्कृतिं लभते मर्त्यः स्वजनानां विदूषकः।।
कर्मेशे नाशराशिस्थे सैंहिकेय समन्विते।
जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृतिं लभते नरः।।
कर्मेशे द्यूनराशिस्थे मन्दभौमसमन्विते।
धनेशे पापसंयुक्ते शिश्नोदरपरायणः।।
तुंगराशिं समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसंयुते।
भाग्येशे कर्मराशिस्थे मानैश्चर्यप्रतापवान्।।
लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसंयुते।
ताभुवौ केन्द्रगौ वापि सुखजीवनभाग् भवेत्।।
कर्मेशे जलसंयुक्ते मीने गुरुसमन्विते।

---

[253] जातक पारिजात दशम–एकादश–द्वादश भावफलाध्याय, श्लो. 1–3,

[254] जातक पारिजात दशम–एकादश–द्वादश भावफलाध्याय, श्लो. 15–18,

[255] जातक पारिजात दशम–एकादश–द्वादश भावफलाध्याय, श्लो. 43,

वस्त्राभरणसौख्यादि लभते नात्र संशयः।।

पूर्णबली कर्मेश अपनी राशि, नवांश या उच्च में हो तो जातक पितृसौख्य युक्त पुण्य कार्य करने वाला तथा यशस्वी होता है। वही कर्मेश निर्बल हो तो जातक कर्महीन होता है। राहु केन्द्र या नवम पंचम भावगत हो तो वह ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ करने वाला होता है। कर्मेश शुभस्थान में शुभग्रहों से युक्त हो तो जातक को वाणिज्य अथवा राज्याश्रय से लाभ होता है। इसके विपरीत पाप युक्त कर्मेश अशुभ स्थान स्थित हो तो अशुभ कहना चाहिए। दशम तथा एकादश स्थान पापग्रहाक्रान्त हो तो मनुष्य दुष्कर्म करने वाला स्वजन का द्वेषी होता है। कर्मेश अष्टमस्थ होकर राहु युक्त हो तो जातक जनद्वेषी महामूर्ख तथा दुष्कर्मकारक होता है। कर्मेश शनि या मंगल के साथ सप्तम भाव में हो और सप्तमेश भी पापग्रह युक्त हो तो जातक व्यभिचारी तथा पेटू होता है। गुरुयुक्त कर्मेश अपने उच्चस्थ हो, भाग्येश कर्मराशि गत हो तो जातक मान ऐश्वर्य एवं प्रताप पूर्ण होता है। लाभेश दशम में, कर्मेश लग्न में हो या दोनों केन्द्रस्थ हो तो मनुष्य सुखी होता है। बली दशमेश गुरुयुक्त होकर मीन में हो तो जातक को निःसंदेह वस्त्र, आभूषण आदि का सौख्य होता है।

शुक्र युक्त गुरु मीनस्थहो, लग्नेश भी प्रबल हो, चन्द्रमा अपने उच्चराशिगत हो तो जातक अच्छे ज्ञान एवं सम्पत्ति से परिपूर्ण होता है। कर्मेश यदि लाभ स्थान में और लग्नेश लग्न में स्थित हो तथा शुक्र दशमस्थ हो तो जातक रत्नों से परिपूर्ण होता है। कर्मेश स्वोच्चस्थ होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो और गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य कार्यशील होता है। कर्मेश, लग्नेश दोनों लग्न में हो और चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोणगत हो तो जातक शुभ कार्य में संलग्न होता है [256]।

एकादश भावफल

एकादश भाव से सम्पूर्ण धन प्राप्ति एवं धन नष्ट होने का विचार किया जाता है।

लाभस्थानेन लग्नादखिलधनचयप्राप्तिमिच्छन्ति सर्वे
लाभस्थानोपयातः सकलबलयुतः खेचरो वित्तदः स्यात्।
भानुश्चेज्ज्ञातिवर्गादतिधनमुडुपो मातृवर्गेण भौमः
स्वोत्थाच्चान्द्रिर्यदीष्टप्रभुविबुधसुहृन्मातुलैर्वित्तमेति।।
जीवो यच्छति वेदशास्त्रयजनाचारादिपुत्रैर्द्धनं
शुक्रः स्त्रीजनकाव्यनाटककलासंगीतविद्यादिभिः।
दासीदासकृषिक्रियार्जितधनं धान्यं समृद्धं शनि–
र्विप्रादिद्युचरेण वीक्षितयुते विप्रादयो वित्तदाः।।
आयस्थः शुभखेचरः शुभधनं पापस्तु पापार्जितं
मिश्रैमिश्रधनं समेति मनुजस्तज्जातकोक्तं वदेत्।
लाभस्थानगतः समस्तगुणवानिष्टाधिकश्चेद्बली
जातो यानविभूषणाम्बरवधूभोगादिविद्याधिकः।।

---

[256] बृहत्पाराशर होराशास्त्र नवमभावफलाध्यायः श्लोकः 12—15

बल से युक्त ग्रह लाभ स्थान में स्थित हो तो धन को देता है। यदि बलवान् सूर्य लाभस्थान में हो तो अपने जाति अर्थात् दायादों से धन मिलता है। चन्द्रमा हो तो मातृ वर्ग से धन प्राप्त होता है। मंगल हो तो भाई से धन प्राप्त होता है। यदि बुध हो तो प्रभु से, देवता से, मित्र से और मामा से धन मिलता है। गुरु हो तो वेद–शास्त्र–यज्ञादि–आचार से तथा पुत्र से धन मिलता है। शुक्र हो तो स्त्री से, काव्य, नाटक, कला, संगीत विद्या से धन की प्राप्ति होती है। शनि हो तो दासी, दास, कृषि क्रिया से उपार्जित धनधान्य समृद्धि की प्राप्ति होती है। लाभस्थान ब्राह्मणादि ग्रह से युत दृष्ट हो तो ब्राह्मणादि से धन की प्राप्ति होती है। लाभ भाव में शुभग्रह हो तो शुभ से धन, पापग्रह हो तो पाप से धन, मिश्र ग्रह हो तो शुभ तथा पाप से उत्पन्न धन मनुष्य के पास होता है। लाभस्थान में अधिक बलवान् ग्रह हो तो समस्त गुणवाला तथा मित्रवाला, यान, आभूषण, वस्त्र, स्त्री भोगादि से युक्त पूर्ण विद्वान होता है।

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत् केन्द्रत्रिकोणयोः।
बहुलाभं तदा कुर्यात्तुंगगोऽर्कांशगोऽपि वा।।
लग्नेशे धनराशिस्थे जनेशे केन्द्रसंस्थिते।
गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभं विनिर्दिशेत्।।
सौम्ययुक्ते तृतीयस्थे लग्नेशे सति जातकः।
षटत्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वय निष्कभाक्।।
केन्द्रत्रिकोणगे चांगनाथे शुभसमन्विते ।
चत्वारिंशे तु सम्प्राप्ते स सहस्रार्धनिष्कभाक् ।।
लाभस्थाने गुरुयुते धने चन्द्रसमन्विते ।
गाग्यस्थानगते शुक्रे षट्सहस्राधिपो भवेत् ।।

लाभेश लाभस्थान या केन्द्र, त्रिकोण अथवा उच्चस्थ होकर सूर्यांश के भीतर अर्थात् अस्तंगत हो तो भी पूर्ण लाभ कहना चाहिए। लाभेश धनस्थान और धनेश केन्द्र में गुरु के साथ हो तो प्रचुर लाभ कहें। शुभग्रह युक्त लाभेश तृतीयस्थान में हों तो 36 वें वर्ष में जातक दो हजार स्वर्ण मुद्रा प्राप्त करता है। शुभग्रह युक्त आयेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 40 वें वर्ष में जातक 500 निष्क का भागी होता है। गुरु यदि लाभस्थान में, चन्द्रमा धनस्थान में, शुक्र भग्यस्थान में हो तो जातक 6000 निष्क का अधिप होता है।

वस्तुतः आज के समय में व्यापार का आधार स्वर्ण मुद्रा न होकर भारतीय मुद्रा है जिसकी तुलना स्वर्ण मुद्रा से की जाये तो कड़ोर के बराबर होगा। इन सबको अतिधनी के श्रेणी में रख सकते हैं।

लाभ स्थान से एकादश में चन्द्र, बुध के साथ गुरु हो तो जातक विविध रत्न, आभूषण आदि के साथ धन–धान्य का मालिक होता है। लाभेश लग्न में, लग्नेश लाभ में हो तो 33 वें वर्ष में हजार स्वर्ण मुद्रा प्राप्त करने वाला मनुष्य होता है । धनेश लाभस्थान में और लाभेश धनस्थान में हो तो विवाहानन्तर जातक का विशिष्ट भाग्योदय होता है। तृतीयेश लाभस्थान में और लाभेश तृतीय में हो तो जातक को भ्रातृगण से धनप्राप्ति तथा

दिव्य आभूषणों से युक्त होता है। लाभेश अपने नीच, अस्तंगत या त्रिक में पापग्रह से युक्त हों तो प्रचुर प्रयत्न के बाद भी लाभ नहीं होता है [257]।

द्वादश भावफल

द्वादशभाव से व्यय का विचार किया जाता है। व्यय के अनेक प्रकार होते हैं। यदि गुरु वा किसी शुभग्रह का व्यय भाव से संबन्ध हो तो सदमार्ग में अन्यथा कुमार्ग में धन का व्यय होता है। उसी प्रकार व्यय भाव से विदेशगमन, शयनसुखादि का भी विचार किया जाता है।

जातकालंकार में कहा गया है कि यदि द्वादश भाव का स्वामी लग्न में हो तो मनुष्य सुन्दर बोलने वाला तथा सुन्दर रूप वाला होता है। यदि द्वादशेश स्वराशि में द्वादश भाव में हो तो मनुष्य कृपणमति, पशु संपत्ति से युक्त और जागीरदार अर्थात् बड़ा भूमिपति होता है। द्वादशेश नवम में हो तो तीर्थदर्शन करने वाला, बहुत धार्मिक होता है। नवमस्थ द्वादशेश पापग्रह युक्त हो तो पाप कार्य में रत रहता है साथ ही ऐसा व्यक्ति धन संबंधी बेईमानी करता है। जैसा कि कहा है –

लग्नस्थे रिःफनाथे भवति सुवचनो मानवो रूपवान्वा
स्वर्क्षे कार्पण्यबुद्धिर्बहुतरपशुमान् ग्रामयुक्तः सदा स्यात्।
धर्मे तीर्थावलोकी बहुलवृषमतिः क्रूरयुक्ते च पापी
मिथ्याकोशान्तकृत् स्यान्नियतमिदमिति ज्ञेयमेवं सुधीभिः।।

बृहत्पाराशर होराशास्त्र में कहा है कि व्ययेश अपने राशि या उच्च में होकर शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो अथवा व्ययेश व्ययस्थ होकर शुभग्रहों से युत या दृष्ट हों तो जातक का शुभ कार्यों में व्यय होता है । व्ययाधिप चन्द्रमा यदि नवम, एकादश या पंचम स्थानों में से कहीं अपने उच्च वा अपने राशि, अपने नवांश में हो अथवा एकादश, नवम, पंचम भाव के नवांशगत हो तो जातक दिव्यागार, सुन्दर पलंग, सुगन्धित द्रव्य आदि का भोग करने वाला होता है। उपर्युक्त योगयुक्त जातक दिव्यवस्त्र, आभूषण, माल्य, असंख्य सम्पति से युक्त होकर विलासपूर्ण जीवन बिताता है [258]।

व्ययेश अपने शत्रुगृह, नीचराशि या नीचनवांश, षष्ठ, अष्टम स्थान अथवा उसके नवांश में हो तो जातक स्त्री–सौख्य या अन्य दिव्य भोगों से वंचित रहता है । उसे निरर्थक व्यय से भी खिन्न रहना पड़ता है। व्ययेश केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हों तो वह अपने स्त्रीसुख से परिपूर्ण होता है । दृश्य तथा अदृश्य अर्धचक्र में स्थित ग्रह क्रमशः प्रत्यक्ष एवं परोक्षरूप में फलदायक होते हैं ।(दृश्यार्ध चक्र सप्तम से लग्न बिन्दु पर्यन्त और अदृश्यार्धचक्र लग्न से सप्तम भाव तक कहे जाते हैं।) मंगल, सूर्य के साथ राहु यदि व्ययस्थानगत हो या व्ययेश सूर्य के साथ हो तो मनुष्य नरकगामी होता है। व्ययस्थान में शुभग्रह हो, व्ययेश अपने उच्च राशिगत होकर शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो निःसंदेह मनुष्य

[257] बृहत्पाराशर होराशास्त्र एकादशभावफलाध्यायः श्लोकः 7–11
[258] बृहत्पाराशर होराशास्त्र एकादशभावफलाध्यायः श्लोकः 1–4

मोक्षभागी होता है। व्ययेश पापग्रह युक्त हो, व्ययस्थान भी पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो जातक देश–देशान्तर घूमनेवाला होता है। व्ययेश तथा व्ययस्थान शुभराशि एवं शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो जातक स्वदेश में ही भ्रमणशील होता है। व्ययस्थान में शनि, मंगल आदि पापग्रहों से युक्त हो और शुभग्रह की उस पर दृष्टि नहीं हो तो जातक को पापमूलक धनोपार्जन होता है। लग्नेश व्ययस्थान गत हो और व्ययेश लग्नगत होकर शुक्र संयुक्त हों तो धर्ममूलक धनव्यय होता है [259]।

विप्रादिखेचरयुते सति विप्रमुख्यैः स्त्रीवर्गतस्तु तरुणीखचरेण युक्ते ।
रिष्फे नरग्रहयुते रिपुणा सुहृद्भे जातः सुहृज्जनवशाद्धननाशमेति ।।
त्यागी शुभग्रहयुते कृषकश्च धर्मी पापेऽवसानगृहगे तु विवादशीलः ।
नेत्रामयः पवनकृच्चपलोऽटनः स्यादुच्चस्वमित्रभवने तु परोपकारी ।।

भानुर्वा कृशशीतगुर्व्ययगतो वित्तस्य नाशं नृपै–
र्भौमो नाशयतीन्दुजेक्षितयुतो नानाप्रकारैर्द्धनम् ।
वगीशेन्दुसिता यदि व्ययगता वित्तस्य संरक्षकाः
सौम्यः शुक्रयुतेक्षितो यदि नृणां श ्यासुखं जायते ।।

जातक पारिजात में कहा गया है कि द्वादशभाव विप्रादि ग्रह से युक्त हो तो विप्रादि जाति से, स्त्रीसंज्ञक ग्रह से युक्त हो तो स्त्री वर्ग से, द्वादश भाव नर ग्रह से युक्त हो तो शत्रु के द्वारा, यदि वह मित्रराशि में हो तो मित्र से जातक के धन का व्यय होता है ।

व्यय भाव शुभग्रह से युक्त हो तो त्यागी, कृषक और धर्मात्मा होता है । द्वादशभाव पापग्रह से युक्त हो तो विवादी, वातव्याधी के कारण नेत्ररोगी, चपल और घूमनेवाला जातक होता है । यदि द्वादशस्थ ग्रह उच्च स्वगृही या मित्रगृही का हो तो परोपकारी होता है ।

सूर्य वा क्षीण चन्द्रमा बारहवें भाव में हो तो राजा के द्वारा धन का नाश, मंगल बुध से युक्त या दृष्ट हो तो नाना प्रकार से धन को नष्ट करता है । यदि द्वादश भाव में चन्द्रमा, शुक्र और बृहस्पति हो तो धन के रक्षक होते हैं । यदि बुध शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो जातक को शय्या का सुख होता है ।

बोध प्रश्न – 3

1. नवम भाव से ....विचार किया जाता है ।
क. पुण्य का, ख. शरीर का, ग. गृह का, घ. जाया का
2. दशम भाव से ....विचार किया जाता है ।
क. आय का, ख. व्यय का ग. कर्म का, घ. मृत्यु का,
3. द्वादश भाव में ....धन के रक्षक होते हैं ।
क. शनि, ख. सूर्य ग. मंगल घ. चन्द्रमा, शुक्र और बृहस्पति
4. द्वादश भाव का स्वामी ....में हो तो सुन्दर रूप वाला होता है ।
क. द्वितीय, ख. लग्न, ग. दशम, घ. पंचम

---

[259] बृहत्पाराशर होराशास्त्र एकादशभावफलाध्यायः श्लोकः 5–14,

5. गुरु लग्न से ....स्थानों में हो तो जातक का पिता भाग्यवान् होता है ।

क. 1,4,7,10, ख. 2,5,8,11, ग. 3,6,11, घ. 6,8,12,

2.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि जन्मांग गत द्वादश भाव का संबन्ध मानव के संपूर्ण जीवन से है। जन्मांग स्थित 12 भावों से मानव के हर पहलू का विचार किया जाता है। मानव के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त होने वाले सभी शुभाशुभ घटनाओं का आकलन द्वादश भाव के माध्यम से किया जाता है। जन्मांग के द्वारा न केवल मानव के इस जन्म की स्थिति का ज्ञान होता है अपितु मानव के पूर्व जन्म एवं अग्रिम जन्म के विषय में भी जन्मांग के 12 भावों से जानते हैं।

वस्तुतः लग्नेश केन्द्र (1,4,7,10) या त्रिकोण (9,5) में स्थित हों तो जातक को शारीरिक सौख्य होता है। वही यदि लग्नेश त्रिक (6,8,12) भाव में हों तो शारीरिक सौख्य नहीं होता है। लग्नेश यदि अस्तंगत हों, नीच स्थान या शत्रुक्षेत्रगत हों तो शरीर में रोग कहना चाहिए। परन्तु यदि शुभग्रह केन्द्र या त्रिकोण स्थानगत हों तो रोगों से मुक्त शरीर होता है।

लग्न या चन्द्रमा पर पापग्रहों की दृष्टि या संयोग हो, शुभ ग्रहों की दृष्टि नहीं हों तो जातक शारीरिक सुख से वंचित होता है। लग्न में शुभग्रह रहें तो जातक देखने में सुन्दर, पापग्रह रहें तो कुरूप होता है। लग्न पर शुभग्रहों की युति या दृष्टि होने पर निःसन्देह उसे शारीरिक सुख होता है।

लग्नेश, बुध, गुरु अथवा शुक्र केन्द्र या त्रिकोण गत हों तो जातक दीर्घायु, मतिमान्, धनि तथा राजप्रिय होता है। चरराशिगत लग्नेश यदि शुभग्रह से दृष्ट हों तो भी जातक यशस्वी, धनी, शारीरिक सौख्य सम्पन्न तथा विविध भोगों को भोगने वाला होता है। चन्द्र युक्त गुरु, बुध एवं शुक्र लग्न या केन्द्र में हों तो जातक राजलक्षण युक्त होता है। इसी प्रकार सभी भावों का विचार करना चाहिए।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

तनु – शरीर, प्रथम भाव की संज्ञा,

दीर्घायु – अधिक दिन जीनेवाला,

स्वोच्च – अपने उच्च स्थान में,

स्वगृही – अपनी राशि में,

शत्रुगृही – शत्रु ग्रह की राशि में

वातव्याधी – वात रोग यथा पेट में गैस बनना, जोड़ो में दर्द होना,

अस्तंगत – सूर्य के पास होने से ग्रह अस्त होते हैं।

निष्क – स्वर्ण मुद्रा को मामने का पैमाना।

जाया – पत्नी, सप्तम भाव,

पराक्रम – तृतीय भाव की संज्ञा,

केन्द्र – प्रथम, चतुर्थ, सप्तम एवं दशम की संज्ञा,
त्रिकोण – पंचम एवं नवम भाव की संज्ञा,

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर – 1

1. प्रथम भाव से विचार करते हैं – ग. तनु,
2. द्वितीय भाव का कारक ग्रह है – ख. गुरु,
3. धन भाव में शुभग्रह यदि उच्चादि वर्ग में हो तो जातक मुख होता है – क. सुन्दर
4. तृतीय भाव से विचार करते हैं – ग. भाई,
5. चतुर्थ भाव से विचार करते हैं– ख. माता

बोध प्रश्नों के उत्तर –2

1. गुरु पंचम भाव में हो तो पुत्र होते हैं – क. 5,
2. अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तो जातक होता है – ख. दीर्घायु
3. सप्तम भाव को कहते हैं – ख. मारक भाव
4. पंचम भाव से विचार किया जाता है – क. पुत्र का,
5. षष्ठ भाव को कहते हैं – ख. शत्रु,

बोध प्रश्नों के उत्तर –3

1. नवम भाव से ....विचार किया जाता है । क. पुण्य का,
2. दशम भाव से ....विचार किया जाता है । ग. कर्म का,
3. द्वादश भाव में ....धन के रक्षक होते हैं । घ. चन्द्रमा, शुक्र और बृहस्पति
4. द्वादश भाव का स्वामी ....में हो तो सुन्दर रूप वाला होता है । ख. लग्न,
5. गुरु लग्न से ....स्थानों में हो तो जातक का पिता भाग्यवान् होता है । क. 1,4,7,10,

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन
बृहत्पाराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
जातक पारिजात – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
जातकालंकार – रंजन पब्लिकेशन्स नई दिल्ली
मानसागरी – चौखम्भा विद्याभवन
लघुजातकम् – हंसा प्रकाशन
सारावली – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

2.10 सहायक ग्रन्थ सूची

बृहत्पाराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
जातक पारिजात – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
जातकालंकार – रंजन पब्लिकेशन्स नई दिल्ली
मानसागरी – चौखम्भा विद्याभवन
लघुजातकम् – हंसा प्रकाशन

सारावली – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रथम एवं द्वितीय भावफलों का विवेचन कीजिए ।
2. चतुर्थ, पंचम एवं षष्ठ भावों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत कीजिए ।
3. नवम दशम, एकादश भावों के फलों को समझाईए ।
4, सप्तम तृतीय एवं द्वादशभावों का विवेचन कीजिए ।

इकाई - 3 भावेश फल

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

इकाई एम. ए. ज्योतिष पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष की तीसरी इकाई भावेश फल से संबन्धित है प्रस्तुत। भावों के अधिपति को भावेश वा भावाधिपति कहते हैं। भावों की संख्या द्वादश है परन्तु ग्रहों की संख्या सात है। ग्रहों में सूर्य सिंह राशि का अधिपति माना गया है। कर्क राशि का अधिपति चन्द्रमा है तथा इसके अतिरिक्त पंचतारा ग्रह अर्थात् मंगल, बुध, गुरु, शुक्र एवं शनि दो –दो राशियों के अधिपति होते हैं। मेष एवं वृश्चिक राशियों के अधिपति मंगल, वृष एवं तुला के अधिपति शुक्र, मिथुन एवं कन्या के अधिपति बुध, धनु एवं मीन के अधिपति गुरु तथा मकर एवं कुम्भ के अधिपति शनि ग्रह हैं। द्वादश भावों का निर्माण मेषादि द्वादश राशियों से होता है। जिस भाव में जो राशि होता है उसका अधिपति ग्रह उस भाव का अधिपति माना जाता है, तथा इसे ही भावेश संज्ञा है। पूर्व की इकाई में आपने भावफल का अध्ययन कर लिया है। अब आप इस इकाई में भावेश फल का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

1. इस इकाई के माध्यम से छात्र राशि, भाव, एवं भावेश के अन्तर को जान सकेगे।
2. फलादेश की प्रक्रिया में भावेश के महत्त्व को जान सकेंगे।
3. बारह भावों के भावेशों के द्वारा फलादेश करने की प्रक्रिया को जान सकेंगे।
4. भावेश किस भाव में प्रबल तथा किस भाव में निर्बल होता है, जान सकेंगे।
5. केन्द्रेश, त्रिकोणेश, त्रिषडायेश, त्रिकेशादि फलादेश की प्रक्रिया में कैसे सहायक होते हैं, जान सकेंगे।

3.3 भावेश का द्वादश भावजन्य फल ज्ञापन में विशेषता –

भाव वा भावेश का फल नवग्रहों की स्थिति पर निर्भर करता है। यदि ग्रह अपने घर का हो, अपने मित्र राशि में हो, अपने नवांश में हो, उदित हो, अस्त न हो, अपने उच्च में हो, अपने मूलत्रिकोण राशि में हो, शुभग्रह से दृष्ट हो, षडबल से युक्त हो, शुभग्रहों की दृष्टि हो तो भावेश प्रबल माना जाता है। ठीक इसके विपरीत यदि ग्रह निर्बल हो तो अच्छे भाव का स्वामी ग्रह भी जातक के लिये मारक एवं अनेक प्रकार के कष्टों को देनेवाला बन जाता है। लघुपाराशरी में कहा गया है कि सूर्य एवं चन्द्रमा मारक नहीं होते परन्तु यदि जन्मांग में निर्बल होते हैं तो रोग कारक एवं निर्धनता को अवश्य देते है जो मृत्यु तुल्य ही होता है। एवमेव अन्य ग्रह भी चाहे पापग्रह हो या शुभग्रह बली होने पर ही राजयोगों को देते हैं अन्यथा जातक के अस्तित्व को नष्ट कर देते है। अतः आवश्यक है कि जन्मांग परीक्षण के समय लग्न कुण्डली, चन्द्रकुण्डली एवं नवांश कुण्डली गत ग्रहों के बलाबल के परीक्षण पश्चात् ग्रहाधारित, भावाधारित एवं भावेशाधारित फलादेश जातक को बताया जाए।

3.4 भावेश फल

भाव के स्वामी को भावेश कहते हैं। द्वादश भावों के अधिपों के लग्नादि प्रत्येक

भावों में स्थित होने पर जातक को जो फल की प्राप्ति होती है, उसका विचार जन्मांग के विचार के समय अति आवश्यक होता है। इस पाठ के अन्तर्गत लग्नेशादि द्वादशभावेशों का लग्नादि द्वादश भाव में क्या क्या फल होते हैं, उसका क्रमशः विचार करेंगे।

लग्नेश फल विचार

होरारत्न में बृहत्पराशर होराशास्त्र के तरह ही लग्नेश का द्वादशभाव जन्य फल का विवेचन किया है। लग्नेश लग्न में हो तो जातक रोम से रहित, दीर्घजीवी, अत्यन्त बलवान् और राजा अथवा विभूति से युक्त होता है। दूसरे भाव में हो तो धनी, दीर्घजीवी, मोटा, प्रधान तथा अच्छे कार्यों में आसक्त होता है। लग्नेश तीसरे भाव में हो तो अच्छे बान्ध्वों से युक्त, धर्म में आसक्त, दानी, वीर और बली होता है। चतुर्थ भाव में हो तो राजा का प्रिय, दीर्धजीवी, पिता का भक्त होता है। लग्नेश पंचम भावमें हो तो पुत्रवान्, त्यागी, स्वामी, दीर्घजीवी, सुशील और अच्दे कार्य में आसक्त होता है। लग्नेश छठे भाव में हो तो जातक रोगहीन, भूमि प्राप्त करने वाला, लोभी, धनी, शत्रु को नाश करने वाला होता है। लग्नेश सप्तम भाव में हो तो जातक तेजस्वी, सुशील और सुशीला तेजस्विनी तथा सुन्दर स्त्री से युक्त होता है। लग्नेश अष्टम भाव में हो तो जातक लोभी, बड़ा धनी, दीर्घजीवी एवं यदि पापग्रह हो तो कड़वा बोलने वाला तथा पीले देह का होता है। लग्नेश नवम भाव में हो तो जातक श्रेष्ठ बान्धवों से युक्त, पुण्यवान्, समान बली, सुशील, सुन्दर रू॰ में कार्य करने वाला, प्रसिद्ध एवं तेजस्वी होता है। लग्नेश दशम भाव में हो तो राजा से लाभ प्राप्त करने वाला,विद्वान्, सुशील, गुरु एवं माता की पूजा करने वाला, राजा और सम्पत्तिशाली होता है। लग्नेश एकादश भाव में हो तो जातक सुन्दर जीवन व्यतीत करने वाला, पुत्रवान्, प्रसिद्ध तेजस्वी, बली एवं सुखी होता है। लग्नेश द्वादश भाव में हो तो जातक चतुरता से बोलने वाला, बुद्धिमान्, अपने परिवार वालों से प्रेम करने वाला, विदेशवासी तथा भोगी होता है [260]। जातकसारदीप में भी लग्नेश का द्वादशभावजन्य फल समानरूप से प्रतिपादित किया गया है [261]।

लग्नेशे लग्नगे ह्रष्ट पुष्टांगश्च पराक्रमी।
पनस्वी चातिचपलो द्विभार्यः परगोऽपि च।।
लग्नेशे धनगे विज्ञो लाभसौख्यान्वितोऽनिशम्।
सुशीलो धर्मविन्मानी बहुभार्यो गुणैर्युतः।।
लग्नेशे सहजे याते सिंहतुल्यपराक्रमी।
सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्नरः।।
लग्नेशे तुर्यगे जातो मातृसौख्य समन्वितः।
बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौन्दर्यसंयुतः।।
लग्नेशे पुत्रगे क्रोधी सुतसौख्यं च मध्यमम्।।

---

260 होरारत्न, अध्याय 7, प्रथम भाव विचार, श्लोक 1—12,
261 जातक सारदीप, तनुचिन्ताध्याय, श्लोक 60—71,

अर्थात् लग्नेश के लग्नस्थ होने पर जातक हृष्ट पुष्ट शरीर से युक्त, पराक्रमी, मनस्वी, अतिचपल, दो स्त्री वाला एवं परस्त्रीगामी होता है, वही धनभावगत हो तो मनुष्य विज्ञ, लाभ एवं सौख्यपूर्ण, सुशील, धर्मवेत्ता, अभिमानी अनेक स्त्री वाला और गुणयुक्त होता है। सहज भावगत लग्नेश हो तो जातक सिंह तुल्य पराक्रम वाला, सभी सम्पत्तियों से युक्त स्वाभिमानी, दो स्त्री वाला तथा बुद्धिमान् होता है। चतुर्थभावगत लग्नेश हो तो जातक मातृसौख्य तथा अनेक भाइयों से युक्त, कामी, गुणी तथा देखने में सुन्दर होता है। लग्नेश पंचम भावगत हो तो मनुष्य क्रोधी, मानी तथा राजवल्लभ होता है तथा साथ ही उसकी प्रथम सन्तान नष्ट हो जाती है, और उसे पुत्रसौख्य मध्यम होता है।

लग्नाधिपेऽरिगे पापग्रहयुक्तेक्षितेऽपि वा।
शत्रोः पीडा भवेत्तस्यकष्टं शारीरिकं तथा।।
लग्नेशे सप्तमे क्रूरे भार्या तस्य न जीवति।
विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोऽपि वा।।
लग्नेशेऽष्टमभावस्थे सिद्धविद्यो गदाकुलः।
परनारीरतश्चौरौ द्यूतासक्तोऽतिकोपनः।।
लग्नेशे नवमे याते भाग्यवान् जनवल्लभः।
विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्युतः।।
लग्नेशे कर्मगे राजपूज्यस्तातसुखान्वितः।
निजोपार्जितवित्तोऽतिप्रसिद्धः पुरुषो भवेत्।।
लग्नेशे लाभभावस्थे बहुलाभान्वितो जनः।
सद्यशोगुणशीलाढ्यो बहुदारः प्रजायते।।
लग्नेशे व्ययगे जातस्तनुसौख्यसमुज्झितः।
निरर्थव्ययकृत् क्रोधी न युक्ते नेक्षिते शुभै :।।

लग्नेश षष्ठभावगत होकर पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो जातक को शत्रुजन्य पीड़ा तथा शारीरिक क्लेश होता है। पाप लग्नेश सप्तमस्थ हो तो जातक स्त्री विहीन होता है। ऐसा मनुष्य विरक्त या परदेश भ्रमणशील, दरिद्र या राजा होता है। लग्नेश अष्टमस्थ हो तो जातक रोगी, परस्त्रीगामी, चोर, जुआरी, क्रोधी तथा सिद्धविद्या वाला होता है। लग्नेश नवम भावगत हो तो जातक भाग्यशील, जनप्रिय, विष्णुभक्त, मितभाषी, पुत्र स्त्री एवं धन से परिपूर्ण होता है। कर्मस्थ लग्नेश के होने पर मनुष्य पितृसौख्यपूर्ण, राजपूज्य तथा अपने भुजबल से धनार्जन करके प्रसिद्ध पुरुष होता है। लग्नेश लाभस्थ हो तो बहुविध लाभ, शुभ्रयश, सद्गुण तथा अनेक स्त्रीवाला मनुष्य होता है। लग्नेश व्ययस्थ हो तो जातक शरीरसुख वंचित होता है। शुभग्रह का योग या दृष्टि व्यय भाव पर नहीं हो तो वह निरर्थक व्यय करने वाला तथा क्रोधी भी होता है। शुभग्रह के संयोग या दृष्टि से उपर्यक्त फल अल्प होता है।

धनेश फल

होरारत्न में कहा गया है कि यदि धनेश लग्न में हो तो जातक लोभी, व्यवसायी,

सुन्दर कार्य करने वाला, धनी, प्रसिद्ध लक्ष्मीवान् एवं भोगी होता है। धनेश द्वितीय भाव में हो तो जातक धनवान्, धार्मिक कार्यों में अनुरक्त, अधिक लाभ से युक्त, लोभी और सर्वदा चतुर होता है। तृतीय भावगत धनेश हो तो जातक व्यापारी, कलह करने वाला, कलाओं से रहित, चोर, चंचल चित्त वाला, नम्रता और न्याय से रहित होता है। धनेश चतुर्थ भाव में हो तो पिता से परम लाभ करने वाला, सदा उद्यमी परन्तु यदि पापग्रह हो तो दीर्घायु और माता का नाशक होता है। धनेश पंचम भाव में हो तो जातक न्याय करने वाला, विख्यात, लोभी, दुखी और धनी होता है। धनेश षष्ठ भाव में हो तो जातक धन संग्रह करने में अनुरक्त, शत्रुओ को नाश करने वाला होता है। धनेश सप्तम भाव में हो तो जातक चिन्तक, भोग व विलास से युक्त, धन संग्रह करने वाली स्त्री से युक्त लेकिन पापग्रह धनेश होकर सप्तम भाव में हो तो वन्ध्या स्त्री का स्वमी होता है। धनेश अष्टम भाव में हो तो जातक आत्मघाती, भोगी, विलासी, दूसरे की हिंसा करने वाला तथा परम सौभाग्यवान होता है। धनेश नवम भाव में हो तो जातक दानी प्रसिद्ध, भाग्यशाली एवं यदि पापग्रह हो तो दरीद्री, भिक्षुक और धूर्तता से आजीविका चलाने वाला होता है। धनेश दशम भाव में हो तो जातक राजा से सम्मानित, राजा से लक्ष्मीवान्, माता एवं पिता का पालन करने वाला होता है। धनेश लाभ भाव में हो तो जातक परम व्यवहारवारी, धनी और परिवार का पालन कर्ता होता है। धनेश व्यय भाव में हो तो जातक विदेश के द्वारा धनवान्, दुष्कर्म करने वाला, भिक्षुक और शुभग्रह हो तो युद्ध को जीतने वाला होता है [262]।

धनेशे तनुगे कामी परकार्यरतो धनी।
कण्टकः स्वकुटुम्बस्य निष्ठुरः पुत्रवान् जनः।।
धनेशे धनगे बालो धनवान् गर्वसंयुतः।
द्विदारो वा त्रिदारो वा सुतहीनः प्रजायते।।
धनेशे सहजस्थे तु विक्रमी मतिमान् गुणी।
लोलुपः कामुकः पापयुक्ते स्याद्देवनिन्दकः।।
धनेशे तुर्यगे नानाविध सम्पत्तिसंयुतः।
सगुरौ सभृगौ वापि तुंगस्थे राजसन्निभः।।
धनाधिपे तु सूनुस्थे सदार्थार्जनतत्परैः।
सूनुभिः स्वैर्युतो जातो जायते धनवानपि।।
धनेशे रिपुगे सौम्ययुते शत्रोर्धनागमः।
पापोपेतेऽर्थहानिः स्यात् गुदे चोर्वोभवेच्च रुक्।।
धनेशे सप्तमे पापैर्युते दृष्टे जनो भिषक्।
परदाररतस्तस्य जाया च व्यभिचारिणी।।
धनेशे मृत्युभावस्थे भूमिद्रव्यान्वितो जनः।
जायासौख्यं भवेदल्पं ज्येष्ठभ्रातृसुखं नहि।।
धनेशे भाग्यगे जातो धनवानुद्यमी पटुः।

[262] होरारत्न, अध्याय 7, द्वितीय भाव विचार, श्लोक 1–12,

बाल्ये रोगी सुखी पश्चात् यावदायुः समाप्यते।।
धनेशे दशमे यस्य कामी मानी स पण्डितः।
बहुदारधनैर्युक्तः पुत्रसौख्यविवर्जितः।।
धनेशे लाभगे जातः सर्वदोद्योगतत्परः।
यशस्वी मानसंयुक्तो भवेल्लाभान्वितः सदा।।
धनेशे व्ययगे जातो मानसाहससंयुतः।
पराश्रयी भवेज्ज्येष्ठ सूनुसौख्यसमुज्झितः।।

धनेश के लग्नस्थ होने पर मनुष्य धनी, निष्ठुर, पुत्रवान्, दूसरों के कार्य में तत्पर और अपने कुटुम्ब वर्ग के लिये काँटे की तरह आँखों में खटकने वाला होता है। धनेश धनभावगत हो तो जातक धनी, अभिमानी, दो या तीन स्त्री वाला और पुत्र विहीन होता है। धनेश सहज भावगत हो तो मनुष्य गुणी, बुद्धिमान्, पराक्रमी, लोभी, कामी होता है। यदि वहाँ पाप गह भी हो तो जातक देवनिन्दक होता है। धनेश सुखस्थान में हो तो अनेक विध संपत्तियों से युक्त जातक होता है। वही धनेश गुरु या शुक्र सहित या उच्चस्थ होकर चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य राजा के समान होता है।

धनेश पंचमस्थ हो तो धनार्जन करने वाले अनेक पुत्रों से युक्त मनुष्य धनवान् होता है। शुभयुक्त धनेश षष्ठस्थ हो तो शत्रु से धनागम होता है। पापयुक्त धनेश षष्ठस्थ हो तो धनहानि और गुदा तथा वक्षस्थल में रोग होता है। सप्तमस्थ धनेश पाप ग्रहों से युक्त एवं दृष्ट हो तो मनुष्य वैद्य होता है और स्वयं तथा उसकी स्त्री दोनों व्यभिचारी होते हैं। धनेश अष्टमभावस्थ हों तो मनुष्य को भूमि द्रव्य आदि का सौख्य पूर्ण होता है, स्त्री सौख्य अल्प, ज्येष्ठ भ्रातृ सुख का अभाव होता है। भाग्यस्थानगत धनेश रहें तो मनुष्य धनी, उद्यमी, बचपन में रोगी और बाद में जीवन र्प्यन्त सुखी होता है। दशमगत धनेश के होने पर मनुष्य कामी, मानी, पण्डित एवं अनेक स्त्रियों से युक्त तथा पुत्रसौख्य रहित होता है। लाभगत धनेश रहें तो मनुष्य उद्योगशील, यशस्वी, मानी तथा सतत लाभान्वित होता है। व्ययगत धनेश रहें तो मनुष्य साहसी, परिश्रमी तथा ज्येष्ठ पुत्र सौख्य से वंचित रहता है।

तृतीयेश फल

जातक सारदीप के अनुसार तृतीयेश लग्न में हो तो जातक वक्ता, लम्पट, अपने लोगों में फूट डालने वाला, सेवाभावी तथा क्रूर होता है। तृतीयेश द्वितीय में हो तो जातक धनहीन, अल्पायु, बन्धुओं का विरोध करने वाला होता है। तृतीयेश तृतीय भाव में हो तो जातक मध्यम धैर्यवाला, मित्रों वाला, अच्छे बन्धुओं वाला, देवता एवं गुरुओं की पूजा में रतरहने वाला, राजा से लाभ पाने वाला परन्तु शुभग्रह हो तो राजतुल्य होता है। तृतीयेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता एवं भाई को सुखदायक, माता का विरोधी, पिता के धन का नाशकर्ता होता है। तृतीयेश पंचम भाव में हो तो जातक पुत्र, भाई एवं बन्धु से पोषित, दीर्घायु एवं परोपकारी होता है। तृतीयेश षष्ठ भाव में हो तो जातक बन्धु विरोधी, नेत्ररोगी, भूमिपति एवं हमेशा रोगी होता है। तृतीयेश सप्तम भाव में हो तो जातक रूपवती पत्नी वाला तथा पत्नी सौभाग्यवती होती है किन्तु यदि पापग्रह हो तो जातक की पत्नी अपने

देवर से संबन्ध रखने वाली होती है। तृतीयेश अष्टम भाव में हो तो जातक भाइयों का नाशक होता है। तृतीयेश नवम भाव में हो तो जातक धार्मिक, अच्छे मित्र वाला, भ्रातृसहायक परन्तु यदि पापग्रह हो तो बन्धुपरित्यक्त होता है। तृतीयेश दशम भाव में हो तो जातक राजमान्य, माता एवं उसके बन्धुओं का सत्कार करने वाला, बिरादरी में श्रेष्ठ एवं चिन्तामुक्त होता है। तृतीयेश एकादश भाव में हो तो जातक अच्छे मित्र वाला, राज्य लाभ करने वाला, बन्धुओं का उपकार करने वाला होता है। तृतीयेश द्वादश भाव में हो तो जातक मित्रों का विरोधी, अपने बन्धुओं को सन्ताप देने वाला, बन्धुओं से दूर रहने वाला तथा विदेश में रहता है [263]।

तनुस्थिते तृतीयेशे पुरुषार्थपरोऽर्थवान्।
अविद्यः किन्तु मतिमान् जायते साहसी नरः।।
धनस्थे सहजेशे तु परदारार्थलोलुपः।
निर्विक्रमो जनः स्थूलः स्वल्पारम्भी न सौख्यभाक्।।
तृतीयस्थे तृतीयेशे विक्रमी भ्रातृसौख्ययुक्।
धनपुत्रान्वितो हृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।
तृतीयेशे सुखस्थे तु सुखी भवति मानवः।
अतिक्रूरा तस्य भार्या धनाढ्यो मतिमान् स्वयम्।।
तृतीयेशे सुतस्थे तु जातः सुतयुतो गुणी।
पापेक्षित युते क्रूरा भार्या तस्य प्रजायते।।
तृतीयेशे रिपौ याते भ्रातृशत्रुर्महाधनी।
मातुलानां सुखं न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति।।
तृतीयेशे सप्तमस्थे बाल्ये कष्टयुतः सदा।
पश्चात् सौख्यं च लभते नृपानुगमने रतः।।
तृतीयेशेऽष्टमस्थे तु जातः स्यात् स्तेनकर्मकृत्।
स्वावृत्तिपरश्चान्ते नृपालान्मृत्युमादिशेत्।।
तृतीयेशे तु नवमे स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत्।
पितृसौख्योज्झितो जातः किन्तु पुत्रादिसौख्यभाक्।।
तृतीयेशे तु कर्मस्थे बाहूपार्जितवित्तवान्।
दुष्टस्त्रीपोषणे सक्तो नानासौख्ययुतो नरः।।
तृतीयेशे तु लाभस्थे स्वभुजार्जितवित्तवान्।
मूर्खः कृशो महारोगी साहसी परसेवकः।।
तृतीयेशे व्ययस्थे तु व्ययकृद् दुष्कृतौ जनः।
तत्पिता क्रूरचेताः स्यात् स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत्।।

तृतीयेश लग्नस्थ हो तो जातक पुरुषार्थ करने वाला धनी, साहसी, बुद्धिमान् किन्तु अनपढ़ होता है। तृतीयेश के धनस्थ होने पर मनुष्य परस्त्री तथा परधन का लालची, पराक्रमरहित,

[263] जातक सारदीप, सहजभावाध्याय, श्लोक 5–16,

स्थूल, कार्यारम्भ में अरूचिशील तथा सौख्य रहित होता है। सहजेश यदि सहजस्थ हो तो मनुष्य पराक्रमशील, भतृसौख्यपूर्ण, धन, पुत्र सम्पन्न सतत हृष्ट होकर अद्भुत सौख्य भोक्ता होता है। तृतीयेश सुखस्थ हो तो मानव सुखी धनाढ्य होता है किन्तु उसकी पत्नी क्रूर प्रकृति वाली होती है। सहजेश पंचमस्थ हो तो जातक गुणी तथा पुत्रसौख्ययुक्त होता है। सहजेश के साथ पापग्रह का संयोग अथवा उसकी दृष्टि हो तो उसकी स्त्री क्रर स्वभाववाली होती है। सहजेश षष्ठस्थ हो तो भाइयों से शत्रुता, मामा से सुखाभाव, महाधनी और मामी से प्रेम करने वाला जातक होता है। तृतीयेश सप्तमस्थ हो तो जातक बचपन में दुःखी, बाद में सुखी तथा राजानुगामी होता है। अष्टमस्थ सहजेश हो तो जातक चोर होता है। सेवावृत्ति में लीन वह अन्त में राजा के द्वारा मृत्यु पाता है। तृतीयेश नवमस्थ हो तो स्त्रीयों के द्वारा गाग्योदय कहना चाहिए। ऐसे जातक को पितृ सौख्य नहीं होता है, किन्तु पुत्रादि सौख्यों से वह परिपूर्ण होता है। तृतीयेश कर्मस्थ हो तो मनुष्य अपने बाहुबल से धनोपार्जन करने वाला अनेकविध सौख्यपूर्ण और दुष्ट स्त्री के पोषण में रत होता है। तृतीयेश लग्नस्थ हो तो जातक मूर्ख, दुर्बल, रोगी, साहसी, दूसरे का सेवक तथा अपने भुजबल से धनोपार्जन करने वाला होता है। तृतीयेश व्ययभाव गत हो तो मनुष्य दुष्कर्म में खर्चा करने वाला होता है एवं उसका पिता निष्ठुर स्वभाव वाला होता है और स्त्रियों से उसका गाग्योदय होता है।

सुखेश फल

होरारत्न में कहा गया है कि चतुर्थेश यदि प्रथम भाव में हो तो जातक पिता व पुत्र से स्नेह करने वाला एवं पिता के नाम से विख्यात होता है। यदि क्रूर ग्रह चतुर्थेश हो और वह धन भाव में हो तो जातक पिता से विरोध करने वाला, यदि शुभग्रह चतुर्थेश हो तो पिता का सेवा करने वाला होता है। चतुर्थेश यदि तृतीय भाव में हो तो जातक का पिता प्रसिद्ध होता है। जातक धर्मात्मा एवं पिता के बन्धुओं का पालन करने वाला होता है। चतुर्थेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता के सहयोग से प्रभुत्व पाने वाला, अभिमानी, धर्मात्मा, सुखी एवं खजाने का स्वामी होता है। चतुर्थेश यदि पंचम भाव में हो तो जातक पिता व पुत्र के लिये लाभ करने वाला, दीर्घायु, विख्यात, पुत्रवान् और पुत्र का पालन करने वाला होता है। चतुर्थेश यदि शत्रु भाव में हो तो जातक पिता के धन का नाशक, पिता का शत्रु परन्तु यदि पापग्रह हो तो पिता के लिये दोषी तथा शुभग्रह हो तो धन का संग्रह करने वाला व पुत्रवान् होता है। चतुर्थेश यदि सप्तम भाव में हो तो जातक स्त्री का पालन करने वाला, यदि भौम व शुक्र हो तो व्यभिचारिणी स्त्री से युक्त होता है। चतुर्थेश यदि अष्टम भाव में हो तो जातक रोगी, दरिद्री, बुरे कार्यों में अनुरक्त होता है। चतुर्थेश यदि नवम भाव में हो तो जातक का पिता संगीत को छोड़कर सतस्त विद्याओं का जानकार, पिता के धर्म पर चलने वाला होता है। चतुर्थेश यदि दशम भाव में हो तो जातक माता के साथ पिता से त्यक्त, पिता दूसरे का आश्रयी, शुभग्रह हो तो दूसरों की सेवा करने वाला होता है। चतुर्थेश यदि आय भाव में हो तो जातक पिता का पालक, अच्छा कार्य करने वाला, पिता का भक्त,

दीर्घायु एवं रोग से अशान्त होता है। चतुर्थेश यदि व्यय भाव में हो तो जातक के पिता की परदेश में मृत्युेती है [264]।

तुर्येशे तनुभावस्थे जननीसौख्यसंयुतः।
विद्यासद्गुणसम्पन्नो भूमिवाहनवान्नरः।।
तुर्येशे तु द्वितीयस्थे नानासम्पत्समन्वितः।
कुटुम्बी साहसी मानी भोगी च कुहकान्वितः।।
तुर्येशे सहजस्थे तु स्वभुजार्जितवित्तवान्।
उदारो गुणवान् दाता दासयुक्तः पराक्रमी।।
तुर्येशे तु तुरीयस्थे मन्त्री सर्वधनाधिपः।
चतुरः शीलवान् मानी सुविज्ञः स्त्रीप्रियः सुखी।।
तुर्येशे सुतभावस्थे सुखी सर्वजनप्रियः।
विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान्।।
तुर्येशे शत्रुभावस्थे हतमातृसुखो भवेत्।
मनस्वी व्यभिचारी च चौरः क्रोधी दुरात्मवान्।।
तुर्येशे सप्तमगते बहुविद्यासमन्वितः।
पित्रार्जितधनत्यागी सभायां मूकवद् भवेत्।।
तुर्येशेऽष्टमगे जातो गेहादिसुखवंचितः।
मातापित्रोः सुखं स्वल्पं क्लीवो वा जारजो भवेत्।।
तुर्येशे भाग्यगे लोकप्रियोऽनेकसुखान्वितः।
मानी गुणान्वितो विष्णुभक्तियुक्तो भवेन्नरः।।
सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः।
रसायनी महाहृष्टो यतात्मा सुखसंयुतः।।
तुर्येशे लाभभावस्थे सदैवान्योपकारकः।
उदारो गुणवान् दाता नित्यरोगी जनो भवेत्।।
तुर्येशे व्ययगे हीनभवनादिसुखो नरः।
मूर्खो दुर्व्यसनासक्तोऽलसश्चापि प्रजायते।।

सुखेश लग्नस्थ हो तो मनुष्य मातृसौख्य, विद्या सम गुण, भूमि, वाहनादि से परिपूर्ण होता है। सुखेश धन स्थानगत हो तो मनुष्य सर्वविध सम्पत्ति से युक्त, साहसी, मानी, अनेक परिवार वाला, मायावी तथा विलास शील होता है। सुखेश तृतीयभावस्थ हो तो मनुष्य उदार, गुणी, दान देने वाला, पराक्रमी, भृत्यों से युक्त और अपनी भुजाओं के बल से धनोपार्जन करने वाला होता है। सुखेश सुख स्थानगत हो तो मनुष्य सर्व सम्पत्ति युक्त, मन्त्री, सुशील, चतुर, सर्वतोभावेन सुखी, सुविज्ञ, मानी तथा स्त्री से अधिक प्रेम करने वाला होता है। पंचम भावस्थ सुखेश हों तो जातक सुखी तथा सर्वजन प्रिय होता है। वह ईश्वर भक्त तथा अपने भुजबल से धनोपार्जन करता है। सुखेश षष्ठभावस्थ हो तो मातृ सुख विहीन, क्रोधी,

---

[264] होरारत्न, अध्याय 7, चतुर्थ भाव विचार, श्लोक 1–12

व्यभिचारी, दुरात्मा तथा मनस्वी होता है। सप्तमभावगत सुखेश हो तो जातक अनेक विद्याओं को जानने वाला, पैतृक सम्पत्ति को छोड़ने वाला तथा सभा में जड़ होता है। सुखेश अष्टमभावस्थ हो तो जातक गृहादि के सुख से रहित, नपुंसक, तथा जार से उत्पन्न होता है। ऐसे जातक को माता पिता का सुख भी अल्प मिलता है।

सुखेश यदि भाग्यस्थानगत हो तो मनुष्य जनप्रिय, अनेक सौख्यपूर्ण, मानी, गुणी तथा विष्णुभक्त होता है। दशमस्थ सुखेश हो तो जातक राजपूज्य, परम हृष्ट, सुखी, जितेन्द्रिय तथा रसायन शास्त्र का जानकार होता है। लाभस्थ सुखेश हो तो मनुष्य उदार, परोपकारी, गुणी, दाता तथा सतत रोगी होता है। सुखेश व्ययस्थ हो तो भवन सौख्य विहीन, मूर्ख, दुर्व्यसनयुक्त तथा आलसी जातक होता है।

बोध प्रश्न

1. लग्नेश लग्नस्थ हो तो जातक होता है।

क. पराक्रमी ख. निर्बल, ग. मूर्ख घ. आलसी,

2. लग्नेश पापग्रह से युक्त षष्ठभावगत हो तो जातक को होता है।

क. शारीरिक क्लेश, ख. शारीरिक सुख, ग. स्त्री विहीन, घ. विरक्त,

3. धनेश धनभावगत हो तो जातक होता है।

क. देवनिन्दक, ख. पुत्रविहीन ग. बुद्धिमान्, घ. लोभी

4.तृतीयेश तृतीयस्थ हो तो जातक होता है।

क. भ्रातृविहीन, ख. भ्रातृसौख्यपूर्ण, ग. डरपोक, घ. बचपन में दुःखी

5. चतुर्थेश चतुर्थ भाव में बैठा हो तो जातक होता है।

क. सर्वसम्पत्तियुक्त, ख. संपत्तिविहीन, ग. स्त्री से घृणा करने वाला, घ. मूर्ख,

पुत्रेश फल –

होरारत्न के अनुसार यदि पंचमेश लग्न भाव में हो तो जातक विख्यात, विशाल शरीरवाला, शास्त्रज्ञाता तथा शुभ कार्य को करने वाला होता है। पंचमेश धन भाव में हो तो जातक धन से हीन, कष्टभोगी होता है। पंचमेश तृतीय भाव में हो तो जातक सुन्दर वाणी बोलने वाला, अच्छे मित्रों से विख्यात होता है। पंचमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता के कार्यों में अनुरक्त, माता का भक्त, परम यदि पापग्रह हो तो पिता के विरूद्ध आचरण करने वाला जातक होता है। पंचमेश पंचम भाव में हो तो जातक बुद्धिमान्, अभिमानी, बोलने में चतुर, पुत्र से युक्त तथा प्रसिद्ध होता है। पंचमेश शत्रु भाव में हो तो जातक शत्रु स्वरूप, आत्मचिन्तन से हीन अर्थात् ज्ञान शून्य किन्तु यदि पापग्रह हो तो रोगी, धनहीन होता है। पंचमेश सप्तम भाव में हो तो जातक की स्त्री कन्या के साथ सुन्दर भाग्य व धन से युक्त, गुरु व देवता की भक्त होती है। पंचमेश अष्टम भाव में हो तो जातक दूषित वाणी बोलने वाला, स्त्री का दास, अंगहीन होता है। पंचमेश नवम भाव में हो तो जातक सुन्दर, प्रौढ विद्वान्, कवि, गीत का ज्ञाता, राजा से सम्मानित, स्वरूपवान् एवं नाटक प्रिय होता है। पंचमेश दशम भाव में हो तो जातक राजा का कार्य करने वाला, राजा से ऐश्वर्य प्राप्त करने वाला, शुभकार्यों में अनुरक्त एवं माता के लिये सौ प्रकार से सुख देने वाला होता है।

पंचमेश आय भाव में हो तो जातक वीर, पुण्य करने वाला, भोगी, कला से युक्त एवं राजा से लाभ करने वाला होता है। पंचमेश व्यय भाव में हो तो जातक पुत्र से हीन, शुभग्रह हो तो पुत्र से युक्त, पुत्र की चिन्ता से चिन्तित तथा विदेश में रहने वाला होता है [265]।

सुखेशे तनुगे सूरिरन्यवित्तापहारकः।
कृपणः कुटिलश्चैव सुतसौख्यान्वितो जनः।।
सुतेशे धनगेऽनेक सूनुर्धनयशोऽन्वितः।
मानी स्त्रीवल्लभो जातः कुटुम्बपरिपालकः।।
सुतेशे तु तृतीयस्थे जातः स्याद् भतृवल्लभः।
मायावी पिशुनश्चैव कृपणः स्वार्थसाधकः।।
सुतेशे तुर्यगे जातो मातृसौख्यान्वितः सदा।
लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरुः।।
सुतेशे सुतगे सौम्य युक्ते जातः सुतान्वितः।
सपापे सुतहीनोऽपि गुणयुक्तः सुहृत्प्रियः।।

पंचमेश यदि लग्नस्थ हो तो जातक कृपण, कुटिल, विद्वान्, पुत्र सौख्यविहीन तथा परधन को हरने वाला होता है। पंचमेश धनस्थ हो तो मनुष्य अनेक पुत्र, धन, यश आदि से परिपूर्ण मानी, स्त्री प्रिय तथा परिजन पालक होता है। पंचमेश तृतीयस्थ हो तो जातक भाइयों का प्रिय, मायावी, चुगलखोर, कंजूस तथा अपने स्वार्थों का साधक होता है। सुखभाव गत हो तो जातक मातृ सुखसम्पन्न, धनवान्, मतिमान्, सचिव अथवा राजगुरु वा अध्यापक होता है। पंचम भावगत पंचमेश शुभग्रहयुक्त हो तो जातक पुत्र सौख्यपूर्ण, पापग्रहयुक्त होने पर पुत्र विहीन, गुणवान् तथा मित्रप्रिय होता है।

सुतेशे शत्रुगृहगे सुतः श्त्रुत्वमाप्नुयात्।
मृतो वा दत्तकः किंवा क्रीतो वा तनयो भवेत्।।
सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्म समन्वितः।
सदोपकारनिरतः सुतसौख्ययुतो नरः।।
सुतेशेऽष्टमगे जातो मितसूनुसुखो भवेत्।
कासश्वासी क्रोधयुक्तः सुखहीनश्च जायते।।
सुतेशो नवमे यस्य तत्सुतो नृपसन्निभः।
जनोऽसौ ग्रन्थ निर्माता विख्यातः कुलदीपकः।।
सुतेशे कर्मगेहस्थे जायते जातको नृपः।
शुभ्रकीर्तिः प्रभुर्नानाविधसौख्यसमन्वितः।।
सुतेशे लाभभावस्थे विद्वान् लोकप्रियो जनः।
चतुरो ग्रन्थनिर्माता धनिकोऽनेकसूनुयुक्।।
सुतेशे रिष्फभावस्थे पुत्रसौख्यविवर्जितः।
जातकः क्रीततनयो ग्राह्यपुत्रोऽथवा भवेत्।।

---

[265] होरारत्न, अध्याय 7, पंचम भाव विचार, श्लोक 1–12

सुतेश यदि पंचमभावगत हो तो पुत्र की मृत्यु हो ताती है। दत्तक या क्रीत का पिता होता है अळावा उसका पुत्र शत्रु होता है। सप्तमस्थ होने पर मनुष्य मानी, धार्मिक, परापकारी तथा पुत्र सौख्यपूर्ण होता है। अष्टमभावगत होने पर जातक क्रोधी, कास–श्वास रोग युक्त, दुःखी तथा अल्प पुत्रसौख्य वाला होता है। नवमस्थ होने पर जातक का पुत्र राजा के समान होता है। खुद भी ग्रन्थ लिखने वाला, वंश में विख्यात् होता है। दशमस्थ पंचमेश यदि हो तो जातकराजा होता है। उसका पिर्मल यश व्याप्त रहता है और वह अनेक सौख्यभागी होता है। एकादश भवस्थ पंचमेश हो तो मनुष्य विद्वान्, जनप्रिय, धनी, ग्रन्थ निर्माण में कुशल, तथा अनेक पुत्रों से युक्त होता है। व्ययभावस्थ पंचमेश हो तो मनुष्य पुत्रसौख्यहीन, क्रीत या दत्तक पुत्र वाला होता है।

रोगेश फल

होरारत्नम के अनुसार षष्ठेश यदि प्रथम भाव में हो तो जातक मंगल कार्यों से हीन, कुटुम्बियों को दुख देने वाला, शत्रुघाती होता है। षष्ठेश यदि धन भाव में हो तो जातक दुष्ट, निपुण, परमसंग्रही, उपदिष्ट, प्रसिद्ध, रोगी और सन्तानहीन होता है। षष्ठेश यदि तृतीय भाव में हो तो जातक मनुष्यों को कष्ट देने वाला, स्त्रियों के रमण में आसक्त होता है। षष्ठेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता से शत्रुता करने वाला, संकट से पुत्रवान् और पिता से पवित्र धन प्राप्त करने वाला होता है। षष्ठेश यदि पंचम भाव में हो तो जातक पिता से शत्रुता एवं पुत्र से मृत्यु प्राप्त करता है। षष्ठेश यदि षष्ठ भाव में हो तो जातक रोगहीन, शत्रुता करने वाला, सुखी, लोभी, दुख रहित होता है। षष्ठेश यदि सप्तम भाव में हो तो जातक की स्त्री विरोध करने वाली, उग्र स्वरूपा एवं संताप करने वाली होती है। शनि षष्ठेश होकर अष्टम भाव में हो तो जातक संग्रहिणी रोग से युक्त, यदि चन्द्रमा या भौम या बुध हो तो जहर से या भय से युद्ध में मरण, सूर्य हो तो सिंह से या राजा से, गुरु हो तो अधिक सांस से और शुक्र हो तो आँख के रोग से युक्त होता है। षष्ठेश यदि नवम भाव में हो तो जातक लंगड़ा, अनेकों का विरोधी, शास्त्र को न मानने वाला होता है। षष्ठेश यदि दशम भाव में हो तो जातक माता का शत्रु, दुष्ट, धर्मात्मा, पुत्र पालन में बुद्धिवाला, माता से द्रोह करने वाला होता है। षष्ठेश यदि आय भाव में हो तो जातक का शत्रु से मरण, चोर जन्य हानि तथा पशुओं से लाभ होता है। षष्ठेश यदि व्यय भाव में हो तो जातक के पशु, धन, धान्य का विनाश, गमनागमन अथवा लक्ष्मी से प्रसन्न होता है [266]।

षष्ठेशे तनुगे मानी जातकस्तु रुजान्वितः।
कीर्तिवित्तगुणोपेतो ज्ञातिशत्रुश्च साहसी।।
षष्ठेशे वित्तगे जातो वंशख्यातोऽतिसाहसी।
वक्ता सुखी प्रवासी च स्वकर्त्तव्यपरो भवेत्।।
षष्ठेशे विक्रमस्थे तु भ्रातृशत्रुः क्रुधान्वितः।
जतो विक्रमहीनः स्याद् दासस्तस्योत्तरप्रदः।।
षष्ठेशे तुर्यभावस्थे जातो मातृसुखोज्झितः ।

[266] होरारत्न, अध्याय 7, षष्ठ भाव विचार, श्लोक 1–12

मनस्वी पिशुनो द्वेषी चलचित्तोऽपि वित्तवान्।।
षष्ठेशे सुतगे जातश्चलमित्रधनादिकः।
स्वार्थी दयालुः सुखितो द्वेषकृत्तनयादिभिः।।
षष्ठेशे रिपुभावस्थे शत्रुता ज्ञातिभिः सदा।
मित्रत्वमन्यजातीयैः मध्यमर्थादिजं सुखम्।।
षष्ठेशे सप्तमे जातो जायासुखविवर्जितः।
वित्तकीर्तिगुणोपेतः सासी मानवान् भवेत्।।
षष्ठेशेऽष्टमगे रोगी वैरयुक्तो मनीषिभिः।
परस्त्रीवित्तलाभार्थी जातकः शौचवर्जितः।।
षष्ठेशे नवमे जातः काष्ठपाषाणविक्रयी।
व्यवहारे क्वचिद्धानिः क्वचिद्वृद्धिश्च तस्य हि।।
षष्ठेशे कर्मगे जातो वक्ता ख्यातो निजान्वये।
पितृभक्तिविहीनश्च प्रवासे सुखितो भवेत्।।
षष्ठेशे लाभभवने धनाप्ती रिपुतो भवेत्।
धनवान् गुणवान् मानी साहसी सुतवर्जितः।।
षष्ठेशे रिष्फगे जातो विद्वेष्टा स्यान्मनीषिणाम् ।
व्यसनेऽर्थव्ययी जीवहिंसासक्तश्च जायते ।।

षष्ठेश यदि लग्नगत हो तो जातक रोगी, मानी, यशस्वी, धनी, गुणी, साहसी तथा अपने सम्बन्धियों का शत्रु होता है। यदि वह धनगत हो तो मनुष्य अपने वंश मे विख्यात, साहसी, वक्ता, सुखी, परदेश में निवास करने वाला तथा अपने कर्त्तव्य में तत्पर रहता है। षष्ठेश यदि तृतीय भावगत हो तो मनुष्य भाइयों का दुश्मन, क्रोधी, पराक्रमहीन, अशिष्ट नौकर वाला होता है। षष्ठेश यदि चतुर्थ भावगत हो तो जातक मातृ सुख से वंचित रहता है और वह मनस्वी, चुगलखोर, दूसरों से द्वेष रखने वाला और चंचल प्रकृति होते हुये भी धनी होता है। यदि पंचम भावस्थ षष्ठेश हो तो मित्र, धन आदि सभी उसके अस्थिर रहते हैं। वह स्वार्थी दयावान्, सुखी तथा पुत्रादिकों से द्वेष करने वाला होता है। यदि षष्ठेश षष्ठस्थ हो तो अपने सम्बन्धियों से सदा शत्रुता, दूसरी जाति वालों से मित्रता और मध्यम धनादिक सुखवाला होता है। यदि सप्तम भावगत षष्ठेश हो तो मनुष्य स्त्री सौख्य विहीन, धन, गण से सम्पन्न, साहसी तथा मानी होता है। यदि षष्ठेश अष्टम भावगत हो तो मनुष्य रोगी, विद्वद् द्वेषी, दूसरे की स्त्री तथा धन को प्राप्त करने के इच्छुक और अपवित्र आचरण से युक्त होता है। यदि षष्ठेश नवमस्थ हो तो जातक लकड़ी व पत्थर बेचने वाला, व्यापार में कभी हानि और कभी वृद्धि को प्राप्त करने वाला होता है। यदि षष्ठेश दशमभावस्थ हो तो अपने वंश में विख्यात, वक्ता, पितृभक्ति विहीन, सुखपूर्वक परदेश में रहने वाला होता ह । यदि षष्ठेश एकादश भावगत हो तो मनुष्य शत्रु से दान प्राप्ति करने वाला धनी, गुणी, साहसी तथा अपुत्र होता है। यदि व्ययभावस्थ षष्ठेश हो तो जातक विद्वानों का द्वेषी, दुर्व्यसन में खर्च करने वाला और जीव हिंसक होता है।

सप्तमेश फल

होरारत्न के अनुसार सप्तमेश प्रथम भाव में हो तो जातक स्नेह से रहित, भोगवती, रूपवती और सुन्दर चित्तवाली एक पत्नी वाला होता है। सप्तमेश धन भाव में हो तो जातक की पत्नी दुष्टा, पुत्रों से हीन, कलह करने वाली होती है। सप्तमेश तृतीय भाव में हो तो जातक आत्मबली, बान्धव प्रिय होता है। सप्तमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक चंचल, पिता से शत्रुता रखने वाला, स्नेही होता है। सप्तमेश पंचम भाव में हो तो जातक भाग्यशाली, पुत्रों से युक्त होता है। सप्तमेश षष्ठ भाव में हो तो जातक स्त्री से शत्रुता करने वाला, रोगिणी स्त्री से युक्त होता है। सप्तमेश सप्तम भाव में हो तो जातक दीर्घायु, स्नेही, प्रेमी, निर्मल स्वभाववाला होता है। सप्तमेश अष्टम भाव में हो तो जातक वेश्याओं में आसक्त, दूसरे के घर एवं स्त्री में अनुरक्त होता है। सप्तमेश नवम भाव में हो तो जातक तेजस्वी, शीलवान् होता है। सप्तमेश दशम भाव में हो तो जातक राजा का दोषी, लम्पट, दुष्ट, ससुर प्रसिद्ध एवं जातक की स्त्री अपने सास की वंश में होती है। सप्तमेश आय भाव में हो तो जातक स्त्री का भक्त, रूपवती, सुशीला, विवाहिता और प्रसव के समय निधन प्राप्त करने वाली होती है। सप्तमेश व्यय भाव में हो तो जातक की स्त्री घर के बन्धनों से मुक्त, चंचला व दुष्टा होती है [267]।

जायेशे तनुगे जातः परजायासु लम्पटः।
दुष्टो धीरोऽतिचतुरो भवेद् वातामयार्दितः।।
जायेशे धनभावस्थेऽनेकस्त्रीभिः समागमः।
स्त्रीद्वारा वित्तसंलाभः दीर्घसूत्री च जायते।।
जायेशे सहजस्थे तु जायते मृतसन्ततिः।
कदाचिद् दुहितुः प्राप्तिर्जीवेद्यत्नात्तु तत्सुतः।।
जायेशे तुर्यभावस्थे जाया नैव पतिव्रता।
धर्मात्मा सत्यसंयुक्तः स्वयं दन्तरुजान्वितः।।

जायेश यदि लग्नगत हो तो मनुष्य परस्त्री लम्पट, दुष्ट, गम्भीर, अति चतुर तथा वातरोगी होता है। जायेश धनगत हो तो अनेक स्त्रियों से सम्भोग, स्त्री द्वारा धनप्राप्ति और दीर्घसूत्री होता है। सहज भावगत जायेश हो तो जातक को मृत सन्तान होता है, कभी पुत्री का भी जन्म होता है। बहुत प्रयत्न के बाद एक पुत्र भी जीवित रहता है। जायेश चतुर्थ भावगत हो तो जातक की पत्नी पतिव्रता नहीं होती है किन्तु स्वयं वह धर्मात्मा सत्यशील तथा दन्तरोगी होता है।

जायेशे सुतगे मानी भवेत् सर्वधनाधिपः।
सदैव हर्षसंयुक्तो नरः सर्वगुणैर्युतः।।
जायेशे शत्रुभावस्थे जाया तस्य च रोगिणी।
तया वा सह विद्वेषः क्रोधनः स च निस्सुखः।।
जायेशे सप्तमे जातो जायासुखसमन्वितः ।

[267] होरारत्न, अध्याय 7, सप्तम भाव विचार, श्लोक 1–12

धैर्यबुद्धिर्युतो विद्वान् वातरोगी च जायते।।
जायेशे रन्ध्रगे जायासुखं न लभते क्वचित्।
दुःशीला रोगिणी तस्य भार्या नैव वंशवदा।।
जायेशे नवमस्थे तु नानास्त्रीभिः समागमः।
नानारम्भी भवेत् तस्य स्त्रीषु चित्तं हि केवलम्।।
जायेशे कर्मणे जातः सुतवित्तादिसंयुतः।
धर्मात्मा जायते किन्तु वश्या तस्य नहि प्रिया।।
जायेशे लाभगे जातो जायातो वित्तवान् भवेत्।
सुतादिजं सुखं स्वल्पं कन्याधिक्यं च जायते।।
जायेशे रिष्फगे जातो दरिद्रः कृपणस्तथा।
वस्त्राजीवी पुमान् किन्तु व्ययशीला च तत् प्रिया।।

जायेश यदि पंचमभावस्थ हो तो मनुष्य मानी, सम्पत्तिशाली, सतत प्रसन्न तथा सभी गुणों का आगार होता है। षष्ठभाव गत यदि वह हो तो जातक की पत्नी रुग्णा होती है, या उसके साथ जातक को द्वेष होता है। खुद वह क्रोधी तथा दुःखी रहता है। जायेश यदि जायाभावगत हो तो मनुष्य पत्नी सुखयुक्त होता है। साथ ही वह धीर, सुबुद्ध विद्वान् तथा वातरोगी होता है। जायेश अष्टमस्थ हो तो जातक स्त्रीविहीन होता है और उसकी स्त्री दुःशीला, रुग्णा तथा वश में नहीं रहने वाली होती है। नवमस्थ जायेश हो तो जातक अनेक स्त्रियों से सम्भोग करने वाला होता है। वह अनेक कार्यो का आरम्भ करता है पर उसका चित्त स्त्रियों में ही लगा रहता है। दशमस्थ जायेश हो तो मनुष्य धर्मात्मा, पुत्र, वित्त आदि से युक्त होता है, किन्तु स्त्री उसके अधीन नहीं रहती है। लाभभावस्थ जायेश हो तो स्त्री द्वारा धन की प्राप्ति होती है। उस व्यक्ति को पुत्रसौख्य अल्प होता है किन्तु कन्याएँ अधिक होती है। द्वादश भावस्थ जायेश हो तो मनुष्य दरिद्र, कृपण तथा वस्त्र के द्वारा जीविका चलाने वाला होता है। उसकी स्त्री अधिक खर्च करने वाली होती है।

अष्टमेश फल

होरारत्न के अनुसार अष्टमेश प्रथम भाव में हो तो जातक अधिक विघ्न बाधाओं से युक्त तथा लम्बी बीमारी से मृत्यु प्राप्त करता है। अष्टमेश द्वितीय भाव में हो तो जातक अल्पायु, शत्रुता करने वाला, चोर, तथा यदि शुभग्रह हो तो शुभ एवं राजा के द्वारा मृत्यु प्राप्त करने वाला होता है। अष्टमेश तृतीय भाव में हो तो जातक बान्धव एवं मित्रों का विरोध करने वाला, व्ययी, दूषित वाणी का एवं चंचल होता है। अष्टमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता से धन प्राप्त करने वाला, पिता से लड़ाई करने वाला और रोगी पिता वाला होता है। अष्टमेश पंचम भाव में हो तो जातक पुत्र से हीन, अध्टमेश शुभग्रह हो तो पुत्र उत्पन्न होकर नष्ट हो जाता है। अष्टमेश षष्ठ भाव में हो तो जातक राजा का विरोधी, यदि उच्चस्थ गुरु हो तो दुखी, शुक्र हो तो नेत्र में रोग, चन्द्रमा हो तो दुखी, भौम हो तो ईर्ष्यालु, बुध हो तो सर्प से भयभीत, शनि हो तो स्थूलता से दुखी, चन्द्र राहु हो तो कष्ट से युक्त और चन्द्रमा शुभग्रह से युक्त हो तो कष्टरहित होता है। अष्टमेश सप्तम भाव में हो

तो जातक दुष्ट, दूषित स्त्रियों का प्रेमी, गुदा रोग से युक्त, यदि पाप ग्रहो तो स्त्री के कारण मृत्यु प्राप्त करने वाला होता है। अष्टमेश अष्टम भाव में हो तो जातक व्यापारी, रोग से रहित, स्वस्थ, धूर्त होता है। अष्टमेश नवम भाव में हो तो जातक संगति से हीन, जीवों का घाती, पापी, मित्रों वसे रहित, स्नेहहीन, मुखका रोगी होता है। अष्टमेश दशम भाव में हो तो जातक राजकीय कार्यकर्ता, दुष्ट कार्यो में आसक्त, आलसी, पापी, होता है। शुभग्रह अष्टमेश आय भाव में हो तो जातक बाल्यकाल में दुःखी और पीछे दीर्घायु तथा पापग्रह हो तो अल्पायु होता है। अष्टमेश व्यय भाव में हो तो जातक चोर, निकृष्ट अन्तःकरण वाला, अंगहीन, मरने के बाद उसके पार्थिवशरीर को कौआ आदि भक्षण करते हैं [268]।

अष्टमेशे तु तनुगे सुरभूसुरनिन्दकः।
हतदेहसुखो नित्यं जातकः स्याद् व्रणान्वितः।।
अष्टमेशे धनगते जातो बाहुबलोज्झितः।
स्वल्पवित्तयुतस्तस्य नष्टार्थाप्तिः प्रजायते।।
अष्टमेशे तृतीयस्थे हतभ्रातृसुखो नरः।
दुर्बलो दासरहितश्चालसोऽपि प्रजायते।।
अष्टमेशे तु सुखगे सुद्द्रोहपरः पुमान्।
जननी–गेहभूसौख्य–सहितोऽपि भयान्वितः।।
अष्टमेशे सुतस्थे तु स्वल्पापत्योऽर्थवान्नरः।
जायते मन्दधिषणो दीर्घायुष्यसमन्वितः।।
अष्टमेशे तु रिपुगे विजेता द्विषतां भवेत्।
रुजार्त्तः शैशवे तोयात् सर्पादपि भयं व्रजेत्।।
अष्टमेशे तु कामस्थे जायाद्वितयसंयुतः।
सति तस्मिन् सपापे तु व्यवसाये धनक्षयः।।

अष्टमेश लग्नस्थ हो तो जातक देव ब्राह्मण का निन्दक, शारीरिकसुख से रहित तथा व्रगणयुक्त होता है। अष्टमेश धनभाव गत हो तो मनुष्य बाहुबल रहित, थोड़ी सम्पत्तिवाला तथा नष्ट अर्थ की प्राप्ति करने वाला होता है। अष्टमेश सहजस्थ हो तो भ्रातृ सौख्य रहित, दुर्बल, निर्भृत्य और आलसी होता है। सुखस्थ अष्टमेश हो तो मनुष्य मित्र द्रोही, मातृ, गृह, भूमि आदि के सुख से रहित होते हुये भी हमेशा खुश रहता है। अष्टमेश पंचम भावस्थ हो तो मनुष्य अल्प सन्तान वाला तथा धनी होता है, लेकिन उसकी बुद्धि मन्द होती है और दीर्घजीवी होता है। शत्रुभावगत अष्टमेश हो तो जातक शत्रुओं को जीतने वाला, बचपन में रोगी तथा जल एवं सर्प से भय होता है। अष्टमेश सप्तमस्थ हो तो दो स्त्रियाँ होती है। सपाप ग्रह सप्तमस्थ हो तो व्यापार में धनक्षय होता है।

अष्टमेशेऽष्टमस्थे तु दीर्घायुष्मान् जनो भवेत्।
बलहीने तु मध्यायुः स्तेनश्च गुरुनिन्दकः।।

---

[268] होरारत्न, अध्याय 7, अष्टम भाव विचार, श्लोक 1–12

अष्टमेशे तु भग्यस्थे महापापी च नास्तिकः।
परस्त्रीधनलुब्धोऽसौ दुःस्वभावा च तत्प्रिया।।
अष्टमेशे तु कर्मस्थे तातसौख्यसमुज्झितः।
सौख्यदृग्युतिहीने तु पिशुनः कर्मवर्जितः।।
अष्टमेशे भवे बाल्ये दुःखी चान्ते सुखी नरः।
निःस्वः क्रूरयुते सौम्ययुक्ते दीर्घायुषावृतः।।
अष्टमेशे व्ययस्थे तु नरः स्याद् दुष्कृतौ व्ययी।
क्रूरयुक्ते विशेषेण स्वल्पायुष्मान् प्रजायते।।

अष्टमेश अष्टमस्थ हो तो मनुष्य दीर्घायु होता है उसे निर्बल रहने पर मध्यायु, चोर तथा गुरुनिन्दक होता है। भाग्यस्थ अष्टमेश हो तो जातक महापापी, नास्तिक, दूसरे की स्त्री एवं धन पर लालच करने वाला होता है। उसकी स्त्री दुष्टस्वभाव की होती है। अष्टमेश कर्मस्थ हो तो जातक को पितृसुख नहीं होता है । अष्टमेश यदि शुभग्रह की दृष्टि या संयोग से विहीन हो तो जातक चुगलखोर तथा निष्क्रिय होता है। अष्टमेश एकादशभावस्थ हो तो जातक बचपन में दुःखी और अन्त में सुखी होता है। वही लाभस्थ अष्टमेश पापयुक्त हो तो जातक निर्धन और शुभग्रहयुक्त हो तो दीर्घायु होता है। व्ययस्थ अष्टमेश हो तो मनुष्य दुष्कार्य में खर्च करने वाला होता है। पापयुक्त होने पर स्वल्पायु कहना चाहिए।

अभ्यासार्थ प्रश्न

1. पंचमेश लग्नगत हो तो जातक.........होता है।
क. कृपण. ख. पुत्र सौख्य युक्त, ग. सरल, घ. दानी
2. षष्ठेश षष्ठ भाव में हो तो जातक को ....होती है।
क. चुगलखोर ख. संबंधी से शत्रुता ग. मित्रता, घ.मूर्खता
3. सप्तमेश पंचम में हो तो जातक.........होता है।
क. मानी, ख. निर्धन ग. दुखी घ. अल्पायु
4 अष्टमेश लग्नस्थ हो तो जातक..............होता है।
क. देवताओं का पूजक, ख. ब्राह्मण निन्दक, ग. सुख युक्त, घ. धनी,
5.अष्टमेश पंचम भाव में हो तो जातक.........होता है।
क. धनी,ख. गरीब, ग. बहु संतान युक्त, घ. अल्पायु

नवमेश फल

होरारत्न में कहा है कि नवमेश लग्न भाव में हो तो जातक देवता व गुरुजनों में श्रद्धा रखने वाला, वीर, लोभी, राजा के तुल्य कार्य करने वाला, छोटे ग्राम में निवास करने वाला और बुद्धिमान् होता है। नवमेश धन भाव में हो तो जातक शूद्रके समान आचरण करने वाला, प्रसिद्ध, सुशील, क्षुद्र, पुण्यवान्, विकृत मुखवाला होता है। नवमेश तृतीय भाव में हो तो जातक रूपवती स्त्री वाला, बान्धव प्रेमी, बान्धव एवं स्त्री की रक्षा करने वाला, जीवन पर्यन्त बान्धवों के साथ रहने वाला होता है। नवमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता का भक्त, प्रसिद्ध, पुण्यवान् और मित्रों के कार्य में आसक्त होता है। नवमेश पंचम भाव में हो तो

जातक पुण्यकर्ता, गुरु एवं देवपूजन में आसक्त, सुन्दर और पुण्यवान् होता है। नवमेश षष्ठ भाव में हो तो जातक शत्रु के साथ भी विनय पूर्वक व्यवहार करने वाला, धर्मात्मा, कला में प्रवृत्त, निद्रा में लीन होता है। नवमेश सप्तम भाव में हो तो जातक की स्त्री सत्य बोलने वाली, रूपवती, अच्छी वाणी वाली, सुशीला, लक्ष्मी तथा पुण्य से युक्त होती है। नवमेश अष्टम भाव में हो तो जातक दुष्ट, जीवों का हिंसक, धर, बान्धव एवं पुण्य से हीन होता है। नवमेश नवम भाव में हो तो जातक बान्धवों से अधिक प्रेम करने वाला, सत्यवक्ता, दानी, देवता, गुरु, अपने परिवार एवं स्त्री का भक्त होता है। नवमेश दशम भाव में हो तो जातक राजा का कार्य करने वाला, राजा से लाभ करने वाला, अच्छे कार्य में आसक्त, माता का अविघ्नकारी और प्रसिद्ध एवं धर्मिक होता है। नवमेश आय भाव में हो तो जातक दीर्घायु, धर्मात्मा, धन का स्वामी, स्नेही, राजकीय धन का लोभी और प्रसिद्ध विद्वान् होता है। नवमेश व्यय भाव में हो तो जातक अभिमानी, देशान्तरवासी, स्वरूपवान्, यदि पापग्रह हो तो धूर्त राजा होता है [269]।

भाग्येशे तनुभावस्थे रूपशीलयुतः सुधीः।
जनेश–जनता–पूज्यः सद्भाग्यो जायते जनः।।
भाग्येशे वित्तगे जाया–सुतादिसुखसंयुतः।
लेकप्रियः कामयुक्तो धनी विद्वान् भवेन्नरः।।
भाग्येशे सहजस्थे तु रूप्शीलगुणैर्युतः।
धन–सोदर्य–सुखभाग् जायते जातकः सदा।।
भाग्येशे सुखगे जातो जननी–भक्तिसंयुतः।
सर्वसम्पद् गेह–यान–सौख्ययुक्तो भवेज्जनः।।
भाग्येशे सुतगे जातो गुरुभक्तिरतः सदा।
सुतभग्ययुतो धीरो धार्मिको जनवल्लभः।।

भाग्येश लग्नस्थ हो तो जातक रूपशीलसम्पन्न विद्वान् राजा तथा प्रजा दोनों का पूज्य तथा सौभाग्यशाली होता है। भाग्येश धनभावगत हो तो मनुष्य स्त्री, पुत्रादि सुखों से युक्त, कामी, धनी, विद्वान् तथा जनप्रिय होता है। भाग्येश तृतीयस्थ हो तो जातक रूपशील एवं धन सम्पन्न, गणी तथा सोदरसुखयुक्त होता है। चतुर्थस्थ भाग्येश हो तो जातक मातृभक्त, सम्पति, गृह, वाहन से परिपूर्ण होता है। भाग्येश पंचमस्थ हो तो मनुष्य गुरुभक्त, धार्मिक, विद्वान्, जनप्रिय तथा सौभाग्यशाली पुत्र से युक्त होता है।

भाग्येशे शत्रुगृहगे भाग्यहीनो भवेज्जनः।
वैरिभिश्चार्दितो नित्यं मातुलादिसुखोज्झितः।।
भाग्येशे तु कलत्रस्थे कलत्रात् सुखसम्भवः।
यशः सदगुणसम्पन्नो जायते जातकः सदा।।
भाग्येशे निधनस्थे तु जनो भाग्यविवर्जितः।
न जातु ज्यायसो भ्रातुः सुखं जन्मनि तस्य वै।।

[269] होरारत्न, अध्याय 7, नवम भाव विचार, श्लोक 1–12

भाग्येशे नवमेऽनेक–भ्रातृसौख्ययुतः पुमान्।
गुणसौन्दर्यसद्भाग्यैः सम्पन्नोऽसौ प्रजायते।।
भाग्येशे दशमस्थे तु लोकवन्द्यो गुणी नरः।
भूपस्तत्सदृशोऽमात्यः सेनाध्यक्षोऽथवा भवेत्।।
भाग्येशे भवगेहस्थे नित्यं वित्तागमो भवेत्।
गुरुभक्तिरतो नित्यं पुण्यशीलो गुणी नरः।।
भाग्येशे रिष्फगे भाग्य–हीनो जातः प्रजायते।
सत्कृतौ व्ययतो निःस्वोऽतिथिसत्कृतितत्परः।।

भाग्येश शत्रुभावगत हो तो भाग्यहीन होता है। उसे शत्रुओं से सतत पीड़ा तथा मातुल सुख वंचित होता है। भाग्येश सप्तमभावस्थ हो तो स्त्री से सौख्य, यश तथा सद्गुणों से परिपूर्ण जातक होता है। अष्टमस्थ भाग्येश हो तो मनुष्य भाग्यहीन तथा बड़े भाई के सुख का जीवन भर अभाव वाला जातक होता है। नवमस्थ भाग्येश हो तो जतक भ्रातृसौख्य, सद्गुण, सौन्दर्य तथा सौभाग्य से परिपूर्ण होता है। दशमस्थ भाग्येश हो तो मनुष्य गुणवान् लोकपूज्य राजा अथवा तत्सदृश मन्त्री या सेनाध्यक्ष होता है। लाभभावस्थ भाग्येश हो तो जातक को नित्य धनागम होता है। वह गुरुभक्त, गुणी तथा पुण्यवान् होता है। भाग्येश व्ययभावस्थ हो तो जातक भाग्यहीन, सत्कार्य तथा अतिथि सेवाजन्य खर्च से दरिद्र हो जाता है।

कर्मेश फल

होरारत्न में कहा गया है कि यदि दशमेश प्रथम भाव में हो तो जातक माता का शत्रु, पिता का भक्त, बाल्यकाल में पितृ कष्ट तथा दूसरे पुरूष में आसक्त माता होती है। दशमेश धन भाव में हो तो जातक माता से पालित, कृपण, माता के पगति दुष्ट भावना वाला, सुन्दर शरीर वाला होता है। दशमेश तृतीय भाव में हो तो जातक स्वजन विरोधी, लोक सेवा में आसक्त, कार्य में असमर्थ होता है। दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक पिता के सुख में आसक्त, माता की पुष्टि व पूजा में आसक्त, संसार के लिये अमृत स्वरूप, राजा के द्वारा पुरस्कृत होता है। दशमेश पंचम भाव में हो तो जातक अच्छा काम करने वाला, धूर्त, राजा से लाभ पाने वाला होता है। दशमेश षष्ठ भाव में हो तो जातक बाल्य अवस्था में दुख से युक्त, पीछे उसकी माता दूसरे पुरूष में आसक्त माता होती है। दशमेश सप्तम भाव में हो तो जातक पुत्र व रूप से युक्त, अच्छी गुणयुक्त स्त्री वाला होता है। दशमेश अष्टम भाव में हो तो जातक कठिन ह्रदयवाला, चोर, असत्यभाषी, नीच, माता को दुख देने वाला होता है। दशमेश नवम भाव में हो तो जातक सुन्दर, शीलवान्, पण्डित, मित्र और उसकी माता भी सुशील, पुण्य करने वाली एवं सत्य बोलने वाली होती है। दशमेश दशम भाव में हो तो जातक माता को सुख देने वाला, चतुर होता है। दशमेश आय भाव में हो तो जातक माता व स्वामी से त्यक्त, पुत्र की रक्षा करने वाली स्त्री से युक्त, दीर्घायु एवं माता के सुख से युक्त होता है। दशमेश व्यय भाव में हो तो जातक अपने पुरूषार्थ से अच्छा काम करने वाला, राजा के काम में रूची लेने वाला, तथा यदि पापग्रह हो तो विदेश में

रहने वाला होता है [270]।

दशमेशे तु लग्नस्थे जातो विद्यागुणान्वितः।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चादर्थवृद्धिर्दिने दिने।।
दशमेशे तु वित्तस्थे नृपवन्द्यो गुणी धनी।
तातादिसौख्यसम्पन्नो दाता जातस्तु जायते।।
दशमेशे तृतीयस्थे गुणी वाग्मी पराक्रमी।
सत्यधर्मयुतो भ्रातृ–प्रैष्यसौख्यान्वितो जनः।।
दशमेशे तु तुर्यस्थे गुणाढ्यः सुखितो धनी।
मातृभक्तो धराधाम–यानोपेतो भवेन्नरः ।।

दशमेश लग्नगत हो तो जातक विद्या, गुणसम्पन्न होता है। वह बाल्यावस्था में रुग्ण किन्तु बाद में सुखी तथा दिनों दिन धनवृद्धि वाला होता है। धनभावगत दशमेश हो तो जातक राजपूज्य, गुणी, धनी, पित्रादि सौख्य पूर्ण तथा दानी होता है। सहजगत कर्मेश हो तो बालक गुणी, वाग्मी, पराक्रमी, सत्यधर्मयुक्त भाई, नौकर आदि के सौख्य से पूर्ण होता है। चतुर्थस्थ दशमेश हो तो जातक सुखी, धनी तथा गुणसम्पन्न होता है। वह माता का भक्त तथा भूमि, गृह, वाहन से परिपूर्ण होता है।

दशमेशे सुतस्थे तु धनं नित्यं प्रमोदवान्।
पुत्रवान् बहुविद्याभिर्भूषितो मानवो भवेत्।।
दशमेशे तु शत्रुस्थे शत्रुभिः परिपीडितः।
निःस्वोऽथ निपुणस्तातसुखहीनोऽपि जायते।।
दशमेशे तु जायास्थे जायासौख्ययुतो गुणी।
सत्यधर्मपरो वाग्मी मनस्वी जायते जनः।।
दशमेशेऽष्टमस्थे तु जातकः परनिन्दकः।
निष्क्रियः किन्तु दीर्घायुर्जायते नात्र संशयः।।
दशमेशे तु भाग्यस्थे सुतवित्तादिसौख्ययुक्।
नृपो नृपतिवंश्यः स्याद्राजतुल्योऽन्यवंशजः।।
दशमेशे तु कर्मस्थे सत्यवादी पराक्रमी।
गुरुभक्तोऽखिले कृत्ये निपुणः सुखितो भवेत्।।
दशमेशे तु लाभस्थे सुत–वित्तयुतो गुणी।
सत्यवादी प्रसन्नात्मा सुखितो जातको भवेत्।।
दशमेशे व्ययस्थे तु व्ययकृन्नृपतेर्वशात्।
दक्षो रिपुजनाद् भीतोऽनिर्शं चिन्तातुरो नरः।।

पंचमस्थ दशमेश हो तो जातक धन, पुत्र युक्त, विद्याओं से पूर्ण नित्य हृष्ट पुष्ट रहता है। षष्ठस्थानगत दशमेश हो तो जातक शत्रुपीडित होता है। जातक निपुण होते हुये भी दरिद्र तथा पितृसौख्य वर्जित होता है। सप्तम भावस्थ दशमेश हो तो मनुष्य स्त्रीसौख्यपूर्ण, गुणी,

[270] होरारत्न, अध्याय 7, दशम भाव विचार, श्लोक 1–12

सत्यधर्मनिष्ठ तथा मनस्वी होता है। अष्टमस्थ दशमेश हो तो जातक दूसरे का निन्दक, निष्क्रिय और दीर्घायु होता है। भाग्यस्थ दशमेश हो तो जातक धन पुत्र सौख्ययुक्त होता है। ऐसा जातक यदि राजव्रश में हो तो वह राजा होवे और अन्य वंश में राजा के समान होता है। दशमेश दशमस्थ हो तो जातक सत्यवादी, पराक्रमी, गुरुभक्त, सभी कार्यों में निपुण तथा सुखी होता है। दशमेश लाभस्थ हो तो जातक धन, पुत्र तथा गुण से युक्त होता है। जातक सर्वदा प्रसन्न, सत्यवादी एवं सुखी होता है। व्ययस्थ दशमेश हो तो राजा के द्वारा व्ययशील, निपुण, शत्रुभीत और सतत चिन्ताकुल होता है।

लाभेश फल

होरारत्न के अनुसार यदि लाभेश प्रथम भाव में हो तो जातक अल्पायु, बलवान्, वीर, धनी, दानी, जनप्रिय, भाग्यशाली होता है। लाभेश धन भाव में हो तो जातक प्राप्त वस्तुओं का भोगी, अल्प खाने वाला, अल्पायु एवं धनहीन होता है। लाभेश सहज भाव में हो तो जातक बान्धवों पर शस्त्र प्रहार करने वाला, बान्धवों की स्त्रियों का पालक, बान्धव प्रिय होता है। लाभेश सुख भाव में हो तो जातक दीर्घायु, पिता का भक्त एवं अच्छे कार्यों से लाभ करने वाला होता है। लाभेश पुत्र भाव में हो तो जातक पिता से स्नेह करने वाला, पिता भी पुत्र का प्रेमी और दोनों समान गुणी होते हैं। लाभेश षष्ठ भाव में हो तो जातक शत्रुता करने वाला, अधिक समय तक रोगी, घोड़ों का संग्रही, चोर के हाथ से मृत्यु को प्राप्त करने वाला होता है। लाभेश सप्तम भाव में हो तो जातक तेजस्वी, संपतिवान्, दीर्घायु और अगम्य स्त्री का पति होता है। लाभेश अष्टम भाव में हो तो जातक अल्पायु, लम्बे समय तक रोगी रहने वाला अर्थात् मरने तक रोगी रहता है। किन्तु यदि शुभग्रह हो तो फल में कमी होती है। लाभेश नवम भाव में हो तो जातक बहुश्रुत, प्रधान, चतुर, धर्म में विख्यात, गुरु देवता का भक्त, और यदि पापग्रह हो तो बद्ध एवं व्रतहीन होता है। लाभेश दशम भाव में हो तो जातक माता का भक्त, पुण्यवान्, पिता का शत्रु, अधिक जीने वाला, धनी एवं माता के पालन में आसक्त होता है। लाभेश आय भाव में हो तो जातक दीर्घायु, अधिक पुत्र वाला, कार्यकर्ता, स्वरूपवान् एवं सुशील होता है। लाभेश व्यय भाव में हो तो जातक प्राप्त वस्तु का भोगी, स्थिर, उत्पात में आसक्त, मानी एवं दानी होता है [271]।

लाभेशे तनुगे वक्ता धनवान् सात्विको जनः।
काव्यकृत्समदृष्टिश्च नित्यं वित्तागमो भवेत्।।
कामेशे वित्तगे जातो धन–धर्मसुखान्वितः।
सर्वत्र सिद्धिसुग् दानपरो जायेत् निश्चितम्।।
लाभेशे सहजे मातृसौख्ययुक्तः पुमान् भवेत्।
निपुणः सर्वकार्येषु भीतिः शूलरुजापि च।।
लाभेशे मातृगे मातृपक्षतोऽर्थाप्तिमान् जनः।
भूगेहसौख्यसम्पन्नस्तीर्थाटनपरो भवेत्।।
लाभेशे पंचमगते सुखितो धर्मतत्परः।

[271] होरारत्न, अध्याय 7, आय भाव विचार, श्लोक 1–12

सुशीलैर्गुणिभिः पुत्रैः विद्याविद्भिर्वृतो भवेत्।।
लाभेशे षष्ठभावस्थे नानारोगसमन्वितः।
क्रूरः प्रवासी रिपुभिरर्दितः स जनो भवेत्।।
लाभेशे सप्तमगते जातः कामयुतो गुणी।
उदारः स्त्रीवशो दारवंशादर्थाप्तिमानपि।।
लाभेशेऽष्टमगे जातो विफलः सर्वकर्मसु।
दीर्घायुष्मानपि परं भार्यायाः प्राग् मृतिर्भवेत्।।

लाभेश के लग्नगत होने पर मनुष्य धनी, सात्विक प्रवृत्ति वाला, काव्यनिर्माता, समदृष्टि तथा सतत धनागम शील होता है। धनगत लाभेश हो तो जातक धन, धर्म, सौख्य से पूर्ण, सर्वत्र सिद्धियुक्त तथा दानी होता है। लाभेश सहजस्थ हो तो मनुष्य भ्रातृसौख्यपूर्ण, सभी कार्यों में निपुण और शूल रोग से युक्त होता है। लाभेश चतुर्थ भावगत हो तो मातृपक्ष से धनाप्ति, भूमि, गृह सौख्य से युक्त तथा तीर्थाटनशील जातक होता है। पंचमभावस्थ लाभेश हो तो जातक सुखी, धर्मपरायण तथा विद्वान्, सुशील एवं गुणी पुत्रों से युक्त होता है। षष्ठस्थ लाभेश हो तो जातक अनेक रोगों का शिकार, क्रूरस्वभाव वाला, प्रवासी तथा शत्रुओं से पीडित होता है। लाभेश सप्तमभावगत हो तो जातक गुणी, कामी, उदार, स्त्री के अधीन और स्त्रीवंश से अर्थप्राप्ति करने वाला होता है। अष्टमस्थ लाभेश हो तो जातक सर्वत्र कर्मविफल, दीर्घायु तथा अपने समक्ष अपने स्त्री का मरण देखने वाला होता है।

लाभेशे भाग्यगे जातो राजपूज्यो धनाधिपः।
चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः।।
लाभेशे दशमस्थे तु नृपमान्यो यतात्मवान्।
सत्यवादी गुणी चापि स्वधर्मे तत्परो नरः।।
लाभेशे लाभगे जातोऽखिलकृत्येषु लाभवान्।
सद्विद्ययासुखेनापि समृद्धः प्रत्यहं भवेत्।।
लाभेशे व्ययगे जातो म्लेच्छसंसर्गकारकः।
कामुको बहुकान्तश्च सत्कृतौ व्ययकृद् भवेत्।।

भाग्यस्थानगत लाभेश हो तो मनुष्य राजवन्द्य, धनी, चतुर, सत्यवादी, अपने धर्म में परायण होता है। कर्मस्थ लाभेश हो तो मनुष्य राजपूज्य, संयतात्मा, सत्यवादी, गुणी तथा स्वधर्मतत्पर होता है। लाभेश लाभस्थ हो तो मनुष्य को सभी कार्यों में लाभ, सद्विद्या तथा सौख्य से प्रत्यह समृद्ध होता है। व्ययस्थ लाभेश हो तो जातक म्लेच्छों से संसर्ग करने वाला, कामी, अनेक स्त्री वाला तथा सत्कार्य में व्ययशील होता है।

व्ययेश फल

होरारत्न में कहा गया है कि जन्मकाल में व्ययेश प्रथम भाव में हो तो जातक विदेश में रहने वाला, स्वरूपवान् एवं धूर्त होता है। व्ययेश धन भाव में हो तो जातक लोभी, कडुवा बोलने वाला, यदि मंगल हो तो राजा, चोर, अग्नि जन्य भय से युक्त होता है। व्ययेश तृतीय भाव में हो तो जातक मित्रों से हीन, यदि शुभग्रह हो तो धनी, सुन्दर, लोभी

एवं मित्रों से दूर रहता है। व्ययेश सुख भाव में हो तो जातक लोभी, रोगहीन, सुन्दर कार्य करने वाला, विना रोग का मृत्यु प्राप्त करने वाला होता है। व्ययेश सुत भाव में हो तो जातक सुत से हीन, धन की इच्छा करने वालाएवं सामर्थ्यहीन होता है। व्ययेश षष्ठ भाव में हो तो जातक लोभी, नेत्र में रोग युक्त एवं द्वादशेष हो तो नेत्रहीन होता है। व्ययेश सप्तम भाव में हो तो जातक दुष्ट, चरित्रहीन, कपटी होता है। व्ययेश अष्टम भाव में हो तो जातक धनहीन, क्रोधी, अहंकारी, होता है। व्ययेश नवम भाव में हो तो जातक तीर्थ में रहने वाला, खर्चीला स्वभाववाला, पापग्रह हो तो पापी होता है। व्ययेश दशम भाव में हो तो जातक दूसरे की स्त्री में अनासक्त, पवित्र मनवाला, पुत्र एवं धन के संग्रह में आसक्त होता है। व्ययेश आय भाव में हो तो जातक सुल्दर, दीर्घायु, श्रेष्ठ पद पर आसीन, दानी, प्रसिद्ध एवं पुत्र की बात मानने वाला होता है। व्ययेश व्यय भाव में हो तो जातक ऐश्वर्यवान्, ग्राम में निवास की भावना वाला, सत्कार्य में रूची लेने वाला, पशुओं का संग्रहकर्ता होता है [272]।

व्ययेशे तनुगे जातो व्ययप्रकृतिको भवेत्।
दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः।।
व्ययेशे ध्नगे जातो धर्मशीलः प्रियंवदः।
सत्कृत्यव्ययकृन्नित्यं सुखितोऽथ गुणी भवेत्।।
व्ययेशे भ्रातृगे भ्रातृसुखहीनो जनो भवेत्।
स्ववपुः पोषणे सक्तः परद्वेषकरश्च सः।।
व्ययेशे तुर्यगे जातो जननीसौख्यवंचितः।
भूवाहनगृहैश्चापि विहीनो जायते नरः।।
व्ययेशे पुत्रगे पुत्रहेतोर्भूरिव्ययी नरः।
विद्यापुत्रविहीनश्च सदा तीर्थाटने रतः।।
व्ययेशे शत्रुगे शत्रुः स्वजनस्य च पापधीः।
दुःखितः कोपनो जातः परजायासु लम्पटः।।
व्ययेशे स्त्रीगृहस्थे स्त्रीकृते भूरिकृतव्ययः।
वंचितः स्त्रीसुखेन स्यान्निर्विद्यो निर्बलो नरः।।
व्ययेशे रन्ध्रगे जातो मध्यायुष्मान् प्रियंवदः।
सर्वसद्गुणसम्पन्नो लाभयुक् सर्वदा भवेत्।।
व्ययेशे धर्मगे जातो भवेत् स्वार्थपरायणः।
सुहृद्भिर्गुरुभिर्नित्यं द्वेषबुद्धिविधायकः।।
व्ययेशे पितृभावस्थे पितृतः स्वल्पसौख्यभाक्।
भूपतिद्वारसम्बद्ध–धनव्ययकरो भवेत्।।
व्ययेशे लाभगे लाभहेतौ लाभो न जायते।
कदाचित् परवित्तस्य लाभः स्तोकः प्रजायते।।
व्ययेशे व्ययगे जातो भवेत् भूरव्ययी सदा।

[272] होरारत्न, अध्याय 7, व्ययभाव विचार, श्लोक 1–12

देहसौख्यविहीनोऽसौ लोकद्वेषी च कोपनः।।

व्ययेश लग्नस्थ हो तो जातक व्यय प्रकृति वाला, दुर्बल, कफरोगी, निर्धन तथा मूर्ख होता है। धनगत व्ययेश हो तो मनुष्य धार्मिक, प्रिय बोलने वाला, अच्छे कामों में धन का व्यय करने वाला, गुणी तथा सौख्यसम्पन्न होता है। सहज भावगत व्ययेश हो तो मनुष्य सहज सौख्य विहीन, अपने ही शरीर पोषण में लीन तथा दूसरों से द्वेष करने वाला होता है। चतुर्थस्थ भावगत व्ययेश हो तो जातक मातृ, भूमि, यान, गेह सभी सुखें से वंचित होता है। पंचम भावस्थ व्ययेश हो तो पुत्र के लिये अधिक व्यय करना पड़ता है। ऐसा जातक पुत्र, विद्या विहीन होकर सदा तीर्थाटनरत होता है। व्ययेश षष्ठस्थ हो तो अपने जनों का दुश्मन तथा पाप बुद्धिवाला होता है। ऐसा जातक क्रोधी, दुःखी तथा पर स्त्रियों में लम्पट होता है। व्ययेश सप्तमस्थ हो तो स्त्री के लिये बहुत व्ययशील मनुष्य होता है। जातक स्त्री सुख से वंचित, निर्बल तथा अनपढ़ होता है। अष्टमस्थ व्ययेश हो तो मनुष्य प्रियभाषी तथा मध्यम आयुवाला होता है। वह सभी सद्गुणों से युक्त सतत लाभपूर्ण होता है। भाग्यभावस्थ व्ययेश हो तो मनुष्य स्वार्थी, मित्रों तथा गुरुजनों से नित्य द्वेष करने वाला होता है। व्ययेश दशमस्थ हो तो पिता से स्वल्प सुख वाला जातक होता है। वह राजा के संबन्ध से धन व्यय करने वाला होता है। व्ययेश लाभस्थ हो तो लभ के योग होने पर भी हानि ही होती है। कभी दूसरे के धन का थोड़ा लाभ हो जाता है। व्ययेश व्ययस्थ हो तो सतत अधिक व्ययशील मनुष्य होता है। वह शारीरिक सौख्य से वंचित होकर लोगों से द्वेष करने वाला तथा क्रोधी होता है।

बोध प्रश्न

1.भाग्येश लग्नस्थ हो तो जातक होता है।

क. रूपशील युक्त ख. मूर्ख, ग. दुर्भाग्ययुक्त, घ. समाज द्रोही

2. भाग्येश शत्रु भावगत हो तो जातक होता है।

क. भाग्यहीन, ख. भाग्यवान् ग. मातुल सुखयुक्त घ. परोपकारी

3. सप्तमभावस्थ दशमेश हो तो जातक होता है।

क. स्त्रीसौख्ययुक्त, ख. स्त्रीविहीन, ग. पापी घ.मित्र द्वेषी

4. अष्टमस्थ लाभेश हो तो जातक होता है।

क. पूज्यख. दीर्घायु, ग. सफल, घ. धनी

5. व्ययेश लग्नस्थ हो तो जातक होता है।

क. कृपण ख. पराक्रमी, ग.धनी घ.मूर्ख

3.5 सारांश

सभी ग्रह केन्द्र एवं त्रिकोण के सम्बन्ध से शुभ फल देते हैं। त्रिक् भावगत लग्नेशादि सभी भावेश भावजन्य फल का नाश करते हैं। भावाधिपति का त्रिक भावफल का नाश होता है, तथा केन्द्र एवं त्रिकोण में होना भावफल की वृद्धि करता है। बृहत्पराशर

होराशास्त्र में केन्द्र को विष्णुस्थान तथा त्रिकोण को लक्ष्मीस्थान कहा गया है तथा इन दोनों के परस्पर सम्बन्ध से राजयोग उत्पन्न होते हैं। जैसाकि कहा गया है –

विष्णुस्थानं स्मृतं केन्द्रं लक्ष्मीस्थानं त्रिकोणकम्।
तयोरधीशसम्बन्धो राजयोगकरो नृणाम्।।

लग्नेश का त्रिक भाव में जाना शारीरिक क्लेश, रोगी, शारीरिकसुख से वंचित करता है। भावेश जिस राशि में हो उसके स्वमी के बलाबल पर भावेश का फल निर्भर करता है। जैसा कि द्वितीयाधिपति सूर्य धन का द्योतक होता है किन्तु यदि वह त्रिक स्थान में स्थित हो तो जातक को निर्धनता देता है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

निर्भृत्य – विना नौकर का
व्रण – घाव
सहज – तृतीय भाव
राजवन्द्य– राजा से पूजित
संयतात्मा – जितेन्द्रिय
गेह – गृह
भाग्योदय – भाग्य का उदय होना
द्वितीयेश– दूसरे भाव का स्वामी
कर्मेश – दशम भाव का स्वामी
आयेश – 11 वें भाव का स्वामी
भ्रातृ – भाई
मतुल – मामा
स्त्रीसौख्य – पत्नी का सुख
सौख्य – सुख
द्वेष – शत्रुता
तीर्थाटन– तीर्थ यात्रा

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लग्नेश लग्नस्थ हो तो जातक होता है। क. पराक्रमी
2. लग्नेश पापग्रह से युक्त षष्ठभावगत हो तो जातक को होता है। क.शारीरिक क्लेश,
3. धनेश धनभावगत हो तो जातक होता है। ख. पुत्रविहीन
4.तृतीयेश तृतीयस्थ हो तो जातक होता है। ख. भ्रातृसौख्यपूर्ण,
5. चतुर्थेश चतुर्थ भाव में बैठा हो तो जातक होता है। क. सर्वसम्पत्तियुक्त,

3.8 अभ्यासार्थ प्रश्नों के उत्तर

1. पंचमेश लग्नगत हो तो जातक..........होता है। क. कृपण.
2. षष्ठेश षष्ठ भाव में हो तो जातक को ....होती है। ख. संबंधी से शत्रुता

3. सप्तमेश पंचम में हो तो जातक..........होता है। क. मानी,
4 अष्टमेश लग्नस्थ हो तो जातक..............होता है। ख.ब्राह्मण निन्दक,
5.अष्टमेश पंचम भाव में हो तो जातक..........होता है। क. धनी,

3.9 बोध प्रश्न –

1.भाग्येश लग्नस्थ हो तो जातक होता है। क. रूपशील युक्त
2. भाग्येश शत्रु भावगत हो तो जातक होता है। क. भाग्यहीन,
3. सप्तमभावस्थ दशमेश हो तो जातक होता है। क. स्त्रीसौख्ययुक्त,
4. अष्टमस्थ लाभेश हो तो जातक होता है। ख. दीर्घायु,
5. व्ययेश लग्नस्थ हो तो जातक होता है। घ.मूर्ख

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन
बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी
जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
जातक पारीजात – चौखम्भा प्रकाशन

3.11 सहायक पाठ्यसामग्री

ल्घुजातकम् – हंसा प्रकाशन
योगयात्रा – आयुर्वेद प्रकाशन
षटपंचाशिका – हंसा प्रकाशन
बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन
बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी
जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
जातक पारीजात – चौखम्भा प्रकाशन

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. लग्नेश का द्वादश भावों के फल को लिखिए।
2. द्वितीयेश, तृतीयेश का द्वादशभावगत फलों का विवेचन कीजिए।
3. पंचमेश, सप्तमेश, चतुर्थेश, का द्वादश भावगत फलों का विस्तृत विवेचन कीजिए।
4. षष्ठेश, अष्टमेश, नवमेश का द्वादश भावों में क्या फल होता है ? वर्णन कीजिए।
5.आयेश, दशमेश एवं व्ययेश का द्वादश भावफलों का निरूपण कीजिए।

इकाई - 4 द्विग्रहादि योग फल

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

यह इकाई एम. ए. ज्योतिष पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष की चौथी इकाई द्विग्रहादि योग फल से संबन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने पंचांग फल, भावफल एवं भावेश फल का अध्ययन कर लिया है। प्रस्तुत इकाई में द्विग्रहादि योग फल का अध्ययन करेंगे। ग्रहों के संबंध में एवं ग्रहों की संख्या के संबंध में प्राचीन एवं अर्वाचीन दो मत प्राप्त होते हैं। अर्वाचीन मत के अनुसार सूर्य को तारा तथा चन्द्रमा को पृथ्वी का उपग्रह मानते हैं। अन्य आकाशीय पिण्डों की ग्रह संज्ञा किया है। मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, यूरेनस, नेप्च्यून एवं प्लूटो। हाल ही में अर्वाचीन वैज्ञानिकों ने प्लूटो के पिण्ड का ग्रह के मानक के अनुसार न होने के कारण ग्रह के रूप में गणना नहीं करते हैं। प्राचीन ऋषियों ने सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र एवं शनि को ग्रहों के रूप में तथा राहु एवं केतु को छाया ग्रह के रूप में गणना करते हैं। राहु एवं केतु क्रान्तिवृत्त एवं विमण्डलवृत्त के पूर्वी एवं पश्चिमी संपात हैं। क्रान्तिवृत्त एवं विमण्डलवृत्त का पूर्वी संपात राहु संज्ञक तथा क्रान्तिवृत्त एवं विमण्डलवृत्त का पश्चिमी संपात केतु संज्ञक है। क्रान्तिवृत्त में सूर्य का भ्रमण होता है एवं विमण्डलवृत्त में चंद्रमा का। दोनों वृत्त का संपात स्थान अतिप्रभावोत्पादक है, जिसका प्रभाव मानव जीवन पर अनवरत पड़ता है, जिसका ज्ञान हमारे प्राचीन ऋषियों ने अपने दिव्यदृष्टि के द्वारा किया था। ग्रहों का प्रभाव पृथ्वी पर स्थित चेतन एवं अचेतन सभी प्राणियों, पादपों एवं पदार्थों पर पड़ता है। मानवादि प्राणियों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने के लिये होराशास्त्र का प्रादुर्भाव हुआ। होराशास्त्र में जातक के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त ग्रहों का प्रभाव पड़ता है। इन प्रभावों के अध्ययन का आधार जन्मांग स्थित 12 राशियाँ, एवं 12 भाव। जन्मांग के 12 भावों के अधिपति को भावेश वा भावाधिपति कहते हैं। भावों की संख्या द्वादश है परन्तु ग्रहों की संख्या नौ है। ग्रहों में सूर्य सिंह राशि का अधिपति है। कर्क राशि का अधिपति चन्द्रमा है तथा इसके अतिरिक्त पंचतारा ग्रह अर्थात् मंगल, बुध, गुरु, शुक्र एवं शनि दो –दो राशियों के अधिपति होते हैं। मेष एवं वृश्चिक राशियों के अधिपति मंगल, वृष एवं तुला के अधिपति शुक्र, मिथुन एवं कन्या के अधिपति बुध, धनु एवं मीन के अधिपति गुरु तथा मकर एवं कुम्भ के अधिपति शनि ग्रह हैं।

वस्तुतः द्वादश भावों का निर्माण मेषादि द्वादश राशियों से होता है। इन भावों में जब ग्रह अकेले वा दो, तीन, चार, पाँच, छः वा सात ग्रहों के साथ होते हैं तो जन्मांग में अनेक प्रकार के योगों का निर्माण होता है, जिससे जातक का जीवन प्रभावित होता है।

4.2 उद्देश्य

1. इस इकाई के माध्यम से भावगत द्विग्रह वा त्रिग्रहादि की स्थिति को जान सकेंगे ।
2. भावस्थित एक, दो, तीन, चार, आदि ग्रह के रहने पर क्या–क्या योग बनते हैं ।
3. छात्र द्विग्रहादि योगों के आधार पर जन्मांग के फल को निरूपित करने में समर्थ होंगे ।
4. छात्र द्विग्रहादि योगों के महत्त्वों को जान सकेंगे ।
5. एक भाव स्थित दो से अधिक ग्रहों के परस्पर संबंध के आधार पर फलादेश की

प्रक्रिया को जान सकेंगे ।

4.3 द्विग्रहादि योगफल

जातक पारिजात में द्विग्रहादि ग्रहों के योग से किस परिस्थिति में कितने योग बनेंगे, इसका उल्लेख किया गया है। एक भाव में दो ग्रहों की युति से द्विग्रहयोग का निर्माण होता है । सात ग्रहों में से दो ग्रहों को एक भाव में रखने से 21 द्विग्रहयोग बनते हैं। तीन ग्रह एक भाव में स्थित हों तो त्रिग्रह योग बनता है। त्रिग्रह योगों की कुल संख्या 35 होती है। यदि चार ग्रह एक ही भाव में स्थित हों तो चतुर्ग्रहयोग का निर्माण होता है। चतुर्ग्रहयोगों की कुल संख्या 35 होती है। एक भाव में पाँच ग्रहों की स्थिति से पंचग्रहयोग होता है। पंचग्रहयोग 21 प्रकार के होते हैं। एक ही भाव में छः ग्रहों की स्थिति से षड्ग्रहयोग होते हैं, इनकी संख्या 27 और एक ही भाव में सात ग्रहों की युति से सप्तग्रहयोग होते हैं, इनकी संख्या 1 होती है।

द्विग्रह योगफल

फलदीपिका में द्विग्रहयोग जन्य फल का निरूपण वराह कृत बृहज्जातक के समान है [273]। जातकाभरण में भी द्विग्रहादि ग्रहयोग कुछ स्थानों में अक्षरशः बृहज्जातक के समान है तथा कुछ स्थानों में फलों में भिन्नता है।

सूर्य एवं चन्द्रमा का युतिफल समान है।

रवि और मंगल के योग फल में कहा है कि जातक महातेजस्वी, बलवान्, मूढ़, अति उद्धत, मिथ्याभाषी, साहसी, शूर वीर और महाहिंसक होता है।

रवि बुध योग फल जातकाभरण एवं बृहज्जातक में समान हैं।

रवि गुरु का योग हो तो जातक पौरोहित्य कर्म में निपुण, राजमन्त्री, मित्रों की सहायता से धन लाभ करने वाला, सम्पत्तिशाली, परोपकारी और चतुर होता है।

रवि शुक्र युतिफल एवं रवि शनि का युति फल बृहज्जातक के समान है।

चंद्रमा मंगल का योग हो तो जातक आचारहीन, कुटिल ह्रदय, प्रतापी, व्यापार से जीविका करने वाला, कलह प्रिय, माता का विरोधी एवं रोगी होता है।

चन्द्रमा बुध का योग हो तो जातक प्रिय एवं कोमल बोलने वाला, धनी, सुन्दररूप, दयालु, विनयी, पत्नी का स्नेही, वक्ता और धर्मात्मा होता है।

चन्द्रमा गुरु का योग हो तो जातक विनयी, विचार को गुप्त रखने वाला, स्वधर्म का पालन करने वाला और परोपकारी होता है।

चन्द्र शुक्र का योग हो तो जातक पुरुष वस्त्र के व्यापार में कुशल, व्यसनी, व्यवहारज्ञ, सुगन्ध एवं उत्तम वस्त्रादि का प्रेमी होता है।

चन्द्र और शनि का योग हो तो जातक अनेक स्त्रियों से प्रीति करने वाला, वेश्यागामी, दुराचारी, परजात और धनहीन होता है।

273 फलदीपिका, अध्याय 18, श्लोक 1—5,

मंगल और बुध का योग हो तो जातक मल्लयुद्ध कर्म कुशल, स्त्रियों में आसक्त, औषधों का व्यापार करने वाला, सोना, लोहा आदि की वस्तु बनाने वाला होता है।

मंगल और गुरु का योग हो तो जातक मन्त्र के अर्थ को जानने वाला, शस्त्र विद्या आदि कलाओं का ज्ञाता, विवेकी, सेनापति, राजा अथवा ग्राम का प्रमुख होता है।

मंगल और शुक्र का योग हो तो जातक अनेक स्त्रियों से भोग करने वाला, जूआ, मिथ्या व्यवहार आदि प्रपंच करने वाला, गौरवी, सब से शत्रुता करने वाला होता है।

मंगल शनि के योग होने पर जातक अस्त्र–शस्त्र बनाने वाला, युद्ध में चतुर, चोरी एवं मिथ्या व्यवहार करने वाला और सुखहीन होता है।

बुध एवं गुरु का योग हो तो जातक संगीतज्ञ, न्यायाधीश, विनयी, सुखी, अत्यन्त मनोहर रूपवाला, धीर, उदार और सुगन्ध का प्रिय होता है।

बुध शुक्र का योग हो तो जातक अपने कुल में श्रेष्ठ, प्रियवचन बोलने वाला, आनन्द युक्त, सुन्दर स्वरूप, बहुतों का पोषक, गुणी और विवेकी होता है।

बुध शनि का योग हो तो चंचल प्रकृति वाला, कलह प्रिय, कलाओं में कुशल, सुन्दर रूपवाला एवं बहुतों का पालक होता है।

गुरु शुक्र का योग हो तो जातक अनेक विद्या का ज्ञाता, पण्डितों से शास्त्रार्थ करने वाला, पुत्र, मित्र, धन आदि से सुखी होता है।

गुरु शनि का योग हो तो जातक शूर वीर, धनवान्, ग्राम या नगर का मुखिया, यशस्वी, कला में कुशल और स्त्री की सहायता करने वाला तथा अभीष्ठ की पूर्तिकरने वाला होता है।

शुक्र शनि का योग हो तो चित्रकारी और लेखनकला में कुशल, कठोर संग्राम प्रिय और घोड़े संबंधी कार्य में कुशल होता है [274]।

तिग्मांशुर्जनयत्युषेशसहितो यन्त्राश्मकारं नरं
भौमेनाघरतं बुधेन निपुणं धीकीर्तिसौख्यान्वितम्।
क्रूरं वाक्पतिनान्यकार्यनिरतं शुक्रेण रंगायुधै–
र्लब्धस्वं रविजेन धातुकुशलं भाण्डप्रकारेषु वा।।
कूटस्यासवकुम्भपण्यमशिवं मातुः सवक्रः शशी
सज्ञः प्रसृतवाक्यमर्थनिपुणं सौभाग्यकीर्त्यान्वितम्।
विक्रान्तं कुलमुख्यमस्थिरमतिं वित्तेश्वरं सांगिरा
वस्त्राणां ससितः क्रियादिकुशलं सार्किः पुनर्भूसुतम्।।
मूलादिस्नेहकूटैर्व्यवहरति वणिग्बाहुयोद्धा ससौम्ये
पुर्यध्यक्ष सजीवे भवति नरपतिः प्राप्तवित्तो द्विजो वा।
गोपो मल्लोऽथ दक्षः परयुवतिरतोद्यूतकृत्सासुरेज्ये
दुखार्तोऽसत्यसन्धः ससवितृतनये भूमिजे निन्दितश्च।।
सौम्ये रंगचरो बृहस्पतियुते गीतप्रियो नृत्यवि–

274 जातका भरणम् द्विग्रहयोगाध्याय, श्लोक 1–21,

द्वाग्मी भूगणपः सितेन मृदुना मायापटुर्लंघकः।
सद्विद्यो धनदारवान् बहुगणः शुक्रेण युक्ते गुरौ
ज्ञेयः श्मश्रुकरोऽसितेन घटकृंजातोऽन्नकारोऽपि वा।।
असितसितसमागमेऽल्पचक्षुर्युवतिसमाश्रयसम्प्रवृद्धिवित्तः।
भवति च लिपिपुस्तकचित्रवेत्ता कथितफलैः परतो विकल्पनीयाः।।

बृहज्जातक में कहा गया है कि चन्द्रमा से युक्त सूर्य से जातक अनेक प्रकार के यन्त्र और पत्थर की कारीगरी आदि में निपुण होता है। मंगल युक्त सूर्य से जातक पापकर्म रत होता है। बुध युक्त सूर्य से समग्र कार्यों में कुशल और ज्ञानी , यशस्वी जीवन सम्पन्न सुखी होता है। गुरु युक्त सूर्य से जातक का स्वभाव क्रूर और पर कार्य करने की प्रवृत्ति होती है। शुक्र युक्त सूर्य से नृत्य गीतादि तथा रणक्षेत्र में अस्त्र–शस्त्रादि से धनोपार्जन करता है। शनि युक्त सूर्य से जातक धतु कार्य अर्थात् सुवर्ण ताम्रादि के आभूषणादि निर्माण में चतुर होता है।

मंगलादि ग्रह युत चन्द्रमा से कृत्रिम धातु, नारी, क्रय–विक्रय, मद्यपान विक्रय, घड़ा आदि विक्रय से धनोपार्जन कारक एवं मातृ के लिये क्लेशप्रद होता है। बुध युक्त मंगल से इष्ट को जानने वाला, धन संग्रह करने में चतुर, भाग्यवान् और यशस्वी होता है। गुरु युक्त चन्द्रमा से पराक्रमी, स्वकुल में श्रेष्ठ, बुद्धि में चांचल्य और पूर्ण मात्रा में धनी होता है। शुक्र युक्त चन्द्रमा से वस्त्रादि रचना में चतुर होता है। शनि युक्त चन्द्रमा से द्वितीय पति का वरण करने वाली स्त्री का पुत्र होता है।

बुध युक्त मंगल से जातक कृत्रिम पदार्थों से फल–मूल–तिल तेल घी आदि का व्यापाररत वणिक होता है। गुरु युक्त मंगल से ग्राम प्रधान, राजा अथवा धनी ब्राह्मण होता है । शुक्र युक्त मंगल से जातक गो पालक, पहलवान्, चतुर, परस्त्री गमन करने वाला एवं द्यूत कर्मरत होता है। शनि युक्त मंगल से जातक दुखी, मिथ्या भाषी और लोक निन्दा का पात्र होता है।

बुध युक्त गुरु से गीत प्रिय, युद्धप्रिय और नर्तक होता है। शुक्र युत बुध से वाक् चतुर, पृथ्वीपति या नेता होता है। शनि युक्त गुरु से वंचक, गुरुजनों की आज्ञा की अवहेलना करने वाला होता है । शुक्र युत गुरु से श्रेष्ठ विद्वान्, स्त्री पुत्र एवं धनादि से संपन्न होता है। शनि युक्त गुरु से नापित, कुम्हार या रसोइया होता है। शुक्र और शनि ग्रह का योगज जातक की नेत्रज्योति में अल्पता, स्त्री के आश्रय से उसकी धन वृद्धि तथा वह लेखक एवं चित्रकार होता है।

बोध प्रश्न

1. शुक्र एवं बुध की युति से जातक............ होता है।

क. वंचक, ख. पृथ्वीपति, ग. नापित घ. लेखक

2. गुरु युक्त मंगल से जातक .... होता है।

क. धनी ब्राह्मण, ख. चोर ग. योद्धा, घ. स्वर्णकार

3. बुध युक्त सूर्य से जातक...................... होता है।

क. ज्ञानी ख. मूर्ख ग. वाचाल घ. कृपण

4. शनि युक्त गुरु से जातक.................. होता है ।

क. नापित ख. विद्वान ग. कलाकार घ. शस्त्र निर्माता

5. मंगल युक्त सूर्य से जातक.......................होता है।

क. शुभकर्म कर्ता ख. विद्वान्, ग. पापकर्मरत घ. वक्ता

त्रिग्रह योगफल

जातकाभरण ग्रन्थ में तीन ग्रहों का एक साथ एक भाव में बैठने का फल अन्य ग्रन्थों की तुलना में कुछ भिन्न है। एक भाव में रवि, चंद्र, मंगल हो तो जातक शूरवीर, यन्त्र और घोड़े की विद्या में प्रवीण होता है, और दया एवं अनुग्रह से हीन होता है।

एक राशि में सूर्य, चंद्र और बुध हो तो जातक महातेजस्वी, राजकार्यकर्ता व्यवहार और शस्त्र संचालन एवं विविध कलाओं में प्रवीण होता है।

एक स्थान में रवि, चन्द्र और गुरु स्थित हों तो जातक सेवा कर्म को जाननेवाला, विदेशगामी, महापण्डित, चतुर, चंचल और धूर्त होता है।

सूर्य, चन्द्र, शुक्र एक स्थान में एक राशि में बैठा हो तो जातक दूसरे के धन का अपहरण करने वाला, व्यसनशील, सत्कार्य से विमुख रहने वाला होता है।

सूर्य, चन्द्र और शनि किसी एक भाव में स्थित हो तो जातक दूसरों के मन की बात को जाननेवाला, धनहीन, आलसी, धातु की क्रिया में निपुण और अपने सामर्थ्य को व्यर्थ नष्ट करने वाला होता है।

रवि, मंगल एवं बुध एक स्थान में स्थित हो तो जातक विख्यात यशवाला, मन्त्र विद्या में निपुण, साहसी, कठोर चित्त वाला, लज्जायुक्त, धन, स्त्री, पुत्र और मित्र से युक्त होता है ।

रवि, मंगल और गुरु एक साथ एक भाव में स्थित हो तो जातक वक्ता, धनी, राजमन्त्री, सेनापति, नीतिज्ञ, परम उदार और सत्य वक्ता होता है।

रवि, मंगल और शुक्र एक साथ एक भाव में बैठा हो तो जातक भाग्यवान्, अत्यन्त बुद्धिमान्, विनयी, कुलीन, सुशील, सत्य और थोड़ा बोलने वाला एवं चतुर होता है।

रवि, मंगल और शनि एक भाव में स्थित हो तो जातक धनहीन, कलहप्रिय, त्यागी, पिता और बन्धु जनों का वियोगी और विवेकहीन होता है।

रवि, बुध और गुरु का एक भाव में योग हो तो जातक शास्त्रज्ञ, सब कलाओं में निपुण, धनसंग्रही, बलवान्, सुशील और नेत्ररोगी होता है।

रवि, बुध और शुक्र का एक भाव में योग हो तो जातक साधुओं का द्वेषी, लोक में निंद्य, सतत स्त्री के लिये संतप्त, वक्ता और परदेशगामी होता है।

रवि, बुध और शनि का योग एक भाव में हो तो जातक अपने बन्धुओं से अपमानित, अन्य जनों से रहित, महादोष करने वाला, नपुंसक के समान और नीचों का साथी होता है।

रवि, गुरु और शुक्र का किसी एक भाव में योग हो तो जातक बोलने में असमर्थ, राजा का आश्रित होने पर भी धनहीन, शूरवीर और परोपकारी होता है।

रवि, गुरु एवं शनि किसी एक भाव में स्थित हो तो जातक राजा का प्रिय, मित्र, स्त्री और पुत्रों से सुखी, सुन्दर स्वरूपवाला और उचित खर्च करने वाला होता है।

रवि, शुक्र और शनि का एक भाव में योग हो तो जातक शत्रुओं के भय से डरने वाला, सत्कार्य और काव्य कथा से विमुख, दुश्चरित्र, खुजली एवं दाद से पीड़ित, परिजन और धन से हीन होता है।

चन्द्र, भौम और बुध का योग किसी एक भाव में हो तो जातक दीन, धन धान्य से हीन, अपने जनों से अपमानित और नीच जनों का संगी होता है।

चन्द्र, भौम एवं गुरु का योग एक राशि में हो तो जातक व्रण से युक्त देहवाला, क्रोधी, स्त्री में आसक्त, मनोहर रूपवाला होता है।

चन्द्र, मंगल और शुक्र का योग एक भाव में हो तो जातक दुःशीला स्त्री का पति, दुष्ट स्वभावयुक्त पुत्र वाला और शीलरहित होता है।

चन्द्र, भौम एवं शनि का योग एक भाव में हो तो जातक बाल्यावस्था में ही माता से हीन, सदा कलहप्रिय और अत्यन्त निन्दित होता है।

चन्द्र, बुध एवं गुरु का योग एक भाव में हो तो जातक विख्यात यशवाला, बुद्धिमान्, बलवान्, अनेक मित्रवाला, भाग्यवान्, सदाचारी और विद्वान् होता है।

चन्द्र, बुध और शुक्र की युति एक राशि में हो तो जातक अनेक विद्याओं में निपुण, अनाचारी, स्पर्धा, ईर्ष्यावाला और धन का लोभी होता है।

चन्द्र, बुध एवं शनि का योग एक भाव में हो तो जातक सब कलाओं में निपुण, विख्यात, राजा का प्रिय, ग्राम या नगर का मुखिया और विनयी होता है।

चन्द्र, गुरु और शुक्र का योग एक भाव में हो तो जातक भाग्यवान्, विमल कीर्तिवाला, बुद्धिमान् और सदाचारी होता है।

चन्द्र, गुरु और शनि का योग एक भाव में हो तो जातक पंडित, राजा का प्रिय, मन्त्र विद्या और शास्त्रों का ज्ञाता, मनोहर रूप और महा बलवान् होता है।

चन्द्र, शुक्र और शनि का योग एक भाव में होतो जातक पुरोहितों और वेदज्ञों में श्रेष्ठ, धर्मपरायण, पुस्तक पढ़ने और लिखने में तत्पर होता है।

मंगल, बुध एवं गुरु का योग एक भाव में हो तो जातक अपने कुल में राजा के समान, काव्य, संगीत, कला में निपुण और परोपकार में तत्पर होता है।

मंगल, बुध एवं शुक्र का योग एक भाव में हो तो जातक धनवान्, कृशशरीर, वक्ता, चंचल, ढीठ और उत्साह युक्त होता है।

मंगल, बुध एवं शनि का योग एक भाव में हो तो जातक कुरूप नेत्र वाला, कृशशरीर, वन में रहने का प्रमी, दूत कार्य करने वाला, विदेश में रहने वाला, बहुत हंसने वाला, सहिष्णु और अपराधी होता है।

मंगल, गुरु एवं शुक्र का योग एक भाव में हो तो जातक पुत्र, स्त्री आदि से सुखी, राजा का मान्य और सज्जनों का प्रिय होता है।

मंगल, गुरु एवं शनि का योग एक भाव में हो तो जातक राजा से आदर पाने वाला,

दयाहीन, कृश शरीर, दुराचारी और मित्रों से कपट करने वाला होता है।

मंगल, शुक्र और शनि का योग हो तो जातक विदेशवासी, सुशीला माता और स्त्री वाला तथा सब सुखों से हीन होता है।

बुध, गुरु एवं शुक्र का योग हो तो जातक राजा का कृपापात्र, अधिक यशस्वी, मनोहर रूपवाला, शत्रु को जीतने वाला और महाबलवान् होता है।

बुध, गुरु एवं शनि का योग किसी भाव में हो तो जातक स्थान, धन, ऐश्वर्य से युक्त, अधिक वक्ता, धैर्यवान् और सदाचारी होता है।

बुध, शुक्र एवं शनि का योग हो तो दुष्ट स्वभाववाला, मिथ्याभाषी, व्यर्थ बहुत बोलने वाला, धूर्त, दूर जाने वाला और कलाओं का ज्ञाता होता है।

गुरु, शुक्र एवं शनि का योग हो तो जातक नीच कुल में भी जन्म लेकर यशस्वी, राजा या राजा के तुल्य और सदाचारी होता है।

जन्मकाल में चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हो तो जातक की माता की और यदि सूर्य पापग्रहों से युक्त हो तो पिता की मृत्यु होती है, अर्थात् शुभ ग्रहों से युक्त हो तो माता और पिता के लिये शुभ फल और मिश्र ग्रह युक्त हो तो मिश्रफल कहना चाहिए।

जन्म समय में यदि चन्द्रमा शुभ ग्रहों से युत एवं दृष्ट हो तो जातक यश, धन, भूमि आदि का लाभ करने वाला, अपने कुल में श्रेष्ठ और राजा से आदर पाने वाला होता है।

जिसके जन्म समय में तीन पापग्रह एक भाव में हो तो जातक कुरूप, दरिद्रता और दुःख से युक्त, कभी भी घर में चैन पाने वाला नहीं होता है [275]।

सूर्येन्दुक्षितिनन्दनैररिकुलध्वंसी धनी नीतिमान्
जातश्चन्द्ररविन्दुजैर्नृपसमो विद्वान् यशस्वी भवेत्।
सोमार्कामरमन्त्रिभिर्गुणनिधिर्विद्वान् नृपालप्रियः,
शुक्रार्केन्दुभिरन्यदारनिरतः क्रूरोऽरिभीतो धनी।।
मन्देन्द्वर्कसमागमे खलमतिर्मायी विदेशप्रियो
भास्वद्भूसुतबोधनैर्गतसुखः पुत्रार्थदारान्वितः।
जीवार्कावनिजैरतिप्रियकरो मन्त्री चमूपोऽथवा
भौमार्कासुरवन्दितैर्नयनरुग् भोगी कुलीनोऽर्थवान्।।
मन्दार्कावनिजैः स्वबन्धुरहितो मुर्खोऽधनो रोगभाक्
इन्द्राचार्यरवीन्दुजैः पटुमतिर्विद्यायशोवित्तवान्।
भानुज्ञासुरपूजितैर्मृदुतनुर्विद्यायशस्वी सुखी
सौरादित्यबुधैर्विबन्धुरधनो द्वेषी दुराचारवान्।।
जीवादित्यसितैः सदारतनयः प्राज्ञोऽक्षिरुग् वित्तवान्
मन्देन्द्रार्चितभानुभिर्गतभयो राजप्रियः सात्विकः।
जातो भानुसितासितैः कुचरितो गर्वाभिमानान्वित–
श्चन्द्रारेन्दुसुतैः सदाऽशनपरो दुष्कर्मकृद् दूषकः।।

275 जातकाभ्रणम् , त्रिग्रह योग फल श्लोक 1–38,

जीवेन्दुक्षितिजैः सरोषवचनः कामातुरो रूपवा–
निन्दुक्ष्माजसितैर्विशीलतनयः संचारशीलो भवेत्।
तारेशार्कजभूसुतैश्चलमतिर्दुष्टात्मको मातृहा
जीवेन्दुज्ञसमागमे बहुधनख्यातोऽवनीशप्रियः।।
विद्यावानपि नीचकर्मनिरतः सेव्यः सितज्ञेन्दुभि–
स्त्यागी भूपतिपूजितश्च गुणवानिन्दुज्ञतिग्मांशुजैः।
प्राज्ञः साधुसुतः कलासु निपुणः शुक्रेन्दुदेवार्चितैः
शास्त्री वृद्धबधूरतो नृपसमो वाचस्पतीन्द्वर्कजैः।।
वेदी राजपुरोहितोऽतिसुभगः शुक्रेन्दुचण्डांशुजै
र्गान्धर्वश्रुतिकाव्यनाटकपरो जीवज्ञभूनन्दनैः।
हीनांगः खलवंशजश्चलमतिः शुक्रारचन्द्रात्मजः
प्रेष्यः सामयलोचनोऽटनपरस्ताराजभौमासितैः।।
शुक्रारेन्द्रपुरोहितैर्नरपतेरिष्टः सपुत्रः सुखी
जीवारार्कसुतैः कृशोऽसुखतनुर्मानी दुराचारवान्।
सौरारासुरपूजितैः कुतनयो नित्यं प्रवासान्वितः
शुक्रज्ञामरमन्त्रिभिर्जितरिपुः कीर्तिप्रतापान्वितः।।
देवेज्येन्दुजभानुजैरतिसुखश्रीकः स्वदारप्रियो
मन्दज्ञासुरवन्दितैरनृतवाग् दुष्टोऽन्यजायारतः।
जातो जीवसितासितैरमलधीर्विख्यातसौख्यान्वित–
चन्द्रे पापयुते सदाल्पसुखवान् भानौ पितुस्तद्वदेत्।।

अर्थात् यदि सूर्य, चन्द्रमा तथा मंगल तीनों एक स्थान में हों तो जातक शत्रुओं को मारने वाला, धनी तथा नीति को जानने वाला होता है। यदि सूर्य, चन्द्र तथा बुध एकत्रित हों तो राजा के समान यशवाला और विद्वान् होता है। यदि सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति एकत्र हों तो जातक गुणवान्, विद्वान् और राजाओं का प्रिय होता है। यदि रवि, चंद्र और शुक्र एकस्थान में हो तो वह परस्त्रीगामी, क्रूर, शत्रु से डरने वाला एवं धनिक होता है।

यदि शनि, चंद्रमा और सूर्य एक राशिस्थ हों तो जातक खलबुद्धि, मायावी, विदेश प्रिय होता है। सूर्य, मंगल और बुध एक राशि में हो तो जातक सुख रहित, पुत्र स्त्री से युक्त होता है। बृहस्पति, सूर्य और मंगल एक राशि में हो तो लोगों का विशेष प्रिय होता है, तथा मन्त्री या सेनापति होता है। चन्द्रमा, सूर्य और शुक्र एक स्थान में हो तो जातक नेत्र रोगी, भोगी, कुलीन और धनवान् होता है।

शनि सूर्य और मंगल के एकत्र होने से जातक बन्धुओं से रहित, मूर्ख, धनी और रोगी होता है। बृहस्पति, सूर्य और बुध एकस्थान में हो तो जातक चतुर, बुद्धिमान, विद्वान्, यशस्वी और धनवान् होता है। सूर्य, बुध और बृहस्पति एक स्थान में हो तो कोमल शरीरवाला, विद्वान्, यशस्वी, और सुखी होता है। शनि, सूर्य और बुध एकस्थान में हो तो जातक बन्धुहीन, धनहीन, वैरी तथा दुराचारी होता है।

बृहस्पति, सूर्य और शुक्र एक स्थान में हो तो पुत्र स्त्री से युक्त, बुद्धिमान्, नेत्ररोगी और धनवान् होता है। शनि, बृहस्पति और सूर्य एक स्थान में हो तो जातक भयरहित, राजप्रिय और सात्विक होता है। सूर्य, शुक्र और शनि एकत्र बैठा हो तो जातक दुष्ट चरित्रवाला, अभिमानी और गर्वी होता है। चन्द्रमा, मंगल और बुध एकत्र स्थित हो तो जातक सदा भोजन में रत रहने वाला, दुष्कर्मी और दूसरों का दूषक होता है।

बृहस्पति, चन्द्रमा और मंगल एक स्थान में हो तो जातक रोषयुक्त बचन बोलने वाला, कामातुर और रूपवान् होता है। चन्द्रमा, मंगल और शुक्र एक स्थान में हो तो विशील, विपुत्र और भ्रमणशील होता है। चन्द्रमा, शनि और मंगल एक स्थान में हो तो जातक चंचलबुद्धि वाला, दुष्टात्मा और माता को मारने वाला होता है। बृहस्पति, चन्द्रमा और बुध के एकत्र होने से भारी धनी और राजा का प्रिय होता है।

शुक्र, बुध और चन्द्रमा के एकत्र होने से विद्वान, नीच कर्म करनेवाला, सेवा करने योग्य होता है। चन्द्र, बुध और शनि एक स्थान में हो तो जातक दानी, राजपूजित और गुणवान् होता है। शुक्र, चन्द्रमा और बृहस्पति के एकत्र होने से जातक प्राज्ञ, सुपुत्री और कला में निपुण होता है। बृहस्पति, चन्द्रमा और शनि एक स्थान में हो तो जातक शास्त्री, वृद्धा स्त्री में रत और राजा के तुल्य होता है।

शुक्र, चन्द्रमा और शनि एक राशि में हो तो जातक वेदशास्त्र को जानने वाला, राजपुरोहित और अत्यन्त सौभाग्यवान् होता है। बृहस्पति, बुध और मंगल एकत्र एक राशि में हो तो जातक गान्धर्व विद्या, काव्य, नाटककला का ज्ञाता होता है। शुक्र, मंगल और बुध एकत्र एक राशि में हो तो हीनांग, दुष्टवंशोत्पन्न और चंचल बुद्धिवाला होता है। बुध, मंगल एवं शुक्र के एक राशि में होने पर जातक दूत कर्म में सफल, नेत्ररोगी, और सदा भ्रमणशील होता है।

शुक्र, मंगल और चन्द्रमा ण्क राशि में हो तो जातक राजा का मि़, सुपुत्री और सुखी होता है। बृहस्पति, मंगल और शनि एक राशिगत हो तो जातक दुबला शरीरवाला, मानी और दुराचारी होता है। शनि, मंगल और बृहस्पति एक राशि गत हो तो कुपुत्री, सदा प्रदेश में रहने वाला होता है। शुक्र, बुध और बृहस्पति एकत्र हो तो शत्रुओं को जीतने वाला और कीर्ति प्रताप से युक्त होता है।

बृहस्पति, बुध और शनि एक राशि में हो तो जातक विशेष सुखी, श्रीमान् और अपनी स्त्री का प्रिय होता है। शनि, बुध और बृहस्पति एक राशि में हो तो जातक झूठ बोलने वाला, दुष्ट, परस्त्रीगामी होता है । बृहस्पति, शुक्र और शनि एक राशि में हो तो स्वच्छ बुद्धिवाला, विख्यात और सुख से युक्त होता है। चन्द्रमा पापग्रह से युक्त हो तो जातक अल्पसुखी और सूर्य पापग्रह युक्त हो तो जातक का पिता अल्प सुख को भोगने वाला होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सूर्य, चन्द्रमा तथा मंगल तीनों एक स्थान में हों तो जातक कैसा होता है ?

क. शत्रुहन्ता, ख. चोर ग. विद्वान् घ निर्धन

2. सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति एकत्र हों तो जातक का स्वरूप होता है ?

क. धूर्त ख. कृतघ्न ग. विद्वान् घ. चतुर

3. शुक्र, चन्द्रमा और शनि एक राशि में हो तो जातक क्या जानने वाला होता है ?

क. शस्त्र निर्माता, ख. गणितज्ञ ग. विख्यात घ. वेदशास्त्र

4. चन्द्रमा, मंगल और शुक्र एक स्थान में हो जातक होता है?

क. वक्ता ख. योद्धा ग. भ्रमणशील घ. कर्मठ

5. शनि, बृहस्पति और सूर्य एक स्थान में हो तो जातक होता है ?

क. राजद्रोही, ख. राजप्रिय ग. रोगी घ. निर्धन

चतुर्ग्रह योगफल

एकर्क्षगैरिनसुधाकरभूसुतज्ञैर्मायी प्रपंचकुशलो लिपिकश्च रोगी।
चन्द्रारभानुगुरुभिर्धनवान्यशस्वी धीमान्नृपप्रियकरो गतशोकरोगः।।
आरार्कचन्द्रभृगुजैः सुतदारसम्पद् विद्वान् मिताशनसुखी निपुणः कृपालुः।
सूर्येन्दुभानुसुतभूमिसूतैरशान्तनेत्रोऽटनश्च कुलटापतिरर्थहीनः।।
तारासुतेन्दुरविमन्त्रिभिरिष्टपुत्रदारार्थवान् गुणयशोबलवानुदारः।
शुक्रेन्दुभानुशशिजैर्विकलश्च वाग्मी मन्देन्दुविद्दिनकरैरधनः कृतघ्नः।।
तोयाटविक्षितिचरोऽवनिपालपूज्यो भोगी दिनेशतुहिनद्युतिजीवशुक्रैः।
जातो विशालनयनो बहुवित्तपो वारांगनापतिरिनेन्दुसुरेज्यमन्दैः।।
मन्देन्दुभानुभृगुजैर्विबलोऽतिभीरुः कन्याजनाश्रयधननाशनतत्परश्च।
आरारुणज्ञगुरुभिः सबलो विपन्नो दारार्थवान् नयनरोगयुतोऽनुगः स्यात्।।
रविकुजबुधशुक्रैरन्यदारानुरक्तो विषमनयनवेषश्चोरधीर्वीतसत्त्वः।
दिनकरकुजतारासूनुमन्दैश्चभूपो नरपतिसचिवो वा नीचकृद् भोगशीलः।।
सूर्यार्यार्यसितैर्महीपतिसमः ख्यातोऽतिपूज्यो धनी
जीवारार्किदिवाकरैर्गतधनो भ्रान्तः सुहृद्बन्धुमान्।
भूपुत्रार्कसितासितैः परिभवप्राप्तो विकर्माऽगुणः
शुक्रार्केन्दुजसूरिभिर्धनयशोमुख्यप्रधानो भवेत्।।
जीवार्किज्ञदिवाकरैः कलहकृत् मानी दुराचारवान्
मन्दज्ञारुणभार्गवैः सुवदनः सत्यव्रताचारवान्।
अर्कार्कीज्यसितैः कलासु निपुणो नीचप्रभुः साहसी
जीवेन्दुज्ञकुजैर्नृपप्रियकरो मन्त्री कविः क्ष्मापतिः।।
चन्द्रारज्ञसितैः सुदारतनयः प्राज्ञो विरूपः सुखी–
मन्दारेन्दुबुधैर्द्विमातृपितृकः शूरो बहुस्त्रीसुतः।
चन्द्रारार्यसितैरधर्मकुशलो निद्रालुरर्थातुरो
जीवारार्किनिशाकरैः स्थिरमतिः शूरः सुखी पण्डितः।।
शुक्रज्ञेन्दुसुरार्चितैः स बधिरो विद्वान्यशस्वी धनी
चन्द्रार्किज्ञसुरार्चितैरतिधनो बन्धुप्रियो धार्मिकः।
शीतांशुज्ञसितासितैर्बहुजनद्वेषी परस्त्रीपति –

जींवेन्द्वर्कजभार्गवैर्गतसुखः श्रद्धादयावर्जितः।।
कुजबुधगुरुशुक्रैरर्थवान्निन्दितः स्यात् बुधगुरुशनिभौमैः सामयो वित्तहीनः।
गुरुसितशनिसौम्यैरेकगेहोपयातैरतिशयधनविद्याशीलमेति प्रजातः।।

एक राशि में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और बुध हो तो जातक मायावी, प्रपंची, लेखक और रोगी होता है। चन्द्रमा, मंगल, सूर्य और बृहस्पति एक राशिस्थ हो तो जातक धनवान्, यशस्वी, बृद्धिमान्, राजा का प्रिय करने वाला, निरोग और निश्चिन्त होता है।

म्गल, सूर्य, चन्द्रमा और शुक्र एक राशि में हो तो जातक पुत्र, स्त्री, धन से युक्त, विद्वान्, अल्पभोजी, सुखी, कार्यों में निपुण और कृपालु होता है। सूर्य, चन्द्रमा, शनि और मंगल एक राशिगत हो तो जातक चंचल नेत्रवाला, घूमनेवाला, व्यभिचारिणी स्त्री का स्वामी और निर्धन होता है।

एक राशिस्थ बुध, चन्द्र, सूर्य और गुरु हो तो जातक मित्र, पुत्र, स्त्री से युक्त, धनवान्, गुणी, यशस्वी, बलवान् और उदार होता है। शुक्र, चन्द्रमा, सूर्य और बुध एक राशि में हो तो जातक विकल और वाचाल होता है। शनि, चन्द्र, सूर्य और बुध एक राशि में हो तो जातक निर्धन और कृतघ्न होता है।

सूर्य, चन्द्रमा, बृहस्पति और शुक्र एक राशि में हो तो जल में चलने वाला, वनस्थल में चलने वाला, राजपूज्य और भोगी होता है। सूर्य, चन्द्र, गुरु और शनि एक राशिगत हों तो जातक विशाल नेत्र वाला, बहुत धन पुत्र से युक्त एवं वेश्या का पति होता है।

शनि, चन्द्रमा, सूर्य और शुक्र एक राशिगत हो तो जातक निर्बल, डरपोक, कन्याओं के द्वारा धन उपार्जन करने वाला और खाने पीने में तत्पर होता है। मंगल, सूर्य, बुध और गुरु एकत्र हों तो सबल, विपत्ति से युक्त, स्त्री सम्पत्तिवाला, नेत्र रोगी और भ्रमणशील होता है।

सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र एक राशि में हो तो जातक दूसरे की स्त्री में लीन, विषमनेत्र, चोर गुद्धि, धनादि से रहित होता है। सूर्य, मंगल, बुध और शनि एक राशि में हो तो सेनापति या राजमंत्री, नीच कर्म करने वाला और भोगी होता है।

सूर्य, मंगल, बृहस्पति और शुक्र एक साथ एक भाव में हो तो जातक राजा के समान, विख्यात् विशेष पूज्य और धनी होता है। बृहस्पति, मंगल, शनि और सूर्य एक राशि में हो तो जातक निर्धन, भ्रान्त होता है, तथा मित्र और परिवारवाला होता है। मंगल, सूर्य, शुक्र और शनि एक राशिस्थ हों तो जातक हारनेवाला, कुकर्मियों में प्रधान होता है। शुक्र, सूर्य, बुध और गुरु एक राशि में हो तो धन और यश में मुख्य, लोक में प्रधान होता है।

बृहस्पति, शनि, बुध और सूर्य के योग से जातक झगड़ालु, मानी और दुराचारी होता है। शनि, बुध, सूर्य और शुक्र के योग से जातक सुन्दरमुखवाला, सत्यव्रतयुक्त और आचारवान् होता है। सूर्य, शनि, बुध और शुक्र एक राशि में हों तो जातक कला में निपुण, नीचों का मालिक और साहसी होता है। बृहस्पति, चन्द्रमा, बुध और मंगल एक राशि में हों तो जातक राजा का प्रिय करने वाला, मंत्री, कवि और राजा होता है।

चन्द्रमा, मंगल, बुध और शुक्र एक राशि में हो तो जातक सुन्दरी स्त्री, सुन्दर पुत्र से युक्त, बुद्धिमान्, विरूप और सुखी होता है। शनि, मंगल, चन्द्रमा और बुध एकत्र एक राशि में हो

तो जातक दो माता एवं पिता वाला होता है। साथ ही पराक्रमी और विशेष स्त्री पुत्रवाला होता है। चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति और शुक्र एक राशि में हो तो जातक पापकर्म में निपुण, निद्रालु और धनादि के लिये हमेशा आतुर होता है। बृहस्पति, मंगल सूर्य और चन्द्रमा एक राशि में हो तो स्थिर बुद्धि, पराक्रमी, सुखी और पंडित होता है।

शुक्र, बुध, चन्द्रमा और बृहस्पति के योग से जातक बधिर, विद्वान्, यशस्वी और धनी होता है। चन्द्रमा, शनि, बुध और गुरु एक राशि में हो तो बड़ा धनी, बन्धुप्रिय और धार्मिक होता है। शुक्र, बुध, शुक्र और शनि एक साथ हो तो बहुत जनसमूहों का वैरी, दूसरे की स्त्री का प्रेमी होता है। बृहस्पति, चन्द्रमा, शनि और शुक्र एक साथ एक राशि में हो तो जातक सुख, श्रद्धा एवं दया से हीन होता है।

मंगल, बुध, गुरु और शुक्र एक साथ हों तो जातक धनवान् और निन्दक होता है। बुध, गुरु, शनि और मंगल एक साथ एक राशि में हो तो जातक रोगी और धनहीन होता है। बृहस्पति, शुक्र, शनि और बुध के एक भाव में प्राप्त होने पर जातक खूब धनी, विद्वान् और शीलवान् होता है।

पंचग्रह योगफल

एकर्क्षगैरिनशशिक्षितिजज्ञजीवैर्जातस्तु युद्धकुशलः पिशुनः समर्थः।
शुक्रारभानुबुधशीतकरैर्विधर्मश्रद्धालुरन्यजनकार्यपरो विबन्धुः।।
भनन्दनेन्दुरविमन्दपुरन्दरेज्यैराशालुरिष्टरमणीविरहाभिभूतः।
चन्द्रारभानुशशिसूनुदिनेशपुत्रैरल्पायुरर्जनपरो विकलत्रपुत्रः।।
जीवेन्दुभौमसितभानुभिराततायी त्यक्तः स्वमातृपितृबन्धुजनैरनेत्रः।
मन्देन्दुशुक्ररविभूमिसुतैर्विनामवित्तप्रभावकुशलो मलिनोऽन्यदारः।।
तारेशभानुगुरुबोधनदानवेज्यैर्मन्त्री धनी बलयशोनिजदण्डनाथः।
भास्वद्बुधेन्दुगुरुभानुसुतैः परान्नभोजी सुभीरुरतिपापरतोप्रवृत्तिः।
सौम्यासितेन्दुसितभानुभिरर्थहीनो दीर्घाकृतिर्गतसुतो बहुरोगगात्रः।
जीवेन्दुशुक्ररविभानुसुतैः सदारो वाग्मीन्द्रजालचतुरो विभयः सशत्रुः।।
शुक्रारभानुगुरुचन्द्रसुतैर्विशोकः सेनातुरंगपतिरन्यवधूविलोलः।
भूसूनुजीवरविबोधनभानुपुत्रैर्भिक्षाशनो मलिनजीर्णतराम्बरः स्यात्।।
पूज्यः कलासु निपुणो वधबन्धनाढ्यो रोगी सितासितगुरुज्ञधराकुमारैः।
श्रेष्ठोऽतिदुःखभयरोगयुतः क्षुधार्तः शन्यारबोधनविकर्तनदानवेज्यैः।।
प्रेष्योऽधनो मलिनवेषयुतोऽतिमूर्खश्चोरः कुजेन्दुगुरुशुक्रदिनेशपुत्रैः।
मन्त्रक्रियासुरतधातुबलप्रसिद्धकर्मा गुरुज्ञशनिचन्द्रवसुन्धराजैः।।
ज्ञानी सदेवगुरुसन्मतिधर्मशीलः शास्त्री दिनेशगुरुशुक्रशनीन्दुपुत्रैः।
साधुः सुखी बहुधनप्रबलश्च विद्वानिन्दुज्ञदेवगुरुदानवपूजितारैः।।
पंचग्रहैरेकगृहोपयातैश्चन्द्रज्ञजीवासुरवन्द्यमन्दैः।
सर्वत्र पूज्यो विकलेक्षणश्च महीपतुल्यः सचिवोऽथवा स्यात्।।

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध और बृहस्पति ये पांच ग्रह एक राशि में हों तो जातक युद्ध में कुशल, चुगलखोरी और सभी कार्यों में समर्थ होता है। शुक्र, मंगल, सूर्य, बुध और चन्द्रमा एक राशि में हो तो जातक विधर्मी, श्रद्धावान्, दूसरों के कार्य में सिद्ध हस्त और बन्धुरहित होता है।

मंगल, चन्द्रमा, सूर्य, शनि और गुरु एक राशि में हो तो जातक पराये की आशा करने वाला और इच्छित स्त्री के विरह से सन्तप्त होता है। चन्द्रमा, मंगल, सूर्य, बुध और शनि एक राशि में हो तो जातक अल्पायु, धन कमाने में तत्पर, विना स्त्री पुत्र वाला होता है।

बृहस्पति, चन्द्रमा, मंगल, शुक्र और सूर्य एकत्र हो तो जातक आततायी, अपने पिता, माता एवं बन्धुजनों से त्यक्त और नेत्र हीन होता है। शनि, चन्द्रमा, शुक्र, सूर्य और मंगल एक साथ एक राशि वा भाव में हो तो जातक मान, धन, प्रभाव से हीन, मलिन और परस्त्रीरत होता है।

चन्द्रमा, सूर्य, बृहस्पति, बुध और शुक्र एक राशि में हो तो जातक मन्त्री, धनी, प्रताप से दूसरों को दण्ड देने वाला होता है। सूर्य, बुध, चन्द्र, गुरु और शनि एक भाव में हो तो जातक परान्नभोजी, विशेष डरपोक, पाप करने वाला और उग्र प्रकृतिवाला होता है।

बुध, शनि, चन्द्रमा, शुक्र और सूर्य एक भाव में हों तो धनहीन, दीर्घ आकृति, पुत्ररहित और बहुत रोगवान् होता है। बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र, सूर्य और शनि एक राशि में हो तो जातक स्त्री सहित वाचाल, इन्द्रजाल करने में चतुर, भयरहित और शत्रु युक्त होता है।

शुक्र, मंगल, सूर्य, गुरु और बुध एक राशि में हो तो शोकरहित, सेना और घोड़ों का स्वामी और अन्य स्त्री के प्रति चंचल होता है। मंगल, गुरु, रवि, बुध और शनि एक राशि में बैठे हों तो जातक को भिक्षा से भोजन प्राप्त होता है तथा मलीन पुराना वस्त्र धारण करने वाला होता है।

शुक्र, शनि, गुरु, बुध और मंगल एक भाव में हों तो जातक पूज्य, रोगी, कला में निपुण और वध–बंधन से युक्त होता है। शनि, मंगल, बुध, सूर्य एवं शुक्र एक भाव में हों तो जातक श्रेष्ठ, अतिदुखी, भय एवं रोग से युक्त और क्षुधार्त होता है।

म्गल, चन्द्रमा, बृहस्पति, शुक्र एवं शनि एक भाव में हों तो दूत, दरिद्र, मलिनवेश युक्त, चोर एवं मूर्ख होता है। बृहस्पति, बुध, शनि, सूर्य, मंगल एक भाव में स्थित हों तो जातक मंत्र क्रिया में, धातु विषय में तथा बल में प्रसिद्ध होता है।

सूर्य, बृहस्पति, शुक्र, शनि, चन्द्र एक भाव में हो तो जातक ज्ञानी, देवगुरु भक्त, धर्मशील और शास्त्री होता है। चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र, मंगल एक राशि में हों तो जातक साधु, सुखी, धन धान्य में प्रबल और विद्वान् होता है।

चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि ये पांच ग्रह एक भाव में स्थित हों तो जातक सर्वत्र पूज्य, विकलनेत्र, राजा के तुल्य वा मंत्री होता है।

षड्ग्रह योगफल

> **सूर्येन्द्वारबुधामरेज्यभृगुजैरेकर्क्षगैस्तीर्थकृ–**
> **ज्जातोऽरण्यगिरिप्रदेशनिलयः स्त्रीपुत्रवित्तान्वितः।**

शुक्रेन्द्वर्कबुधामरेज्यदिनकृत्पुत्रैः शिरोरोगवा–
नुन्मादप्रकृतिश्च निर्जनधरावासो विदेशं गतः।।
जीवज्ञारुणभूमिजासितसितैः संचारशीलः सुधी–
रिन्दुज्ञारसितार्किदेवगुरुभिस्तीर्थाटनः स्याद् व्रती।
जीवारेन्दुरवीन्दुजारुणसुतैश्चोरः परस्त्रीरतः
कुष्ठी बान्धवदूषितो गतसुतो मूर्खो विदेशं गतः।।
नीचोऽन्यकर्मनिरतः क्षयपीनसार्तो निन्द्यो महीसुतरवीन्दुसितासितज्ञैः।
मन्त्री कलत्रधननन्दनमोदहीनः शान्तः सितासितकुजारुणजीवचन्द्रैः।।

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बृहस्पति, बुध, शुक्र एक भाव में हो तो जातक तीर्थ करने वाला, वन और पहाड़ में रहने वाला, स्त्री, पुत्र एवं धन से युक्त होता है। शुक्र, चन्द्र, सूर्य, बुध, बृहस्पति, शनि एक भाव में स्थित हों तो जातक शिर में पीड़ा से युक्त, उन्माद प्रकृति वाला, देवताओं की भूमि में निवास करने वाला वा विदेश में रहने वाला होता है।

बृहस्पति, बृध, सुर्य, मंगल, शुक्र एवं शनि एक भाव में हो तो जातक संचारशील और विद्वान् होता है । चन्द्रमा, बुध, मंगल, शुक्र, शनि, बृहस्पति एक भाव में हो तो जातक तीर्थ करने वाला, व्रती होता है । बृहस्पति, मंगल, चंद्रमा, रवि, बुध, शनि एक भाव में हो तो जातक चोर, परस्त्री रत, कुष्ठी, बान्धवों से दूषित, पुत्र रहित, मूर्ख और विदेश को जाने वाला होता है ।

मंगल, सूर्य, चंद्र, शुक्र, शनि, बुध एक भाव में हो तो जातक नीच, दूसरे के कर्म में लीन, क्षयरोग एवं पीनस रोग से दुखी होता है। शुक्र, शनि, मंगल, सूर्य, बृहस्पति, चन्द्रमा एक भाव में हो तो जातक मंत्री, स्त्री, धन, पुत्र एवं हर्ष से हीन और शान्त होता है।

बोध प्रश्न

1. एक राशि में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और बुध हो तो जातक ....होता है।
क. विद्वान्   ख. स्वस्थ   ग. डरपोक   घ. मायावी
2. सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध और बृहस्पति एक राशि में हों तो जातक........ होता है।
क. कायर   ख. युद्ध में कुशल   ग. स्त्री प्रिय   घ. रोगी
3. शुक्र, शनि, गुरु, बुध और मंगल एक भाव में हों तो जातक................ होता है।
क. नीतिज्ञ   ख. मूर्ख ग. निपुण   घ. कठोर
4. मंगल, बुध, गुरु और शुक्र एक साथ हों तो जातक ....होता है।
क. धनवान्   ख. सात्विक   ग. कृतघ्न   घ. चोर
5. बृहस्पति, बृध, सुर्य, मंगल, शुक्र एवं शनि एक भाव में हो तो जातक .... होता है।
क. जड़,ख. क्रूर   ग. परित्यक्त   घ. विद्वान्

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान गये हैं कि एक भाव में दो ग्रहों की युति से द्विग्रहयोग का निर्माण होता है। सात ग्रहों में से दो ग्रहों को एक भाव में रखने से 21 द्विग्रहयोग बनते हैं। तीन ग्रह एक भाव में स्थित हों तो त्रिग्रह योग बनता है। त्रिग्रह योगों

की कुल संख्या 35 होती है। यदि चार ग्रह एक ही भाव में स्थित हों तो चतुर्ग्रहयोग का निर्माण होता है। चतुर्ग्रहयोगों की कुल संख्या 35 होती है। एक भाव में पाँच ग्रहों की स्थिति से पंचग्रहयोग होता है। पंचग्रहयोग 21 प्रकार के होते हैं। एक ही भाव में छः ग्रहों की स्थिति से षड्ग्रहयोग होते हैं, इनकी संख्या 27 और एक ही भाव में सात ग्रहों की युति से सप्तग्रहयोग होते हैं, इनकी संख्या 1 होती है।

वस्तुतः एक ही तथ्य के द्योतक दो ग्रहों की युति सम्बन्ध से उक्त तथ्य सम्बन्धी घटनाऐं घटती है। जैसे अष्टमेश एवं लग्नेश से आयु का विचार किया जाता है। यदि दोनों एक ही भाव में शुभग्रहों के प्रभाव में हो तो आयु की वृद्धि करा देता है। एक ही भाव गत लग्नेश अष्टमेश पर पापग्रहों के प्रभाव से आयु की हानि होती है। इसी प्रकार लग्नेश, धनेश एवं लाभेश ये तीनों ग्रह धन कारक हैं। यदि किसी भाव में इन तीनों की युति हो तो धनवान् योग बनता ही है। वृश्चिक लग्न की कुण्डली में धनेश गुरु और लाभेश बुध की परस्पर यति हो तो विशेष धनदायक योग बनाता है। यदि धनेश एवं लाभेश के साथ भाग्येश चन्द्र की युति हो तो वह सभी ग्रह एक दूसरे की दशाकाल में धन, भाग्यादि को देता है। जैसा कि दशमेश और लाभेश की परस्पर युति लाभेश की दशा में राजयोग को देता है। इसी प्रकार द्विग्रहादि युति फल, भाव, लग्न एवं राशि के आश्रित होते हैं । ठीक इसके विपरीत यदि विपरीत तथ्य से संबन्धीत एक भाव गत दो या तीन ग्रह हों तो तथ्य संबन्धी घटनाओं से जातक को पृथक् कर देता है।

पराशरीय सिद्धान्त के अनुसार केन्द्रेश एवं त्रिकोणेश की युति धनदायक होता है। ग्रहों की द्विग्रहादि युति किसी स्थान विशेष में, किसी लग्न विशेष में विशेष फल को देने वाले होते हैं। इसी प्रकार त्रिग्रह, चतुर्ग्रह, पंचग्रह, षष्ठग्रह एवं सप्तग्रह युति जन्य फलाफल का विचार करना चाहिये, क्योंकि अकेले में केवल भाव वा भावेश वा ग्रह सभी प्रकार के फलों को देने में समर्थ नहीं होते हैं। वल्कि सबों का समेकित फल ही जातक को राज्यसुख वा मृत्यु, धन वा निर्धनता, स्वास्थ्य लाभ वा स्वास्थ्य हानि देता है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

गर्वी – अभिमान करने वाला ।

सात्विक – अपने धर्म पर स्थिर रहने वाला ।

दूषक – निन्दा करने वाला, दोष निकालने वाला ।

दुष्कर्मी – दुष्ट कर्म में रत रहने वाला ।

रोष – क्रोध,

विशील – दुष्ट स्वभाव वाला, विना शील का ।

विपुत्र – कुपुत्र, पुत्र के आचरण से रहित ।

प्राज्ञ – विद्वान्

विख्यात – प्रसिद्ध

विकल – वेचैन, अशांत

वाचाल – अधिक बोलने वाला

निर्धन – गरीब
कृतघ्न – उपकार को नहीं मानने वाला
विधर्मी – विना धर्म का, धर्म को नहीं मानने वाला
इन्दुजाल – मायावी, मांत्रिक कार्य
नीतिज्ञ – नियम को जानने वाला
वक्ता – बोलने वाला
विनयी – सौम्य स्वभाव वाला
कुलीन – उच्च कुल का, उच्च विचार वाला
सहिष्णु – सहन करने वाला,

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शुक्र एवं बुध की युति से जातक............ होता है । ख. पृथ्वीपति,
2. गुरु युक्त मंगल से जातक .... होता है। क. धनी ब्राह्मण,
3. बुध युक्त सूर्य से जातक...................... होता है। क. ज्ञानी
4. शनि युक्त गुरु से जातक.................. होता है । क. नापित
5. मंगल युक्त सूर्य से जातक.......................होता है। ग. पापकर्मरत

अभ्यासार्थ प्रश्नों के उत्तर

1. सूर्य, चन्द्रमा तथा मंगल तीनों एक स्थान में हों तो जातक कैसा होता है ? क. शत्रुहन्ता,
2. सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति एकत्र हों तो जातक का स्वरूप होता है ? ग. विद्वान
3. शुक्र, चन्द्रमा, शनि एक राशिगत हो तो जातक क्या जानने वाला होता है ? घ. वेदशास्त्र
4. चन्द्रमा, मंगल और शुक्र एक स्थान में हो जातक होता है? ग. भ्रमणशील
5. शनि, बृहस्पति और सूर्य एक स्थान में हो तो जातक होता है ? ख. राजप्रिय

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. एक राशि में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और बुध हो तो जातक ....होता है । घ. मायावी
2. सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध और बृहस्पति एकत्रं हों तो जातक........ होता है। ख. युद्ध में कुशल
3. शुक्र, शनि, गुरु, बुध और मंगल एक भाव में हों तो जातक................ होता है । ग. निपुण
4. मंगल, बुध, गुरु और शुक्र एक साथ हों तो जातक ....होता है । क. धनवान्
5. बृहस्पति, बृध, सुर्य, मंगल, शुक्र, शनि एक भाव में हो तो जातक ..... होता है । घ. विद्वान्

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन
बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी
जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
जातक पारिजात – चौखम्भा प्रकाशन
जातकाभरणम् – ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर, वाराणसी

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातकम् – हंसा प्रकाशन
योगयात्रा – आयुर्वेद प्रकाशन
षटपंचाशिका – हंसा प्रकाशन
बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन
बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी
जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
जातक पारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. द्विग्रह योग फल को समझाईये ।
2. त्रिग्रह योगफलों का विवेचन कीजिए ।
3. चतुर्ग्रह योगफलों का विस्तृत विवेचन कीजिए ।
4. पंचग्रह योगफलों का प्रतिपादन कीजिए ।
5. षड्ग्रह योगफलों का विवेचन कीजिए ।

इकाई - 5 दृष्टि एवं कारकांश फल

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

यह इकाई एम.ए. ज्योतिष पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष की पाँचवीं इकाई दृष्टि एवं कारकांश फल से संबन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने पंचांग फल, भावफल, भावेश फल एवं द्विग्रहादि योग फल का अध्ययन कर लिया है।

5.2 उद्देश्य

1. इस इकाई के माध्यम से छात्र ग्रहों की कितने प्रकार की दृष्टि होती है जान सकेंगे।

2. इस इकाई के माध्यम से छात्र ग्रहों की साधारण एवं विशेष दृष्टि को जान सकेंगे।

3. छात्र ग्रहों की विशेष एवं सामान्य दृष्टि फल को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

4. छात्र जन्मांग गत आत्मकारकादि ग्रह को समझ सकेंगे।

5. छात्र आत्मकारकादि ग्रहों के आधार पर फलादेश की प्रक्रिया को जान सकेंगे।

5.3 दृष्टि परिचय

प्रस्तुत इकाई में दृष्टि एवं कारकांश फल का अध्ययन करेंगे। ग्रहों के सूर्यादि ग्रहों में परस्पर मित्रामित्र सम्बन्ध के अतिरिक्त उनकी दृष्टि एवं युति के आाधार पर चार प्रकार के सम्बन्ध का विचार फलादेश में किया जाता है। जिसे सम्बन्ध चतुष्टय कहते हैं 1. युति सम्बन्ध, 2. दृष्टि सम्बन्ध, 3. स्थान सम्बन्ध एवं 4. एकान्तर सम्बन्ध । परस्पर को देखने वाले ग्रहों से दृष्टि सम्बन्ध बनता है। जो दो प्रकार की होती है। एक साधारण दृष्टि तथा दूसरा विशेष दृष्टि। ग्रह स्वकीय अधिष्ठित स्थान से तृतीय एवं दशम स्थान को एक पाद दृष्टि से, पंचम एवं नवम स्थान को द्विपाद दृष्टि से, चतुर्थ एवं अष्टम स्थान को त्रिपाद दृष्टि से तथा सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। परन्तु ग्रहों में से गुरु, मंगल एवं शनि ग्रहों की विशेष दृष्टि होती है। मंगल सप्तम स्थान के साथ–साथ चतुर्थ एवं अष्टम स्थान को, गुरु सप्तम स्थान के साथ –साथ पंचम एवं नवम स्थान को तथा शनि सप्तम स्थान के साथ ही तृतीय एवं दशम स्थान को विशेष दृष्टि से देखते हैं। साधारण दृष्टि गत ग्रह का साधारण प्रभाव एवं विशेष दृष्टि गत ग्रह का विशेष प्रभाव होता है। ग्रहों के दृष्टि सम्बन्ध में जो ग्रह किसी भाव एवं किसी ग्रह को देखता है वह द्रष्टा होता है। द्रष्टा ग्रह जिस ग्रह एवं भाव को देखता है वह दृश्य होता है। दो ग्रहों की युति सम्बन्ध से दृष्टिगत सम्बन्ध विशेष शुभाशुभ फलदायक होता है। द्रष्टा एवं दृश्य ग्रहों के तथा द्रष्टा एवं दृश्य भावेश के परस्पर शुभाशुभ सम्बन्ध के आधार पर दृष्टि फल निर्भर करता है। होरारत्न, जातकाभरण, सारावली, बृहज्जातक, जातक पारिजातादि ग्रन्थों में ग्रहों की दृष्टिफल का विशेष विवेचन किया गया है। होरारत्न एवं जातकाभरण का फल सारावली के तुल्य है।

5.4 कारकांश परिचय

जन्मकालिक सूर्यादि ग्रहों में जो ग्रह सर्वाधिक अंशादि वाला होता है, वह आत्मकारक ग्रह कहलाता है। अंशों में समता होने पर अधिक कला युक्त ग्रह एवं कला में समता होने पर अधिक विकल युक्त ग्रह को आत्मकारक माना जाता है। सर्वथा समता होने पर बलवान् ग्रह को आत्मकारक माना जाता है। आत्मकारक ग्रह जिस नवमांश पर हो वह कारकांश कुण्डली में लग्न होता है। तदनन्तर सभी जन्मकालिक ग्रह अपनी–अपनी राशि में रखने से कारकांश कुण्डली का निर्माण होता है। कुण्डली में आत्मकारक का विशेष महत्त्व है। आत्मकारक ही कुण्डली का समस्त दुःख तथा सुख देने में समर्थ होता है। वही पाप ग्रह नीच आदि के सम्बन्ध से स्वदशा में दुःख एवं उच्च स्थान एवं मित्रादि के गृह में होने पर सुख देता है। जैसाकि जैमिनि सूत्र में कहा गया है –

स ईष्टे बन्धमोक्षयोः– जै.सू. अ.1,पा.1, सू.12

पाराशर ने भी कहा है जैसे पृथ्वी पर राजा सभी विषयों का अधिकारी, बन्धन एवं मोक्ष में समर्थ तथा प्रसिद्ध होता है ठीक उसी प्रकार से कुण्डली में आत्मकारक सभी विषयों का अधिकारी होता है [276]।

आत्मकारक ग्रह जिस नवांश में होता है वह कारकांश कुण्डली का लग्न होता है । पाराशर एवं जैमिनिसूत्र में कारकांश लग्न के आधार पर तथा आत्मकारक के नवांशगत ग्रह के आधार पर फल का विचार किया गया है।

5.5 दृष्टि फल

जातक पारिजात में दृष्टिफल आकलन हेतु संक्षेप में नियम दिया हुआ है कि यदि कारक ग्रह पापग्रह से देखा जाता हो तो जातक दुष्ट, रोगी, अपने धर्म, गुण, धन एवं यश से हीन होता है। यदि ग्रह पाप ग्रह से युक्त हो तो पराये का धन, स्त्री को भोगने वाला, नीरस वचन बोलने वाला, कपट बुद्धि से युक्त एवं आलसी होता है। इसके विपरीत यदि शुभग्रह की दृष्टि से युत ग्रह हो तो पुत्र, धन से युक्त, भोगी, सुन्दर, राजपूज्य तथा पराभव से रहित होता है, अर्थात् ऐसा जातक सर्वत्र विजयी होता है। शुभग्रह से युक्त ग्रह पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो जातक शत्रु को जीतने वाला, धर्माचरण से युक्त तथा बुद्धिमान् होता है [277]। जातक पारिजात में अन्य दृष्टिफल अक्षरशः बृहज्जातक के समान दिया गया है [278]।

चन्द्रे भूपबुधौ नृपोपमगुणी स्तेनोऽधनश्चाजगे

[276] पा.हो. कारकाध्याय, श्लो. 7–12
[277] जातक पारिजात, अध्याय 8, श्लो. 46,47,
[278] जातक पारिजात, अध्याय 8, श्लो. 48–55,

निःस्वः स्तेननृमान्यभूपधनिनः प्रेष्यः कुजाद्यैर्गवि।

नृस्थेऽयोव्यवहारिपार्थिवबुधाभीस्तन्तुवायोऽधनः

स्वर्क्षे योद्धृकविज्ञभूमिपतयोऽयोजीविदृग्रोगिणौ।।

ज्योतिर्ज्ञाढ्यनरेन्द्रनापितनृपक्ष्मेशा बुधाद्यैहरौ

तद्वद्भूपचमूपनैपुणयुताः षष्ठेऽशुभैः स्त्र्याश्रयः।

जूके भूपसुवर्णकारवणिजः शेषेक्षिते नैकृती

कीटे युग्मपिता नतश्च रजको व्यंगोऽधनौ भूपतिः।।

ज्ञातुर्वीशजनाश्रयश्च तुरगे पापैः सदम्भः शठ–

श्चात्युर्वीशनरेन्द्रपण्डितधनी द्रव्योनभूपो मृगे।

भूपो भूपसमोऽन्यदारनिरतः शेषैश्च कुम्भस्थिते

हास्यज्ञो नृपतिर्बुधश्च झषे पापेक्षिते।।

होरेशर्क्षदलाश्रितैः शुभकरो दृष्टः शशी तद्गत–

स्त्र्यंशे तत्पतिभिः सुहृद्भवनगैर्वा वीक्षितः शस्यते।

यत्प्रोक्तं प्रतिराशिवीक्षणफलं तद्द्वाशांशे स्मृतं

सूर्याद्यैरवलोकितेऽपि शशिनि ज्ञेयं नवांशेष्वतः।।

आरक्षिको वधरुचिः कुशलो नियुद्धे

भूपोऽर्थवान्कलहकृत्क्षितिजांशसस्थे।

मूर्खोऽन्यदारनिरतः सुकविः शितांशे

सत्काव्यकृत्सुखपरोऽन्यकलत्रगश्च।।

बौधे हि रंगचरचौरकवीन्द्रमंत्री गेयज्ञशिल्पनिपुणः शशिनि स्थितेंऽशे।

स्वांशेऽल्पगात्रधनलुब्धतपस्विमुख्यः स्त्रीपोष्यकृत्यनिरतश्चनिरीक्ष्यमाणे।।

सक्रोधो नरपतिसम्मतो निधीशः सिंहांशे प्रभुरसुतोऽतिहिंस्रकर्मा।

जीवांशे प्रथितबलो रणोपदेष्टा हास्यज्ञः सचिवविकामवृद्धशीलः।।

अल्पापत्यो दुःखितः सत्यपि स्वे मानासक्तः कर्मणि स्वेऽनुरक्तः।

दुष्टस्त्रीष्टः कृपणश्चार्किभागे चन्द्रे भानौ तद्वदिन्द्वादिदृष्टे।।

वर्गोत्तमस्वपरगेषु शुभं यदुक्तं तत्पुष्टमध्यलघुताशुभमुत्क्रमेण।

वीर्यान्वितोंऽशकपतिर्निरुणद्धि पूर्वं राशीक्षणस्य फलमंशफलं ददाति।।

मेष राशि स्थित चन्द्र पर मंगल की दृष्टि हो तो जातक राजा, बुध की दृष्टि हो तो पंडित, बृहस्पति से दृष्ट हो तो राजतुल्य, शुक्र से दृष्ट हो तो गुणवान्, शनि से दृष्ट हो तो चोर और मेषगत चन्द्र पर सूर्य की दृष्टि हो तो जातक दरिद्र होता है।

वृष राशिस्थ चन्द्र पर मंगल की दृष्टि हो तो जातक दरिद्र, बुध से दृष्ट हो तो चोर, गुरु से दृष्ट हो तो समाजमान्य, शुक्र से दृष्ट हो तो राजा, शनि से दृष्ट हो तो धनी और सूर्य से दृष्ट हो तो नौकर होता है।

भौम दृष्ट मिथुनगत चन्द्रमा से जातक लोहा से जीविका उपार्जन करने वाला, बुध से राजा, बृहस्पति से पंडित, शुक्र से दृष्ट हो तो निर्भय, शनि से दृष्ट हो तो वस्त्र निर्माता और सूर्य से दृष्ट हो तो दरिद्र होता है।

कर्क राशिगत चन्द्रमा पर मंगल की दृष्टि से जातक युद्ध कुशल, बुध की दृष्टि से काव्य कर्ता, गुरु की दृष्टि से पण्डित, शुक्र की दृष्टि से राजा, शनि की दृष्टि से शस्त्र से जीविका चलाने वाला और सूर्य की दृष्टि से नेत्ररोगी होता है।

बुध, गुरु, शुक्र, शनि, सूर्य और मंगल प्रत्येक ग्रह की सिंह राशिगत चन्द्रमा पर दृष्टि से क्रमशः ज्योतिष शास्त्र में पण्डित, धनी, राजा, नापित, राजा और मंगल की दृष्टि से भी राजा होता है।

इसी प्रकार कन्या राशिगत चन्द्रमा पर बुधादि, मंगल, बुध, शुक्र, ग्रहों की दृष्टिवश पृथक–पृथक फल क्रमशः राजा, सेनापति, सर्व कार्यो में निपुण जातक होता है। शनि, रवि और मंगल इन तीन ग्रहों की दृष्टि से स्त्री के आश्रय से जीविका होती है।

तुलागत चन्द्र पर बुध, गुरु, शुक्र की दृष्टि से जातक क्रमशः राजा, स्वर्णकार और बनियाँ होता है। पापग्रहों अर्थात् शनि, सूर्य और मंगल से प्राणियों का घातक होता है।

शुभ ग्रह बुध, गुरु, शुक्र तथा पाप ग्रह शनि, रवि और मंगल से दृष्ट वृश्चिक राशिस्थ चंद्रमा क्रमशः सन्तान, सम्पन्नता, नम्रता, धोवी, अंगहीन निर्धन एवं राजा जातक को बनाता है।

धनु राशिगत चन्द्र पर बुध, गुरु, शुक्र ग्रह की दृष्टियों से क्रमशः आत्मीयजनों का पोषक, भपति और बहु समाज को आश्रय देता है। शनि, सूर्य और मंगल की दृष्टि से क्रमशः आडम्बर युक्त और शठ का कर्म करता है।

म्कर राशिगत चन्द्रमा पर बुध, गुरु शुक्र और शनि, सूर्य और मंगल की दृष्टि हो तो जातक क्रमशः राजाधिराज, राजा, पण्डित, धनवान्, निर्धन और राजा होता है।

कुम्भ राशिगत चन्द्रमा पर बुध, की दृष्टि हो तो जातक के लिये राज्यप्रद होता है । गुरु की दृष्टि हो तो जातक राजा तुल्य होते हुये शेष ग्रह ग्रहों की दृष्टि से जातक परस्त्री गमन में रत रहता है।

मीनराशिस्थ चन्द्र पर बुध की दृष्टि हो तो जातक हास्यप्रिय, गुरु दृष्टि से राजा, शुक्र दृष्टि से विद्वान्, होते हुये शेष ग्रहों की दृष्टि जातक को पापाचरण युक्त करता है।

सूर्य होरागत चन्द्र पर सूर्य होरागत ग्रहों की दृष्टि से जातक शुभोदय युक्त भाग्यवर्धक होता है।

अपनी होरागत चन्द्र पर चन्द्र होरागत ग्रह दृष्टि से जातक का भविष्य शुभोदय प्रद होता है। विपरीत स्थिति से जीवन शुभप्रद नहीं होता है।

एवमेव जिस किसी द्रेष्काण नवांशादि गत चन्द्रमा पर उस द्रेष्काण नवांश के अधिपति ग्रह के दृष्टि योग से भी जातक का भविष्य उज्वल होता है। इसी प्रकार राशि द्वादशांश गत चन्द्र पर द्वादशांशादि की दृष्टि आदि से भी जातक भाग्यवान् होता है।

चन्द राशि गत ग्रह दृष्टियों की तरह नवांशगत चन्द्र पर नवांशेष ग्रह की दृष्टि से भी जातक का भविष्य शुभमय होता है।

मेषांश वृश्चिक नवांशगत चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि से जातक नगर रक्षाधिकारी होता है। मंगल की दृष्टि से प्राणियों का घातक, बुध की दृष्टि से बाहु युद्ध में कुशल, बृहस्पति की दृष्टि से राजा, शुक्र और शनि की दृष्टि से कलहकारक एवं मूर्ख होता है।

वृष एवं तुला नवांशगत चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि से मूर्ख, मंगल की दृष्टि से परस्त्री में आसक्त, बुध की दृष्टि से काव्यकर्ता, गुरु की दृष्टि से सत्काव्यकारक, शुक्र की दृष्टि से विशेष सुखी और शनि की दृष्टि से जातक परस्त्री गमन में रत होता है।

बुध नवांश गत चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि से जातक नृत्य कला में निपुण या मल्लयुद्ध कारक होता है। मंगल की दृष्टि हो तो जातक घोर कर्म करने वाला, बुध की दृष्टि से कवि, गुरु की दृष्टि से राजमन्त्री, शुक्र की दृष्टि से संगीत प्रिय और शनि की दृष्टि से शिल्प विद्या में निपुण होता है।

कर्क नवांशगत चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि से जातक छोटे कद के शरीरवाला, मंगल की दृष्टि से जातक धनलोलुप होता है। बुध की दृष्टि से जातकतपस्वी, गुरु की दृष्टि से समाज प्रधान, शुक्र की दृष्टि से स्त्रीपोष्य, स्त्रियों के द्वारा जीवन निर्वाह और शनि की दृष्टि से सर्वदा कार्यकुशल होता है।

सिहांशगत चन्द्र पर सूर्य दृष्टि से क्रोधी, मंगल दृष्टि से राजमान्य, बुध की दृष्टि से खनिज से उत्पन्न द्रव्य का मालिक, गुरु दृष्टि से पुत्रहीन और शनि दृष्टि से अत्यन्त क्रूर और हिंसक होता है।

गुरु नवांशगत चन्द्र पर सूर्य की दृष्टि से विख्यात बलशाली, मंगल की दृष्टि से युद्ध विद्या में शिक्षक, बुध की दृष्टि से हास्यप्रिय, गुरु की दृष्टि से राजमंत्री, शुक्र की दृष्टि से काम की इच्छा से रहित नपुंसक और शनि की दृष्टि से जातक वृद्ध स्वभाव का होता है।

मकर या कुम्भ नवांशगत चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि से जातक अहंकारी, मंगल की दृष्टि से धनी होकर भी दुखी, बुध की दृष्टि से जातक अहंकारपूर्ण, गुरु की दृष्टि से स्वकार्य निरत, शुक्र की दृष्टि से दुष्ट स्त्री का भरण पोषण करने वाला और शनि की दृष्टि से कृपण होता है।

मेषादि नवांशगत चन्द्र पर सूर्यादि ग्रहों के दृष्टि फल की तरह मेषादि नवांशगत सूर्य पर चन्द्रादि ग्रह की दृष्टि का तारतम्य समझ कर फलादेश करना चाहिए। अर्थात् मेषादि राशि नवांश स्थित सूर्य सूर्य चन्द्रमा पर मंगलादि ग्रहों का दृष्टि फल पूर्वकथित फल के समान समझना चाहिए। चन्द्रमा पर रवि दृष्टिवश जैसा शुभाशुभ कहा गया है, यहाँ पर राशि नवांशगत सूर्य पर चन्द्र दृष्टिफल को ही शशि नवांशगत चन्द्र पर सूर्य दृष्टिफल समझना चाहिए।

वस्तुतः किसी भी नवांशगत चन्द्रमा पर ग्रह दृष्टियों से जो शुभाशुभ फल कहे गये हैं, उनके शुभाशुभ परिणाम समझने आवश्यक हैं। अर्थात् वर्गोत्तम गत चन्द्रमा पर ग्रह दृष्टिफल पूर्ण रू से होता है। अपने नवांशगत चन्द्रमा पर ग्रह की दृष्टि का शुभाशुभ फल मध्यमरूपेण होता है, तथा वर्गोत्तम या अपने नवांश रहित किसी भी नवांशगत चन्द्रमा पर शुभदृष्टिजन्य शुभफल अल्प मात्रा में होते हैं। ठीक इस आशय के विपरीत जैसे वर्गोत्तम नवांशगत चन्द्रमा पर ग्रह दृष्टि जन्य अशुभ फल अल्प मात्रा में, स्वनवांशगत चन्द्रमा पर ग्रह दृष्टिजन्य अशुभफल मध्यम मात्रा में और यत्र तत्र किसी नवांशगत चन्द्रमा में अशुभफल पूर्णरूप से होता है। बल सम्पन्न चन्द्र नवांशपति से, राशि दृष्टि फल का कोई महत्त्व नहीं होता है। नवांश दृष्टिफल ही उचित समझना चाहिए। नवांश पति ग्रह की बल शालीनता के बावजूद राशि से नवांश सूक्ष्म होने से नवांश फल का प्राधान्य हो जाता है।

बोध प्रश्न

1. मेष राशिगत चन्द्र पर मंगल की दृष्टि से जातक...........होता है।

क. मूर्ख ख. राजा, ग. पण्डित घ. निर्धन

2. वृष राशिगत चंद्र पर सूर्य की दृष्टि से जातक..........होता है।

क. राजा ख. मंत्री ग. नौकर घ. चोर

3. मिथुन राशिगत चंद्र पर बुध की दृष्टि से जातक..........होता है।

क. दानी ख. राजा ग. पण्डित घ. तस्कर

4. कन्या राशिगत चन्द्रमा पर मंगल की दृष्टि से जातक ......होता है।

क. राजा ख. सेनापति ग. सर्वज्ञ घ. नापित

5. मकर राशिगत चंद्र पर शनि की दृष्टि से जातक...........होता है।

क. निर्धन ख. राजा ग.राजाधिराज घ. धनवान्

5.6 कारकांश फल

जन्मांग गत कारकांश निर्धारण की पद्धति एवं फलादेश का सिद्धान्त बृहत्पाराशर होराशास्त्र एवं जैमिनिसूत्र दोनों का समान है, यदि अंतर है तो सिर्फ इतना कि बृहत्पाराशर होराशास्त्र पद्यात्मक होने के कारण सुगमता से बोधगम्य है तथा जैमिनि सूत्र सूत्रात्मक होने के कारण कठिनता से बोधगम्य है। दोनों ग्रन्थ ऋषिप्रोक्त होने के कारण दोनों का फल सर्वथा सिद्ध है तथा ये दोनों ग्रन्थ भारत के सभी संस्कृत विश्वविद्यालयों एवं संस्कृत महाविद्यालयों में अध्यापित किया जाता है।

आत्मकारक मेषादि नवांशों का फल

यदि आत्मकारक ग्रह मेषादि राशियों के नवांश में हो तो मनुष्य को चूहे, बिल्ली व अन्य समस्वरूप वाले जीवों से कष्ट होता है।

यदि आत्मकारक ग्रह वृष राशि के नवांश में हो तो मनुष्य को चौपाए जानवरों से सुख मिलता है। वृद्ध कारिका में कहा गया है कि वृष व तुला के नवांश में आत्मकारक ग्रह हो तो मनुष्य बड़ा व्यापारी होता है। मेष, सिंह के नवांश में चूहों से भय होता है। धनु के नवांश में हो तो वाहन से पतन होता है।

यदि मिथुन के नवांश में आत्मकारक ग्रह हो तो मनुष्य के शरीर में खुजली आदि चर्म रोगों के होने की संभावना होती है और शरीर में स्थूलता होती है।

पंचमूषिकमार्जाराः।।

तत्र चतुष्पादः।।

मृत्यौ कण्डूः स्थौल्यं च।।

आत्मकारक यदि कर्क के नवांश में हो तो मनुष्य को जल से भय होता है व उसे कुष्ठ रोग होने की संभावना होती है।

यदि सिंह राशि के नवांश में हो तो कुत्ते, बिल्ली आदि के काटने का भय होता है।

कन्या राशि के नवांश में होने पर खुजली, शरीर का मोटापा एवं अग्नि से भय होता है।

दूरे जलकुष्ठादिः।।

शेषाः श्वापदानि ।।

मृत्युवज्जायाग्निकणश्च ।।

तुला राशि के नवांश में आत्मकारक ग्रह हों तो मनुष्य व्यापार करने वाला होता है।

वृश्चिक राशि के नवांश में आत्मकारक ग्रह हो तो पानी व साँप आदि से भय होता है और माँ का दूध कम मिलता है।

धनु राशि के नवांश में होने पर वाहन से वा किसी ऊँचे स्थान से पतन होता है।

लाभे वाणिज्यम्।।

अत्र जलसरीसृपाः स्तन्यहानिश्च।।

समे वाहनाद् ऊच्चाच्च क्रमात्पतनम्।।

यदि आत्मकारक मकर राशि के नवांश में हो तो आकाशचारी पक्षी, ग्रह आदि दुःखदायी होते हैं, और शरीर में खुजली वा दुष्ट ग्रन्थि अर्थात् बड़े घाव वा ट्यूमर आदि होते हैं।

यदि कुम्भ के नवांश में हो तो मनुष्य धार्मिक स्वभाव वाला, तडाग आदि जनसुविधाओं के वस्तुओं का निर्माण करने वाला होता है।

मीन के नवांश में होने पर मनुष्य नितान्त आस्तिक, धार्मिक व मोक्ष पाने वाला होता है। इस आत्मकारक ग्रह पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो पापफल में कमी व अशुभ दृष्टि हो तो शुभफल में कमी होती है।

जलचरखेचरखेटकण्डूदुष्टग्रन्थयश्च रिःफे।।

तडागादयो धर्मे।।

उच्चे धर्मनित्यताकैवल्यं च।।

आत्मकारक के साथ स्थित ग्रह और व्यवसाय

तत्र रवौ राजकार्यपरः।।

पूर्णेन्दुशुक्रयोर्भोगीविद्याजीवी च।।

धातुवादी कौन्तायुधो वह्निजीवी च भौमे।।

वणिजस्तन्तुवायाः शिल्पिनो व्यवहारविदश्च सौम्ये।।

कर्मज्ञाननिष्ठावेदविदश्च जीवे।।

राजकीयाः कामिनः शतेन्द्रियाश्च शुक्रे।।

प्रसिद्ध कर्माजीवः शनौ।।

धानुष्काश्चौराश्च जांगलिकालोहयन्त्रिणश्च राहौ।।

गजव्यवहारिणश्चोराश्च केतौ।।

कारकांश कुण्डली में यदि आत्मकारक के साथ सूर्य स्थित हो अर्थात् आत्मकारक के नवांश में यदि सूर्य हो तो मनुष्य राजकीय कार्य करने वाला होता है।

यदि कारकांश लग्न में पूर्ण चन्द्रमा अथवा शुक्र हो, या पूर्ण चन्द्रमा शुक्र से युत दृष्ट हो तो मनुष्य भोगों को प्राप्त करने वाला, विद्या व बुद्धि से जीविका चलाने वाला, सुखी व विद्वान् होता है।

यदि वहाँ पर मंगल स्थित हो तो मनुष्य रसायनों का निर्माण करने वाला, शस्त्रधारी योद्धा और अग्निकर्म से जीविका चलाने वाला होता है। अर्थात् ऐसा व्यक्ति रसायन निर्माण की भठ्ठियों में काम करने वाला, इंजिन ड्राइवर, सोनार, लोहार, परमाणु संयंत्रों में कार्यशील, बेकरी आदि अग्नि पर आधारित कार्यों में रत होता है।

कारकांश लग्न में बुध हो तो मनुष्य व्यापार करने वाला, कपड़ा बनाने वाला, शिल्पी व व्यवहार कुशल होता है।

यदि वहाँ बृहस्पति स्थित हो तो मनुष्य कर्मकाण्ड जानने वाला, अथवा कार्यकुशल, कर्तव्यनिष्ठ एवं वेदों का जानकार होता है। पराशर के मत से ऐसा व्यक्ति उक्त विशेषताओं के साथ अच्छे कार्य करने वाला भी होता है।

कारकांश में शुक्र होने पर मनुष्य राजकीय अधिकारों से युक्त, अनेक स्त्रियों का भोग करने वाला, सौ वर्षों तक इन्द्रिय शक्ति से युक्त होता है अर्थात् ऐसा व्यक्ति लम्बी अवस्था तक सांसारिक सुखों को भोगता है।

कारकांश कुण्डली में शनि होने पर मनुष्य प्रसिद्ध कार्य करके जीविका चलाने वाला होता है अर्थात् ऐसा व्यक्ति प्रसिद्ध होता है तथा अपने कार्यक्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान करता है।

यदि कारकांश लग्न में राहु हो तो मनुष्य युद्ध में प्रयुक्त होने वाले शस्त्रों का निर्माण करने वाला, चोर वृत्ति से जीवन यापन करने वाला, विष की चिकित्सा का विशेषज्ञ और यन्त्रों का निर्माता अथवा यन्त्र विशेषज्ञ होता है।

यदि आत्मकारक के नवांश में केतु हो तो हाथियों का व्यापार करने वाला व चोर वृत्ति वाला होता है । यह फल आत्मकारक ग्रह के नवांश में स्थित होने पर ही होता है।

तत्र रविशुक्रदृष्टेराजप्रेष्यः।।

रिःफे बुधे बुधदृष्टे वा मन्दवत्।।

शुभदृष्टे स्थेयः।।

रवौ गुरुमात्र दृष्टे गोपालः।।

कारकांश कुण्डली में लग्न पर अर्थात् आत्मकारक पर सूर्य एवं शुक्र की दृष्टि हो तो मनुष्य राजा का नौकर होता है। प्रेष्य शब्द का अर्थ ऐसे व्यक्ति से है जिन्हें कार्यवशात् स्वामी जहाँ तहाँ भेज देता है, अर्थात् सन्देशवाहक, चपरासी, लिपिक और अन्य तत्समकक्ष कर्मचारी आदि। अतः इसे राजयोग समझने का भ्रम नहीं करना चाहिए क्योंकि राजयोग में राज्याधिकार का ग्रहण होता है। इसे महर्षि पराशर ने अपने बृहत्पाराशर होराशास्त्र में केतु पर सूर्य शुक्र की दृष्टि होने से उक्त फल को कहा है। जैसे –

सितसूर्येक्षिते तत्र राज्ञो भृत्यः प्रजायते। कारकांश फलाध्याय, श्लो.29,

कारकांश लग्न में दशम स्थान में बुध स्थित हो या बुध की वहाँ दृष्टि हो तो समस्त फल शनि की तरह समझना चाहिए। अर्थात् उक्त स्थिति में मनुष्य अपने व्यवसाय में बहुत प्रसिद्ध होता है।

कारकांश लग्न में दसवें भाव को यदि बुध के अतिरिक्त शुभग्रह देखते हों तो मनुष्य स्थिर बुद्धि वाला होता है। यदि उक्त स्थान को अशुभ ग्रह देखते हों तो मनुष्य अस्थिर मति वाला होता है।

कारकांश लग्न से दशम स्थान में यदि सूर्य स्थित हो तथा उसे अकेला बृहस्पति देखता हो तो मनुष्य गाय आदि दुधारू जानवरों का व्यवसाय करने वाला होता है।

मृत्युचिन्तयोः पापे कर्षकः।।

समे गुरौ विशेषेण।।

यदि कारकांश लग्न से तृतीय वा षष्ठ स्थान में पापग्रह स्थित हो तो मनुष्य कृषिकार्य करने वाला होता है।

कारकांश लग्न से नवम स्थान में यदि बृहस्पति स्थित हो तो विशेषतया जातक कृषक होता है, अर्थात् जातक निश्चित रूप से कृषि कार्य से अपने परिवार एवं खुद का जीविकोपार्जन करता है।

शुक्रेन्दौ शुक्रदृष्टे रसवादी।।

बुधदृष्टे भिषक्।।

कारकांश लग्न में यदि शुक्र एवं चन्द्रमा हों अथवा वहाँ स्थित चन्द्रमा को शुक्र देखता हो तो मनष्यु चिकित्सा सम्बन्धी रसायनों का निर्माता अर्थात् दवा बनाने वाला होता है।

कारकांश लग्न में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो मनुष्य डॉक्टर होता है।

आत्मकारक नवांश में सूर्य एवं राहु का फल

रविराहुभ्यां सर्पनिधनम्।।

शुभदृष्टे सन्निवृत्तिः।।

शुभमात्र सम्बन्धाज्जांगलिकः।।

कुजमात्रदृष्टे गृहदाहकोऽग्निदो वा।।

शुक्रदृष्टेर्नदाहः।।

गुरुदृष्टेस्त्वासमोपगृहात्।।

सगुलिके विषदो विषहतो वा।।

यदि आत्मकारक ग्रह के साथ कारकांश लग्न में सूर्य व राहु स्थित हों तो मनुष्य की मृत्यु साँप के काटने से होती है।

यदि उक्त स्थिति में सूर्य व राहु को शुभ ग्रह देखते हों तो अशुभ फल अर्थात् सर्पदंश की निवृत्ति हो जाती है।

कारकांश लग्न में विद्यमान सूर्य व राहु से यदि केवल शुभग्रह सम्बन्ध रखते हों और अशुभ ग्रहों का उनसे कोई सम्बन्ध न हो तो मनुष्य विषवैद्य अर्थात् जहर की चिकित्सा करने वाला होता है। इस स्थिति में उसे सर्पदंश का भय नहीं होता है।

यदि कारकांश लग्न में स्थित सूर्य व राहु को केवल मंगल देखता हो तो मनुष्य घर में आग लगाने वाला अथवा अग्नि देने वाला होता है। आशय यह है कि घर में आग लगने का प्रबल भय होता है।

कारकांश गत सूर्य व राहु को यदि शुक्र देखता हो तो गृह दाह वाला फल नहीं होता है। इस स्थिति में केवल अग्निदानादि रूप फल ही होता है।

कारकांश लग्नगत सूर्य व राहु को केवल बृहस्पति देखता हो तो घर के पास वाले स्थानों में आग लगती रहती है। इस स्थिति में व्यक्ति का अपना घर सुरक्षित रहता है।

आत्मकारक नवांश में यदि आत्मकारक के साथ गुलिक भी हो तो मनुष्य दूसरों को विष से मारने वाला या स्वयं विष द्वारा मरने वाला होता है।

गुलिक युक्त आत्मकारक एवं ग्रहों की दृष्टि

चन्द्रदृष्टौ चौराऽपहृतधनश्चोरो वा।।

बुधमात्रदृष्टेबृहद्बीजः।।

तत्र केतौ पापदृष्टेकर्णच्छेदः कर्णरोगो वा।।

शुक्रदृष्टे दीक्षितः।।

बुधशनिदृष्टे निर्वीर्यः।।

बुधशुक्रदृष्टे पौनः पुनिको दासीपुत्रो वा।।

शनिदृष्टे तपस्वी प्रेष्यो वा।।

शनिमात्र दृष्टे संन्यासाभासः।।

कारकांश लग्न में आत्मकारक के साथ गुलिक हो और उन्हें चन्द्रमा देखता हो तो मनुष्य या तो स्वयं चोर होता है या उसके धन को चोर चुरा लेते हैं।

यदि कारकांश लग्न में स्थित गुलिक युक्त आत्मकारक को केवल बुध देखता हो तो मनुष्य के अण्डकोष बड़े होते हैं।

कारकांश लग्न में यदि केतु स्थित हो और उसे पापग्रह देखते हों तो मनुष्य के कानों में रोग होता है या उसके कानों का काटा जाना संभव होता है।

आत्मकारक के साथ केतु उसी नवांश में स्थित हो और उन्हें शुक्र ग्रह देखता हो तो मनुष्य विविध यज्ञादि धोर्मिक क्रियाओं में दीक्षित होता है अथवा वह सन्यासी होता है।

कारकांश कुण्डली में आत्मकारक के साथ स्थित केतु को यदि बुध एवं शनि देखते हों तो मनुष्य नपुंसक अर्थात् सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ होता है।

उक्त स्थिति में ही आत्मकारक के साथ स्थित केतु को यदि बुध एवं शुक्र देखते हों तो मनुष्य एक ही बात को बार–बार देहराता है अथवा वह दासी का पुत्र अर्थत् किसी वेश्या, देवदासी या बहुपति वाली नारी से उत्पन्न होता है।

आत्मकारक के साथ स्थित केतु को यदि शनि देखता हो तो मनुष्य तपस्वी होता है अथवा दासकर्म करने वाला होता है। यदि शनि के साथ अन्य कोई ग्रह भी देखता हो तो भी उक्त फल होता है। केवल शनि ही देखता हो तो मनुष्य तपस्वी नहीं होता है।

आत्मकारक के साथ स्थित केतु को यदि अकेला शनि देखता हो तो मनुष्य संन्यासी जैसा जीवन बिताता है, परन्तु संन्यासी नहीं होता है। संन्यासाभास से तात्पर्य कपटी संन्यासी अर्थात् संन्यासी होने का ढोंग करने वाला होता है।

कारकांश से चतुर्थ भावगत गृह सुख विचार

जिस प्रकार जन्म कुण्डली के चतुर्थ भाव से गृह सुख का विचार किया जाता है उसी प्रकार कारकांश कुण्डली के चतुर्थ भाव से गृह सम्बन्धी शुभाशुभ विचार जैमिनी एवं पाराशर ने किया है।

दारे चन्द्रशुक्रदृग्योगात् प्रासादः।।

उच्चग्रहेऽपि।।

राहुशनिभ्यां शिलागृहम्।।

कुजकेतुभ्यामैष्टकम्।।

गुरुणादारवम्।।

तार्णं रविणा ।।

कारकांश लग्न से चतुर्थ स्थान में यदि चन्द्रमा एवं शुक्र की स्थिति हो, या ये दोनों ग्रह इस स्थान पर दृष्टि रखते हों तो मनुष्य बड़े महल का स्वामी होता है।

इसी स्थान में यदि कोई ग्रह अपने उच्च में हो तो उसका बड़ा महल होता है।

कारकांश लग्न से चतुर्थ में यदि राहु एवं शनि की स्थिति या दृष्टि हो तो मनुष्य का पत्थरों से बनाया गया मकान होता है।

कारकांश लग्न से चतुर्थ में मंगल एवं केतु की दृष्टि या योग हो तो ईटों का बना मकान होता है।

बृहस्पति की दृष्टि या योग हो तो लकड़ी से बना मकान होता है।

सूर्य की दृष्टि या योग हो तो घास–फूस का बना मकान होता है। वस्तुतः इन सूत्रों का आशय यह है कि चतुर्थ स्थान पर किसी ग्रह की दृष्टि या योग होने से जातक को अवश्य ही गृह होगा परन्तु बुध कदाचित् मकान नहीं देता है। अकेला बुध हो तथा किसी अन्य ग्रह की दृष्टि या योग न हो तो मनुष्य आजीवन किराये के मकान में ही रहता है। इसी प्रकार अकेला चन्द्रमा चतुर्थ भाव में स्थित हो और अन्य ग्रहों की दृष्टि न हो तो जातक विवाह के बाद सपत्नीक खुले आकाश के नीचे सोता है। कदाचित् इस सिीति में जातक को बहुत देर के बाद काफी प्रयत्नों से ही घर की प्राप्ति होती है। चन्द्रमा की इस स्थिति के विषय में पराशर ने भी कहा है –

तृणस्य रविणा वेद्यं शशिनाऽनावृतस्थले।

पत्न्या सह भवेद्योग इति शास्त्रेषु निश्चितम्।।

कारकांश से नवम स्थानगत ग्रहों से स्वभाव विचार

समे शुभदृग्योगाद् धर्मनित्यः सत्यवादी गुरुभक्तश्च।।

अन्यथा पापैः।।

शनिराहुभ्यां गुरुद्रोहः।।

गुरुरविभ्यां गुराविवश्वासः।।

तत्र भृग्वंगारकवर्गे पारदारिकः।।

दृग्योगाभ्यामधिकाभ्यामामरणम्।।

केतुना प्रतिबन्धः।।

गुरुणा स्त्रैणः।।

राहुणार्थनिवृत्तिः।।

कारकांश लग्न में नवम स्थान पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो या वहाँ पर शुभ ग्रह हों तो मनुष्य धर्मपरायण, सत्यवादी एवं गुरुजनों का भक्त होता है।

कारकांश लग्न से नवम स्थान में पापग्रहों की स्थिति या दृष्टि हो तो मनुष्य अधार्मिक, झूठ बोलने वाला और गुरुजनों का अपमान करने वाला होता है।

कारकांश लग्न से नवम स्थान में यदि शनि व राहु की दृष्टि या स्थिति हो तो मनुष्य गुरुजनों से द्रोह करने वाला होता है।

यदि वहाँ गुरु और सूर्य की दृष्टि या स्थिति हो तो मनुष्य गुरुजनों पर विश्वास नहीं करता है।

कारकांश से नवम स्थान में मंगल व शुक्र की दृष्टि, यति या षड्वर्ग में हों तो मनुष्य दूसरे की स्त्रियों का शौकीन होता है।

कारकांश लग्न से नवम भाव में स्थित राशि से इसका निर्णय करना चाहिए। जैसाकि पराशर ने कहा है –

कारकांशात्तु नवमे कुजकाव्ययुतेक्षिते।

षड्वर्गादिकयोगे तु मरणं पारदारिकम्।।

कारकांशात्तु नवमे चन्द्रचन्द्रजदृग्युते।

परस्त्रीसंगमाद् बालो बन्धको भवति ध्रुवम्।।

जीवमात्रेण नवमे संयुते वा निरीक्षिते।

स्त्रीलोलुपो भवेद् बालो विषयी चापि जायते।।

अर्थात् नवम स्थान में भौम शुक्र से युत एवं दृष्ट हो तो उसी के षड्वर्गादि के योग में परस्त्री जिसमें मनुष्य आसक्त रहता है, उसी के कारण उसकी मृत्यु होती है। कारकांश से नवम स्थान यदि चन्द्र एवं बुध से युत एवं दृष्ट हो तो परस्त्री संगम प्रयुक्त जातक उसी स्त्री के अधीन हो जाता है। नवम स्थान गुरुमात्र से युत एवं दृष्ट हो तो जातक स्त्री लोलुप तथा विषयासक्त होता है।

शुक्र या मंगल की वहाँ दृष्टि या योग हो तो मनुष्य आमरण इस पापकर्म में लिप्त रहता

है।

यदि वहाँ साथ में केतु की दृष्टि या योग हो तो मनुष्य का स्वभाव मृत्युपर्यन्त पारदारिक नहीं होता है।

यदि उक्त नवम स्थान में बृहस्पति की दृष्टि या युति हो तो मनुष्य स्त्रियों के विषय में बहुत चंचल होता है। अर्थात् उसकी यह दुष्प्रवृत्ति शारीरिक न होकर मानसिक विकृति के रूप में उभरती है।

यदि कारकांश से नवम स्थान में राहु की दृष्टि या युति हो तो मनुष्य स्त्रियों के लालच में अपना बहुत सा धन नष्ट कर देता है।

कारकांश से सप्तम भाव विचार

लाभे चन्द्रगुरुभ्यां सुन्दरी।।

राहुणा विधवा।।

शनिना वयोऽधिकारोगिणी तपस्विनी वा।।

कुजेन विकलांगी।।

रविणा स्वकुले गुप्ता च।।

बुधेन कलावती।।

चापे चन्द्रेणानावृते देशे।।

कारकांश लग्न से सातवें स्थान में यदि चन्द्रमा व बृहस्पति की दृष्टि या युति हो तो मनुष्य का विवाह सुन्दर स्त्री से होता है।

यदि उक्त सातवें स्थान में राहु की दृष्टि या युति हो तो मनुष्य को विधवा स्त्री की प्राप्ति होती है।

यदि कारकांश लग्न से सातवें स्थान में शनि की दृष्टि हो या शनि वहाँ स्थित हो तो मनुष्य को अपने से अधिक अवस्था वाली, रोगिणी या तपस्विनी स्त्री मिलती है।

यदि उक्त सप्तम स्थान में मंगल स्थित हो तो मनुष्य की स्त्री विकलांग अर्थात् दोषपूर्ण अंग वाली होती है।

कारकांश लग्न से सप्तम भाव में यदि सूर्य स्थित हो या दृष्टि रखता हो तो मनुष्य को

विकलांग एवं नितान्त घरेलू स्त्री मिलती है। ऐसी स्त्री घर की सीमाओं में ही जीवन बिताती है।

यदि कारकांश लग्न से सप्तम स्थान में बुध की स्थिति या दृष्टि हो तो मनुष्य की स्त्री गीत, वाद्य आदि ललित कलाओं में कुशल होती है।

कारकांश लग्न से चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा हो तो मनुष्य खुले आकाश के नीचे प्रथम वार स्त्री संगम करता है।

कारकांश से तृतीय स्थान का विचार

जन्मांग गत तृतीय भाव से भाई, पराक्रमादि का विचार किया जाता है। महर्षि जैमिनि ने यहाँ जातक पराक्रमी होगा या डरपोक इत्यादि का विचार यहाँ प्रतिपादित किया है।

कर्मणि पापे शूरः।।

शुभे कातरः।।

कारकांश लग्न से तृतीय स्थान में पापग्रह हो तो मनुष्य शूर वीर स्वभाव का अर्थात् निडर होता है।

यदि दस स्थान में शुभग्रह हो तो मनुष्य डरपोक होता है।

कारकांश से द्वादश भाव के द्वारा मोक्ष एवं देवभक्ति विचार

उच्चे शुभे शुभलोकः।।

केतौ कैवल्यम्।।

क्रियचापयोर्विशेषेण।।

पापैरन्यथा।।

कारकांश लग्न से द्वादश भाव में यदि शुभ ग्रह स्थित हो तो मनुष्य मृत्यु के पश्चात् शुभ लोकों में जाता है।

कारकांश से बारहवें स्थान में यदि केतु स्थित हो तो मनुष्य को मोक्ष प्राप्त होता है।

वस्तुतः इस सूत्र की दो प्रकार से व्याख्या की जाती रही है। एक प्रकार ऊपर बता चुके हैं। दूसरे प्रकार से केतु शब्द का अर्थ कटपयादि के अनुसार लग्न यानि एक होता है। अर्थात् कारकांश लग्न में शुभग्रह हो मनुष्य मोक्ष पाता है। प्राचीन टीकाकारों ने इस सूत्र का दूसरा अर्थ ही अधिक उचित माना है, क्योंकि जैमिनिसूत्र के मत में केवल चरदशा को छोड़कर

कहीं भी केतु को शुभ नहीं माना है। इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि बारहवें स्थान में केतु होने पर मोक्ष की प्राप्ति जातक को होती है। केतु का अर्थ ध्वजा, झंडा अर्थात् उच्चता, प्रभुता व आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा होना तर्कसंगत प्रतीत होता है। महर्षि पराशर ने भी द्वादशस्थ केतु को मोक्षप्रद माना है।

कारकांशाद् व्यये केतौ शुभखेटयुतेक्षिते।

तदा तु जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात्।।

मेषे धनुषि वा केतौ कारकांशाद् व्यये स्थिते।

शुभखेटेन संदृष्टे सायुज्यपदमाप्नुयात्।।

महर्षि पराशर के मत में यह विशेष प्रतिपादित किया गया है कि द्वादशस्थ केतु पर शुभग्रहों की दृष्टि को मोक्ष के लिये आवश्यक माना है। वे अकेले केतु को पापदृष्ट होने पर मोक्षप्रद नहीं मानते हैं।

यदि कारकांश लग्न से बारहवें स्थान में मीन राशि का अथवा कर्क राशि का केतु उच्च स्थान में हो तो मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

यदि कारकांश लग्न में द्वादश स्थान में केतु को छोड़कर पापग्रह हो तथा वहाँ पाप दृष्टि हो तो मनुष्य को शुभलोक वा मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है।

रविकेतुभ्यां शिवे भक्तः।।

चन्द्रेण गौर्याम्।।

शुक्रेण लक्ष्म्याम्।।

कुजेन स्कन्दे।।

बुधशनिभ्यां विष्णौ।।

गुरुणा साम्बशिवे।।

राहुणा तामस्यां दुर्गायां च।।

केतुना गणेशे स्कन्दे च।।

पापर्क्षे मन्दे क्षुद्रदेवतासु।।

शुक्र च।।

अमात्यदासे चैवम्।।

कारकांश लग्न से बारहवें स्थान में केतु के साथ यदि सूर्य हो तो मनुष्य शंकर का भक्त होता है। कारकांश लग्न से बारहवें स्थान में चन्द्र युक्त केतु हो तो गौरी में, शुक्रयुक्त केतु हो तो लक्ष्मी में, मंगल युक्त केतु हो तो कार्तिकेय में, बुध एवं शनि युक्त केतु हो तो विष्णु में, गुरु युक्त केतु हो तो शंकर एवं पार्वती में, राहु हो तो महाकाली में, दुर्गा आदि में और अकेला केतु हो तो गणेश और कार्तिकेय में मनुष्य की भक्ति होती है। वस्तुतः केतु का अन्वय सब जगह न माने तब भी अकेले सूर्य एवं चन्द्रादि ग्रह उक्त फल को तारतम्य से जातक को देते हैं।

कारकांश लग्न से बारहवें स्थान में यदि पापग्रह की राशि में शनि हो तो मनुष्य क्षुद्र देवता अर्थात् यक्षिणी, पिशाचिनी, डाकिनी एवं भैरवादि का भक्त जातक होता है। यदि शुक्र वहाँ पापराशि में हो तो भी यही फल कहना चाहिए। अतः शुक्र से लक्ष्मी में जो भक्ति बतायी है वह शुभराशि में स्थित होने पर ही होगा। इसी प्रकार अमात्यदास ग्रह भी यदि पापग्रह की राशि में हो तो मनुष्य क्षुद्र देवताओं का भक्त होता है।

कारकांश से त्रिकोणगत ग्रह से विचार

त्रिकोणे पापद्वये मान्त्रिकः।।

पापदृष्टे निग्राहकः।।

शुभदृष्टेऽनग्राहकः।।

कारकांश लग्न से त्रिकोण स्थानों में यदि दो पापग्रह हो तो अर्थात् दोनों त्रिकोणों में एक–एक पापग्रह हो तो मनुष्य मन्त्र प्रयोग करने वाला अर्थात् यान्त्रिक वा तान्त्रिक होता है।

यदि दोनों त्रिकोण स्थानों में पापग्रहों की दृष्टि हो तो वह भूत प्रेतों को वश में करने वाला होता है।

यदि कारकांश लग्न से दोनों त्रिकोण में शुभ ग्रह हो तो मनुष्य लोंगों का उपकार करने वाला होता है।

रोग विचार

चापे चन्द्रे शुक्रदृष्टे पाण्डुश्वित्री।।

कुजदृष्टे महारोगः।।

केतुदृष्टे नीलकुष्ठम्।।

तत्र मृतौ वा कुजराहुभ्यां क्षयः।।

चन्द्रदृष्टौ निष्चयेन।।

कुजेन पिटकादिः।।

केतुना ग्रहणी जलरोगो वा।।

राहुगुलिकाभ्यां क्षुद्रविषाणि।।

कारकांश लग्न से चतुर्थ स्थान में स्थित चन्द्रमा को यदि शुक्र देखता हो तो मनुष्य को सफेद दाग या सफेद कोढ़ होता है।

यदि कारकांश लग्न से चतुर्थ स्थान में स्थित चन्द्रमा को यदि मंगल देखता हो तो मनुष्य को रक्त पित्त विकार से उत्पन्न गम्भीर कोढ़ होता है।

यदि कारकांश लग्न से चतुर्थ स्थान में स्थित चन्द्रमा को यदि केतु देखता हो तो मनुष्य को काला कोढ़ होता है।

कारकांश लग्न से चतुर्थ या पंचम स्थान में मंगल एवं राहु स्थित हो तो मनुष्य को क्षय रोग होता है।

यदि वहाँ स्थित मंगल एवं राहु को चन्द्रमा देखता हो तो निश्चय ही क्षय रोग होता है । अर्थात् यदि चन्द्र नहीं देखता हो तो नियन्त्रण योग्य क्षय रोग होता है । दृष्टि होने पर रोग का स्वरूप भयंकर होता है।

कारकांश लग्न से चतुर्थ या पंचम स्थान में मंगल स्थित हो तो मनुष्य को बहुत फोड़े–फुंसियों का रोग होता है।

यदि उक्त चतुर्थ या पंचम स्थान में केतु स्थित हो तो मनुष्य को संग्रहणी रोग या जलरोग होता है। जलरोगों में शरीर के किसी भाग में जलवृद्धि होने या जल में कमी आने से उत्पन्न विकृतियों को लिया जा सकता है। जैसे अण्डकोष वृद्धि, पतले दस्त, सूखा रोग, जलोदर आदि।

कारकांश से चतुर्थ या पंचम स्थान में यदि राहु एवं गुलिक स्थित हो तो मनुष्य को हल्के विष से उत्पन्न विकृतियाँ होती है। जैसे बन्दर, चूहे आदि का जहर अथवा कम जहरीले साँप का काटना आदि।

कारकांश लग्न से चतुर्थ स्थानगत ग्रहों से कला–कौशल का विचार

तत्र शनौ धानुष्कः।।

केतुना घटिकायन्त्री।।

बुधेन परमहंसो लगुडी वा।।

राहुणा लोहयन्त्री।।

रविणा खड्गी।।

कुजेन कुन्ती।।

कारकांश से चतुर्थ स्थान में यदि शनि स्थित हो तो मनुष्य धनुष बाण चलाने वाला अथवा अन्य युद्धोपयोगी हथियार चलाने में कुशल होता है।

कारकांश से चतुर्थ स्थान में यदि केतु स्थित हो तो मनुष्य घड़ियों का विशेषज्ञ या निर्माता होता है।

कारकांश से चतुर्थ स्थान में यदि बुध स्थित हो तो मनुष्य परमहंस अर्थात् सर्वोच्च आध्यात्मिक शक्ति सम्पन्न अथवा दण्डधारी संन्यासी होता है। यदि वहाँ चतुर्थ स्थान में राहु स्थित हो तो मनुष्य लोहे की मशीनों का निर्माता अथावा विशेषज्ञ होता है।

यदि कारकांश से चतुर्थ स्थान में सूर्य स्थित हो तो मनुष्य तलवार चलाने की कला में निपुण होता है।

कारकांश से चतुर्थ स्थान में यदि मंगल स्थित हो तो मनुष्य भाला चलाने की कला में निपुण होता है।

मातापित्रोश्चन्द्रगुरुभ्यां ग्रन्थकृत्।।

शुक्रेण किंचदूनम्।।

बुधेन ततोऽपि।।

शुक्रेण कविर्वाग्मीकाव्यज्ञश्च।।

गुरुणा सर्वविद्ग्रन्थिकश्च।।

न वाग्मी।।

विशिष्यवैयाकरणो वेदवेदांगविच्च।।

सभाजडः शनिना।।

बुधेन मीमांसकः।।

कुजेन नैयायिकः।।

चन्द्रेण सांख्ययोगज्ञः साहित्यज्ञो गायकश्च।।

रविणा वेदान्तज्ञो गीतज्ञश्च।।

केतुना गणितज्ञः।।

गुरुसम्बन्धेन सम्प्रदायसिद्धिः।।

भाग्ये चैवम्।।

सदाचैवमित्येके।।

भाग्ये केतौ पापदृष्टे स्तब्धवाक् ।।

यदि कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम स्थान में चन्द्रमा एवं बृहस्पति स्थित हों तो मनुष्य ग्रन्थों की रचना करने वाला होता है।

यदि कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम स्थान में चन्द्रमा एवं शुक्र हों तो पहले योग की अपेक्षा कुछ कम प्रभावशाली ग्रन्थकार योग बनता है।

यदि कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम स्थान में चन्द्रमा एवं बुध हो तो तृतीय श्रेणी का ग्रन्थकार योग होता है। ये तीनों योग उत्तरोत्तर निर्बल हैं।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में यदि चन्द्र रहित शुक्र स्थित हो तो मनुष्य कवित्व शक्ति से युक्त, बोलने की कला में निपुण तथा काव्यशास्त्र को जानता है।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में यदि अकेला बृहस्पति स्थित हो तो मनुष्य बहुत से शास्त्रों को जानने वाला तथा ग्रन्थों की रचना करने वाला होता है।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में यदि अकेला बृहस्पति हो तो मनुष्य बहुज्ञ एवं विद्वान् होते हुये भी बोलने में कुशल नहीं होता है।

कारकांश, लग्न या उससे पंचम में अकेला बृहस्पति स्थित हो तो मनुष्य व्याकरण शास्त्र एवं वेद–वेदांगों को जानने वाला होता है। अर्थात् वह इन विषयों का विशेषज्ञ होता है।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में यदि अकेला शनि स्थित हो तो मनुष्य जन समुदाय के समक्ष बोलने में घबराहट अनुभव करता है। अर्थात् उसकी वाणी जड़ हो जाती है।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में यदि अकेला बुध स्थित हो तो मनुष्य मीमांसा शास्त्र को जानने वाला होता है।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में यदि अकेला मंगल स्थित हो तो मनुष्य न्यायदर्शन को जानने वाला अथवा विधि विशेषज्ञ अथवा तर्कशास्त्री होता है।

यदि कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में चन्द्रमा स्थित हो तो मनुष्य सांख्ययोग का विशेषज्ञ, साहित्यशास्त्र को जानने वाला और गायक होता है।

यदि उक्त स्थानों में सूर्य स्थित हो तो मनुष्य वेदान्त दर्शन को जानने वाला और गायन में निपुण होता है।

यदि इन्हीं स्थानों में केतु हो तो मनुष्य गणितज्ञ, ज्योतिषी, कम्प्यूटर विशेषज्ञ आदि होता है।

कारकांश लग्न में अथवा उससे पंचम नवांश में स्थित ग्रहों पर यदि गुरु का दृष्टि सम्बन्ध, वर्ग सम्बन्ध आदि हो तो मनुष्य उक्त क्षेत्रों में ऊँची उपलब्धियाँ प्राप्त करता है।

जिस प्रकार कारकांश लग्न और प्रचम भाव में स्थित ग्रहों से पूर्वोक्त फल कहा है, उसी स्थिति में यदि ग्रह कारकांश लग्न से द्वितीय भाव, भाग्य भाव एवं तृतीय भाव में भी हों तो पूर्वोक्त प्रकार से ही फल कहना चाहिए।

तृतीय भाव में तत्तद् ग्रहों की स्थिति से उक्त फल कुछ लोगों ने माना है । कारकांश में द्वितीय स्थान में यदि केतु को पापग्रह देखते हों तो मनुष्य अटक कर बोलने वाला, बोलने में घबरा जाने वाला अर्थात् वाक्शक्ति से हीन होता है।

केमद्रुम योग अथवा निर्धन योग

जैमिनि सूत्र में महर्षि ने कारकांश लग्न से केमद्रुम योग का वर्णन किया है। इनके अनुसार जिस मनुष्य के जन्म लग्न से द्वितीय व अष्टम स्थान में पाप ग्रह स्थित हो तो केमद्रुम योग होता है। यदि केवल शुभग्रह हों तो केमद्रुम योग नहीं होता है। यदि पाप व शुभ ग्रह दोनों भावोंमें समान संख्या में हो तो भी केमद्रुम योग होता है। अर्थात् एक –एक शुभ ग्रह व एक एक पापग्रह या अधिक समान संख्या में हो तो केमद्रुम योग होता है । असमान संख्या होने पर केमद्रुम योग नहीं होगा। इसी प्रकार लग्न के पद से भी द्वितीय व अष्टम स्थान में उक्त प्रकार से ग्रह हों तो भी केमद्रुम योग होता है। यदि लग्न व लग्न पद दोनों से केमद्रुम योग सिद्ध हो रहा हो तो इसका प्रभाव बहुत व्यापक होता है। उक्त योग में लग्न या पद से द्वितीय व अष्टम स्थानों में स्थित ग्रहों पर यदि चन्द्रमा की दृष्टि हो तो केमद्रुम योग विशेष बली हो जाता है [279]। जैमिनिसूत्र के विषयानुरूप महर्षि पाराशर ने अपने

[279] जैमिनिसूत्र, द्वितीयपाद, सूत्र 119–120,

बृहत्पाराशर होराशास्त्र में केमद्रुम योग को कहा है। यथा –

कारकांशात्तथारूढात् लग्नतो वार्थरन्ध्रयोः।।

केमद्रुमः समे क्रूरे विशेषाच्चन्द्रदृष्टितः।

अस्मिन् प्रकरणे प्रोक्ता ये योगास्ते मया मुने।।

तत्तद्राशि–ग्रहदशा–मध्ये ते फलदायिनः।

एवं दशाप्रदाद्राशेर्द्वितीयाष्टमयोद्विज।।

ग्रहसाम्ये तु विज्ञेयो योगः केमद्रुमोऽधमः।

दशारम्भे ग्रहान् लग्नसहितान् साधयेद् बुधः।।

तत्रापि पूर्ववत् केमद्रुम–योगं विचिन्तयेत्।

एवं तन्वादिभावानां रव्यादिद्युषदां सदा।।

तत्तत्स्थितिवशादेवं फलं वाच्यं तु धीमता।

कारकांशफलं चैतदुक्तं संक्षेपतस्तु ते।।

अर्थात् आत्मकारक के नवांश या आरूढ़ अथवा लग्न से दूसरे तथा अष्टम स्थान में तुल्यसंख्यक पापग्रह हो तो केमद्रुम योग होता है, यदि चन्द्र दृष्टि उस पर रहे तो प्रबल केमद्रुम योग होता है। इस प्रकरण में जो योग कहे गये हैं, उनका फल तत्तद्राशि और ग्रहों की दशा में समझना चाहिए। इस तरह दशाप्रद राशि से दूसरे तथा अष्टम में ग्रह साम्य हो तो भी अशुभकारक केमद्रुम योग होता है। दशारम्भ के समय में भी स्वष्ट एवं लग्न का साधन कर केमद्रुम योग का विचार करना चाहिए। इस तरह लग्नादि भावों तथा सूर्यादिग्रहों की स्थिति के अनुसार फलादेश करना चाहिए।

अभ्यासार्थ प्रश्न

1. कारकांश लग्न में चन्द्रमा एवं बृहस्पति हो तो जातक कैसा होता है ?

क. ग्रन्थकार ख. वैद्य, ग. मूर्ख घ. परमहंस

2. कारकांश से चतुर्थ भाव में शनि के होने पर जातक कैसा होता है ?

क. दण्डधारी संन्यासी ख. धनुष वाण चलानेवाल, ग. लेखक घ कवि

3. कारकांश लग्न से पंचम में केतु हो तो जातक को कौन सा रोग होता है ?

क. संग्रहणी रोग, ख. बुखार ग. क्षयरोग घ. निमोनिया

4. कारकांश लग्न से त्रिकोण में पापग्रह की स्थिति से जातक क्या होता है?

क. मान्त्रिक ख. रसायनिक ग. कवि घ. लखक

5. कारकांश लग्न से बारहवें स्थान में केतु के साथ सूर्य हो तो जातक किस देवता का भक्त

होता है ?

क. शंकर ख. लक्ष्मी ग. विष्णुघ गणेश

5.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान गये हैं कि अपने मित्र से दृष्ट होने पर ग्रह की बल वृद्धि होती है। उसी प्रकार यदि कोई भाव अपने स्वामी से दृष्ट हो तो उस भाव की वृद्धि होती है। एक ही गुण एवं विचार वाले ग्रहों की दृष्टि सम्बन्ध उस विचारणीय विषय की वृद्धि करता है। जैसाकि लग्नेश एवं अष्टमेश दोनों आयुकारक हैं। यदि कुण्डली में इन्हीं दोनों ग्रहों की दृष्टि सम्बन्ध हो तो आयुवृद्धि अर्थात् दीर्घायुष्य प्रदान करता है।

जन्मांग का शुभाशुभ फल विचार में कारक का विशेष महत्त्व है। कारक दो प्रकार के हैं, चरकारक एवं स्थिर कारक। प्रत्येक व्यक्ति का शुभाशुभ भाव फल विचार करने के लिये स्थिर कारक को निश्चित किया गया है। परन्तु चरकारक का निर्णय कुण्डली के स्पष्ट ग्रहादि से किया जाता है। जो ग्रह स्पष्ट के आधार पर भिन्न भिन्न होते हैं – आत्मकारक, अमात्यकारक, भ्रातृकारक, मातृकारक, पितृकारक, पुत्रकारक, ज्ञातिकारक एवं स्त्रीकारक। पाराशर के मत में यदि दो ग्रहों में अंशादि तुल्यता हो तो दोनों को एक ही कारक जाना जाता है। अग्रिम कारक को लुप्तमाना जाता है, एवं उसका शुभाशुभ फल स्थिरकारक से किया जाता है। आठ कारकों में से आत्मकारक ही मुख्य है। जिससे कारकांश कुण्डली का निर्माण होता है।

पाराशर के मत में राजा के विरूद्ध रहने पर जिस तरह मन्त्री आदि अपने आत्मीय जनों के भी कार्य करने में असमर्थ होते हैं, एवं राजा के अनुकूल रहने पर जैसे सभी अमात्यगण अहित करने में असमर्थ होते हैं, उसी तरह आत्मकारक की अनुकूलता से अन्य सभी ग्रह अपने अपने शुभाशुभ फल देने में समर्थ होते हैं। अतः कुण्डली में जिस प्रकार लग्न एवं लग्नेश का महत्त्व है उसी प्रकार आत्मकारक एवं आत्मकारक से निर्मित कारकांश कुण्डली का भी महत्त्व है।

5.8 पारिभाषिक शब्दावली

आकाशचारी – आकाश में चलने वाला,

तड़ाग – तालाब

आस्तिक – ईश्वर को मानने वाला, अस्तित्व को मानने वाला

वृत्ति – कार्य

सर्पदंश – साँप काटना

दीक्षित – दीक्षा प्राप्त,

देवदासी – मंदिर में देवता की सेवा करने वाली कन्या

दासकर्म – सेवा कार्य

संन्यासाभास – संन्यासी होने का दिखावा करने वाला, कपटी संन्यासी

सपत्नीक – पत्नी के साथ

सत्यवादी – सत्य बोलने वाला

धर्मपरायण – धर्म का आचरण करने वाला

द्रोह – शत्रुता

लोलुपता – लोभ, लालच,

पारदारिक – दूसरे के पत्नी में आसक्ति

विकृति – खरावी

दुष्प्रवृति – बुरा आचरण

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. मेष राशिगत चन्द्र पर मंगल की दृष्टि से जातक...........होता है। ख. राजा
2. वृष राशिगत चंद्र पर सूर्य की दृष्टि से जातक..........होता है। ग. नौकर
3. मिथुन राशिगत चंद्र पर बुध की दृष्टि से जातक..........होता है। ख. राजा
4. कन्या राशिगत चन्द्रमा पर मंगल की दृष्टि से जातक ......होता है। क. राजा

5. मकर राशिगत चंद्र पर शनि की दृष्टि से जातक..........होता है । घ. धनवान्

5.10 अभ्यासार्थ प्रश्नों के उत्तर

1. क. ग्रन्थकार
2. ख. धनुष वाण चलाने वाला,
3. क. संग्रहणी रोग,
4. क. मान्त्रिक
5. क. शंकर

5.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जैमिनिसूत्रम् – चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन

बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी

जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

जातक पारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

जातकाभरणम् – ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर, वाराणसी

5.12 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातकम् – हंसा प्रकाशन

योगयात्रा – आयुर्वेद प्रकाशन

षटपंचाशिका – हंसा प्रकाशन

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन

बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी

जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

जातक पारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

जैमिनिसूत्रम् – चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी

5.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. कारकांश कुण्डली के महत्त्व का विवेचन कीजिए।
2. ग्रहों के दृष्टि फल का वर्णन कीजिए।
3. देव भक्ति विचार को लिखिए।
4. कारकांश कुण्डली के द्वारा विविध रोगों का वर्णन कीजिए।
5. कारकांश कुण्डली के आधार पर व्यवसाय का निर्धाण कीजिए।

इकाई - 6 अप्रकाशग्रह फल

इकाई की संरचना

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत पाठ एम. ए. ज्योतिष पाठ्यक्रम द्वितीय वर्ष की छठी इकाई अप्रकाश ग्रह फल से संबन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने पंचांग फल, भावफल, भावेश फल, द्विग्रहादि योग फल, दृष्टि एवं कारकांश फल संज्ञक पाठों का अध्ययन कर लिया है। इस पाठ के माध्यम से हम अप्रकाशक ग्रह जनित फलों का अध्ययन करेंगे।

ज्योतिर्विदों का मानना है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि ग्रहों के अधिन है। हमारे ऋषियों ने तीन प्रकार के ग्रह पिण्डों की बात अपने ग्रन्थों में कही है। सौरमण्डल में स्थित सूर्य को ज्योतिर्पिण्ड के रूप में जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने तेज से प्रकाशित करता है। यही कारण है कि हमारा प्राचीनतम ग्रन्थ वेद भी सूर्य को इस सृष्टि की आत्मा कहा है। दूसरा चन्द्रमा, मंगल, बुध गुरु, शुक्र, शनि आदि ग्रह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। तीसरा अप्रकाश ग्रह जो सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित नहीं होते हैं किन्तु मानव जीवन पर प्रभाव पड़ता है। अप्रकाश ग्रह हैं धूम, व्यतीपात, परिवेश, इन्द्रचाप एवं केतु संज्ञक पाँच अप्रकाश युक्त ग्रहों का भी शुभाशुभ फल विचार पाराशर ने अपने होराशास्त्र में किया है। कुण्डली में किसी स्थान विशेष से इन पाँचों ग्रहों का स्वरूप निश्चय किया जाता है। इन ग्रहों का बिम्बात्मक स्वरूप के अभाव से इन्हें अप्रकाश ग्रह कहा जाता है। कुण्डली के किसी स्थान विशेष से युक्त यह पाँच ग्रह दोषकारक एवं पापी होते हैं। फलदीपिका में इन पाँच ग्रहों के अतिरिक्त अन्य चार अप्रकाश ग्रहों का भी विचार किया गया है। 1.मान्दि (गुलिक) 2. यमघंटक, 3. अर्द्धप्रहर तथा 4. काल। इन चार अप्रकाश ग्रहों का किसी काल विशेष से निर्णय किया जाता है। इन सभी नौ ग्रहों को उपग्रह भी कहा जाता है। जिस प्रकार सूर्यादि प्रकाश युक्त ग्रहों का विभिन्न भाव गत फल विचार किया जाता है उसी प्रकार कुण्डली में धूमादि नौ अप्रकाश उपग्रहों का भाव गत फल का विचार किया जाता है। संहिता एवं फलित ग्रन्थों में उपग्रह अशुभ फल को देने वाले होते हैं। परन्तु नौ उपग्रहों में से यमघंटक शुभफल देने वाला होता है। इस पाठ के माध्यम से आप अप्रकाश ग्रहों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

6.2 उद्देश्य

1. इस पाठ के अध्ययन से छात्र ग्रह किसे कहते हैं, जान सकेंगे।

2. इस पाठ के अध्ययन से छात्र अप्रकाश ग्रह किसे कहते हैं, जान सकेंगे।

3. ग्रह एवं अप्रकाश ग्रह में क्या अन्तर है, छात्र जान सकेंगे

4. अप्रकाश ग्रहों का द्वादश भावगत शुभाशुभ फलों को जान सकेंगे।

5. ग्रह एवं अप्रकाश ग्रहों के द्वादश भावगत फलों में अन् तर को जान सकेंगे।

6.3 अप्रकाश ग्रह फल

महर्षि पराशर ने अपने बृहत्पाराशर होराशास्त्र में जन्मांग के द्वारा फलादेश प्रक्रिया का विवेचन बहुत ही सुन्दर रूप में वैज्ञानिक रीति से किया है। पराशर कहते हैं कि जन्मांग के द्वारा जो भी फलादेश किया जाता है, उसका आधार राशि, भाव, भावेश, द्विग्रह योग, त्रिग्रह योगादि होता है । यदि फलादेश के समय दो प्रकार के परस्पर विरोधात्मक फल का आगम होता है, तो ज्योतिर्विद को उन फलों को नहीं बताना चाहिये अर्थात् दोनों फलों का अभाव होता है। क्योंकि पूर्णबली ग्रह हों तो पूर्ण फल, अर्धबली ग्रह हों तो अर्ध फल, हीनबली ग्रह हों तो चतुर्थांश फल का निर्देश करना चाहिए। यदि दो या तीन या उससे अधिक ग्रह एक स्थान में हों तो वे अनेक भावों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसी स्थिति में जातक को एक स्थान में स्थित सभी ग्रहों का फल प्राप्त होता है, लेकिन समान फल में विरोध हो जैसे एक से राज्य प्राप्ति, दूसरे से दारिद्र्य की प्राप्ति हो तो दोनों फल में से कोई भी आदेश करना ज्योतिर्विदों के लिये उचित नहीं होता है, अर्थात् आदेश नहीं करे।

पराशर ने अपने बृहत्पाराशर होराशास्त्र में धूमाद्यप्रकाश ग्रहों का फल भावानुरूप कहा है। धूमाद्यप्रकाश ग्रह जातक के जीवन को प्रभावित करता है। जैसा कि उन्होंने कहा है –

धूम ग्रह फल –

शूरो विमलनेत्रांशः सुस्तब्धो निर्घृणः खलः।
मूर्तिस्थे खलु धूमाख्ये गाढ़रोषो नरः सदा।।
रोगी धनी तु हीनांगो राज्यापहृतमानसः।
द्वितीये भावगे धूमे मन्दप्रज्ञो नपुंसकः।।
मतिमान् शौर्यसंयुक्त इष्टवित्तः प्रियंवदः।
धूमे सहजभावस्थे धनाढ़्यो धनवान् भवेत्।।

कलत्रांगपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः।

चतुर्थेऽधिगते धूमे सर्वशास्त्रार्थचिन्तकः।।

स्वल्पापत्यो धनैर्हीनो धूमे पंचमसंस्थिते।

गुरुता सर्वभक्षं च सुहृन्मन्त्रविवर्जितः।।

बलवान् शत्रुवधको धूमे च रिपुभावगे।

बहुतेजोयुतः ख्यातः सदा रोगविवर्जितः।।

लग्नगत धूमग्रह हो तो जातक शूर, विमलदृष्टि, स्तब्ध, निर्दय, दुष्ट तथा अत्यधिक क्रोधी होता है। धनभाव स्थित धूमग्रह हो तो जातक रोगी, धनी विकलांग, राज्य से अपहृत चित्तवाला, मन्दबुद्धि तथा निर्वीर्य होता है। धूमग्रह सहज भावगत हो तो मनुष्य शूर, बुद्धिमान्, मधुरभाषी तथा धन धान्यपूर्ण होता है। चतुर्थ भावगत धूम हो तो स्त्री परित्यक्त होने के कारण सतत मानसिकदुःख से युक्त और समस्त शास्त्रों का चिन्तक होता है। पंचमस्थ धूमग्रह हो तो जातक धनहीन, अल्प सन्तान वाला, गौरवी, सर्वभक्षी और मित्रों के विचार से अलग रहता है। षष्ठस्थ धूम हो तो जातक बलिष्ठ, शत्रुजेता, तेजस्वी, सतत नीरोग तथा विख्यात होता है।

निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः।

धूमे सप्तमभावस्थे निस्तेजाः सर्वदा भवेत्।।

विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साहः सत्यसंगरः।

अप्रियो निष्ठुरः स्वार्थी धूमे मृत्युगते सति।।

सुतसौभाग्यसम्पन्नो धनी मानी दयान्वितः।

धर्मस्थाने स्थिते धूमे धर्मिष्ठो बन्धुवत्सलः।।

सुतसौभाग्यसंयुक्तः सन्तोषी मतिमान् सुखी।

कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः।।

धनधान्यहिरण्याढयो रूपवांश्च फलान्वितः।

धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः।।

पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसंगते।

परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्घृणः शठः।।

सप्तमभावगत धूम हो तो मनुष्य दरिद्र, कामी, परस्त्री लम्पट और हमेशा निस्तेज रहता है।

अष्टमस्थ धूम हो तो जातक पराक्रमहीन किन्तु उत्साहपूर्ण, सत्यनिष्ठ, कटुभाषी, निष्ठुर तथा स्वार्थपरायण होता है। भाग्यस्थ धूम हो तो जातक धनी, मानी, पुत्रसौख्यपूर्ण, दयावान्, धार्मिक तथा बान्धवप्रिय होता है। कर्मस्थ धूम हो तो मनुष्य बुद्धिमान्, सन्तोषी, सुखी, पुत्र–सौख्यपूर्ण, सन्मार्ग पर स्थित होता है। लाभभावगत धूम हो तो मानव धन, धान्य, रत्न से परिपूर्ण, रूपवान्, कलाओं का जानकार, विनम्र तथा गायक होता है। द्वादश भावगत धूम हो तो मनुष्य पतित, पाप करने वाला, परस्त्रीगामी, निर्दय, दुर्व्यसनशील तथा धूर्त होता है।

पात ग्रह फल –

सिद्धान्त ग्रन्थों में क्रान्तिवृत्त एवं विमण्डलवृत्त के संपात को पात कहते हैं। वस्तुतः क्रान्तिवृत्त एवं विमण्डलवृत्त का दो स्थानों में संपात होता है, इन दोनों वृत्त का पूर्वी संपात राहु संज्ञक तथा पश्चिमी संपात केतु संज्ञक होता है। फलित ग्रन्थों में राहु एवं केतु को स्वतंत्ररूप से छाया ग्रह मानकर उसके द्वादश राशियो एवं भावों में फल देने की प्रक्रिया को बताया गया है। लेकिन महर्षि पाराशर ने अपने दिव्य दृष्टि के द्वारा किसी अन्य पात के विशेष फलों को बृहत्पाराशर होराशास्त्र में बताया है।

मूर्तौ पाते च सम्प्राप्ते जातो दुःखप्रपीडितः।
क्रूरो घातकरो मूर्खो बन्धूनां द्वेषकारकः।।
जिह्मोऽतिपित्तवान् भोगी धनस्थे पातसंज्ञके।
निर्घृणश्चाकृतज्ञश्च दुष्टात्मा पापकृत् तथा।।
स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाढयो राजवल्लभः।
पाते तु सहजे याते सेनाधीशो भवेन्नरः।।
बन्धव्याधिसमायुक्तः सुतसौभाग्यवर्जितः।
चतुर्थगो यदा पातस्तदा स्यान्मनुजस्तु सः।।
दरिद्रो रूपसंयुक्तः पाते पंचमभावगे।
कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपत्रपः।।
शत्रुहन्ता सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां प्रयोगकृत्।
कलासु निपुणः शान्तः पाते शत्रुगते सति।।
धनदारसुतैस्त्यक्तः स्त्रीजितश्चातिदुखितः।
पाते कलत्रगे कामी निर्लज्जः परसौहृदः।।

विकलाक्षो विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिन्दकः।

मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपीडाप्रपीडितः।।

बहुव्यापारको नित्यं बहुमित्रो बहुश्रुतः।

पाते तु धर्मभावस्थे स्त्रीप्रियोऽतिप्रियंवदः।।

सस्त्रीको धर्मकृच्छान्तो धर्मकार्येषु कोविदः।

पाते तु कर्मभावस्थे महाप्राज्ञो विचक्षणः।।

प्रभूतधनवान् मानी सत्यवादी दृढव्रतः।

अश्वाढयो गीतसंसक्तः पाते लाभगते सति।।

कोपी च बहुकर्माढयो व्यंगो धर्मस्य दूषकः।

व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषी निजबन्धुषु ।।

पात लग्नगत हो तो जातक दुःखी, क्रूरस्वभाव वाला, घातक, मूर्ख और अपने बान्धवों से द्वेष करने वाला होता है। धनगत पात हो तो मनुष्य कुटिल, अति पित्त प्रकृति, विलासी, निर्दयी, अकृतज्ञ, दुष्टात्मा तथा पापी होता है। सहजस्थ पात हो तो जातक स्थिरबुद्धि, रणकुशल, दानी, धनी, राजप्रिय और सेनाधीश होता है। चतुर्थस्थ पात हो तो मनुष्य बन्धन तथा व्याधि से युक्त और पुत्रसौख्यहीन होता है। पंचम भावस्थ पात हो तो मनुष्य दरिद्र, देखने में सुन्दर, त्रिदोष से पीड़ित, निष्ठुर एवं निर्लज्ज होता है। षष्ठस्थ पात हो तो जातक शत्रुहन्ता, स्वयं सुपुष्ट, सभी अस्त्रों को चलाने वाला, कलाओं में निपुण तथा शान्त होता है। जायाभाव गत पात हो तो जातक धन, स्त्री, पुत्रों से परित्यक्त या स्त्री के अधीन, अत्यन्त दुःखी, कामी, निर्लज्ज तथा दूसरों से मैत्री करने वाला होता है। अष्टमस्थ पात हो तो मनुष्य नेत्ररोगी, कुरूप, ब्राह्मणों की निन्दा करने वाला तथा रक्तपीडा से दुखी होता है।

धर्मभावगत पात रहे तो मनुष्य अनेक कार्यों में हाथ बटाने वाला, बहुमित्र, बहुश्रुत, स्त्री से अधिक प्रेम करने वालातथा मधुरभाषी होता है। कर्मस्थ पात रहे तो जातक लक्ष्मीवान्, धर्मवेत्ता, शान्त, धर्मकार्य में अभिरूचि दिखाने वाला तथा महाप्राज्ञ होता है। लाभ भावस्थ पात हो तो मनुष्य प्रचुर धनशाली, मानी, सत्यनिष्ठ, दृढव्रत, अश्वयान युक्त तथा गायक होता है। व्ययस्थ पात हो तो जातक क्रोधी, अनेक कार्यों को मन लगाकर करने वाला, विकलंग, धर्मद्वेषी और अपने बन्धुओं से द्वेष करने वाला होता है।

परिधि फल

विद्वान् सत्यरतः शान्तो धनवान् पुत्रवान् शुचिः।
दाता च परिधौ मूर्तौ जायते गुरुवत्सलः।।
ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः।
धनस्थे परिधौ नूनं प्रभुर्भवति मानवः।।
स्त्रीवल्लभः सुरूपांगो देवस्वजनसंगतः।
तृतीये परिधौ भृत्यो गुरुभक्तिसमन्वितः।।
परिधौ सुखभावस्थे विस्मितं त्वरिमंगलम्।
अक्रूरं त्वथ सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदम्।।
लक्ष्मीवान् शीलवान् कान्तः प्रियवान् धर्मवत्सलः।
पंचमे परिधौ जातः स्त्रीणां भवति वल्लभः।।
व्यक्तोऽर्थः पुत्रवान् रोगी सर्वसत्त्वहिते रतः।
परिधौ रिपुभावस्थे शत्रुहा जायते नरः।।
स्वल्पापत्यः सुखैर्हीनो मन्दप्रज्ञः सुनिष्ठुरः।
परिधौ द्यूनभावस्थे स्त्रीणां व्याधिश्च जायते।।
अध्यात्मचिन्तकः शान्तो दृढ़कायो दृढ़व्रतः।
धर्मवांश्च सुसत्त्वश्च परिधौ रन्ध्रभावगे।।
पुत्रान्वितः सुखी कान्तो धनाढयो लौल्यवर्जितः।
परिधौ धर्मगे मानी त्वल्पसन्तुष्टमानसः।।
कलासु कुशलो भोगी दृढकायो ह्यमत्सरः।
परिधौ दशमे प्राप्ते सर्वशास्त्रार्थपारगः।।
स्त्रीरोगी गुणवांश्चैव मतिमान् स्वजनप्रियः।
लाभे तु परिधौ याते मन्दाग्निरुपपद्यते।।
व्ययस्थे परिधौ जातो गुरुनिन्दापरायणः।
दुर्मतिर्दुःखितो नित्यं जायते व्ययकृत्तथा।।

लग्नस्थ परिधि हो तो जातक विद्वान्, सत्यनिष्ठ, शान्त, धनी, पुत्रवान्, पवित्र, दानी तथा गुरुभक्त होता है। धनगत परिधि हो तो मनुष्य शक्ति सम्पन्न, सुन्दर, भोगी, सुखी, धर्मरत तथा लोकनायक होता है। सहजस्थ परिधि हो तो जातक स्त्री का प्रिय, सुन्दर स्वरूप वाला,

देवता एवं स्वजनों का प्रेमी, भृत्यवृत्ति करने वाला तथा गुरुभक्त होता है। सुखभावगत परिधि हो तो जातक विस्मय युक्त, शत्रु का मंगलकारक, साधु स्वभाववाला तथा गायक होता है। पंचम भावस्थ परिधि हो तो मनुष्य धनी, शीलवान्, सुन्दर, जनप्रिय, धर्मिष्ठ तथा स्त्रीवल्लभ होता है। षष्ठभावस्थ परिधि हो तो मनुष्य प्रख्यात धनी, पुत्रवान्, रुग्ण, सभी प्रणियों का हितैषी तथा शत्रुहन्ता होता है। जायाभावस्थ परिधि हो तो मनुष्य कम सन्तानवाला, दुःखी, मन्दबुद्धि, निर्दय तथा रुग्ण स्त्रीवाला होता है। अष्टमभावस्थ परिध हो तो जातक आध्यात्म चिन्तनशील, शान्त, दृढ शरीर, दृढ प्रतिज्ञ, धार्मिक तथा पराक्रमी होता है। भाग्यभावगत परिधि ग्रह हो तो मनुष्य पुत्रवान्, सुखी, सुन्दर, धनी, सुस्थिर, मानी तथा थोड़े में ही सन्तुष्ट होने वाला होता है। दशम भावगत परिधि हो तो जातक अनेक कलाओं में प्रवीण, भोगी, बलिष्ठ शरीर वाला, निष्कपट तथा सभी शास्त्रों में पारंगत होता है। एकादश भावगत परिधि ग्रह हो तो मनुष्य रुग्ण स्त्रीवाला, गुणवान्, बुद्धिमान्, आत्मीय व्यक्तियों का प्रिय तथा मन्दाग्नि रोग से पीडित होता है। व्यय भावगत परिधि हो तो मनुष्य गुरु निन्दकः, दुर्बुद्धि, सतत दुखी तथा व्ययशील होता है।

चाप फल

धनधान्यहिरण्याढयः कृतज्ञः सम्मतः सताम्।
सर्वदोषपरित्यक्तश्चापे तनुगते नरः।।
प्रियंवदः प्रगल्भाढयो विनीतो विद्यया युतः।
धनभावगते चापे रूपवान् धर्मतत्परः।।
कृपणोऽतिकलाभिश्चौर्यकर्मरतः सदा।
सहजे धनुषि प्राप्ते हीनांगो गतसौहृदः।।
सुखी गोधनधान्यादिराजसम्मानपूजितः।
कार्मुके सुखसंस्थे तु नीरोगो जायते नरः।।
रूचिमान् दीर्घदर्शी च देवभक्तः प्रियंवदः।
चापे पंचमगे जातो विवृद्धः सर्वकर्मसु।।
शत्रुहन्ताऽतिधूर्तश्च सुखी प्रीतिरूचिः शुचिः।
षष्ठस्थानगते चापे सर्वकर्मसमृद्धिभाक्।।
ईश्वरो गुणसम्पूर्णः शास्त्रविद्धार्मिकः प्रियः।

चापे सप्तमभावस्थे भवतीति न संशयः।।
परधर्मरतः क्रूरः परदारपरायणः।
अष्टमस्थानगे चापे विकलांगो भवेज्जनः।।
तपस्वी व्रतचर्यासु निरतो विद्ययाधिकः।
धर्मस्थे सति चापे तु मानवो लोकविश्रुतः।।
बहुपुत्रधनैश्वर्यो गोमहिष्यादिमान् भवेत्।
कर्मस्थे चापसंयुक्ते जायते लोकविश्रुतः।।
चापग्रहे लग्नगते लाभयुक्तो भवेन्नरः।
नीरोगो दृढकोपाग्निर्मन्त्रस्त्रीपरमास्त्रवित्।।
खलोऽतिमानी दुर्बुद्धिर्निर्लज्जो व्ययसंस्थिते।
चपे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा।।

चाप यदि लग्नगत हो तो जातक धन धान्य एवं रत्नों से परिपूर्ण, कृतज्ञ, सज्जनों का प्रिय और समस्त दोषों से युक्त होता है। धन भावगत चाप रहे तो मनुष्य प्रिय बोलने वाला, ढीठ, विद्वान्, सुन्दर तथा धर्मिष्ठ होता है। सहजस्थ चाप हो तो कृपण, कलाओं का अभिज्ञ, चोर, दुर्बल तथा मित्रहीन होता है। चाप चतुर्थस्थ हो तो मनुष्य सुखी, गाय, धन, धान्यादिकों से राजा का सम्मान प्राप्त करने वाला तथा नीरोग होता है। पंचमस्थ चाप हो तो मनुष्य कान्तिमान्, दूरदर्शी, देवताओं का भक्त, मधुरभाषी तथा सभी कार्यों में बढा हुआ होता है। षष्ठस्थ चाप हो तो जातक शत्रुओं को जीतने वाला, अत्यधिक धूर्त, सुखी, प्रेमी, पतित तथा सभी कामों में समृद्धिशील होता है। जायागत चाप हो तो मनुष्य प्रभुत्व सम्पन्न, गुणी, शास्त्रज्ञ, धार्मिक तथा लोकप्रिय होता है। अष्टमस्थ चाप रहे तो जातक पापकर्म में लीन, क्रूर, परस्त्रीगामी तथा विकलांग होता है। भाग्यस्थ चाप हो तो जातक व्रतादि में लीन, तपस्वी, विद्वान् तथा लोक विख्यात होता है। कर्मस्थ चाप हो तो मनुष्य अनेक पुत्र, धन तथा ऐश्वर्य से परिपूर्ण, गाय भैंस आदि पशु युक्त तथा लोक प्रसिद्ध होता है। लाभभावस्थ चाप हो तो मनुष्य सर्वत्र लाभयुक्त, नीरोग, प्रचण्ड क्रोधाग्नि वाला, मन्त्रज्ञ, स्त्रीप्रेमी, तथा विशेष अस्त्रों का अभिज्ञ होता है। व्ययभावस्थ चाप रहे तो मनुष्य दुष्ट, घमण्ड वाला, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्री सक्त तथा दरिद्र होता है।

बोध प्रश्न

1. लग्न में धूम ग्रह के होने से जातक ....होता है।

क. अत्यधिक क्रोधी, ख. मन्दबुद्धि, ग. शान्त घ. विकलांग

2. सप्तम भावगत धूम हो तो जातक ....होता है।

क. अत्यधिक शान्त, ख. दरिद्र, ग. धनी, घ. तेजयुक्त,

3. पात लग्न में हो ता जातक.......... होता है।

क. मित्रप्रिय ख. माता का प्रिय ग. घातक, घ. योद्धा,

4. धर्म भाव में पात हो तो जातक .... होता है।

क. मित्रद्रोही ख. कटुभाषी, ग. बहुश्रुत, घ. निर्धन,

5. लग्नस्थ परिधि हो तो जातक ....होता है।

क. मूर्ख, ख. रोगी, ग. कपटी घ. विद्वान्

शिखि फल

कुशलः सर्वविद्यासु सुखीवान् निपुणः प्रियः।
केतौ मूर्तिगते जातः सर्वकामान्वितो भवेत्।।
वक्ता प्रियंवदः कान्तो धनस्थानगते सति।
काव्यकृत् पण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः।।
कृपणः क्रूरकर्मा च कृशांगो धनवर्जितः।
सहजस्थे तु शिखिनि तीव्ररोगी प्रजायते।।
रूपवान् गुणसम्पन्नः सात्त्विकोऽतिश्रुतिप्रियः।
सुखसंस्थे तु शिखिनि सदा भवति सौख्यभाक्।।
सुखी भोगी कलाविच्च ध्वजे पंचमभावगे।
युक्तिज्ञो मतिमान् वाग्मी गुरुभक्तिसमन्वितः।।
मातृपक्षक्षयकरो रिपुजिद् बहुबान्धवः।
रिपौ शिखिनि सम्प्राप्ते शूरः कान्तो विचक्षणः।।
द्यूतासक्तमना नित्यं कामी भोगसमन्वितः।
सप्तमस्थे तु शिखिनि वेश्यासु कृत सौहृदः।।

नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निन्दकः सदा।
मृत्युस्थाने तु शिखिनि गतस्त्र्यपरपक्षकः।।
लिंगधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः।
धर्मगे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः।।
सुखसौभाग्यसम्पन्नः कामिनीनां च वल्लभः।
दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्थे शिखिनि ध्रुवम्।।
नित्यलाभः सुधर्मी च लाभे शिखिनि संस्थिते।
धनाढयः सुभगः शूरः सुयज्ञश्चातिकोविदः।।
पापकर्मरतः शूरः श्रद्धाहीनोऽघृणो नरः।
परदाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययगे सति।।

शिखी ग्रह लग्नस्थ हो तो जातक सभी विद्याओं में निपुण, सुखी, वाक्पटु, प्रिय तथा सभी कामनाओं से परिपूर्ण होता है। धनस्थ शिखी गह हो तो जातक वक्ता, मधुरभाषी, सुन्दर, कवि, विद्वान्, मानी, नम्र तथा वाहनों से युक्त होता है। सहजस्थ शिखि हो तो मनुष्य कंजूस, निष्ठुर, दुर्बलांग, धनहीन तथा वातव्याधिपूर्ण होता है। सुखस्थ शिखि हो तो मनुष्य सुन्दर, गुणयुक्त, सात्त्विक प्रकृतिवाला, वेदप्रेमी तथा सर्वदा सौख्यपूर्ण होता है। पंचमस्थ शिखि हो तो मनुष्य सुखी, भोगी, कलाभिज्ञ, युक्तियों का जानकार, बुद्धिमान्, वाग्मी तथा गुरुभक्ति रत होता है। षष्ठ भावगत शिखि हो तो मनुष्य मातृपक्ष का नाश करने वाला, शत्रुजेता, अनेक बान्धवों से युक्त, शूर, सुन्दर तथा विद्वान् होता है। सप्तमस्थ शिखि हो तो मनुष्य सतत जुआरी, कामी, भोगविलासशील तथा वेश्यागामी होता है। अष्टमस्थ शिखि हो तो मनुष्य नीच कर्मरत, पापिष्ठ, निर्लज्ज, परनिन्दक तथा स्त्री सौख्य विहीन होता है। भाग्य भावस्थ शिखि हो तो मनुष्य संन्यास आदि विशेष वेष धारण करने वाला, प्रसन्न चेता, सभी प्राणियों का हितैषी और धर्म कार्यों में निपुण होता है। दशमस्थ शिखि हो तो मनुष्य विशिष्ट सौख्य सम्पन्न, कामिनियों का प्रिय, दान देने वाला तथा ब्राह्मणों से सम्पर्क करने वाला होता है। एकादश भावगत शिखि हो तो मनुष्य को सतत लाभ, धर्म में प्रेम और धन, सौन्दर्य, शौर्य, सत्कर्म तथा विद्वता सभी प्राप्त होते हैं। व्यय भावस्थ शिखि हो तो मनुष्य पापिष्ठ, वीर, श्रद्धा एवं दया से रहित, दूसरे की स्त्री में आसक्त तथा भयंकर स्वभाव से युक्त होता है।

गुलिक फल

रोगार्त्तः सततं कामी पापात्माधिगतः शठः।
लग्नस्थः गुलिके मर्त्यः खलभावोऽतिदुःखितः।।
विकृतः दुःखितः क्षुद्रो व्यसनी च गतत्रपः।
धनस्थे गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः।।
चार्वंगो ग्रामपः पुण्यैः संयुतः सज्जनप्रियः।
मान्दौ तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः।।
रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत्।
सुखगे गुलिके जातो वातपित्ताधिको भवेत्।।
विस्तुतिर्विधनोऽल्पायुर्द्वेषी क्षुद्रो नपुंसकः।
सुतस्थानगते मान्दौ स्त्रीजितो नास्तिको भवेत्।।
वीतशत्रुः सुपुष्टांगो रिपुस्थाने यमात्मजे।
सुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः सुदृढो हितः।।
स्त्रीजितः पापकृज्जारः कृशांगो गतसौहृदः।
जीवितः स्त्रीधनेनैव सप्तमस्थे शनेः सुते।।
क्षुधालुर्दुःखितः क्रूरस्तीक्ष्णरोगोऽतिनिर्घृणः।
मान्दौ तु रन्ध्रगे निःस्वो जायते गुणवर्जितः।।
बहुक्लेशः कृशतनुर्दुष्टकर्मातिनिर्घृणः।
मान्दौ धर्मस्थिते मन्दः पिशुनो बहिराकृतिः।।
पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवाग्न्यर्चनवत्सलः।
दशमे गुलिके जातो योगधर्माश्रितः सुखी।।
सुखी भोगी प्रजाध्यक्षो बन्धूनां च हिते रतः।
लाभे यमात्मजे जातो नीचांगः सार्वभौमकः।।
नीचकर्माश्रितः पापो हीनांगो दुर्भगोऽलसः।
व्ययगे गुलिके जातो नीचेषु कुरुते रतिम्।।

गुलिक लग्नगत हो तो मनुष्य रुग्ण, नित्यकामुक, पापिष्ठ, शठ, दुष्ट स्वभाव वाला तथा अतिदुःखी होता है।

फलदीपिका में आचार्य ने यदि गुलिक लग्न में हो तो जातक चोर, क्रूर, विनय रहित होता है। जातक मोटा होता है। उसके नेत्रों में विकार होता है। अधिक पुत्र नहीं होते तथा बुद्धि भी मन्द होती है। ऐसा जातक वेदों और शास्त्रों का अध्ययन नहीं करता है। जातक भोजन अधिक करता है। जातक हमेशा दुखी रहता है तथा अल्पायु होता है। ऐसा व्यक्ति क्रोधी, मूर्ख और भीरु प्रकृति का होता है एवं जातक विषय वासना में लिप्त, लम्पट स्वभाव का होता है [280]।

धन भावगत गुलिक हो तो जातक विकारयुक्त, दुःखी, क्षुद्र स्वभाव वाला, दुर्व्यसनशील, निर्लज्ज तथा दरिद्र होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि द्वितीय भाव में गुलिक हो तो जातक दूसरों को प्रसन्न करने वाले वचन बोलने वाला नहीं होता है । ऐसा जातक कलह करने वाला, धन–धान्य से हीन, परदेशवासी, झूठ बोलने वाला, स्थूल बुद्धिवाला होता है [281]।

सहजस्थ गुलिक हो तो मनुष्य सुन्दर, ग्रामपति, पुण्यवान्, सज्जन प्रेमी तथा राजवन्द्य होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि तृतीय भाव में गुलिक हो तो जातक घमंडी स्वभाव वाला, क्रोधी, लोभी, अकेला रहने वाला, शराब का शौकीन, भाई एवं बहन के सुख से रहित, भयहीन, शोकहीन तथा धन उपार्जन करने में चतुर होता है [282]।

सुखस्थ गुलिक हो तो मनुष्य सुखहीन, रुग्ण, सतत पापरत तथा वातपित्त की अधिकता वाला होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि चतुर्थ भाव में गुलिक हो तो जातक बन्धुहीन, धनहीन एवं जातक को सवारी का सुख प्राप्त नहीं होता है।

पंचम भावस्थ गुलिक हो तो मनुष्य परनिन्दक, दरिद्र, अल्पायु, दूसरों से द्वेष करने वाला, क्षुद्र विचारशील, नपुंसक, स्त्रीवश तथा नास्तिक होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि पंचम भाव में गुलिक हो तो जातक दुष्ट बुद्धिवाला, अल्पायु तथा बहुत समय तक किसी विचार पर स्थिर नहीं रहता है [283]।

---

280 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 8,

281 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 9,

282 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 10,

षष्ठ भावस्थ गुलिक हो तो मनुष्य विना पत्नीवाला, पुष्ट अंग वाला, कान्तिमान्, स्त्रियों का प्रिय, उत्साह सम्पन्न, सुदृढ तथा हितकारक होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि षष्ठ भाव में गुलिक हो तो जातक भूत विद्या का शौकीन अर्थात् ऐसे व्यक्ति डाकिनी, शाकिनी, यक्षिणी, भूत, प्रेत आदि की आराधना कर उनसे काम निकालते हैं। जिसके छठे घर में गुलिक होता है वह जातक बहुत शूरवीर, अपने शत्रुओं को परस्त करने वाला एवं बहुत श्रेष्ठ पुत्रवाला होता है [284]।

सप्तम भावस्थ गुलिक हो तो मनुष्य स्त्री के अधीन रहने वाला, पापिष्ठ, परस्त्रीगामी, दुर्बलांग, मित्रहीन और स्त्री धन से ही जीनेवाला होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि सप्तम भाव में गुलिक हो तो जातक कलह करने वाला, लोक द्वेषी, कम समझने वाला, थोड़ा क्रोध करने वाला, बहु स्त्री युक्त एवं कृतघ्न होता है [285]।

अष्टम भावगत गुलिक हो तो जातक क्षुधार्त्त, दुःखी, निष्ठुर, तीव्ररोष व्यक्त करने वाला, अतिनिर्दय, निर्धन तथा गुणहीन होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि अष्टम भाव में गुलिक हो तो जातक का शरीर छोटा, चेहरे एवं नेत्रों से विकल होता है [286]।

नवम भावगत गुलिक हो तो मनुष्य अनेक कष्ट को भोगने वाला, दुर्बल शरीर वाला, हमेशा दुष्कर्म में लिप्त रहने वाला, अतिनिर्दय, मन्दबुद्धि, चुगलखोर तथा बाहरी आकार वाला होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि नवम भाव में गुलिक हो तो जातक अपने गुरु, पिता तथा पुत्र से हीन होता है।

दशमस्थ गुलिक हो तो जातक पुत्रवान्, सुखी, भोगपरायण, देवता तथा अग्नि की पूजा का प्रेमी, योग एवं धर्म में तत्पर रहने वाला तथा सुखी होता है।

---

283 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 11,

284 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 11,

285 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 12,

286 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 13,

फलदीपिका में कहा है कि यदि दशम भाव में गुलिक हो तो जातक शुभ कर्मों का परित्याग करने वाला और दानशील नहीं होता है [287]।

आय भावगत गुलिक हो तो जातक सुखी, भोगी, लोगों में अग्रगण्य, बन्धुओं के हित में लीन, छोटा शरीरवाला तथा सर्वत्र मान्य होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि एकादश भाव में गुलिक हो तो जातक सुखी, अति तेजस्वी कान्तिमान् तथा पुत्र सुख से युक्त होता है [288]।

व्यय भावगत गुलिक हो तो मनुष्य नीच कर्म करने वाला, पापी, हीनांग, कुरूप, आलसी तथा नीच के साथ रति करने वाला होता है।

फलदीपिका में कहा है कि यदि द्वादश भाव में गुलिक हो तो जातक विषय वासना से रहित, दीन और व्यय करने वाला होता है [289]।

फलदीपिका में आचार्य ने गुलिक का ग्रहों के साथ बैठने का फल विशेषरूप से प्रतिपादित किया है। आचार्य ने कहा है कि गुलिक जिस ग्रह के साथ बैठता है, प्रायः उस ग्रह को दूषित करता है। सूर्य पिता का कारक है, इसलिये यदि गुलिक सूर्य के साथ बैठे तो जातक के पिता को मार दे अर्थात् पिता अल्पायु होता है । चन्द्रमा मातृ कारक है, अतः यदि गुलिक चन्द्रमा के साथ बैठे तो जातक की माता को कष्ट होता है। मंगल भ्रातृ कारक है, अतः गुलिक यदि मंगल के साथ बैठता है तो जातक को भाई का वियाकग देता है। बुध बुद्धि का कारक है इस कारण बुध और गुलिक एक साथ बैठे तो जातक को उन्माद वा पागलपन का रोग हो जाता है।

बृहस्पति धर्म का कारक है, इस कारण यदि बृहस्पति और गुलिक एक साथ हों तो जातक पाखंडी होता है। शुक्र स्त्री का कारक है और यदि शुक्र तथा गुलिक एक साथ हों तो जातक नीच स्त्रियों के साथ समागम करता है। यदि गुलिक शनि के साथ हो तो जातक कुष्ठ, व्याधि आदि से पीडित और अल्पायु होता है। यदि राहु और गुलिक एक साथ हो तो विष रोगी होता है। यदि केतु और गुलिक एक साथ हों तो जातक अग्नि से पीडित होता है। यदि जिस दिन जातक का जन्म हुआ है उस दिन गुलिक त्याज्यकाल में पड़े तो ऐसा

---

287 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 13,

288 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 13,

289 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 14,

जातक चाहे राजघराने में भी पैदा हुआ हो किन्तु भीख मांगता है, अर्थात् दरिद्र होता है [290]।

गुलिक के संषेग से सर्वत्र दोष होते हैं। छठे ग्यारहवें भाव को छोड़कर जिस घर में के शुभ फल को नष्ट करता है, तथा अशुभ ग्रह को बढाता है।

यमकंटक का फल यह है कि जिस ग्रह के साथ यम कण्टक बैठे उस ग्रह के शुभ फल को बढावे तथा जिस भाव में यम कंटक बैठे उस भाव के शुभ फल में वृद्धि करता है [291]।

दोष युक्त करने में अशुभ फल बढाने में गुलिक बलवान् होता है। शुभ फल प्रदान करने में यम कंटक बली है। अन्य जो उपग्रह हैं वह दुष्ट फल देने वाले हैं किन्तु जितना दुष्ट फल मान्दि देता है अन्यग्रह केवल उसका आधा दुष्ट फल देते हैं [292]।

गुलिक का प्रभाव शनि के सदृश होता है। यमकंटक का बृहस्पति के समान। अर्धप्रहर का फल बुध की तरह समझना चाहिये और काल का फल राहु के सदृश होता है [293]।

काल का प्रभाव राहु के सदृश होता है। यदि किसी भाव में काल हो तो वही फल कहना चाहिये जो फल राहु के रहने पर होता है। गुलिक को साक्षात् मृत्यु कहा गया है। यमकंटक में बृहस्पति की भांति जीवन प्रदायिनी शक्ति है। जिस भाव में अधिक शुभ बिन्दु हों उसमें यदि अर्धप्रहर बैठे तो शुभ फल प्रदान करता है। यदि अर्धप्रहर ऐसे घर में बैठे जिसमें सर्वाष्टक वर्ग में अधिक शुभ बिन्दु न हों तो अर्धप्रहर का शुभफल नहीं होता है [294]।

धूम जलन, उष्णता, अग्नि से भय और चित्त को व्यथा उत्पन्न करता है । व्यतीपात सींग वाले जानवरों से भय और किसी चौपाये से मृत्यु करने वाला होता है [295]।

परिवेष या परिधि जातक में जल से भय उत्पन्न करता है, अर्थात् जिसके लग्न में परिवेष या परिधि हो वह नदी या तालाब में घुस कर स्नान करने से डरेगा। ऐसे जातक को जलोदर या शरीर के किसी अन्य भाग में पानी इकट्ठा हो जाने की बीमारी होने का

290 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 15—17,

291 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 18,

292 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 19,

293 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 20,

294 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 21,

295 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 23,

अन्देशा होता है। जातक को बन्धन का भी भय होता है। इन्द्रचाप पत्थर से या शस्त्र से चोट लगवाता है या जातक किसी मकान, सवारी या पेड़ से गिरकर जख्मी होता है। उपकेतु पतन वा घात करता है। वज्र से भय होता है, अर्थात् ऐसे व्यक्ति पर बिजली गिरने का भय होता है। यह कार्य को नाश करने वाला उपग्रह है। वस्तुतः ऊपर जो फल बताये गये हैं वे सभी जिस भाव में होंगे, उस भावेश की दशा में उपग्रह का फल जातक को प्राप्त होगा, अर्थात् यदि उपग्रह अष्टम भाव में स्थित है तो अष्टमेश की दशा में उपग्रह का फल जातक को प्राप्त होगा [296]।

उपकेतु यदि लग्न आदि द्वादश भावों में से किसी में हो तो भावफल जातक को प्राप्त होते हैं। यदि उपकेतु प्रथम भाव में हो तो जातक अल्पायु, द्वितीय भाव में हो तो कुरूप, तृतीय भाव में हो तो पराक्रमी, चतुर्थ भाव में हो तो दुःखी, पंचम भाव में हो तो सन्तान हानि, षष्ठ भाव में हो तो शत्रुओं से पीडा, सप्तम भाव में हो तो पुंस्त्व में कमी, अष्टम भाव में हो तो दुर्भाग्य से मृत्यु को प्राप्त, नवम भाव में हो तो धर्म से प्रतिकूलता, दशम भाव में हो तो घूमने फिरने का शौकीन, एकादश भाव में हो तो लाभ एवं द्वादश भाव में हो तो दोषवान् होता है [297]।

धूम आदि पाँच उपग्रह धूम, व्यतीपात, परिवेष, इन्द्रचाप, उपकेतु ये अप्रकाश ग्रह बिना दिखाई देते हुये ही आकाश में संचार करते हैं। अर्थात् जैसे सूर्य, चन्द्र आदि सात ग्रह दिखाई देते हैं उस प्रकार यह पाँच उपग्रह दिखाई नहीं देते। यह उपग्रह कभी–कभी कहीं दिखाई दे जाते हैं। ये उपग्रह जहाँ दिखाई देते हैं वहाँ उपद्रव एवं दुर्घटना घटित होती है[298]।

प्राणपद फल

मूकोन्मत्तो जडांगस्तु हीनांगो दुःखितः कृशः।
लग्ने प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः।।
बहुधान्यो बहुधनो बहुभृत्यो बहुप्रजः।
धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः।।

296 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 24–25,

297 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 26,

298 फलदीपिका, अध्याय 25, श्लोक 27,

हिंस्रो गर्वसमायुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचः।
तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः।।
सुखस्थे तु सुखी कान्तः सुहृद् रामासु वल्लभः।
गुरौ परायणः शीतः प्राणे वै सत्यतत्परः।।
सुखभाक् सत्क्रियोपेतस्तूपचारदयान्वितः।
पंचमस्थे प्राणपदे सर्वकामसमन्वितः।।
बन्धुशत्रुवशस्तीक्ष्णो मन्दाग्निर्निर्दयः खलः।
षष्ठे प्राणे रोगयुक्तो वित्तपोऽल्पायुरेव च।।
ईर्ष्यालुः सततं कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः।
सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान्।।
रोगसन्तापितांगश्च प्राणपादेऽष्टमे सति।
पीडितः पार्थिवैर्दुःखैर्भृत्यबन्धुसुतोद्भवैः।।
पुत्रवान् धनसम्पन्नः सुभगः प्रियदर्शनः।
प्राणे धर्मस्थिते भृत्यः सदाऽदुष्टो विचक्षणः।।
वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः।
दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः।।
विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः।
कामस्थानस्थिते प्राणे गौरांगो मानवत्सलः।।
क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनांगो विद्वेषी द्विजबन्धुषु।
व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः।।

प्राणपद लग्न भाव में स्थित हो तो जातक गूंगा, पागल, जडांग, दुर्बल, दुःखी, पतला और रोगी होता है। धनस्थ प्राणपद हो तो जातक अनेक धन–धान्य से परिपूर्ण, भृत्य एवं पुत्रों से युक्त तथा देखने में सुन्दर होता है। सहज भाव में प्राणपद हो तो जातक हिंसक, घमंडी, निष्ठुर, अत्यन्त कुत्सित विचार युक्त तथा गुरुवर्गो को अपमानित करने वाला होता है। सुख भावगत प्राणपद हो तो मनुष्य सुखी, सुन्दर, साफ हृदयवाला, स्त्रियों का प्रमी, गुरुभक्त, मृदु स्वभाववाला तथा सत्यपरायण होता है। पंचम भावगत प्राणपद हो तो मनुष्य सुखी, सत्कार्यरत, दयावान् तथा सभी कार्यों में दक्ष होता है। षष्ठस्थ प्राणपद हो तो बन्धुओं तथा

शत्रुओं के अधीन रहने वाला, तेज, मन्द अग्निवाला, निर्दय, दुष्ट, रोगी, धनी तथा अल्पायु होता है। सप्तम भावगत प्राणपद हो तो मनुष्य सतत कामी, बहुत भयावह शरीरवाला, किसी से भी नहीं मानने वाला अर्थात् अधिक जिद्दी स्वभाव वाला तथा दुर्बुद्धि होता है। अष्टम भावगत प्राणपद हो तो मनुष्य रोग संतप्त, राजपीडित तथा बन्धु, भृत्य एवं पुत्र कृत दुःखों से दुःखित होता है। नवम भावगत प्राणपद हो तो मनुष्य पुत्रवान्, धनी, देखने में सुन्दर, सौभाग्यशील, सेवावृत्ति वाला, सज्जन तथा विद्वान् होता है । दशम भावस्थ प्राणपद हो तो जातक वीर्यवान्, बुद्धिमान्, निपुण, राजकार्य में प्रवीण तथा देव पूजा परायण होता है। एकादश भाव में यदि प्राणपद हो तो मनुष्य विख्यात, गुणी, विद्वान्, भोगी, धनी, गौरांग तथा सम्मानप्रिय होता है। व्यय भाव में यदि प्राणपद हो तो जातक क्षुद्र विचार वाला, दुष्ट हृदय वाला, अंगों से हीन, ब्राह्मण तथा बन्धुओं से द्वेष करने वाला और नेत्ररोगी अथवा काना होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

1. शिखी लग्न में हो तो जातक का स्वभाव कैसा होता है ?

क. दुःखी, ख. रोगी, ग. वाक्पटु, घ. मन्दबुद्धि,

2. अष्टमस्थ शिखी हो तो जातक किस प्रकार का होता है ?

क. धार्मिक ख. परनिन्दक ग. सौभाग्यवान् घ. धनी,

3. गुलिक लग्न में होने से जातक का स्वभाव कैसा होता है ?

क. स्वस्थ, ख. दुष्ट, ग. गुरुभक्त, घ. मातृ द्रोही,

4. सप्तम भाव में गुलिक हो तो जातक का शरीर कैसा होता है ?

क. धर्मनिष्ठ, ख. दुर्बल ग. कर्मनिष्ठ, घ. सुखी

5. प्राणपद लग्न में हो तो जातक का स्वरूप कैसा होता है ?

क. विद्वान् ख. रोगी, ग. स्वस्थ, घ. बन्धुओं का मित्र,

6.4 सारांश

धूम, व्यतिपात, परिवेश, इन्द्रचाप एवं उपकेतु यह पाँच ग्रह आकाश में सूर्यादि ग्रहों के तरह संचार करते हुये नहीं दिखाई देते हैं। परन्तु यह जबभी दिखाई देते हैं तो लोक में उपद्रव होता है। ऐसा संहिता के गन्थों में वराहादि ने लिखा ह। पाराशर के मत में यह पाँच उपग्रह यदि सूर्य, चन्द्र या लग्न से युक्त हों तो क्रमशः वंश, आयु और ज्ञान का नाश

करते हैं। संहिता ग्रन्थों में धूओं का समूह एवं पुच्छल तारा को धूम, उल्कापात को परिवेष, इन्द्रधनुष को इन्द्रचाप एवं धूमकेतु को केतु कहते हैं । परन्तु फलित ग्रन्थों में स्पष्ट सूर्य के आधार पर धूमादि अप्रकाश ग्रहों का स्थान निर्धारण किया जाता है। उपगहों में यमघंटक शुभफल को देने वाला होता है। उपग्रहों का फल उपग्रह स्थित भावेश की दशा में प्राप्त होती है। इसी प्रकार गुलिकादि ग्रहों का भी फल कहा जाता है। जिस घर में गुलिकादि ग्रह स्थित होते हैं, उस घर का स्वामी केन्द्र या त्रिकोण में हो, बली हो, अपने घर या अपनी उच्च राशि या मित्रराशि में हो तो जातक बहुत सुन्दर, यशस्वी और पृथ्वी का स्वामी होता है। विपरीत परिस्थिति में जातक कष्टों को भोगने वाला, दुर्भाग्यशाली एवं निर्धनता में जीवन व्यतीत करने वाला होता है।

अतः आवश्यक है कि सूर्यादि ग्रहों का फल विवेक से शुभ, अशुभ, अतिशुभ, अति अशुभ वा मध्यम फल कहना चाहिए। तात्पर्य है कि धूमाद्यप्रकाश ग्रहों का तथा सूर्यादि प्रकाश ग्रहों का भावजनित फल जानकर दोनों की समता में अतिशुभ वा अति अशुभ फल कहना चाहिए। दोनों फलों की विषमता में अर्थात् अप्रकाश ग्रहों का फल अशुभ तथा सूर्यादि ग्रहों का फल शुभ हो तो मध्यम फल कहना चाहिए।

6.5 पारिभाषिक शब्दावली

गौरवी – घमंड करने वाला

सर्वभक्षी – सब कुछ खाने वाला

विख्यात – प्रसिद्ध

परस्त्रीलम्पट – दूसरे की स्त्री में आसक्त

निष्ठुर – कठोर ह्रदय वाला

सन्मार्ग – अच्छा मार्ग, सत् मार्ग

धूर्त – चतुर

घातक – दूसरों पर घात करने वाला, मारने वाला

अकृतज्ञ – उपकार को न मानने वाला

स्थिर बुद्धि – जिसकी बुद्धि सुख एवं दुख दोनों में समान होती है ।

रणकुशल – युद्ध में कुशल

व्याधि – रोग

निर्लज्ज	– लज्जाहीन
धर्मवेत्ता	– धर्म को जानने वाला
मानी	– मान सम्मानयुक्त
भृत्यवृत्ति	– दासकर्म
विस्मययुक्त	– आश्चर्य युक्त
निष्कपट	– स्वच्छ हृदय, विना कपट का
पापिष्ठ	– पापकर्म में रत
शौर्य	– वीरता, पराक्रम
दुर्बलांग	– दुर्बल शरीरवाला
क्षुधार्त्त	– क्षुधा से पीडित
शठ	– मूर्ख

6.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लग्न में धूम ग्रह के होने से जातक ....होता है । — क. अत्यधिक क्रोधी
2. सप्तम भावगत धूम हो तो जातक ....होता है । — ख. दरिद्र
3. पात लग्न में हो ता जातक......... होता है । — ग. घातक
4. धर्म भाव में पात हो तो जातक .... होता है । — ग. बहुश्रुत
5. लग्नस्थ परिधि हो तो जातक ....होता है । — घ. विद्वान्

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्नों के उत्तर

1. शिखी लग्न में हो तो जातक का स्वभाव कैसा होता है ? — ग. वाक्पटु
2. अष्टमस्थ शिखी हो तो जातक किस प्रकार का होता है ? — ख. परनिन्दक
3. गुलिक लग्न में होने से जातक का स्वभाव कैसा होता है ? — ख. दुष्ट
4. सप्तम भाव में गुलिक हो तो जातक का शरीर कैसा होता है ? — ख. दुर्बल
5. प्राणपद लग्न में हो तो जातक का स्वरूप कैसा होता है ? — ख. रोगी

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जैमिनिसूत्रम् – चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन

फलदीपिका – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी

बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी

जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

जातक पारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

जातकाभरणम् – ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर, वाराणसी

6.9 सहायक पाठ्यसामग्री

फलदीपिका – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी

लघुजातकम् – हंसा प्रकाशन

योगयात्रा – आयुर्वेद प्रकाशन

षटपंचाशिका – हंसा प्रकाशन

बृहज्जातकम् – चौखम्भा प्रकाशन

बृहत्पराशर होराशास्त्र – चौखम्भा संस्कृत संस्थान

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होरारत्नम् – मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी

जातक सारदीप – रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

जातक पारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

जैमिनिसूत्रम् – चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी

6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गुलिक का द्वादश भावगत फलों को लिखिए।
2. पात का द्वादश भावगत फलों का विवेचन कीजिए।
3. शिखी का द्वादश भावगत फलों को लिखिए।
4. परिधि का द्वादश भावगत फलों का विवेचन कीजिए।
5. चाप का द्वादश भावगत फलों को लिखिए।